व्रत वैभव

भाग-3

(व्रत उद्यापन विधान)

निर्देशन

पं. गुलाबचन्द 'पुष्प'

संकलन/संयोजन

ब्र. जयकुमार 'निशांत'

सम्पादक

ब्र. विनोद जैन, पपौराजी

पं. विनोद कुमार, रजवांस

-: प्रकाशक :-

पं. मन्नूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य स्मृति ट्रस्ट

पुष्पभवन, टीकमगढ़ (म0प्र0) 472001

फोन- 07683-243138

ग्रन्थ- व्रत वैभव
आशीर्वाद- आचार्य विद्यासागर जी महाराज
प्ररेणा- उपाध्याय श्री 108 ज्ञानसागरजी महाराज
निर्देशन- प गुलाबचन्द्र 'पुष्प'
संकलन/संयोजन- ब्र जयकुमार 'निशान्त'
सम्पादक- ब्र.विनोद जैन, पपौराजी, प विनोदकुमार, रजवांस
अवसर- श्रीमज्जिनेन्द्र पचकल्याणक महोत्सव पिपलानी, भोपाल
सान्निध्य- मुनि श्री 108 विशुद्धसागरजी महाराज
अवसर- श्रीमज्जिनेन्द्र पचकल्याणक पचगजरथ महोत्सव सिद्ध क्षेत्र, पावागिरी
सान्निध्य- सराकोद्धारक उपाध्याय श्री 108 ज्ञानसागरजी महाराज ससघ
आवृत्ति- प्रथम-1100
प्राप्तिस्थान-

1. ब्र. जयकुमार 'निशांत',
   प मन्नूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य स्मृति ट्रस्ट
   पुष्प भवन, टीकमगढ (म०प्र०) 472001 फोन- 07683-243138
2. अरिहंत साहित्य सदन
   4, रेनवो विहार, मुजफ्फरनगर(उ०प्र०) फोन. 0131-2433257
3. गजेन्द्र ग्रन्थमाला
   2578, गली पीपल वाली, धर्मपुरा, दिल्ली- 110006 फोन-9810035356
4. श्री दिगम्बर जैन पञ्चबालयति मन्दिर
   विद्यासागर नगर, सत्यम गैस के सामने, एम जी. रोड, इन्दौर-10
   फोन- 0731-2571851
5. संतोषकुमार जयकुमार वैटरी वाले
   कटरा बाजार, सागर (म.प्र) फोन-07582-243736, 244475

लागत मूल्य- 100.00
आवरण तथा शब्द सज्जा-
ए.व्ही.एस. कम्प्यूटर, टीकमगढ़ (म०प्र०) फोन-07683-240047
मुद्रकः- एन. एस. इन्टरप्राईजिस
2578, गली पीपल वाली, धर्मपुरा, दिल्ली-110006
मोबाईल : 9810035356, 9312200580

जैन विद्या प्रशिक्षण शिविर

5 जून से 12 जून 2005

सान्निध्य :-

उपाध्यायरत्न श्री गुप्तिसागर जी महाराज

सप्रेम भेंट

श्रीमती कमला देवी जैन

धर्म चन्द जैन   कु. रमा जैन

पुष्पा जैन   मा. अंशुल जैन

रुचिका ध. प. श्री कपिल जैन

नित्या

डी. सी. पर्ल्स

निर्माता एवं निर्यातक :- मोतियों के आभूषण

एक्स-45, प्रताप स्ट्रीट, गांधी नगर,

दिल्ली-110031

व्रत वैभव की विषय वस्तु

व्रत वैभव भाग 1- (व्रत विवरण एवं मंत्र)

1. व्रत ग्रहण करने का उद्देश्य
2. व्रत ग्रहण करने की विधि एव संकल्प
3. व्रत के दिन श्रावक की चर्या
4 व्रत का सम्पूर्ण विवेचन
5. मत्र एव पूजा विधि
6. सदर्भ ग्रन्थ एवं संक्षिप्तिका

व्रत वैभव भाग 2- (व्रत पूजा एवं कथाएँ)

1. आचार्यों/मुनिराजों/आर्यिका माताजी के शुभाशीष
2. विद्वानों के अभिमत
3 व्रत सबंधी आवश्यक लेख
4 अभिषेक, शान्तिधारा एव पूजन
5 व्रतोपयोगी भक्तियाँ
6. व्रत कथाएँ
7. सदर्भ ग्रन्थ एवं संक्षिप्तिका

व्रत वैभव भाग 3- (व्रत उद्यापन विधान)

1 व्रत उद्यापन विधि
2 अभिषेक, शान्तिधारा एवं पूजन
3 व्रतोपयोगी भक्तियाँ
4. उद्यापन विधान (अकारादिक्रम में अ से प तक)
5. संदर्भ ग्रन्थ एव संक्षिप्तिका

व्रत वैभव भाग 4- (व्रत उद्यापन विधान)

1. व्रत उद्यापन विधि
2. अभिषेक, शान्तिधारा एव पूजन
3. व्रतोपयोगी भक्तियाँ
4. उद्यापन विधान (अकारादि क्रम में र से त्र तक)
5. संदर्भ ग्रन्थ एवं संक्षिप्तिका

पं गुलाबचन्द्र 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्य

को प्राप्त सम्मान राशि का

ग्रन्थ प्रकाशन में सदुपयोग

1. पुष्पाञ्जलि ग्रन्थ प्रकाशन समिति
2. ऋषभाञ्चल ध्यान योग केन्द्र
3. दशलक्षण पर्व 2004 ऋषभाञ्चल
4. श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक गजरथ महोत्सव करगुवांजी, झांसी
5. पार्श्वनाथ पूजा समिति मन्दिर क्रमाक 14 पपौरा जी
6. श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक महोत्सव पिपलानी, भोपाल
7. श्रीमज्जिनेन्द्र पचकल्याणक पंचगजरथ महोत्सव सिद्ध क्षेत्र पावागिरी
8. श्रीमज्जिनेन्द्र पचकल्याणक महोत्सव अतिशय क्षेत्र बड़ागाँव (खेकड़ा)

आवरण पृष्ठ का परिचय

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र सीरौन जी (ललितपुर) उ.प्र. में स्थापित आचार्य परमेष्ठी बिम्ब, जिसमें फल सहित वृक्ष, मुनि, आर्यिका, श्रावक एवं श्राविका भी दृष्टिगोचर हैं।

* व्रत के दिन व्रत मंत्र की 3 माला अवश्य करे।
* व्रत का उद्यापन व्रत के दिन ना करके पारणा के दिन करे अथवा एक व्रत अतिरिक्त करके करे।

व्रत क्यों ?

* व्रत मानसिक शांति के प्रबल निमित्त हैं।
* व्रत मोक्ष महल की सीढ़ी हैं।
* व्रत मन, वचन, काय की पवित्रता के साक्षात् कारण हैं।
* व्रत ही शाश्वत लक्ष्य की कुंजी हैं।
* व्रत मानवपर्याय के लिए उपहार हैं।
* परिणाम विशुद्धि व्रताचरण से ही संभव है।
* व्रतों का पूर्णफल सम्यक्विधि से ही प्राप्त होता है। मात्र उपवास (लंघन) से नहीं।
* व्रतों के बिना मानव जीवन अधूरा है।
* व्रत साधना है, मनौति नहीं।
* व्रतों के प्रति अरुचि/प्रमाद/अवमानना का भाव नहीं करना चाहिए।

अनुक्रमणिका

प्रकाशकीय

गृहस्थ जीवन में होने वाले दोषों से श्रावक चाहकर भी नहीं बच पाता है, उससे दोष/पाप होते रहते हैं। उनके निराकरण के लिए तीर्थंकरों ने अपनी देशना में श्रमण धर्म के साथ श्रावक धर्म का भी विवेचन किया है। जिसके आधार से श्रावक अपनी शक्ति अनुसार गृहस्थ धर्मों का निर्वहन कर व्रतों का पालन करके मुनि धर्म की ओर अग्रसर होने के भाव से धर्माचरण करें, इसलिए आचार्यों ने श्रावकों के लिए व्रत करने का निर्देश दिया है। जिसमें व्रतों का स्वरूप अवधि, जापमन्त्र, कथा, उद्यापन आदि का विवेचन किया है। किन्तु विभिन्न क्षेत्रों में क्षेत्रीय परम्परा अनुसार व्रत किये जाने से व्रतों की विधि आदि में विकृति एवं शिथिलाचार आ जाने के कारण आचार्यों को समय-समय पर, क्षेत्र एवं परिस्थितियों के अनुरूप व्रतों के स्वरूप में परिवर्तन करना पड़ा फिर भी, व्रतों का पालन नगन्य हो गया था। अनेक व्रतों का सृजन भी समयानुसार हुआ। आचार्यों ने हमें अनेक व्यवस्थायें अवस्था के अनुसार प्रदान की हैं। यह परिवर्तन, काल के लम्बे-लम्बे अन्तरालों में हुआ है अतः इन व्रतों की एक साथ उपलब्धि दुरूह हो गई थी। जिससे भिन्न-भिन्न क्षेत्र के भिन्न-भिन्न काल के श्रावकों को शास्त्रानुसार व्रत विधि की समग्र जानकारी प्राप्त नहीं हो पाती थी। जिससे श्रावक व्रतों का पालन एवं उद्यापन आदि नहीं कर पाते थे। गृहस्थ धर्म के पालन की सुविधा के लिए व्रतों के समग्र विवेचन की आवश्यकता थी।

इसके लिए पंडित प्रवर प्रतिष्ठाचार्य श्री गुलाबचन्द्र जी के निर्देश से ब्र. जय 'निशान्त' ने 475 व्रतों के नाम, अवधि, विधि, जापमन्त्र, पूजा आदि को संकलित किया है। पं. पुष्प जी जैन जगत के सर्वमान्य प्रामाणिक एवं निर्दोष क्रिया को स्वीकारने वाले सुप्रसिद्ध प्रतिष्ठाचार्य हैं। उनके इन गुणों का ब्र. निशांत जी ने शब्दशः अनुसरण किया है। इनके

द्वारा जिन व्रतों का सकलन/सयोजन किया गया है वे निर्दोष प्रामाणिक एव शास्त्र सम्मत हैं। इसमे किसी प्रकार की शका आदि की आशका नहीं रह जाती है, क्योकि आपके द्वारा जितने साहित्य का सृजन हुआ, हो रहा है वह साधु/विद्वान एवं समाज में सर्वमान्य रहा है।

अक्षर-अक्षर पिरोकर शब्द-विन्यास करके साहित्य सृजन और सम्पादन के दुरूह कार्य को समर्थ विद्वान ही कर सकता है। कई लोगों के श्रम से ही इस ग्रन्थ की संयोजना हो सकी है। सम्पादक द्वय का श्रम श्लाघनीय है।

इस प्रामाणिक ''व्रत वैभव'' नामक ग्रन्थ को प्रतिष्ठाचार्य प. मन्नूलाल जैन स्मृति ट्रस्ट प्रकाशित कर गौरवान्वित हुआ है। इस ट्रस्ट की स्थापना सन् 1995 में सर्वोपयोगी सत् साहित्य के सृजन/प्रकाशन एव प्रचार-प्रसार के लिए हुई थी। इस ट्रस्ट से अत्यल्प कार्यकाल में प्रतिष्ठा रत्नाकर, प्रतिष्ठा पराग आदि सात जनोपयोगी ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। जो ट्रस्ट का गौरव है। इसी श्रृखला में ''व्रत वैभव'' को प्रकाशित करके इसे नगर-नगर, गाँव-गाँव तक पहुँचाने का सकल्प ट्रस्ट ने लिया है। ट्रस्ट का उद्देश्य है कि इस ग्रन्थ से व्रतों का स्वरूप जानकर श्रावक गृहस्थ जीवन के दोषों से अपने आत्म कल्याण का मार्ग प्रशस्त करें।

हम मंगल भावना के साथ ग्रन्थ के निर्देशक, सकलक/संयोजक, संपादक मुद्रक आदि समस्त सहयोगी जन का आभार मानते हुए इनसे दीर्घ साहित्य सेवा की कामना करते हैं।

प्रतिष्ठाचार्य पं. मन्नूलाल जैन स्मृति ट्रस्ट
टीकमगढ़

सम्पादकीय

मानव जीवन का चरम लक्ष्य दुःख की निवृत्ति और सुख की प्राप्ति है। यही कारण है कि समस्त ग्रन्थों में दुःख के कारण और सुख प्राप्ति के उपायों का बृहद् निरूपण प्राप्त होता है। प्रायः सभी शास्त्रों को पढ़कर अथवा सुनकर आत्मसात करने का प्रयास करते हैं किन्तु कोई विरले ही व्यक्ति ऐसे होते हैं जो यथार्थ में आत्मसात करने में सक्षम हो पाते हैं। उन्हीं व्यक्तियों में यदि पं. गुलाबचन्द्रजी'पुष्प' का नाम लिया जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। पं गुलाबचन्द्रजी 'पुष्प' एक ऐसे व्यक्तित्व के धनी हैं। जिस व्यक्तित्व की प्रतिभा में दूसरे अपने प्रतिबिम्ब सहजता से देख लेते हैं, जिस विराट व्यक्तित्व में ऐसी क्षमता विद्यमान हो उसका शब्दों के द्वारा मूल्यांकन करना निरर्थक सा प्रतीत होता है। प्रश्न ये है कि पं. गुलाबचन्द्र'पुष्प' जी का यह व्यक्तित्व क्या जन्मजात था यदि इस प्रश्न के गवाक्ष में अन्वेषण किया जाये तो उत्तर प्राप्त होता है नहीं। उन्होंने अपने जीवन में उस पुरुषार्थ को क्रियान्वित किया है जिससे उनका यह व्यक्तित्व देखने में आ रहा है।

पं जी एक ऐसे वैज्ञानिक एवं जिज्ञासु मानव हैं जिन्होंने अपने जीवनकाल में रूढिवादिता से समझौता नहीं किया यदि उनके पास कोई समस्या आई तो उन्होंने आगम के पक्ष, विद्वानों के दृष्टिकोण, वर्तमान प्रसंग एवं यथार्थ मूल्यांकन कर उसे सुलझाने का प्रयास किया। यही कारण है कि यदि उनकी हस्तलिखित प्रतिष्ठा विषयक डायरियाँ, ज्योतिष सम्बन्धी कॉपी, विविध संदर्भों से समाहित रहती हैं। आज भी यदि उनके अध्ययन कक्ष में उनसे यदि कोई चर्चा करना चाहता है तो पूर्वाग्रह, हठाग्रहिता को छोड़कर धैर्यता के साथ आगम के संदर्भों से पं.जी सदैव वार्ता के लिए तत्पर रहते हैं। यह तो पं. जी के बाह्य पक्ष का एक सामान्य आंकलन हो सकता है, किन्तु यदि उनका अभ्यंतर जीवन देखा जाये तो वे प्रति समय अपने परम ध्येय के प्रति श्रद्धावान होते हुए पर्व दिवसों में उपवास, समय पर सामायिक, हित, मित, प्रिय भाषण संतुलित आहार-विहार

एवं निषिद्धयाशन में सदैव प्रयत्नरत रहते हैं। श्रावक के व्रत जितनी निष्ठा के साथ पालन करना चाहिए प्रायः वह निष्ठा उनमें दृष्टिगोचर होती है। अतिचार और अनाचारों के प्रति निरन्तर जागृत रहे हैं और रहते हैं।

"व्रत वैभव" नामक कृति का प्रकाशन इसलिए हुआ कि श्रावक बहुत से व्रतों को अपने जीवन में आचरित करना चाहते हैं। जैन ग्रन्थों में व्रतों के यथा कनकावलि, एशोनव आदि का नामोल्लेख तो प्राप्त होता है किन्तु उनके स्वरूप आदि के विषय में विविध मान्यताएँ हैं तथा व्रत सम्बन्धी सांगोपांग विषय का किसी भी ग्रन्थ में पूर्ण विवरण उपलब्ध नहीं होता है। पूर्व में इस विषय में बहुतेरे प्रयास भी हुये हैं यथा व्रत विधान संग्रह... आदि। किन्तु ये ग्रन्थ सरलता से व्रत विधि के निरूपण में पूर्णतः सक्षम नहीं हुए हैं, इसी कारण से दीर्घकाल से पं. जी के मन में यह भाव था कि व्रतों का एक सागोपाग विवेचक ग्रन्थ सग्रहीत किया जाए जो व्रत अनुष्ठान करने वालों के लिए सेतु का कार्य करे। इसी भावना को साकार करने के लिए प.जी साहब चिरकाल से व्रत सम्बन्धी सामग्री का संग्रह करते आ रहे हैं। जिसके फलस्वरूप यह ग्रन्थ आपके सामने प्रस्तुत है। इस ग्रन्थ के संयोजन में प.जी के सुपुत्र चि ब्र जय कुमार 'निशान्त' ने इस प्रकार से कार्य किया है जिस प्रकार कि मन्दिर के निर्माण के पश्चात् मन्दिर पर कलशारोहण का कार्य होता है। उन्होंने दिगम्बर परम्परा में मान्य व्रतों का उल्लेख उन अभिलेखों के साथ में किया है जो व्रतों की उपयोगिता, विधि, सावधानियाँ इत्यादि को इस प्रकार से प्रस्तुत करता है कि पाठक सहज ही उनके स्वरूप को उपलब्ध कर लेता है।

यह ग्रन्थ चार भागों में विभक्त है, प्रथम भाग व्रत विषयक विशिष्ट सामग्री से संयुक्त है। इसी भाग में पाठकों की सुविधानुसार प्रत्येक मासों में करणीय व्रत तथा व्रत से सम्बन्धित तिथि एवं अकारादि क्रम में 475 व्रतों का अवधि, विधि, पूजन, जाप, उद्यापन आदि का निरूपण उपलब्ध है।

इसी ग्रन्थ के द्वितीय भाग में संयोजक ने बड़ी कुशलता से परिशिष्ट सहित दैनिक उपलब्ध सकल व्रतों की लगभग 27 पूजाएँ एव उपयोगी भक्तियाँ

समाहित की हैं। इसी भाग में उन अभिलेखों को समाहित किया गया है जो व्रतों की ऐतिहासिकता, वैज्ञानिकता इत्यादि सामग्री को प्रस्तुत करते हैं।

इस ग्रन्थ के तृतीय एव चतुर्थ भाग में व्रतों के उद्यापन हेतु अकारादि क्रम से उपयोगी विधानों का सकलन करके इस ग्रन्थ को सर्वांगीण एव सर्वोपयोगी बनाया गया है।

ग्रन्थ वैशिष्टय

–व्रत विषयक उपलब्ध ग्रन्थों में 475 व्रतों का निरूपण करने वाला यह प्रथम ग्रन्थ होगा।

– मासों में करणीय व्रत एव अकारादि क्रम से व्रतों का नामोल्लेख इस ग्रन्थ के अलावा अन्यत्र देखने में नहीं आता है।

– प्राचीन दिगम्बर परम्परा का निर्दोषता से पोषण करने वाले व्रतों के नामोल्लेख और स्वरूप सहित विवरण अन्यत्र दुष्प्राप्य है।

– व्रतों में अनुष्ठेय मत्र जाप, पूजन, उद्यापन विधान इस ग्रन्थ के अलावा अन्यत्र सुलभ नहीं हैं।

किसी भी ग्रन्थ का विशिष्ट रूप तब तक पूर्ण नहीं होता जब तक कि परम गुरुओं का आशीष न हो इस ग्रन्थ के प्रेरणास्रोत आचार्य गुरुवर विद्यासागर जी एव आचार्य मुनि विद्यानन्दजी हैं। प गुलाबचन्द्रजी 'पुष्प' एव ब्र जय कुमार 'निशान्त' ने समय-समय पर परम गुरुओं/ मुनिराजों का परामर्श भी लिया है जो इस विषय के पारगत एव निष्णात् विद्वान हैं उनके प्रति हृदयाभार के साथ परम पूज्य राष्ट्रसत विद्यानद जी, सराकोद्धारक उपा ज्ञानसागर जी, मुनि श्री सुधासागर जी, मुनि श्री प्रमाणसागर जी, मुनि श्री विशुद्धसागर जी, मुनि श्री सौरभसागर जी, मुनि श्री अभयसागर जी, मुनि श्री प्रसादसागर जी एव ऐलक श्री सिद्धातसागर जी का नाम विशिष्ट रूप से उल्लेखनीय है।

साहित्य सयोजना करना और उसे जन सामान्य तक पहुँचाना कितना कठिन कार्य होता है यह तो साहित्य सेवी ही जानते हैं। इस ग्रन्थ के सयोजन में अर्चना जैन(पम्मी) को किस रूप में स्मरण किया जाये उसे शब्दों में सयोजित

करना सभव नहीं है, क्योंकि उन्होंने अपने व्यस्ततम क्षणों में पूर्ण समर्पण के साथ प्रन्थ को आकार देने में जो सहयोग दिया अद्वितीय है। मनीष जैन(सजू) एक ऐसे युवा होनहार समर्पित मनीषी हैं जिन्होंने सदैव निष्ठा के साथ कार्य किया है साथ ही अनेकान्त परिवार की बहिनों ने प्रत्यक्ष परोक्ष रूप से इसकी सयोजना में अपना बहूमूल्य समय दिया है। अक्षर सयोजन में दीपक जैन (ए वी एस कम्प्यूटर) एव मुद्रण में श्री नीरज जैन (दिगम्बर) का सहयोग सराहनीय है जिन्होंने अल्प समय में अथक श्रम करके ग्रन्थ जन सामान्य तक सुलभ कराया है।

इसके साथ ही हम डॉ सुरेन्द्र जैन पठा, अभिनन्दन साधेलिय के हृदय से *आभारी हैं क्योंकि उन्होंने अपने उपयोगी क्षणों से भी समय निकालकर* हमें कृतार्थ किया है। आशा है कि यह ग्रन्थ श्रावकों को मुक्तिपथ में पाथेय बनेगा।

–ब्र विनोद जैन (पपौरा)
प विनोद जैन (रजवास)

आमुख

संकल्प पूर्वकः सेव्ये नियमोऽशुभ कर्मवः।
निवृत्तिर्वा व्रतं स्याद्वा प्रवृत्तिः शुभ कर्मणि।।

अर्थात् सेवन योग्य विषयों में सकल्प पूर्वक नियम करना अथवा हिंसा, असत्य, चौर्य, कुशील और परिग्रह इन अशुभ कर्मों से सकल्प पूर्वक विरक्त होना या शुभ कार्यों में प्रवृत्ति होना व्रत कहलाता है। यहाँ तत्त्वार्थसूत्र के सप्तम अध्याय के अनुसार शुभाश्रव रूप अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, परिग्रह परिमाणाणुव्रत तथा दान आदि शुभ कार्यों में प्रवृत्त होने से शुभ कर्मों का आश्रव होता है। यह श्रावक के कर्तव्यों में शामिल है। असत् कार्यों से निवृत्ति और सत्कार्यों में प्रवृत्ति दोनों का ही अभिप्राय एक है। व्रत के स्वरूप का यह स्पष्टीकरण है। तत्त्वार्थ सूत्र के नवम अध्याय में सवर के अन्तर्गत बारह भावना में सवर भावना का लक्षण इस प्रकार है।

जिन पुण्य पाप नहिं कीना, आतम अनुभव चित दीना।
तिन ही विधि आवत रोके, संवर लहि सुख अवलोके।।

पुण्य पाप दोनों के आश्रव निरोध को सवर कहते हैं। द्रव्य सग्रह गाथा 35 में सवर के भेद एव व्रत का लक्षण शुभाशुभ रागादि विकल्पों से रहित बताया है।

भावार्थ यह है कि व्रत श्रावक के लिए प्रवृत्तिरूप शुभाश्रव का कारण हैं और पापाश्रव निवृत्ति रूप सवर भी है जो शुभोपयोग के अतर्गत है। वही व्रत पुण्य-पाप निवृत्ति रूप शुद्धोपयोग के होने पर निश्चय रत्नत्रय रूप हो जाता है। विषय-कषाय के साथ किया गया उपवास सार्थक नहीं होता है।

कषाय विषयाहारो त्यागोयत्र विधीयते।
उपवासः स विज्ञेयो शेषं लंघनकं विदुः।।

अर्थ- कषाय और इंद्रिय विषयों का जहाँ त्याग किया गया है, उसे

उपवास कहते हैं। इसका उद्देश्य यह है कि हमारी इंद्रियाँ हमारे वश में बनी रहें, हम इंद्रियों के अधीन न हो जावें और आत्म सन्मुख रहते हुऐ सामायिक, स्वाध्याय् आदि सत् प्रवृत्तियों में संलग्न रह सकें। किसी रोगादि या शारीरिक कारण से केवल आहार छोड़ना उपवास न होकर लंघन कहलाता है। एक दिन-रात की अवधि में दिन में एक बार शुद्ध आहार लेना एकाशन कहलाता है। विधि पूर्वक किया गया व्रत ही महाव्रत की भूमिका बनाता है, जो परम्परा से मोक्ष को प्राप्त कराता है।

इस ग्रन्थ में 475 व्रतों का उल्लेख है। इन सबके उद्यापन की विधि भी है, जो अन्यत्र उपलब्ध नहीं है। कहीं है भी तो संस्कृत में है, हिन्दी में सरल रूप में नहीं है।

दशलक्षण, नंदीश्वर, णमोकार मंत्र, कर्म निर्झर, लब्धि विधान, रविव्रत आदि हिन्दी पद्यों में विस्तृत उद्यापन विधि प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रकाशित की गई है। सभी व्रतों की ऐसी विधि प्रथम बार प्रकाशित हो रही है।

श्री राजवैद्य पं. बारेलाल जी जैन ने सन् 1952 में 'जैन व्रत विधान' पुस्तक में अनेक उपयोगी व्रतों के साथ 170 व्रतों का उल्लेख किया है। परतु इसमें 475 व्रतों का वर्णन है। अनेक नए व्रत भी हैं।

व्रतों की उद्यापन विधि आवश्यक थी जिसे इस ग्रन्थ में लिखकर कमी की पूर्ति कर दी गई है। उद्यापन न कर सकें तो व्रत को दुगना करने पर उसकी पूर्ति मानी जाती है।

व्रतोद्यापन में जो पूजा के साथ किन्हीं वस्तुओं के वितरण का रिवाज है उसके संबंध में हमारा सुझाव है कि अपनी शक्ति के अनुसार ही व्यय करना चाहिए। उसका संकेत भी हमने उद्यापन विधि में पढ़ा है। शक्ति से बाहर प्रदर्शन करना उचित नहीं है।

व्रत के दिनों में निश्चित मंत्र का जप, पूजा, स्वाध्याय और धर्माराधन तथा आरभ त्याग के साथ शांतिपूर्वक दिवस व रात्रि व्यतीत करना चाहिए। ब्रह्मचर्य पूर्वक रहना आवश्यक है। भोजन भी ऐसा गरिष्ट न हो जो

रात्रि को पिपासा आदि बाधाएँ उत्पन्न कर पीड़ा पहुँचाए। जहाँ तक संभव हो व्रत का संकल्प किसी दिगम्बर गुरु के समक्ष करना चाहिए।

व्रतों को करने के पूर्व कुछ बिन्दुओं पर मुख्यतः से विचार करना चाहिए, जो निम्न हैं-

1. त्याग, यम और नियम रूप होता है। मद्य, माँस, मधु एवं पाँच पाप आदि का त्याग यम (जीवन पर्यन्त) रूप होता है। नियम रूप त्याग ये व्रत आदि हैं।

2. उपवास में जल से मुख शुद्धि नहीं की जाती है।

3 मंदिर में विराजमान प्रतिष्ठित जिनेन्द्र प्रतिमाएँ अर्हत्परमेष्ठी की हैं अतः उनका अभिषेक हिन्दी या संस्कृत अभिषेक पाठ बोलकर करना चाहिए, जन्म कल्याणक का पाठ बोलकर नहीं। अभिषेक जल मस्तक व आखों के ऊपरी भाग में लगाना चाहिए। अभिषेक जल पीना या शरीर पर चुपड़ना दोष है, अभिषेकजल कूप में नहीं डालना चाहिए।

4 जैन धर्मानुसार सूर्योदय से 6 घड़ी का दिनमान माना है। उससे कम ग्राह्य नहीं है।

अष्टमी चतुर्दशी आदि व्रत भी उसी दिन किये जाते हैं। षोडशकारण, दशलक्षण आदि भी इसी प्रकार किये जाते हैं। पंचांगों से ही हम अपने धर्मानुसार नियमों का पालन करते हैं। यदि पंचांग की अष्टमी या दशलक्षण षोडशकारण का प्रथम दिन 6 घड़ी कम होता है तो एक दिन पहले से हमें ये व्रत आरंभ करना चाहिए। बीच में दो तिथियाँ भी शामिल हो सकती हैं। ऐसी स्थिति में उक्त पूर्व दिन का हिसाब ठीक बैठ जाता है। दो तिथि भी हो तो व्रत पहली तिथि में करना चाहिए। अंतिम दिन तो प्रत्येक व्रत का पूर्व से ही निश्चित रहता है। जैन धर्मानुसार जिसदिन छह घड़ी से कम हो तो आगे का दिन ही माना जाता है। षोडशकारण में कुल 32 दिन होते हैं। बीच में दिन घट गया हो तो प्रारंभ दिन से एक या दो दिन पूर्व से प्रारंभ करना चाहिए। यह व्रत मासिक नहीं मानना चाहिए। इसमें 32 दिन ही होते

हैं 16 उपवास और 16 पारणा या एकाशन करके यह व्रत पूर्ण होता है।

इस ग्रन्थ में ज़ो व्रत एवं उद्यापन विधि का स्पष्ट और विशद् वर्णन किया गया है उन सबका अन्वेषण कर एक बड़ी कमी को पूर्ण करने वाले ब्र. जय "निशांत" जी का समाज आभारी है। वे श्री दिग. जैन पंचबालयति मंदिर के विशाल आयोजन एवं निर्माण के सूत्रधार हैं। उनका परिश्रम सराहनीय है। धार्मिक प्रवृत्ति वाले साधर्मी बन्धु इससे लाभ उठावें।

इन्दौर नाथूलाल जैन शास्त्री

प्रस्तावना

संयमोऽपि सदारक्ष्यो निज-कोष-समो बुधैः।
ततोऽधिकं यतो नास्ति निधानं जीवेन परम्।।

-कुरल काव्य 13/2

आत्म संयम की रक्षा अपने खजाने के समान ही करना चाहिए क्योंकि संयम से वढ़कर इस जीवन में और कोई निधि नहीं है। मानव जीवन इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि मानव जीवन में ही उत्कृष्ट संयम साधना हो सकती है।

यदि संयम-व्रत पालन न करें तो मनुष्य और पशुओं में अन्तर नहीं होता है। नरक गति में साधन हीनता है और स्वर्गों में भोगाभिलाषा की अधिकता है, वहाँ देव असंयमी जीवन जीते हैं। पशु पर्याय में आगमानुसार अणुव्रत(देश सयम) धारण करने की पात्रता तो है, परन्तु सकल संयम ग्रहण करने में पशु असमर्थ हैं। पं. द्यानतराय जी ने संयमधर्म की पूजा में स्पष्ट किया है- "नरक सुरग पशुगति में नाहिं"। सयम के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए कविवर द्यानतराय जी ने लिखा है- "जिस बिना नहीं जिनराज सीझे, तु रुल्यो जग कीच में" अर्थात् बिना सयम धारण किये जब तीर्थंकर को मोक्ष नहीं मिलता तब हम सामान्य श्रावकों को कैसे मिल सकता है? अतः हमें आत्मा को परमात्मा बनाने के लिए निरन्तर सयम साधना करना चाहिए। श्री रइधूकवि कहते हैं "संयम बिन घड़ी नियत्थ जाऊँ" अर्थात् संयम के बिना जीवन की एक घड़ी भी नहीं जाना चाहिए। हमारा जीवन संयम पूर्वक ही बीतना चाहिए क्योंकि आगामी आयु का बन्ध भुज्जमान आयु के त्रिभाग रूप अपकर्ष काल में होता है, यह त्रिभाग आठ बार आ सकता है। हमें पता नहीं है कि कब आयु का बन्ध समय आवेगा, अतः हमें प्रतिसमय संयम साधना में ही समय व्यतीत करना चाहिए। यदि असंयमी अवस्था में आयुबन्ध हुआ तो अशुभ आयु का बन्ध होगा। अतः संयम ही सुखी जीवन की आधार शिला है।

श्रावकों के कर्तव्यों में आचार्यों ने संयम को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। आचार्य गुणधर कहते हैं।

"दाणं पूया सीलमुववासो चेदि चउव्विहो सावय धम्मो ।"

कषाय पाहुड़ सूत्र 82

.दान, पूजा, शील और उपवास ये श्रावक के चार मुख्य कर्तव्य हैं। आचार्यों ने श्रावकों के कल्याणार्थ विषय कषायों से बचने के लिए उपवास आदि को श्रावक का कर्तव्य बताया है।

आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने श्रावकों को निर्देश देते हुए कहा है-

"दाणं पूजा मुक्खं सावयधम्मेण तेण विणा"

-रयणसार गाथा 10

श्रावक का धर्म दान-पूजा के बिना नहीं हो सकता।

आचार्य श्री पद्मनन्दि ने श्रावक के षटकर्मों का उल्लेख करते हुए संयम व्रत दान आदि को प्रतिदिन करने का निर्देश दिया है।

देवपूजा गुरुपास्तिः स्वाध्यायः संयमस्तपः।
दानं चेति गृहस्थानां षट्कर्माणि दिने-दिने।।

-पद्मनन्दि पञ्च विंशतिका अध्याय 6/7

देवपूजा, गुरुभक्ति, स्वाध्याय, सयम, तप और दान गृहस्थ को प्रतिदिन करने चाहिए। जब श्रावक सकल्प पूर्वक सयम का पालन करता है तो उसके परिणाम निर्मल होते हैं और वह अशुभ भावों से बचता है। रयण- सार में गाथा 59 से 61 तक आचार्य कुन्दकुन्द ने अशुभ और शुभ भावों का निम्नानुसार वर्णन किया है।

हिंसादि पाप, क्रोधादि कषाय, मिथ्याज्ञान, पक्षपात, मात्सर्य अष्टमद, दुरभिनिवेश, अशुभ लेश्या, विकथा में प्रवृत्ति होना अशुभ भाव हैं। अशुभ भाव को त्याग करने से संवर होता हैं।

छह द्रव्य, पाँच अस्तिकाय, सात तत्त्व, नौ पदार्थ का चिन्तन बारह अनुप्रेक्षा, रत्नत्रय, दयाधर्म आदि परिणाम शुभ भाव हैं। श्रावक को

गृहस्थाश्रम में दैनिक आश्रव रोकने के लिए देवपूजा, स्वाध्याय, संयम, दान आदि का पालन अवश्य करना चाहिए। गृहस्थोचित कर्तव्यों का पालन करने से श्रावक अपने कर्मों की निर्जरा कर लेता है।

व्रताचरण की आवश्यकता-

मोह-तिमिरापहरणे, दर्शन-लाभादवाप्त-संज्ञानः
रागद्वेष-निवृत्यै, चरणं प्रतिपद्यते साधुः।1।

-रत्नकरण्डक श्रावकाचार अध्याय -3/1

मोहान्धकार के दूर होने से सम्यग्दर्शन एवं सम्यग्ज्ञान प्राप्त कर भव्य जीव रागद्वेष की निवृत्ति के लिए चारित्र को धारण करता है। रागद्वेष आदि को नष्ट करने में संयम ही समर्थ है।

व्रतों को ग्रहण करने से ससारी जीवों के सुख का मार्ग प्रशस्त होता है। व्यक्ति महाव्रत/देशव्रत आदि का पालन कर आत्मकल्याण कर लेते हैं किन्तु असमर्थ, हीन भाग्य वाले, दीन-दुःखी, तिरस्कृत व्यक्ति जो कि महाव्रत/ देशव्रत आदि धारण नहीं कर पाते वे सामान्य व्रतों के द्वारा अपना कल्याण करते हैं। पतित एव अज्ञानी व्यक्ति भी व्रत धारण कर पावन एवं सुखी हो जाते हैं। पौराणिक ग्रन्थों में उल्लेख है कि अनन्त भवों के दुःख उठाने वाले एवं कुगतियों में जन्म लेकर संसार भ्रमण करने वाले जीवों ने व्रतों के द्वारा सद्गति एवं सुख प्राप्त किया है। ऐसी अनेक कथाएँ वर्णित हैं जो व्रताचरण की आवश्यकता को और भी महत्त्वपूर्ण बना देती हैं।

व्रती का लक्षण-

हिंसादिक पाँच पापों से विरत होने के साथ-साथ त्रिशल्यों से मुक्त होना भी अनिवार्य है अन्यथा यथार्थ मोक्षमार्ग के साध्य तक पहुँचना कठिन होता है क्योंकि कामनाएँ कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में विद्यमान रहतीं हैं जिससे साधना काल में चित्त निराकुलता को उपलब्ध नहीं कर पाता हैं इसीलिए ''निःशल्यो व्रती'' यह लक्षण सार्थक मालूम होता है।

मायानिदान-मिथ्यात्व शल्या-भावविशेषतः।
अहिसादि-व्रतोपेतो व्रतीति व्यपदिश्यते ।

तत्त्वार्थसार 4/78

माया, मिथ्या और निदान इन तीन शल्यों से रहित जो अहिसा आदि व्रतों का पालन करता है वही व्रती कहलाता है। आचार्य उमास्वामी ने व्रती का लक्षण "नि शल्यो व्रती" कहा है।

व्रती के भेद-

व्रती के विविध भेदों का जो उल्लेख जिनागम में दृष्टिगोचर होता है वह मुख्यत अतरग और बहिरग कषायों की क्षीणता के ऊपर आधारित है। अतरग कषायों के क्षय-उपशम आदि अवस्थाओं के होने पर जो सक्लेष की हानि तथा विशुद्धि की वृद्धि होती है, साथ ही अहिसादिक व्रतों के पालन में जो निष्ठा प्रकट होती है। इन सब में अभ्यतर कषाय मल का अभाव ही जानना चाहिए। बाह्य निरतिचार व्रतों का पालन प्रशम, सवेग, अनुकपा, आस्तिक्य भावो का प्रादुर्भाव तथा अष्टाग रूप सम्यग्दर्शन के अगों मे प्रवृत्ति यह व्रती के बाह्य जीवन की अवस्था होती है। प्रत्येक व्रती का यह साध्य रहता है कि वह समस्त बाह्य और अतरग द्वन्द से छूटता हुआ परम प्राप्तव्य आत्मतत्त्व को उपलब्ध करे। इसी प्राप्तव्य हेतु विविध सोपानों अथवा प्रतिमाओं का उल्लेख भी जिनागम मे दृष्टव्य है, इस प्रकार यह भेदों का जो उल्लेख वह मूलत पर का विमोचन और स्व की उपलब्धता की ओर इगित करता है। प्रत्येक साधक को भेदों की परिभाषा में न उलझ कर उसके मूल साध्य को प्राप्त करना चाहिए।

अनगारस्तथागारी स द्विधा परिकथ्यते
महाव्रतोऽनगारः स्याद्गारी स्यादणुव्रतः।

तत्त्वार्थसार 4/79

अनगार और आगारी के भेद से व्रती दो प्रकार के हैं। महाव्रती अनगार(मुनि) कहलाते हैं और अणुव्रत के धारक आगारी (श्रावक) कहलाते है। चारित्र प्राभृत में भी इस प्रकार कहा गया है।

द्विविधं संयमचरणं सागारं तथा भवेत् निरागारम्
सागार सग्रन्थे परिग्रहाद्रहिते निरागारम्।

चारित्र प्राभृतम 20

चारित्राचार के दो भेद हैं सागार और निरागार। सागार चरित्राचार परिग्रह सहित गृहस्थ के होता है। और निरागार चरित्राचार परिग्रह रहित मुनि के होता है और भी कहा है-

सकलं विकलं चरणं तत्सकलं सर्वसंग-विरतानाम्
अनगाराणां विकलं सागाराणां ससंगानाम्।

रत्नकरण्डक श्रावकाचार, अध्याय 3/4

वह चारित्र सकल चारित्र एव विकल चारित्र के भेद से दो प्रकार का है उनमें से सकल चारित्र समस्त परिग्रहों से रहित मुनियों के और विकल चारित्र परिग्रह युक्त ग्रहस्थों के होता है। शक्त्यनुसार श्रावक धर्म तीन प्रकार का है पाक्षिक, नैष्टिक एव साधक। सप्तव्यसन का त्याग, अष्टमूलगुण पालन, रात्रिभोजन त्याग, छानकर पानी पीना, प्रतिदिन देव दर्शन करना यह पाक्षिक श्रावक का साधारण संयम है, नैष्ठिक श्रावक का संयम निम्न प्रकार है।

दर्शनं व्रतं सामायिकं प्रोषधं सचित्तं रात्रिभुक्तिश्च ।
ब्रह्मचर्य आरम्भः परिग्रहः अनुमतिः उद्दिदट्ठ देसविरदो य ।21।

(1) दर्शन (2) व्रत (3) सामायिक (4) प्रोषध (5) सचित्तत्याग (6) रात्रि-भुक्तित्याग (7) ब्रह्मचर्य (8) आरम्भ त्याग (9) परिग्रह त्याग (10) अनुमति- त्याग (11) उद्दिष्ट त्याग। ये सब देशविरत अथवा सागार चारित्राचार हैं। जिनका पालन नैष्टिक श्रावक करता है, इन्हें प्रतिमा के नाम से भी जाना जाता है। ससार, शरीर और भोगों से विरक्ति होने लगती है तब प्रतिज्ञा का जो भाव प्रकट होता है उसे प्रतिमा कहा गया है। प. बनारसीदास ने उसे इस प्रकार कहा है।

संयम भाव जगो जबै अरुचि भोग परिणाम।
उदय प्रतिज्ञा को भयो सो प्रतिमा ताको नाम।।

इन ग्यारह प्रतिमाओं का निरतिचार पालन करना ही श्रावक धर्म की उत्कृष्टता है। सागार सयमाचरण (व्रत प्रतिमा) को आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने बारह प्रकार का कहा है।

पञ्चेव गुव्वयाइं गुणव्वयाइं हवन्ति तहतिण्णि।।
सिक्खावय चत्तारि य संयम चरणं च साया रं।।

चारित्र पाहुड 23

पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, और चार शिक्षाव्रत इस प्रकार बारह प्रकार का सागार सयमाचरण चारित्र है यह गृह निरत श्रावक के होता है। इन बारह व्रतों का निरतिचार पालन करके समाधि मरण करने वाला साधक कहलाता है। इन बारह प्रकार के व्रतों के पालनार्थ जितनी इच्छाओं का निरोध होता है वह तप की कोटी में माना गया है।

तप का लक्षण-

सम्यक् प्रकार से निष्कांक्ष भाव से इच्छाओं का निरोध करना तप है, तप का मुख्य प्रयोजन सस्कारों का क्षय कर स्व की तरफ लक्ष्य करना है, मानव विविध सस्कारो का पुज है, इसलिए जैनाचार्यों ने कुसस्कार से सुसस्कार की तरफ और फिर दानों ही सस्कारों से मुक्त होकर शुद्ध की तरफ पहुँचने का सकेत दिया है। बाह्य और अभ्यतर तप के जो भेद है ये दोनों ही भेद मन, वचन, काय की शुद्धि प्रकट करने के लिए किये गए है। अत तप के द्वारा साधक कुसस्कारों का क्षय करते हुए सुसस्कार में निवास कर शुद्ध तत्त्व को उपलब्ध करता है।

परं कर्म क्षयार्थं यत्तप्यते तत्तपः स्मृतम् ।

तत्वार्थसार अध्याय -6

अर्थात् कर्मों का क्षय करने के लिए जो किया जावे, वह तप कहलाता है।

इच्छा निरोधस्तपः

इच्छाओं को रोकना तप है। उपवास, एकाशन आदि व्रतों में भोजन, शयन विषय कषाय आदि विकारों को रोकते हैं वह तप है, वह कर्म निर्जरा में कारण है।

तप के भेद- तप के दो भेद हैं (1) बाह्य तप (2) अभ्यन्तर तप। इनके 6-6 भेद हैं।

बाह्य तप- अनशनावमौदर्य-वृत्तिपरिसंख्यान-रसपरित्याग विविक्त-शय्याशन कायक्लेशा बाह्यं तपः। -तत्त्वार्थ सूत्र अध्याय-9 सूत्र-19

अनशन, अवमौदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रस परित्याग, विविक्त शय्यासन, कायक्लेश ये बाह्य तप हैं।

अभ्यन्तर तप-प्रायश्चित्त-विनय-वैयावृत्य-स्वाध्याय-व्युत्सर्ग ध्यानान्युत्तरम्।

-तत्त्वार्थ सूत्र अध्याय-9 सूत्र-20

प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग एवं ध्यान ये अभ्यन्तर तप हैं।

श्रावक की अपेक्षा तप के लक्षण-

श्रावक वही है जो श्रद्धावान, विवेकवान और क्रियावान हो। यहाँ क्रियावान से हमें श्रावक का चारित्र ग्रहण करना है। वह चारित्र उसके यम और नियम के रूप में द्विधा विभक्त है। यम रूप से तो प्रत्येक श्रावक को नित्य देव दर्शन करना, छना जल ग्रहण, रात्रि भोजन त्याग तथा मद्य, मांस, मधु का त्याग करना चाहिए। नियम रूप से विविध व्रतों का अनुष्ठान दिग्व्रत, देशव्रत, गुणव्रत आदि का पालन करना चाहिए। ये दोनों यम और नियम ही श्रावक के लिए तप हैं क्योंकि श्रावक इनके द्वारा स्वच्छद मन, वचन और काय की प्रवृत्ति को रोकने में समर्थ हो जाता है। इसलिए इस तप के द्वारा अनिवार्य रूप से निर्जरा घटित होती रहती है। इस प्रकार श्रावक को यम और नियम को दत्त चित्त हो सम्यक् रीति से पालन करना चाहिए।

नियमश्च तपश्चेति द्वयमेतन्न भिद्यते ।242।
तेन युक्तो जनः शक्त्या तपस्वीतिनिगद्यते
तत्र सर्व प्रयत्नेन मतिः कार्या सुमेधसा ।243।

-पद्म पुराण 14/242-243

नियम और तप ये दो पदार्थ जुदे-जुदे नहीं हैं।

जो मनुष्य नियम से युक्त है वह शक्ति के अनुसार तपस्वी कहलाता है। इसलिए बुद्धिमान मनुष्य को सब प्रकार से नियम अथवा तप में प्रवृत्त रहना चाहिए ।

"पर्वस्वथ यथाशक्ति भुक्ति-त्यागादिकं तपः।
वस्त्रपूतं पिबेत्तोयं रात्रिभोजन-वर्जनम्।।"

-पद्मनन्दि पञ्च विशतिका 6/25

छना जल एव रात्रि भोजन का त्याग करते हुए श्रावक को पर्व के दिनों (अष्टमी एव चतुर्दशी) में अपनी शक्ति के अनुसार भोजन के परित्याग आदि रूप(अनशनादि) तपों को करना चाहिए। इन पवित्र दिनों में जीव दया का पालन करना चाहिए एव कषाय आदि विकारी भाव नहीं करना चहिए।

उपवास की परिभाषा-

दी गई उपर्युक्त परिभाषाओ से यह स्पष्ट है कि अतरग कषाय परिणामो का निरोध और बाह्य चतुर्विध प्रकार का आहार विमोचन उपवास है। उपवास की इस परिभाषा से स्पष्ट होता है कि साधना का मार्ग अतरग और बहिरग साधनों पर आधारित है। जो लोग मात्र अतरग साधन पर जोर देते हैं और बहिरग साधन को वेबुनियाद ठहराते है, उनकी दृष्टि अभी इस परिभाषा से समीचीन नहीं है तथा जो लोग मात्र बाह्य त्याग में ही अपना जीवन का सर्वस्व प्राप्तव्य मान लेते हैं वे भी भ्रम में है। अत हमें चाहिए कि हम लोग समीचीनतया अतरग और बहिरग दोनों मार्गों की आराधना करते हुए अपने साध्य को प्राप्त करें।

कषाय विषयाहारो त्यागो यत्र विधीयते।
उपवासः स विज्ञेय· शेषं लंघनक विदुः।।

मोक्षमार्ग प्रकाशक पृ० 7/231

विषय कषाय के साथ आहार (चारों प्रकार का) का त्याग करना यथार्थ उपवास है, अन्यथा लघन है। विषय-कषाय के बिना मात्र आहार का त्याग करना अर्थात् कषाय की तीव्रता में आहार का त्याग करना लघन मात्र है। इससे आत्म कल्याण एव कर्म निर्जरा सम्भव नहीं है।

चार प्रकार का आहार निम्न प्रकार का है।

(1) खाद्य- पूड़ी, रोटी, दाल, चावल आदि।

(2) स्वाद्य- लवंग, इलायची आदि।

(3) लेह्य- रबड़ी आदि चाटने वाले पदार्थ।

(4) पेय- पानी, दूध, शरबत, रस आदि पीने वाले पदार्थ।

उपवास के दिन इन चार प्रकार के आहार का त्याग किया जाता है।

उपवास के तीन प्रकार-

प्रोषधोपवास के जो उत्तम, मध्यम और जघन्य भेद आगम ग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं, उन सबका अभिप्राय एकमात्र यही है कि अधिक से अधिक अपना आत्मबल प्रकट करते हुए क्षुधा, तृषा इत्यादि की बाधाओ को सहन करते हुए अपने आप को स्व में अधिक से अधिक स्थापित करना चाहिए। उत्तम आदि भेदों मे अपनी शक्ति के अनुसार निर्दोष प्रवृत्ति करना चाहिए।

(1) उत्तम उपवास-सप्तमी त्रयोदशी को भोजनोपरान्त नियम (धारणा) करना अष्टमी या चतुर्दशी के दिन चारों प्रकार के आहार का त्याग कर नवमी या पूर्णिमा को एकाशन (पारणा) यह 16 पहर का है।

(2) मध्यम उपवास-सप्तमी या त्रयोदशी को सायं कालीन भोजनोपरान्त उपवास लेना, अष्टमी चतुर्दशी का उपवास, नवमी पूर्णिमा को पारणा यह 12 पहर का है।

(3) जघन्य उपवास-अष्टमी या चतुर्दशी को प्रातःकाल ही उपवास लेना यह 8 पहर का है।

पर्व की परिभाषा पूज्यपाद आचार्य ने निम्न प्रकार से की है।

"प्रोषध शब्दः पर्व पर्यायवाची"। सर्वार्थ सिद्धि अध्याय-7 पृ0-279

प्रोषध शब्द का अर्थ पर्व है।

अर्थात् प्रोषध पूर्वक लिए गये उपवासादि को पर्व की संज्ञा दी गई है।

व्रत का उद्देश्य-

हिंसाया अनृताच्चैव स्तेयाद्ब्रह्मतस्तथा
परिग्रहाच्च विरतिः कथयन्ति व्रतं जिनाः।

-तत्त्वार्थसार 4/60

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिव्रतम्

-तत्वार्थसूत्र, अध्याय 7/1

हिसा, झुठ, चोरी, कुशील, परिग्रह से निवृत्ति होने को जिनेन्द्र भगवान् व्रत कहते हैं। व्रत का उद्देश्य कषाय को कृश करना है, कायक्लेश नहीं।

संकल्पपूर्वकः सेव्ये नियमोऽशुभ-कर्मणः।
निवृत्तिर्वा व्रतं स्याद्वा-प्रवृत्तिः शुभकर्मणि।।

-सागार धर्मामृत-2/80

पञ्चेन्द्रिय जन्य विषयों को सकल्प पूर्वक त्याग करना और हिंसादिक अशुभ कर्मों से विरक्त होना अथवा पात्रदानादि शुभकार्यों में प्रवृत्ति करना व्रत कहलाता है।

व्रत एक पवित्र कर्म/अनुष्ठान है जो साधक की मनोदशा परिवर्तित करने में सक्षम होता है। यही कारण है कि जैनाचार्यों ने पापों से विरक्ति का नाम व्रत कहा है।

व्रतों के भेद-

उपर्युक्त सभी व्रतों के भेद श्रावक अपनी योग्यता की वृद्धि करने के लिए प्रयोग करता है। जैसे-जैसे श्रावक के अथवा साधु के आत्मबल की वृद्धि होती जाती है वैसे-वैसे ही वह उत्तरोत्तर उच्च श्रेणी को उपलब्ध करता जाता है। विशिष्ट काय क्लेश जन्य स्थिति उत्पन्न होने पर उसके परिणामों में विशुद्धि हानि को प्राप्त नहीं होती है। इसलिए व्रतों के ये विविध भेद सार्थक हैं।

नियमोयमश्च विहितौ द्वेधा भोगोपभोग-संहारात्।
नियमः परिमित-कालो यावज्जीवं यमो ध्रियते।

-रत्नकरण्ड श्रावकाचार अध्याय 3/41

भोग और उपभोग के परिमाण का आश्रय कर नियम और यम दो प्रकार से प्रतिपादित हैं उनमें जो काल के परिमाण से सहित है वह नियम है और जो जीवन पर्यन्त के लिए धारण किया जाता है वह यम कहलाता है।

व्रत विधि की अपेक्षा से व्रत के निम्न भेद हैं-

1. सावधि 2. निरवधि 3. दैवसिक 4. नैशिक 5. मासावधि 6.वर्षावधि 7. काम्य 8 अकाम्य 9. उत्तमार्थ।

-व्रत तिथि निर्णय पृ0-160

(1) **सावधि व्रत**- जिन व्रतों की प्रारम्भ तिथि निश्चित होती है वे सावधि व्रत कहलाते हैं। सावधि व्रत दो प्रकार के होते हैं-

1 तिथि अवधि 2. दिन की आवधि

(अ) तिथि अवधि- तिथि के आधार से किये जाने वाले व्रत जैसे- सुख चिन्तामणि भावना, पञ्चविंशति भावना, णमोकार पञ्चविंशति भावना आदि।

(ब) दिन की अवधि- दिन के आधार से किये जाने वाले व्रत जैसे-दुखहरण, धर्मचक्र, जिनगुणसम्पत्ति, सुख सम्पत्ति, शील कल्याणक, श्रुतिकल्याणक, चन्द्रकल्याण आदि।

(2) **निरवधि व्रत**- जिन व्रतों की कोई अवधि नहीं होती अर्थात् किसी भी तिथि या दिन से प्रारम्भ होने वाले व्रत निरवधि व्रत कहलाते हैं। जैसे-कवलचन्द्रायण, तपोञ्जलि, जिनमुखावलोकन, मुक्तावली, द्विकावली, एकावली आदि।

(3) **दैवसिक व्रत**- जिन व्रतों को दिन में किया जाता है जैसे- रत्नावली, मुक्तावली, कनकावली, जिनगुणसम्पत्ति, सुखसम्पत्ति, शीलकल्याणक, श्रुतकल्याणक, दशलक्षण, रत्नत्रय, अष्टाह्निका।

(4) **नैसिक व्रत**- जिन व्रतों में रात्रि के समय भक्ति, जाप, ध्यान करते हुए जागरण किया जाता है।

जैसे- आकाश पञ्चमी, चन्दनषष्ठी, नक्षत्रमाला, जिनरात्रि आदि।

(5) **मासावधि व्रत**- एक माह की अवधि वाले व्रत
जैसे- षोडशकारण, मेघमाला।

(6) **वर्षावधि व्रत**- वर्ष की अवधि से होने वाले व्रत

(7) **काम्यव्रत**- जो व्रत कामना के साथ किये जाते हैं।
जैसे सकटहरण, दुखहरण धनदकलश।

(8) **अकाम्यव्रत** कामना से रहित व्रत अकाम्य व्रत हैं।
जैसे- कर्मचूर, कर्मनिर्जरा, मेरुपक्ति आदि।

(9) **उत्तमार्थव्रत**- आत्मशुद्धि पूर्वक किये जाने वाले व्रत
जैसे-सिह निष्क्रीडित भाद्रवन सिहनिष्क्रीडित, सर्वतोभद्र आदि।

व्रत सकल्प मन्त्र- व्रत लेते समय श्रीफल के साथ सकल्प

-व्रत तिथि निर्णय पृ० 201

ॐ अद्य भगवतो महापुरुषस्य ब्रह्मणो मतेस्मिन् मासाना मासोत्तमे मासे-- मासे------पक्षे ----तिथौ-------वासरे जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे ----प्रदेशस्य- - नगरे एतत् अवसर्पिणी कालावसान चतुर्दश प्राभृतमानिमानित सकललोकव्यवहारे श्री गौतमस्वामी श्रेणिकमहामण्डलेश्वर समाचरित सन्मार्गविशेषे -----वीर निर्वाण सवत्सरे अष्ट महाप्रातिहार्यादिशोभित श्री मदर्हत्परमेश्वर प्रतिमा/ अष्टाविशति मूलगुण- आराधक मुनिराज सन्निधौ अह------व्रतस्य सकल्प करिष्ये। अस्य व्रतस्य समाप्ति पर्यन्त मे सावद्य त्याग गृहस्थाश्रमजन्यारम्भ परिग्रहादीनापि त्याग ।

(नौ वार णमोकार मन्त्र की जाप कर व्रत ग्रहण करें)

व्रत का सकल्प (हिन्दी)-

श्री वीतराग सर्वज्ञदेव को नमस्कार कर वृषभादि चौबीस तीर्थकरों के द्वारा प्रवर्तित जिनधर्मानुसार मास में पक्ष मे तिथि मे वार में जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र, आर्यखण्ड भारत देश के प्रदेश स्थित नगर में श्री वीर निर्वाण सवत्सर मे अष्ट प्रातिहार्य से शोभित जिनेन्द्र प्रतिमा

के सान्निध्द में मैं............ ....व्रत का संकल्प करता हूँ। इस व्रत के समाप्ति पर्यन्त यथाशक्ति पापों का त्याग कर एवं गृहस्थ संबंधी आरंभ परिग्रहादि का भी त्याग करता हूँ। इस व्रत की विधि अनुसार व्रत पूजा, व्रत कथा एवं व्रत मंत्र पूर्वक एकाशन/उपवास करूँगा/करूँगी। बीमारी, सूतक, पातक, अशुद्धि आदि किसी कारणवश व्रत की तिथियाँ न मिल सकीं तो उसे आगे तिथियों में व्रत करके व्रत पूरा होने पर अपनी शक्ति अनुसार व्रत का उद्यापन करूँगा/करूँगी। हे भगवन! मैं इस व्रत को यथा संभव शुद्धि पूर्वक करके अधिक से अधिक समय धर्म में लगाऊँगा। फिर भी मुझसे मन से, वचन से, काय से जाने अनजाने में कोई गलती हो जाये तो मैं भगवान से क्षमा माँगता हूँ/माँगती हूँ। हे भगवन! इस व्रत को करने से मेरे सारे कष्ट दूर हो जायें, मेरे सारे दुखों का नाश हो, मुझे बोधि की प्राप्ति हो, मेरे आठों कर्मों का नाश हो और यथाशीघ्र मुझे मोक्ष की प्राप्ति हो।

हे भगवन! इस व्रत को करने से मेरे सकल परिजनों को सुख समृद्धि और शांति मिले। जगत के सकल जीवों को सुख और शांति मिले।

ॐ ह्रा ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि उ सा नम अहं . (व्रत का नाम) .. . .व्रत धारयामि, प्रतिष्ठयामि ह्रीं नमः स्वाहा।

(वेदी पर श्रीफल चढ़ाकर नौबार णमोकार का ध्यान करें)

व्रत गुरु के समक्ष ही लेना चाहिए, गुरु का सान्निध्य न होने पर प्रतिमा के समक्ष व्रत लेकर प्रयास पूर्वक किन्ही महाराज से व्रत का संकल्प लेकर उसकी प्रायश्चित्त विधि समझ लेना चाहिए।

व्रत ग्रहण में सावधानी-

समीक्ष्य व्रत-मादेय-मात्तं पाल्यं प्रयत्नतः
छिन्नं दर्पात्प्रमादाद्वा प्रत्यवस्थाप्य-मञ्जसा।

-सागार धर्मामृत 2/79

देश कालादिक को देखकर व्रत लेना चाहिए और ग्रहण किये व्रतों का प्रयत्न पूर्वक पालन करना चाहिए। मदावेश या प्रमाद से व्रत भंग हो जाये तो शीघ्र ही प्रायश्चित्त लेकर पुनः व्रत धारण करना चाहिए।

व्रतों में अतिचार-

अतिक्रमो मानस शुद्धि हानिः व्यतिक्रमो यो विषयाभिलाषः।
तथातिचारं करणालसत्वं भंगो ह्यनाचार-मिहव्रतानाम।।

व्रत के भग करने का मन में विचार आना अतिक्रम, विषयों की अभिलाषा (व्रत भग करने वाली सामग्री को एकत्रित करना) होना व्यतिक्रम, इन्द्रियों की असावधानी अर्थात् व्रत के आचरण में शिथिलता होना अतिचार और व्रत का सर्वथा भंग हो जाना अनाचार है। अतएव व्रत में किसी भी प्रकार की असावधानी नहीं होनी चाहिए।

इसके साथ एक आभोग नाम का अतिचार भी कहा गया है, व्रत भंग हो जाने पर प्रायश्चित्त नहीं करना पूर्व की तरह अनाचार रूप प्रवृत्ति करना आभोग है अर्थात् व्रत भग हो जाने पर प्रायश्चित्त न करते हुए व्रत को छोड़ देना आभोग अतिचार है।

व्रतों की रक्षा कैसे करें-

प्राणान्तेऽपि न भंक्तव्यं गुरु-साक्षिश्रितं व्रतम्।
प्राणान्तस्तत्क्षणे दुःखं व्रत-भंगो भवे भवे।।

-सागार धर्मामृत 7/52

गुरु की साक्षी में लिया हुआ व्रत यदि प्राण भी चले जायें तो भी भग नहीं करना चाहिए क्योंकि प्राणनाश (मरण) के समय मात्र ही दुख होता है परन्तु व्रत भंग होने पर भव-भव में दुख ही मिलता है। व्रत बीच में छूट जावे तो उसे शुरू से करना चाहिए।

जइ अंतरम्मि कारण-वसेण एक्को व दो व उपवासा।
ण कओ तो मूलाओ पुणो वि सा होई कायव्वा।।

-वसुनन्दिश्रावकाचार 360

यदि व्रत करते हुये बीच में किसी कारण वश एक या दो उपवास न किये जा सके हों तो मूल से अर्थात् प्रारम्भ से लेकर पुनः वही उपवास विधि करना चाहिये।

निरतिचार व्रतों का फल-

व्रतानि पुण्याय भवन्ति जन्तोर्न सातिचाराणि निषेवितानि
सस्यानि किं क्वापि फलन्ति लोके मलोपलीढानि कदाचनापि।

-सागार धर्मामृत क्षेपक 4/16

जीवों को व्रत पुण्य फल देते हैं किन्तु अतिचार सहित व्रत पुण्य- जनक नहीं होते हैं। जिस प्रकार केवल धान बो देने से खेती फलदायक नहीं होती उसमें से होने वाले घास को निकालकर साफ करना पड़ता है उसके बिना फसल घर में नहीं आती। उसी प्रकार व्रतों को निरतिचार पालन करने से पुण्य होता है, सातिचार व्रतों के द्वारा पुण्य प्राप्त नहीं होता, निरतिचार व्रतों के पालन करने से अनेक सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। रत्नमाला नामक ग्रन्थ में आचार्य शिवकोटि जी कहते हैं।

व्रतशीलानियान्येव, रक्षणीयानि सर्वदा।
एकेनैकेन जायन्ते देहिनां दिव्य सिद्धयः।।

-रत्नमाला 37

जो शील तथा व्रत धारण करते हैं उनकी गृहस्थी की हमेशा रक्षा होती है। एक एक व्रत और एक एक शील के निमित्त से प्राणियों के दिव्य सिद्धि प्राप्त होती है।

अव्रतानि परित्यज्य व्रतेषु परिनिष्ठितः।
त्यजेत्तान्यपि संप्राप्य परमं पदमात्मनः।।

मोक्षार्थी पुरुष अव्रतों को छोडकर व्रतों में स्थिर होकर परमात्मपद प्राप्त करें और परमात्मपद प्राप्तकर उन व्रतों का त्याग करें। निरतिचार व्रतों का पालन करना ही मोक्ष का साधन है, अतिचार सहित व्रत नहीं। यह मात्र ससार सुख दे सकते हैं।

-वृहद द्रव्य सग्रह मो०मा० अधिकार पृ० 256

व्रतों के उद्यापन का विधान-

पञ्चम्यादि-विधि कृत्वा शिवान्ताभ्युदय-प्रदम्
उद्योतयद्यथा-सम्पन्निमित्ते प्रोत्सहेन्मन ।

-सागार धर्मामृत 2/78

मोक्ष पर्यन्त अभ्युदय देने वाली पञ्चमी (मुक्तावली पुष्पाञ्जलि कनकावली रत्नत्रय) आदि व्रतों को करके अपनी आर्थिक शक्त्यनुसार उद्यापन करें, तथा नैमित्तिक व्रत अनुष्ठान मे मन उत्कृष्ट रूप से उत्साहित करे। अर्थात् अत्यन्त प्रभावना पूर्वक अनुष्ठान कर उद्यापन करे जिससे व्रत की महिमा बढे और लोगों को व्रत करने की प्रेरणा मिले।

उद्यापन की विधि-

कर्तव्य जिनागारे महाभिषेक-मद्भुतम्
सद्येश्चतुर्विधै साध महापूजादि-कोत्सवम्।
घण्टाचामर-चन्द्रोपक भृगार्यार्तिकादय
धर्मोपकरणान्येव देय भक्त्या स्वशक्तित ।
पुस्तकादि-महादानम् भक्त्यादेय वृषाकरम्
महोत्सव विधेय सुवाद्य-गीतादि-नर्तनै ।
चतुर्विधाय सधाया-हारदानादिक मुदा
आमत्र्य परया भक्त्या देय सम्मान-पूर्वकम्।
प्रभावना जिनेन्द्राणा शासन चैत्य-धामनि
कुर्वन्तु यथाशक्त्या स्तोक चोद्यापन मुदा।

-जैन व्रत विधान सग्रह पृ 22-24

विशाल मन्दिरों का निर्माण करावें और समारोह के साथ प्रतिष्ठा कराके जिनबिम्ब स्थापन करें पश्चात् चतुर्विध सघ के साथ प्रभावना पूर्वक महाभिषेक के साथ महापूजा करें और घण्टा झालर चमर, छत्र सिहासन, चन्दोवा, झारी, भृगार आदि अनेक उपकरण शक्त्यनुसार देवें।

आचार्यादि महापुरुषों को धर्मवृद्धि, ज्ञानवृद्धि हेतु शास्त्र प्रदान करें, आहारादि देवें। अनेक वादित्रों के साथ गीत एव नृत्यादिक पूर्वक भक्ति प्रमोद भावना के साथ आहारादि चारों प्रकार के दान देवें। जिनेन्द्र भगवान के शासन के महात्म्य को प्रकट कर प्रभावना करें। इस प्रकार उद्यापन कर व्रत का विसर्जन करें। जिस व्रत का उद्यापन करें उतने पूजा के बर्तन, सामग्री, छत्र, चवर, चन्दोवा, शास्त्र, घण्टा आदि उतने ही मन्दिरों को प्रदान करें।

प्रात सामायिक कुर्यात्ततः तात्कालिकीं क्रियाम्
धौताम्बर धरो धीमान् जिनध्यान परायणः।

व्रती श्रावक प्रात काल ब्रह्ममुहूर्त में सामायिक करें पश्चात् नित्यक्रियाओं से निवृत्त होकर शुद्ध वस्त्र धारणकर श्री जिनेन्द्र देव का ध्यान करता हुआ मन्दिर जावें।

महाभिषेक-मद्भुत्यै-र्जिनागारे व्रतान्वितैः
कर्तव्यं सह सघेन महापूजादिकोत्सवम्।

जिनालय में महान आश्चर्य करने वाला महाभिषेक करें। फिर परिवार एव सघ के साथ समारोह पूर्वक महापूजा करें।

ततो स्वगृहमागत्य दान दद्यान् मुनीशिने
निर्दोष प्रासुक शुद्ध मधुर तृप्तिकारणम्।

पूजा के पश्चात् अपने घर में आकर निर्दोष प्रासुक शुद्ध मधुर और तृप्ति कारक आहार मुनिराजों को देवें शेष बचे आहार को कुटुम्ब के साथ स्वय करें। मुनिराज के न होने पर साधर्मीजनों को भोजन करावें।

पञ्चमी व्रत के उद्यापन की विधि बताते हुए आचार्य वसुनन्दी जी लिखते हैं।

अवसाणो पञ्च घडा-विऊण पडिमाओ जिण-वरिंदाणं।
तह पञ्च पोत्थयाणि य लिहाविऊणं ससत्तीए।।

-वसुनन्दिश्रावकाचार 355

तेसिं पइटठ्याले ज कि पि पइटठ्-जोग्ग-मुव-यरण।
तंसव्वं कायव्व पत्तेयं पञ्च पञ्च संखाए।।

-वसुनन्दिश्रावकाचार 356

व्रत पूर्ण हो जाने पर जिनेन्द्र भगवान की पाँच प्रतिमाएँ बनवाकर तथा पाँच शास्त्रों को लिखवाकर अपनी शक्ति के अनुसार उनकी प्रतिष्ठा के लिए जो कुछ भी प्रतिष्ठा योग्य उपकरण आवश्यक हो वे सब पाँच-पाँच की सख्या में बनवाना चाहिए। जो व्रत जितने वर्ष या दिन का किया जाता है उतने शास्त्र आदि बनवाकर मन्दिर जी में रखना चाहिए। उनकी सख्य। व्रतानुसार होना चाहिए उतनी ही सामग्री शास्त्र पूजा के बर्तन अछार जाप, छत्र, चवर अष्टद्रव्य आदि उतने ही मन्दिरों में भिजवाना चाहिए जिससे व्रत एव करने वालों की प्रभावना एव बहुमान बढता है और व्रतों को करने की प्रेरणा मिलती है।

उद्यापन की अन्य विधि-

सम्पूर्णेह्यनु कर्तव्य स्वशक्त्योद्यापन बुधै
सर्वथायेऽप्यशक्त्यादि व्रतोद्यापन सद्विधौ।

व्रत की मर्यादा पूर्ण होने पर शक्ति के अनुसार उद्यापन करें यदि उद्यापन की शक्ति नहीं हो तो व्रत को दुगुना करना चाहिए। व्रत को दुगना करना ही उद्यापन है। वसुनन्दी श्रावकाचार में भी ऐसा ही कहा गया है।

व्रत समापन विधि-

व्रत को पूर्ण करने के बाद ही उद्यापन करना चाहिए। व्रत की समाप्ति के दिन उद्यापन नहीं करना चाहिए। जिस दिन व्रत पूर्ण हो उससे अगले दिन उद्यापन होना चाहिए। दुगना व्रत करने के बाद उद्यापन आवश्यक नहीं है।

व्रत के समापन में जलयात्रा, अभिषेक, मगलाष्टक, सकलीकरण, अगन्यास, स्वस्ति वाचन आदि के उपरान्त सम्बन्धित व्रतोद्यापन की पूजा एव विधान अनुष्ठानपूर्वक कराना चाहिए। सकल्प मन्त्र में तत्सम्बन्धित व्रत

का नाम तथा तिथि नक्षत्रादि जोड़कर संकल्प कर व्रत का समापन करना चाहिए।

व्रत समापन मन्त्र-

ॐ अद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे शुभे---- मासे--- पक्षे----तिथौ------वासरे श्रीमदर्हत प्रतिमासन्निधौ पूर्व-----(व्रत का नाम) गृहीत तस्य परिसमाप्तिं करिष्ये-अह प्रमादाज्ञानवशात् व्रते जायमानदोषाः शांतिमुपयान्ति। ॐ ह्रीं क्ष्वीं स्वाहा। श्रीमज्जिनेन्द्रचरणेषु आनन्दभक्तिः सदास्तु, समाधिमरणं भवतु, पापविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा सर्व शान्तिर्भवतु ह्रीं नमः।

(इस मत्र का नौ बार जाप) -व्रत तिथि निर्णयपृ0-202

व्रत समापन मत्र (हिन्दी) -

जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र के नगर में मास में पक्ष में आज तिथि वार में श्री अर्हंत प्रतिमा के सान्निध्य में व्रत ग्रहण किया था उसका विधि पूर्वक पालन एव उद्यापन करके मै आगे और व्रत करने की भावना के साथ व्रत का समापन कर रहा हूँ। यदि व्रत में प्रमाद या अज्ञानवश व्रत के समय कोई अपराध हुए हों तो उसकी क्षमायाचना करता हूँ। ॐ ह्रीं क्ष्वीं स्वाहा।

श्रीफल या सुपारी आदि चढाकर भगवान को नमस्कार कर नौ वार इस मन्त्र की जाप करें। पश्चात् शान्ति भक्ति के बाद शान्ति विर्सजन करके पूजा समाप्त करना चाहिए एव उद्यापन के अनन्तर ग्रन्थ या धार्मिक पुस्तकें, फल वितरण करना चाहिए।

-व्रत तिथि निर्णयपृ0-46

सामग्री व्यवस्था

शास्त्रों में व्रतों के उद्यापन में लगने वाली सामग्री का उल्लेख व्रतानुसार किया गया है। यथा-

षोडशकारण व्रत- षोडशकारण यन्त्र, पूजन सामग्री, 256चाँदी के स्वस्तिक, 256सुपाड़ी, 16 शास्त्र, 16 नारियल, 16 जोड़ी पूजा के बर्तन, 16छत्र, 16चमर आदि मंगल द्रव्य, चन्दोवा, दान करने के लिए राशि आदि आवश्यक सामान है।

-व्रत तिथि निर्णय पृ0-46

दशलक्षण- छत्र, चमर, झारी आदि मंगलद्रव्य, जपमाला, कलश, दश शास्त्र, मन्दिरों के लिए दस जोड़ी पूजा के बर्तन, दशलक्षण यन्त्र, 100 चाँदी के स्वस्तिक, दस नारियल(सूखे), 100सुपाड़ी आवश्यक होती है। इस उद्यापन में दस घरों में फल बाँटना आवश्यक है।

-व्रत तिथि निर्णय पृ0-45

अष्टाह्निका- मन्दिर में देने के लिए आठ-आठ उपकरण, आठ शास्त्र, पूजन सामग्री, चन्दोवा, पूजन में चढ़ाने के लिए 52 चाँदी के स्वस्तिक, 52 सुपाड़ी, 4 नारियल की आवश्यकता होती है। सिद्धयन्त्र की भी आवश्यकता होती है।

रत्नत्रय- पूजन सामग्री, रत्नत्रय यन्त्र, तेरह शास्त्र, मन्दिरों के लिए 13 जोडी पूजन के बर्तन, छत्र, चमर, झारी आदि मंगल द्रव्य, चन्दोवा तथा राशि। उद्यापन के उपरान्त साधर्मी भाइयों के तेरह घरों में फल भेजना चाहिए।

इसी प्रकार व्रत में सामग्री की योजना निम्नानुसार करना चाहिए-

उद्यापन सामग्री-

हल्दी गाँठ, श्रीफल, बादाम, सुपारी, गोला, लवग, इलायची, चावल, धूप शुद्ध, कपूर, केशर, शुद्ध घृत, माडना, कलावा (पचरंगा धागा), यज्ञोपवीत, रुई, माचिस, मुकुट, मालाएँ, विनायक यन्त्र, पीला कपड़ा, लाल तूस, खादी सफेद, पानी का छन्ना, मंगल कलश, मंगलध्वजा, मन्दिर ध्वजा, मण्डल ध्वजायें, घट यात्रा कलश, पंच रत्न पुड़ियाँ, चाँदी के स्वस्तिक(व्रतानुसार), धोती दुपट्टा (मन्दिर हेतु), चन्दोवा, अछार, पूजा के बर्तन, छत्र, चमर, अष्ट

प्रातिहार्य, अष्ट मंगलद्रव्य, माला(जाप्य), कोयला, आसनी बड़ी, आसनी छोटी, तखत, टेबिल, चौका, चौकी, दीपक बड़े, दीपक छोटे, कुण्ड, पटिया लकड़ी, सजावट का सामान, संगीत पार्टी, बैण्ड बाजे, जुलूस की सामग्री, जपवाले, इन्द्र इन्द्राणी, पीला सरसों, पण्डाल, स्पीकर, जिस व्रत का उद्यापन हो उसका यन्त्र, विधान की किताबें एवं मन्दिर में देने के लिए उपकरण(चाँदी के बर्तन, छत्र, शास्त्र, राशि आदि)।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

व्रतों की विधि आदि का संयोजन अनेक ग्रन्थों से किया गया है। प्रमुख ग्रन्थ निम्नानुसार हैं।

(1) हरिवंश पुराण
(2) सागार धर्मामृत
(3) रत्नकरण्डक श्रावकाचार
(4) आचार्य धर्मसागर अभिनन्दन ग्रन्थ
(5) जैन व्रत तिथि निर्णय
(6) जैन व्रत विधान संग्रह
(7) व्रत कथा कोष
(8) श्रावकाचार संग्रह
(9) क्रियाकोष
(10) जैन व्रत विधि
(11) सुदृष्टि तरंगणि
(12) वर्धमान पुराण
(13) सस्कृत वांगमय शब्दकोष परिच्छेद खण्ड पूर्वार्द्ध
(14) चारित्रसार
(15) जैनेन्द्र कथा कोष

आदि अनेक ग्रन्थों के माध्यम से लगभग 475 व्रतों का परिचय निम्न बिन्दुओं के रूप में दिया गया है।

(1) व्रत का नाम, (2) व्रतारम्भ तिथि, (3) व्रत की अवधि, (4) व्रत की विधि (5) व्रत की पूजा, (6) व्रत की जाप (मन्त्र) (7) व्रत का उद्यापन और (8) विशेष- जिस व्रत में कोई विशेषता हुई तो उसे विशेष शीर्षक से उल्लिखित किया गया है।

जिन व्रतों में विसंगतियाँ देखने को मिलीं उनका सुधार आवश्यक समझकर कुछ संशोधन भी किया गया है। यथा तीर्थंकर कल्याणक तिथियों के अनुसार व्रतों के नाम एवं व्रतों के नाम के अनुसार तिथियों में

संशोधन करना पड़ा है। जो व्रत व्यक्ति विशेष के नाम से थे उन व्रतों को दिया नहीं है। सराग देवों की उपासना का आगम में निषेध है इससे देवी देवताओं के नाम वाले व्रतों को भी नहीं दिया है। इसी प्रकार अन्य मतानुसार वाले व्रतों को भी नहीं दिया जा रहा है, क्योंकि वीतरागता प्राप्त करने के उद्देश्य से किये गये व्रत वीतरागता से अनुराग करने वाले होना चाहिए। रात्रि जागरण को जैन व्रत परम्परा में विशेष महत्त्व नहीं दिया गया है अतः ऐसे व्रतों को भी सम्मिलित नहीं किया गया है। जैन पर्व एवं त्यौहार सम्बन्धि सभी व्रतों को देने का प्रयास किया गया है। फिर भी कुछ व्रत छूट भी गये होंगे। उन्हें विद्वज्जन अन्य स्थान से प्राप्त कर लाभ लेवें। सभी व्रतों के जाप मन्त्र संशोधित कर दिये गये हैं। जिन व्रतों के मन्त्र नहीं थे उन्हें खोज कर दिया गया है क्योंकि व्रत के दिन मन्त्र की जाप अनिवार्य है, इससे भावों में एकाग्रता आती है। कई व्रतों में उद्यापन विधि एवं विधान का उल्लेख नहीं था उन व्रतों के उद्यापन विधान को लिखा गया है। व्रत के दिन भक्तियों का बहुत महत्त्व है। इन्हें भावशुद्धि पूर्वक पढ़ना चाहिये। इस भाव को ध्यान में रखकर भक्तियों को भी संग्रहीत किया गया है। लगभग सभी क्षेत्रों में महिलाएँ ही सबसे ज्यादा व्रत करती हैं। उन्हें व्रतों की पूरी जानकारी नहीं होती है और यदि होती भी है तो पूजा, भक्तियाँ, विधान आदि न मिलने से परेशानी होती है। अतः इस ग्रन्थ के दूसरे खण्ड में व्रत लेने की विधि आदि का पूर्ण विवरण दिया गया है। जिसमें अभिषेक, शान्तिधारा दैनिक पूजा एवं जो व्रत पूजाएँ सहज उपलब्ध नहीं होती थीं उन्हें संकलित किया है। व्रतों के अलावा पूजाएँ सभी पुस्तकों में सरलता से उपलब्ध हो जाती हैं उन्हें ग्रन्थ विस्तार के भय से नहीं दिया जा रहा है।

ग्रन्थ की विषय वस्तु अनेक आचार्यों/मुनिराजों/आर्यिका माताओं ने देखकर आशीर्वाद प्रदान किये हैं एवं अनेक विद्वानों ने इसे आद्योपान्त पढ़कर सुझाव और अभिमत प्रदान किये हैं। उन सभी के चरणों में सादर नमन करते हैं।

इस ग्रन्थ के संयोजन में बहुत समय और श्रम लगा है। जिसे अनेक सन्तों का सहयोग लेकर पूरा किया जा सका है। पूज्य मुनि श्री क्षमासागर जी महाराज ने संपूर्ण विषय को देखकर आवश्यक निर्देशन के साथ आवश्यक लेखों के माध्यम से व्रत एवं पूजन की वैज्ञानिकता, व्रतों की ऐतिहासिकता, वर्तमान समय में श्रावक की दिनचर्या आदि विषय परिमार्जित कराये हैं। पूज्य मुनि श्री सुधासागरजी, समतासागर जी, आर्जवसागरजी, प्रमाणसागरजी, प्रसादसागरजी, सौरभसागरजी के सुझावों से विषय की पूर्णता हुई है। आर्यिका पूर्णमति माताजी ने व्रतों का महत्व देकर ग्रन्थ का वैशिष्ठ्य बढाया है।

लेखन के दुरूह एवं श्रमसाध्य कार्यों को सफलता पूर्वक करने में अर्चना(पम्मी), श्री मंनीष जैन(संजू) ने पूर्ण कुशलता से किया है। संशोधन एवं संवर्द्धन आदि कार्यों में युवा मनीषी ब्र. विनोद भैया जी (पपौराजी) एवं पं. विनोद कुमार जी (रजवांस), ब्र. सरेन्द्र जी (सांगानेर), ब्र. रवीन्द्र जी(सोनागिर), कौशल किशोर भट्ट का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है।

कम्पोजिंग को कुशलता पूर्वक करने के लिये श्री दीपक जैन (ए.व्ही. एस कम्प्यूटर) एवं स्वच्छ एवं स्पष्ट छपाई के लिय श्री नीरज जैन (दिगम्बर) प्रिंटिंग प्रेस आभार के पात्र हैं। इस ग्रन्थ के संयोजन, संशोधन, संवर्धन में प्रत्यक्ष और परोक्ष रूपसे जिनका सहयोग प्राप्त हुआ है एवं जिन्होंने अपनी चंचला लक्ष्मी का उपयोग कर इस ग्रन्थ के प्रकाशन में सहयोग किया है उन सभी के हम बहुत बहुत आभारी हैं।

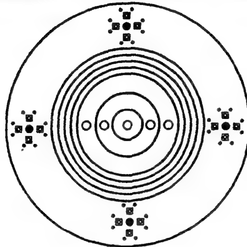
इस ग्रन्थ से भव्य श्रावक श्राविकाएँ लाभ लेकर अपना कल्याण कर मार्ग प्रशस्त करें तो हम अपना प्रयास सफल समझेंगे।

टीकमगढ़

ब्र. पं. गुलाब चन्द्र 'पुष्प'
ब्र. पं. जय 'निशांत'



आष्टाह्निक एवं नंदीश्वर विधान मंडल

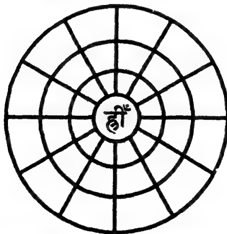


● रतिकर ○ दधिमुख ● अञ्जनगिर

□ बावड़ी ○ मेरु पर्वत

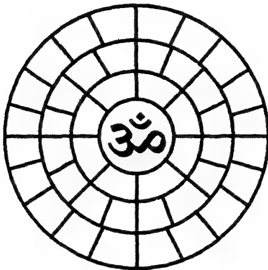
चित्रानुसार मण्डल की रचना करें

कर्मनिर्झर विधान मण्डल



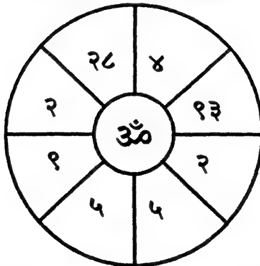
प्रत्येक खण्ड में स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

कल्याण मन्दिर विधान मंडल



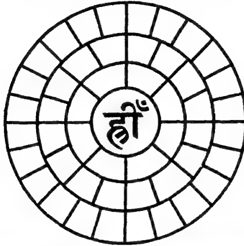
प्रत्येक खण्ड में क्लीं अंकित करें।

कर्मदहन विधान मण्डल



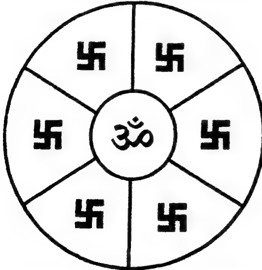
प्रत्येक खण्ड में लिखी संख्यानुसार स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

गणधर वलय विधान मण्डल



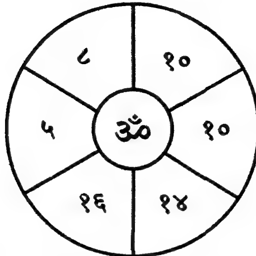
प्रत्येक खण्ड में स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

चन्दन षष्ठी विधान मण्डल



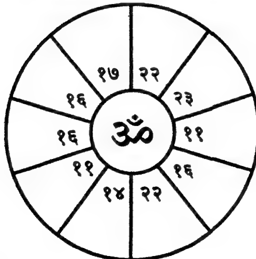
प्रत्येक खण्ड में स्वस्तिक अंकित करें।

जिनगुण संपत्ति मण्डल



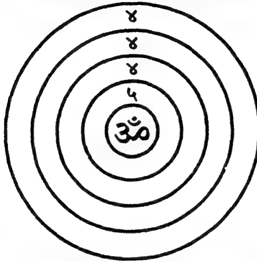
प्रत्येक वलय में लिखी हुई संख्या के अनुसार
स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

दशलक्षण विधान मण्डल



प्रत्येक वलय में लिखी संख्यानुसार स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

नवकार पैंतीसी विधान मण्डल



प्रत्येक वलय में लिखी संख्यानुसार स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

पंचकल्याणक विधान मण्डल



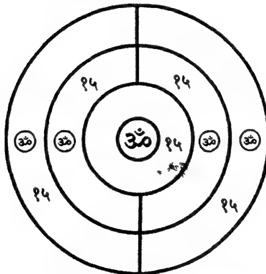
प्रत्येक वलय में लिखी संख्यानुसार स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

पंचपरमेष्ठी विधान मण्डल



प्रत्येक वलय में लिखी संख्यानुसार स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

पंचमेरु विधान मण्डल



प्रत्येक वलय में 15-15 स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

स्वस्तिक अंकन

स्वस्तिक का भाव है, "स्वस्तिं करोतीति स्वस्तिकः" अर्थात् स्वहित-कल्याण करे। "स्वस्तिक क्षेत्र कायति इति स्वस्तिकः" अर्थात् कुशल क्षेत्र कल्याण का प्रतीक है। स्वस्तिक शब्द सु-अस् धातु से बना है सु का अर्थ है-सुन्दर, मंगल अस् अर्थात् अस्तित्व या उपस्थिति। प्रत्येक शुभ कार्य में स्वस्तिक दर्शन का विशेष महत्त्व है।

इसीलिए सभी मंगल कार्यों में स्वस्तिक का उपयोग एवं अंकन किया जाता है। प्रत्येक अनुष्ठान में स्थापित किए जाने वाले मंगल कलश में स्वस्तिक रखा जाता है। पंचकल्याणक प्रतिष्ठा विधि में भी कल्याणकों की क्रिया में स्वस्तिक एवं नंद्यावर्त स्वस्तिक का उपयोग किया जाता है। वेदी प्रतिष्ठा एवं शिलान्यास में स्वस्तिक अनिवार्यतः स्थापित करके यह भावना की जाती है कि यह वास्तु या प्रतिमा प्रलयकाल तक अचल रहे।

अन्य प्रकार से व्युत्पत्ति पर विचार करने पर उसके सात्थिअ, सुस्थिय, सात्थिय-सुत्यि और सात्थिउ-सोथिय रूप में मिलते हैं। जो क्रमश· अर्द्ध मागधी, शौरसैनी प्राकृत के हैं। जिसका अर्थ है स्व स्थित अर्थात् अपने आत्म स्वरूप में लीन होना। सु का सयोग होने पर उसमें सम्यक् विशेषण जुड़ जाने से अर्थ "सम्यक् प्रकार से आत्मा में स्थित" हो जाता है।

अमरकोश में स्वस्तिकः सु = अच्छा, अस्ति = अस्तित्त्व, क = कर्ता सर्वतोभद्र अर्थात् सभी दिशाओं में सबका कल्याण हो। इस प्रकार स्वस्तिक सभी का मंगल करने वाला है।

स्वस्तिक अनादि-निधन आकृति है, जब छठवें काल के अंतिम 49 दिनों में कुवृष्टियाँ होती हैं तब कर्मभूमि का समस्त पृथ्वी मंडल

नष्ट होकर बह जाता है। चित्रापृथ्वी पर दो स्थानों पर नंद्यावर्त स्वस्तिक की आकृति रहती है जिस पर शाश्वत तीर्थराज सम्मेदशिखर तथा तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या की रचना होती है।

शिलांकित प्राचीन स्वस्तिक दूसरी शताब्दी ईसापूर्व सम्राट खारवेल के अभिलेख में और मथुरा के शिल्प में उपलब्ध हुये हैं।

स्वस्तिक मंगलमय होने के साथ-साथ संसारी प्राणी की अज्ञानता से संसार परिभ्रमण को दर्शाते हुए उससे निकलने का मार्ग भी सम्यक् रूपेण प्रशस्त करता है।

नरसुरतिर्यङ्नारकयोनिषु परिभ्रमति जीवलोकोऽयम्।
कुशला स्वस्तिक-रचनेतीव निदर्शयति धीराणाम्।।

अर्थात् संसार में प्राणी निरन्तर जन्म-मरण करता हुआ चार मोड़ वाली रेखाओं में निरूपित नरकगति, त्रिर्यञ्चगति, देवगति और मनुष्यगति रूप में लोक की चौरासी लाख योनियों में घूमता है। यह स्वस्तिक की रचना से स्पष्ट निर्देशित होता है।

स्वस्तिक में खड़ी रेखा संसार रेखा है। उसको काटती आड़ी रेखा जन्म-मरण की है चारों मोड़ चार गतियों के प्रतीक हैं।

स्वस्तिक में स्थित चार बिन्दु चारों अनुयोगों को निरूपित करते है, प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग, इन अनुयोगों के स्वाध्याय से मोक्षमार्ग प्रशस्त होता है।

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः।

सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान और सम्यक्चारित्र मोक्ष का मार्ग हैं। इन त्रिरत्नों की एकता से ही मोक्ष अर्थात् सिद्धत्व की प्राप्ति सम्भव हैं। इसलिए स्वस्तिक के ऊपर बिन्दु रत्नत्रय एवं अर्द्धचन्द्राकार सिद्धशिला प्रतीक रूप मे बनाये जाते हैं।

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज ने मूकमाटी महाकाव्य में इन बिन्दुओं को चारों गतियाँ सुख से शून्य हैं उल्लेखित किया है।

आचार्य जयसेन स्वामी ने ठोने पर स्वस्तिक बनाने का विधान स्पष्ट रूप से प्रतिष्ठा पाठ के पृष्ठ 144 पर किया है।

प्रत्यर्थिव्रजनिर्जयान्निजगुणप्राप्तावनंताक्रम-
दृष्टिज्ञानचरित्रवीर्यसुखचित्संज्ञास्वभावः परं।
आगत्यात्रनिवेशितांकितपदैः संवौषडा द्विष्ठतो
मुद्रारोपणसत्कृतैश्च वषडा गृह्णीध्वमर्चाविधिम्।

शत्रूनका समूहकूं अर्थात् बाह्याभ्यन्तर वैरीन का समूहका अत्यंत जयतैं निज गुण की प्राप्तिनैं होता संता अनंत अरु क्रम-रहित दर्शन, ज्ञान, चारित्र, वीर्य, सुख, चैतन्यसत्ता-रूप है स्वभाव जिनका ऐसे सर्व जिन-मुनि हैं ते इहां आय संवौषट् मंत्र निवेशन किया अरु द्विबार ठःठः मन्त्र करि स्थापन किया अरु मुद्रका आरोपण सत्कार करि तथा वषट् पद करि संनिहित किया संता पूजा की विधिनैं ग्रहण करो। ऐसैं तीन बार पढ़ै।

ॐ ह्रीं अत्र जिन प्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमंडलोक्ता जिनमुनय अत्रावतरत, तिष्ठत् तिष्ठत् ठः ठः, ममात्रसंनिहितो भवत भवत वषट् इत्यादि त्रिबारं कुर्यात्।

मंडलमध्ये सुप्रतीकपीठे स्वस्तिकोपरि स्थापयेत्।

अरु मण्डल मध्य कर्णिक में पीठ में स्वस्तिक ऊपरि स्थापना करनी।

रविव्रत उद्यापंन में भी ठोने पर स्वस्तिक बनाकर स्थापना करने की विधि वर्णित है।

पूज्य जिनेश्वर पार्श्वनाथ का, करके विधि पूर्वक आह्वान,
भक्ति भावनाओं से प्रेरित कर, जिन प्रतिमा का श्रद्धान।
संस्थापन स्वस्तिक मंडप पर, रविव्रत विधि विधान अनुसार,
भक्तों की पूजा स्वीकारो, हे दयाल तत्काल पधार।।

पूजा में ठोने की आवश्यकता तिलोयपण्णत्ती, त्रिलोकसार एवं प्रतिष्ठा पाठों में विशेष रूप से वर्णित है।

भृंगार-चामर-सुदर्पण-पीठ-कुम्भ-
तालध्वजा-तप-निवारक-भूषिताग्रे।
वर्धस्व नन्द जय पाठ-पदा-वलिभिः,
सिंहासने जिन भवन्त-महं श्रयामि।।

अतः ठोने पर स्वस्तिक बनाकर मुद्रापूर्वक आह्वानन, स्थापन एवं सन्निधिकरण करना चाहिए।

स्वस्तिक बनाने का उद्देश्य एवं भावना

स्वस्तिक हमारी पूजा का सार्थक उद्देश्य है। यह हमारी अंतरंग भावना का प्रतीक है। सर्वप्रथम हस्त प्रक्षालन कर मंत्रित जल से स्वयं की एवं स्थल की शुद्धि करें। तत्पश्चात् द्रव्य चढ़ाने वाली थाली में दाहिने हाथ की अनामिका अंगुली से स्वस्तिक अंकित करते समय प्रथमतः खड़ी रेखा नीचे से ऊपर उसी तरह बनाना चाहिए जिस प्रकार हम अपने आत्मीय का तिलक नीचे से ऊपर की ओर करके उसकी उन्नति एवं समृद्धि की कामना करते हैं। स्वस्तिक बनाने में भी आराध्य प्रभु के सामने स्वयं की उन्नति की कामना करते हैं।

हे भगवन्! इस त्रस नाली में निगोद से स्वर्गों की यात्रा करते हुए (क्र.-1) अनादिकाल से चारों गतियों की 84 लाख योनियों में

जन्म मरण कर रहा हूँ। (क्र.-2) खोटे कर्म करके कभी अधोगति नरक में गया हूँ। (क्र.-3) हे प्रभु! शक्ति देना कि ऐसे कार्य नहीं करूँ जिससे नरक जाना पड़े (क्र.-4) कभी छल कपट करके तिर्यंच गति में गया (क्र.-5) मैं तिर्यंच गति में न जाने का संकल्प करता हूँ। (क्र.-6) कभी शुभ भावों से मरण कर देव भी हुआ (क्र.-7) मैं असंयमी देव भी नहीं होना चाहता (क्र.-8) कभी शुभ सकल्प व्रतादि धारण कर मानव पर्याय पाई (क्र.-9) मैं इसमें उत्कृष्ट सयम पालन करने की भावना करता हूँ। (क्र.-10) यह परिभ्रमण मूलतः अज्ञान, मिथ्यात्व, मोह एवं विषय-कषाय के कारण से हो रहा है- यथा.

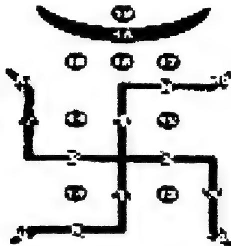
1. कित निगोद कित नारकी कित..
2. चौदह राजु उत्तुंग नभ.
3. भव विकट वन में कर्म वैरी .
4. मोह महामद पियो अनादि.
5. मैं भ्रमों अपन को विसर आप...

अज्ञान मिटाने के लिए मैं संकल्प करता हूँ कि प्रथमानुयोग (क्र.-11), करणानुयोग (क्र.-12), चरणानुयोग(क्र.-13), एवं द्रव्यानुयोग (क्र.-14), का स्वाध्याय करके मैं भी सम्यक्दर्शन(क्र.-15), सम्यक्ज्ञान (क्र.-16), एवं सम्यक्चारित्र (क्र.-17) को प्राप्त करूँगा तथा रत्नत्रय की पूर्णता करके सिद्ध शिला (क्र.-18), से ऊपर मानव पर्याय के परम लक्ष्य पंचम गति सिद्ध पद को प्राप्त करूँगा (क्र.-19),

इस प्रकार शुभ एवं पवित्र भावना से ठोना एवं जल, चंदन के पात्रों पर भी स्वस्तिक अंकित करके पूजन आरंभ करें।

अभिषेक की थाली में 'श्री' अंकित करने का विधान आचार्य माघनंदी महाराज ने अभिषेक पाठ में किया है। 'ॐ' पंचपरमेष्ठी का बीजाक्षर है, उसे लिखकर मिटाना उचित नहीं है।

अभी तक किसी भी शास्त्र में पूजा की थाली में बीजाक्षर अंकित करने का विधान प्राप्त नहीं हुआ है।



1. संसार रेखा (त्रसनाली-निगोद से मोक्ष की ओर)
2. जन्म मरण की रेखा ऊर्ध्वगमन
3. नरक गति (नीचे की ओर)
4. वज्र- नरक गति में न जाने का संकल्प
5. तिर्यंच गति
6. वज्र तिर्यंच गति में न जाने का संकल्प
7. देव गति (ऊपर)
8. वज्र देवगतियों में न जाने का संकल्प
9. मनुष्यगति

10. वज्र मनुष्यगति में न रहने का संकल्प
11. प्रथमानुयोग
12. करणानुयोग
13. चरणानुयोग
14 द्रव्यानुयोग
15. सम्यक्दर्शन
16. सम्यक्ज्ञान
17. सम्यक्चारित्र
18. सिद्धशिला
19. सिद्ध भगवान

संदर्भग्रंथ-

तिलोयपण्णत्ती - आचार्य यतिवृषभ
त्रिलोकसार - आचार्य नेमिचद सिद्धांतचक्रवर्ती
प्रतिष्ठापाठ - आचार्य जयसेन
प्रतिष्ठा सारोद्धार - पं. आशाधरजी
तत्त्वार्थसूत्र - आचार्य उमास्वामी
अभिषेक पाठ - आचार्य माघनंदी
मूकमाटी - आचार्य विद्यासागर
धर्मचक्र - डॉ प्रकाश चन्द जैन
रविव्रत विधान - कल्याण शशि



मंगल-पञ्चक

गुणरत्नभूषा विगतदूषाः सौम्यभाव निशाकराः
सद्बोधभानुविभा-विभासित-दिक्चया विदुषांवराः
निःसीम-सौख्य-समूह-मण्डित-योग-खण्डित-रतिवराः
अर्हंत इह कुर्वन्तु मंगलमद्य आदि-जिनेश्वराः।।1।।

सद्ध्यान-तीक्ष्ण-कृपाण-धारा-निहत-कर्म-कदम्बकाः
देवेन्द्र-वृन्द्र-नरेन्द्र-वन्द्याः प्राप्त-सुख-निकुरम्बकाः
योगीन्द्र-योग-निरूपणीयाः प्राप्त-बोध-कलापकाः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते सिद्धाः सदा सुखदायकाः।।2।।

आचार-पञ्चक-चरण-चारण-चुञ्चवः समताधराः
नानातपोभरहेति-हापित-कर्मकाः सुखिताकराः
गुप्तित्रयी परिशीलनादि-विभूषिता वदता वराः
कुर्वन्तु मगलमत्र ते श्री-सूरयोऽर्जित शम्भराः।।3।।

द्रव्यार्थ-भेद-विभिन्न-श्रुतभरपूर्ण-तत्त्व-निभालिनो
दुर्योग-योग-निरोधदक्षाः सकल-गुणवर-जालिनः
कर्तव्य-देशन-तत्परा विज्ञान-गौरव-शालिनः
कुर्वन्तु मगलमत्र ते गुरुदेव-दीधित-मालिनः।।4।।

सयम-समित्यावश्यकापरिहाणि-गुप्ति-विभूषिताः
पञ्चाक्ष-दान्ति-समुद्यताः समता-सुधा-परिभूषिताः
भूपृष्ठ-विष्टर-शायिनो विविधर्द्धिवृन्द-विभूषिताः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते मुनयः सदा शम-भूषिताः।।5।।



मंगलाष्टक पाठ

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र-महिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः
आचार्या जिन-शासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः
श्री सिद्धान्त-सुपाठका मुनिवराः रत्नत्रयाराधकाः
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु नो मंगलम्।।1।।

श्रीमन्नम्र-सुरासुरेन्द्र-मुकुट-प्रद्योतरत्नप्रभा
भास्वत्पाद-नखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिन.
ये सर्वे जिन-सिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधव.
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु नो मगलम्।।2।।

सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं
मुक्ति-श्री-नगराधिनाथ-जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः
धर्मः सूक्ति-सुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्र्यालयं
प्रोक्तं च त्रिविध चतुर्विधममी कुर्वन्तु नो मंगलम्।।3।।

नाभेयादिजिनाः प्रशस्त-वदनाः ख्याताश्चतुर्विंशतिः
श्रीमन्तो भरतेश्वर-प्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश
ये विष्णु प्रतिविष्णु-लागलधराः सप्तोत्तरा विशतिस्
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु नो मंगलम्।।4।।

ये सर्वौषध-ऋद्धयः श्रुत-तपो वृद्धिंगताः पञ्च ये
ये चाष्टांग-महानिमित्त-कुशलाश्चाष्टौ वियच्चारिणः
पञ्चज्ञान धरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धि-ऋद्धीश्नरा.
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवराः कुर्वन्तु नो मंगलम्।।5।।

ज्योतिर्व्यन्तर भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ स्थिता.
जम्बू-शाल्मलि-चैत्यशाखिषु तथा वक्षार-रूप्याद्रिषु
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु नो मगलम्।।6।।

कैलासो वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरी
चम्पा वा वसुपूज्य-सज्जिनपतेः सम्मेद-शैलोऽर्हताम्
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरी नेमीश्वरस्यार्हतो
निर्वाणावनयः प्रसिद्ध विभवाः कुर्वन्तु नो मंगलम्।।7।।

सर्पो हारलता-भवत्यसि-लता सत्पुष्पदामायते
सम्पद्येत रसायनं विषमपि-प्रीतिं विधत्ते रिपुः
देवा यान्ति वश प्रसन्नमनसः किं वा बहु ब्रूमहे
धर्मादेव नभोऽपि वर्षतितरां कुर्वन्तु नो मंगलम्।।8।।

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक्
यः कैवल्यपुरप्रवेश-महिमा सम्पादितः स्वर्गिभिः
कल्याणानि च तानि पञ्च सतत कुर्वन्तु नो मंगलम्।।9।।

इत्थ श्री जिनमगलाष्टकमिद सौभाग्य सम्पतकरं
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणा-मुषात्
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थ-कामान्विता
लक्ष्मीराश्रयते व्यापायरहिता निर्वाण लक्ष्मीरपि।।10।।

जैनाचार्यों ने चार तरह के अभिषेक का उल्लेख किया है- जन्माभिषेक, राज्याभिषेक, दीक्षाभिषेक, चतुर्थाभिषेक। तीर्थंकर बालक को सुमेरुपर्वत पर स्थित पाण्डुक शिला पर ले जाकर जो क्षीरसागर के जल से अभिसिंचित किया जाता है वह जन्माभिषेक कहलाता है। तीर्थंकर कुमार का राजतिलक के अवसर पर जो अभिषेक किया जाता है वह राज्याभिषेक कहलाता है। तीर्थंकर का जिन दीक्षा लेने से पूर्व जो अभिषेक किया जाता है वह दीक्षाभिषेक कहलाता है। विधि-विधान पूर्वक प्रतिष्ठित किए गए जिनबिंब पर जो अभिषेक किया जाता है वह चतुर्थाभिषेक या प्रतिमाभिषेक कहलाता है।

-मुनि क्षमासागर

अभिषेक विधि

जलशुद्धि मन्त्र

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमत्पद्म-महापद्म-तिगिञ्छकेसरि-महापुण्डरीकपुण्डरीक गंगासिन्धुरोहिद्रोहितास्या हरिद्धरिकान्ता-सीतासीतोदा-नारीनरकान्ता सुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः क्षीराम्भोधिजलं सुवर्णघटप्रक्षिप्त नव- रत्नगन्ध पुष्पाक्षतादिबीजपूरितं पवित्रं कुरु कुरु झौं झौं व व म म हं हं सं सं तं तं प पं स्वाहा (जलाभिमन्त्रणम्)

शुद्धि-मन्त्र

शोधये सर्वपात्राणि पूजार्थानपि वारिभि

समाहितो यथाम्नाय करोमि सकलीक्रियाम्।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा पवित्रतर जलेन पात्रशुद्धिं करोमि

(सभी पात्र दाहिनी चुल्लू में जल लेकर मन्त्रित जल से स्वय की शुद्धि करें।)

पात्रेऽर्पितं चन्दनमौषधीशं, शुभ्र सुगन्धाहृतचञ्चरीकम्।

स्थाने नवांके तिलकाय चर्च्यं, न केवल देहविकारहेतोः।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः मम सर्वांगशुद्धिं कुरु कुरु

(नवतिलक करें)

श्रीमन्मन्दरमस्तके शुचिजलैः धौतै· सदर्भाक्षतैः

पीठे मुक्तिवर निधाय रचित त्वत्पादपद्मस्रजः।

इन्द्रोऽहं निजभूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे।

मुद्रा-कंकण-शेखराण्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे।।

ॐ ह्रीं इन्द्रोचिताभूषणमवधारयामि।

(हार मुकुट, यज्ञोपवीत आदि धारण करें)

दिग्बन्धन मन्त्र

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां पूर्व दिशातः समागतविघ्नान् निवारय-निवारय एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

(बन्द मुट्ठी से पूर्व दिशा में पुष्प क्षेपण करें।)

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं दक्षिण दिशातः समागतविघ्नान् निवारय-निवारय एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

(बन्द मुट्ठी से दक्षिण दिशा में पुष्प क्षेपण करें।)

ॐ ह्रूं णमो आयरियाणं ह्रूं पश्चिम दिशातः समागतविघ्नान् निवारय-निवारय एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

(बन्द मुट्ठी से पश्चिम दिशा में पुष्प क्षेपण करें।)

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं उत्तर दिशातः समागतविघ्नान् निवारय-निवारय एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

(बन्द मुट्ठी से उत्तर दिशा में पुष्प क्षेपण करें।)

ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः सर्व-दिशातः समागतविघ्नान् निवारय- निवारय एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

(बन्द मुट्ठी से सभी दिशा में पुष्प क्षेपण करें।)

रक्षा मन्त्र

ॐ हूं क्षूं फट् किरिटिं किरिटिं घातय-घातय पर विघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्र खण्डान् कुरु-कुरु पर मुद्रां छिन्द-छिन्द, परमन्त्रान् भिन्द भिन्द क्षां क्षः वाः वाः हूं फट् स्वाहा।

(स्वय के ऊपर पुष्प क्षेपण करें)

शान्ति मन्त्र

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोष कल्मषाय दिव्य तेजोमूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्न-प्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु विनाशनाय सर्वपरकृच्छुद्रोपद्रव-

नाशनाय सर्व-क्षामडामर-विघ्न-विनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं तुष्टिं पुष्टिं च कुरु-कुरु स्वाहा।

(विश्वशान्ति की कामना के साथ सभी दिशाओं में पुष्प क्षेपण करें।)

मंगल-कलश स्थापन

ॐ अद्य भगवतो महापुरुषस्य श्रीमदादिब्रह्मणो मतेऽस्मिन् विधीयमाने कर्मणि.................श्रीवीरनिर्वाण संवत्सरे...... ......मासे............पक्षे..........तिथौ....................वासरे प्रशस्तलग्ने..........कार्यस्य निर्विघ्न समाप्त्यर्थं नवरत्नगन्ध-पुष्पाक्षत-श्रीफलादि-शोभितं मंगलकलश-स्थापनम् करोमि। श्री क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।

(मुख्य दिशानुसार ईशान कोण में मगल कलश स्थापित करें)

दीपक स्थापन

रुचिरदीप्तिकर शुभदीपक सकललोकसुखाकर-मुज्ज्वलम्।
तिमिरजालहरं प्रकर सदा किल धरामि सुमगलकं मुदा।।

ॐ ह्रीं अज्ञानतिमिरहरं दीपकं स्थापयामि।

(मुख्य दिशानुसार आग्नेय कोण में दीपक स्थापित करें)

अभिषेक हेतु धातु के बिम्बों को ही स्थापित करना चाहिए, पाषाण प्रतिमाओं के ऊपर धारा न करके केवल गीले एवं सूखे छन्ने से मार्जन करना चाहिए।

प्रत्यग्रं चलनक्षमं दृढवपुः तथा धातुजं।
योग्यं नित्यमहोत्सवेषु शिविकासत्स्यंदनारोहणे।।

प्रतिष्ठा पाठ, आ जयसेन, श्लोक 71

नवीन अरु हलन चलन में समर्थ अरु दृढ़ है शरीर की सन्धि जाकी ऐसी धातु की प्रतिमा नित्योत्सवनि (दैनिक अभिषेक आदि) में पालकी अथवा रथ में आरोहण योग्य कहा है।

अभिषेक पाठ

(आचार्य माघनन्दीकृत)

श्रीमन्-नतामर-शिरस्तट-रत्न-दीप्ति-
तोयावभासि-चरणाम्बुज-युग्म-मीशम्।
अर्हंत-मुन्नत-पद-प्रद-माभिनम्य-
त्वन्मूर्तिषूद्यदभिषेक-विधिं-करिष्ये।।

अथ पौर्वाह्निक/माध्याह्निक/अपराह्निकदेव-वन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भावपूज वन्दनास्तवसमेत श्रीपञ्चमहागुरु भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(श्वासोच्छवास पूर्वक नौ बार णमोकार मन्त्र का स्मरण करें)

याः कृत्रिमास्तदितराः प्रतिमा जिनस्य,
सस्नापयन्ति पुरुहूत-मुखादयस्ताः।
सद्भाव-लब्धि-समयादि-निमित्त-योगात्
तत्रैवमुज्ज्वलधिया कुसुमं क्षिपामि।।

ॐ ह्रीं अभिषेकप्रतिज्ञापनाय पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्रीपीठक्लृप्ते विशदाक्षतौघैः,
श्रीप्रस्तरे पूर्ण-शशांककल्पे।
श्रीवर्तके चन्द्रमसीतिवार्तां,
सत्यापयन्ती श्रियमालिखामि।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीं श्रीलेखनं करोमि।

कनकाद्रि-निभं कम्र पावन पुण्य-कारणम्।
स्थापयामि वरं पीठं जिनस्नपनाय भक्तितः।।

ॐ ह्रीं पीठ (सिंहासन) स्थापनं करोमि।

भृंगार-चामर-सुदर्पण-पीठ-कुम्भ -
तालध्वजातप-निवारक-भूषिताग्रे।

वर्धस्व नन्द जय पाठ-पदावलिभिः,
सिंहासने जिन! भवन्त-महं श्रयामि।।
वृषभादिसुवीरान्तान् जन्माप्तौ जिष्णुचर्चितान्।
स्थापयाम्यभिषेकाय भक्त्या पीठे महोत्सवम्।।

ॐ ह्रीं श्रीधर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह स्नपनपीठे तिष्ठ तिष्ठ!

श्रीतीर्थकृत्स्नपन-वर्य-विधौ-सुरेन्द्रः
क्षीराब्धि-वारिभि-रपूरय-दर्थ-कुम्भान्।
तांस्तादृशा-निव विभाव्ययथार्हणीयान्
संस्थापये कुसुम-चन्दन-भूषिताग्रान्।।
शात-कुम्भीय-कुम्भौघान् क्षीराब्धेस्तोय-पूरितान्।
स्थापयामि जिनस्नान-चन्दनादि-सुचर्चितान्।।

ॐ ह्रीं चतुःकोणेषु स्वस्तये चतुःकलशस्थापनं करोमि

आनन्द-निर्भर-सुर-प्रमदादि-गानै -
र्वादित्र-पूर-जय-शब्द-कलप्रशस्तैः।
उद्गीय-मान-जगती-पति-कीर्ति-मेना,
पीठस्थलीं वसु-विधार्चनयोल्लसामि।।

ॐ ह्रीं स्नपनपीठस्थितजिनायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

कर्म-प्रबन्ध-निगडै-रपि हीनताप्त,
ज्ञात्वापि भक्ति-वशतः परमादि-देवम्।
त्वा स्वीय-कल्मष-गणोन्मथ-नाय देव,
शुद्धौदकै-रभिनयामि नयार्थ-तत्त्वम्।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामः।

तीर्थोत्तम भवै-र्नीरैः क्षीर-वारिधि-रूपकैः।
स्नपयामि सुजन्माप्तान् जिनान् सर्वार्थ-सिद्धिदान्।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामः

स्नात्वा शुभांवरधराः कृत-यत्नयोगात्
यन्त्रं निवेश्य शुचिपीठ-वरेऽभिषिञ्चेत्।
ॐ भूर्भुवः स्वरिह मंगलयन्त्र मेतत्
विघ्नौघवारक महं परिषेचयामि।।

ॐ ह्रीं विघ्नौघवारकयन्त्रं वयं परिषेचयामः

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादि वीरान्तान् विनायक सिद्ध यन्त्रं च जलेन स्नपयामः

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवंतं कृपालसन्तं श्रीवृषभादिमहावीरान्त-चतुर्विंशतितीर्थंकरपरमदेवं मध्यलोके जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे.......प्रदेशे.....नाम्निनगरे........... मन्दिरे(-मण्डपे) ....वीर-निर्वाणसंवत्सरे मासानामुत्तमे मासे.........मासे..........पक्षे.............वासरे मुन्या-आर्यिका श्रावक श्राविकाणां सकल कर्म क्षयार्थं जलेन जिनमाभिषिंचयामः।

सकल-भुवन-नाथं तं जिनेन्द्रं सुरेन्द्रै,
रभिषव-विधि-माप्तं स्नातकं स्नापयामः।
यदभिषवन-वारां, बिन्दु-रेकोऽपि नृणां,
प्रभवतिहि विदधातुं भुक्तिसन्मुक्तिलक्ष्मीम्।।

ॐ **ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं** वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं **झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं झं झ्वीं क्ष्वीं हं सः झं वं हः यः सः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः क्ष्वीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रीं द्रां द्रीं** नमोऽर्हते **भगवते श्रीमते ठः ठः इति बृहच्छान्तिमन्त्रेणाभिषेकं करोमि।**

हे तीर्थपा निज-यशो-धवली-कृताशाः,
सिद्धौषधाश्च भव दुःख-महा-गदा-नाम्।
सद्भव्य-हृज्जनित-पंक-कबन्ध-कल्पा,
यूयं जिनाः सतत-शान्तिकरा भवन्तु।।12।।

शान्त्यर्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पानीय-चन्दन-सदक्षत-पुष्पपुञ्ज-
नैवेद्य-दीपक-सुधूप-फल-व्रजेन।
कर्माष्टक-क्रथन-वीर-मनन्त-शक्तिं,
सम्पूजयामि महसां महसां निधानम्।।

ॐ ह्रीं अभिषेकान्ते श्री वृषभादिवीरान्तेभ्योऽर्घ्यं निर्व. स्वाहा!

नत्वा मुहु-र्निज-करै-रमृतोप-मेयैः,
स्वच्छै-र्जिनेन्द्र तव चन्द्र-करावदातैः।
शुद्धांशुकेन विमलेन नितान्त-रम्ये,
देहे स्थितान् जलकणान् परिमार्जयामि।।14।।

ॐ ह्रीं अमलांशुकेन जिनबिम्बं मार्जनं करोमि

स्नानं विधाय भवतोष्ट-सहस्र-नाम्ना-
मुच्चारणेन मनसो वचसो विशुद्धिम्।
जिघृक्षुरिष्ठ-मिनःतेऽष्ट-तयीं विधातु
सिंहासने विधि-वदत्र निवेशयामि।।15।।

ॐ ह्रीं वेदिकायां सिंहासने जिनबिम्बं स्थापयामि।

जल-गन्धाक्षतैः पुष्पैश्चरु-दीप-सुधूपकैः।
फलै-रर्घै-र्जिनमर्चे जन्मदुःखापहानये।।

ॐ ह्रीं पीठस्थितजिनायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

नत्वा परीत्य निज-नेत्र-ललाट-योश्च,
व्यात्यु-क्षणेन हरता-दघ-सञ्चयं मे,
शुद्धोदकं जिनपते तव पाद-योगाद्,
भूयाद्-भवातप-हरं धृत-मादरेण।।16।।

नमस्कारं कृत्वा जिनगन्धोदकं शिरसि धारयामि

शान्ति-धारा

ॐ नमः सिद्धेभ्यः श्रीवीतरागाय नमः

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाण

णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं।

चत्तारि मंगलं-अरिहंता मंगलं सिद्धा मंगल साहू मंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं चत्तारि लोगुत्तमा-अरिहंता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरिहंते सरण पव्वज्जामि सिद्धे सरणं पव्वज्जामि साहू सरणं पव्वज्जामि केवलिपण्णत्त धम्मं सरणं पव्वज्जामि ॐ ह्रीं अनादि-मूल-मन्त्रेभ्यो नम. सर्व-शान्तिं तुष्टिं पुष्टिं च कुरु-कुरु।

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोष-कल्मषाय दिव्य-तेजोमूर्तये नमः श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु-विनाशनाय सर्व-परकृच्क्षुद्रोपद्रवनाशनाय सर्वक्षामडामर-विघ्न विनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्व-शान्तिं तुष्टिं पुष्टिं च कुरु-कुरु।

ॐ ह्रूं क्षूं फट् किरिटिं किरिटिं घातय घातय पर विघ्नान् स्फोटय-स्फोटय सहस्र-खण्डान् कुरु-कुरु परमुद्रा छिन्द-छिन्द पर-मन्त्रान् भिन्द भिन्द क्षां क्षः वाः वाः ह्रूं फट् सर्वशान्तिं कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रौं सर्वविघ्नशान्तिं कुरु-कुरु।

ॐ अ ह्रां सि ह्रीं आ ह्रूं उ ह्रौं सा ह्रः जगदातप-विनाशनाय ह्रीं शान्तिनाथाय नमः सर्व-शान्तिं कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय अशोक तरु-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय अशोक तरु-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय ह्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव-शान्तिकराय नमः सर्व शान्तिं कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय सुरपुष्पवृष्टि-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय सुरपुष्पवृष्टि-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय भ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्व-शान्तिं कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय दिव्यध्वनि-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय दिव्यध्वनि-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्व शान्तिं कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय चामरोज्ज्वल-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय चामरोज्ज्वल-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय र्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्व शान्तिं कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय सिंहासन-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय सिंहासन-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय घ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्व-शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय भामण्डल-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय भामण्डल-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय झ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्व-शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय दुन्दुभि-सत्प्रातिहार्य मण्डिताय दुन्दुभि-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय स्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नम. सर्व शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय छत्रत्रय-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय छत्रत्रय सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय ख्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्व शान्तिं कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय प्रातिहार्याष्ट-सहिताय बीजाष्ट-मण्डन-मण्डिताय सर्वविघ्नशान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु-कुरु।

तव भक्तिप्रसादाल्लक्ष्मीपुर राज्यगेह पदभ्रष्टोद्भवो-पद्रव दारिद्रोद्भवोपद्रव-स्वचक्र-परचक्रोद्-भवोपद्रव-प्रचण्ड-पवनानल-

जलोद्‌भवोपद्रव-शाकिनी-डाकिनी-भूत-पिशाच-कृतोपद्रव-दुर्भिक्षव्यापार-वृद्धिरहितोपद्रवाणां विनाशनं भवतु।

श्रीशान्तिरस्तु शिवमस्तु जयोस्तु नित्यमारोग्यमस्तु सर्वेषां पुष्टिरस्तु तुष्टिरस्तु समृद्धिरस्तु कल्याणमस्तु सुखमस्तु अभिवृद्धिरस्तु कुलगोत्र-धनधान्यं सदास्तु श्रीसद्धर्मबलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सम्पूर्णकल्याणमंगलरूपमोक्षपुरुषार्थश्च भवतु।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां,
यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानां।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः
करोति शान्तिं भगवज्जिनेन्द्रः।।

आरती

आनन्द आपार है भक्ति का प्रसार है।
देखो बिम्ब प्रतिष्ठा का, कैसा जय-जयकार है।।टेक।।

मगल आरती लेकर स्वामी, आया तेरे द्वार जी।
गुण गाता हूँ आदि प्रभू का, होगा बेड़ा पार जी।।।।1।।

इन्द्र इन्द्राणी नाचे भगवन, आज तुम्हारे द्वार जी।
शान्ति प्रभू करके न्हवन, बोलें जय-जयकार जी।।2।।

पर परिणति से अब तक भटका, शरण कहीं नहीं पाया जी।
तारन तरन विरद सुन करके, सिद्ध शरण में आया जी।।3।।

अब तो पार लगा दो भगवन, 'पुष्प' चरण शिरनाया जी।
अजर अमर पद पा जाऊँ मैं, सिद्ध शरण में आया जी।।4।।

विनय पाठ

इह विधि ठाड़ो होय के, प्रथम पढ़ै जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जू आठ।।1।।
अनन्त चतुष्टय के धनी, तुमही हो सिरताज।
मुक्ति-वधु के कन्त तुम, तीन भुवन के राज।।2।।
तिहुँ जग की पीड़ा हरन, भवदधि शोषणहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिवसुख के करतार।।3।।
हरता अघ अँधियार के, करता धर्मप्रकाश।
थिरतापद दातार हो, धरता निजगुण रास।।4।।
धर्मामृत उर जलधि सों, ज्ञानभानु तुम रूप।
तुमरे चरण-सरोज को, नावत तिहु जग भूप।।5।।
मैं बन्दौं जिनदेव को, कर अति निर्मल भाव।
कर्मबन्ध के छेदने, और न कछू उपाव।।6।।
भविजन को भवकूपतैं, तुमही काढनहार।
दीनदयाल अनाथ पति, आतम गुण भण्डार।।7।।
चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्मरज मैल।
सरल करी या जगत में, भविजन को शिवगैल।।8।।
तुम पदपंकज पूजतैं, विघ्न रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरैं, विष निरविषता थाय।।9।।
चक्री सुर खग इन्द्रपद, मिलै आपतैं आप।
अनुक्रमकर शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप।।10।।
तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन।
जन्म जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन।।11।।
पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन क़रेव।
अञ्जन से तारे प्रभु, जय जय जय जिनदेव।।12।।

थकी नाव भवदधिविषै, तुम प्रभु पार करेय।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव।।13।।
रागसहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव।
वीतराग भेट्यो अबै, मेटो राग कुटेव।।14।।
कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यञ्च अज्ञान।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान।।15।।
तुमको पूजैं सुरपती, अहिपति नरपति देव।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव।।16।।
अशरण के तुम शरण हो निराधार आधार।
मैं डूबत भवसिन्धु मे खेव लगाओ पार।।17।।
इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान।
अपनो विरद निहारकैं, कीजै आप समान।।18।।
तुमरी नेक सुदृष्टितैं, जग उतरत है पार।
हा हा डूबो जात हो, नेक निहार निकार।।19।।
जौ मैं कहहूँ औरसो, तो न मिटै उर झार।
मेरी तो तोसों बनी, तातै करौं पुकार।।20।।
वन्दों पाँचों परम गुरु, सुरगुरु वन्दत जास।
विघनहरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश।।21।।
चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय।
शिवमग साधक साधु 'नमि', रच्यो पाठ सुखदाय।।22।।

मंगलपाठ

मगल मूर्ति परमपद, पञ्चधरो नित ध्यान।
हरो अमंगल विश्व का, मंगलमय भगवान।।23।।
मंगल जिनवर पद नमों, मंगल अर्हंतदेव।
मंगलकारी सिद्ध पद, सो वन्दों स्वयमेव।।24।।

मंगल आचारज मुनि मंगल गुरु उवझाय।
सर्व साधु मंगल करो, वन्दों मन वच काय।।25।।

मंगल सरस्वती मातका, मंगल जिनवर धर्म।
मंगल मय मंगल करो, हरो असाता कर्म।।26।।

या विधि मंगल करन से, जग में मंगल होत।
मंगल "नाथूराम" यह, भवसागर दृढ़ पोत।।27।।

अथ अर्हत्-पूजा-प्रतिज्ञायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्म क्षयार्थं-भावपूजा वन्दनास्तव समेतं-पञ्चमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(पूजा की प्रतिज्ञा करते हुए नौ बार णमोकार मन्त्र का ध्यान करें)

पूजा प्रारम्भ

ॐ जय जय जय नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु।
णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आयरियाण
णमो उवज्झायाण णमो लोए सव्वसाहूणं।।

ॐ ह्रीं अनादि-मूल-मन्त्रेभ्यो नमःपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

चत्तारि मंगलं अरिहंता मंगल सिद्धा मगलं
साहू मंगल केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगल।
चत्तारि लोगुत्तमा अरिहंता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा
साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि अरिहंते-सरण पव्वज्जामि
सिद्धे सरणं पव्वज्जामि साहू सरणं पव्वज्जामि
केवलि पण्णत्तं धम्म सरणं पव्वज्जामि।।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा, पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत् पञ्च-नमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते।।1।।

अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः।।2।।
अपराजित-मन्त्रोऽयं, सर्व-विघ्न-विनाशनः।
मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलं मतः।।3।।
एसो-पंच-णमोयारो, सव्व-पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मंगलं।।4।।
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म-वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहं।।5।।
कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं, मोक्ष-लक्ष्मी-निकेतनं।
सम्यक्त्वादि-गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहं।।6।।
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी-भूत-पन्नगाः।
विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे।।7।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

उदक-चन्दन-तण्डुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान रवाकुले जिनगृहे कल्याणमहं यजे।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीभगवतो गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपञ्चकल्याणकेभ्योऽर्घ्यं।

उदक-चन्दन-तण्डुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान रवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।2।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्-सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

उदक-चन्दन-तण्डुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान रवाकुले जिनगृहे जिननाम यजाम्यहम्।।3।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनअष्टाधिकसहस्रनामभ्योऽर्घ्यं नि० स्वाहा।

उदक-चन्दन-तण्डुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान रवाकुले जिनगृहे जिनसूत्रमहं यजे।।4।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि तत्त्वार्थ सूत्रे दशाध्याये अर्घ्यं

उदक-चन्दन-तण्डुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान रवाकुले जिनगृहे जिनस्तोत्रमहं यजे।।5।।

ॐ ह्रीं सर्व जिनस्तोत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री-मज्जिनेन्द्र-मभिवन्द्य जगत्-त्रयेशं,
स्याद्वाद-नायक-मनन्त-चतुष्टयार्हम्।
श्रीमूल-सघ-सुदृशा सुकृतैक-हेतुर्,
जैनेन्द्र-यज्ञ-विधि-रेष मयाऽभ्यधायि।।1।।

स्वस्ति त्रिलोक-गुरवे जिन-पुंगवाय,
स्वस्ति स्वभाव-महिमोदय-सुस्थिताय।
स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्ज्जित-दृगमयाय,
स्वस्ति प्रसन्न-ललिताद्-भुत-वैभवाय।।2।।

स्वस्त्युच्छलद्-विमलबोधसुधा-प्लवाय,
स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय।
स्वस्ति त्रिलोक-विततैक-चिदुद्गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल-सकलायत-विस्तृताय।।3।।

द्रव्यस्य शुद्धि-मधिगम्य यथानुरूप,
भावस्य शुद्धि-मधिकामधिगन्तुकामः।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्,
भूतार्थ-यज्ञ-पुरुषस्य करोमि यज्ञम्।।4।।

अर्हन् पुराण-पुरुषोत्तम पावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव।
अस्मिन्-ज्वलद्विमल-केवल-बोध वह्नौ,
पुण्यं समग्रमह-मेकमना जुहोमि।।5।।

ॐ ह्रीं विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः।
श्रीशम्भवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः।
श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः।
श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः।
श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः।
श्रीश्रेयान् स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः।
श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्तः।
श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः।
श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः।
श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः।
श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः।
श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः।

इति चतुर्विंशतिजिनेन्द्र-स्वस्तिमंगलविधानं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

नित्याप्रकम्पाद्भुत-केवलौघाः, स्फुरन्मनःपर्यय-शुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञान-बलप्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।1।

(यहाँ से प्रत्येक श्लोक के अन्त में पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिये)

कोष्ठस्थ-धान्योपममेकबीजं, सम्भिन्न-संश्रोतृ-पदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धि-बलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।2।।
संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादन-घ्राण-विलोकनानि।
दिव्यान् मतिज्ञान-बलाद्वहन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।3।।
प्रज्ञा-प्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येक-बुद्धा दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टांग-निमित्त-विज्ञाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।4।।
जंघानल-श्रेणि-फलाम्बु-तन्तु-प्रसून-बीजांकुर-चारणाह्वाः।
नभोऽङ्गण-स्वैर-विहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।5।।
अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि, लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनो-वपु-र्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।6।।

सकाम-रूपित्व-वशित्वमैश्यं, प्राकाम्य-मन्तर्द्धि-मथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।7।।
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं, घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोर-गुणाश्चरन्तः, स्वस्ति-क्रियासु परमर्षयो नः।।8।।
आमर्ष-सर्वौषधयस्तथाशी-र्विषाविषा दृष्टिविषाविषाश्च।
सखेल-विड्जल्ल-मलौषधीशाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।9।।
क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतं स्रवंतो, मधु स्रवंतोऽप्यमृतं स्रवंतः।
अक्षीण-संवास-महानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।10।।

इति परमर्षिस्वस्तिमंगल-विधानं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

आह्वान, स्थापन एवं सन्निधिकरण

पूजा के पाच अंग होते हैं-1. आह्वान 2 स्थापन 3. सन्निधिकरण 4.पूजन 5 विसर्जन।

इनके अनुसार ही पूजा विधि सम्पादित करना चाहिए।

प्रथम तीन अंग मुद्रा पूर्वक सम्पादित करके ठोने पर बने स्वस्तिक के ऊपर पुष्प क्षेपण करके पूजा का सकल्प करना चाहिए आह्वानम् मद्रा- हथेली को ऊपर करके हाथ की दोनों रेखाओं को मिलाकर अगूठे को अनामिका के मूल में लगाकर जिनबिम्ब को देखते हुए आह्वान का भाव करना।

स्थापन मुद्रा- ऊपर की मुद्रा को अधोमुखी हथेली करते हुए स्थापन का भाव करना।

सन्निधिकरण मुद्रा- दोनों अंगूठों को ऊपर उठाकर मुट्ठी बंद करके अंगूठे को हृदय के पास लगाकर सन्निधिकरण का भाव करके पूजा का संकल्प करते हुऐ पुष्प या लवंग ठोने पर क्षेपण करें। इस क्रिया में गिनकर (3-3) पुष्प चढ़ाने का विधान किसी ग्रन्थ में नहीं मिला है।

-पुष्पाञ्जलि

समुच्चय पूजा

दोहा- देवशास्त्र गुरु नमन करि, बीस तीर्थंकर ध्याय।
सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूं चित्त हुलसाय।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु-समूह विद्यमान-विंशति-तीर्थंकर-समूह अनन्तानन्त-सिद्ध-परमष्ठि-समूह अत्रावतर अवतर संवौषट् आह्वानम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अनादिकाल से जग में स्वामिन्, जल से शुचिता को माना।
शुद्धनिजातम सम्यक् रत्नत्रय, निधि को नहिं पहचाना।।
अब निर्मल रत्नत्रय जल ले, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भव आताप मिटावन की, निज में ही क्षमता समता है।
अनजाने अब तक मैंने, पर में की झूठी ममता है।।
चन्दन सम शीतलता पाने, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।2।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यः संसारताप-विनाशनाय चन्दनं नि० स्वाहा।

अक्षय पद बिन फिरा, जगत की लख चौरासी योनि में।
अष्ट कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिंग लाया मैं।।
अक्षय निधि निज की पाने को, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

पुष्प सुगन्धी से आतम ने, शील स्वभाव नशाया है।
मन्मथ बाणों से विन्ध करके, चहुँ गति दुख उपजाया है।।
स्थिरता निज में पाने को, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।4।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यः कामवाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् रस मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शान्त हुई।
आतम रस अनुपम चखने से, इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुई।।
सर्वथा भूख के मेटन को, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ दीप विनश्वर को अब तक, समझा था मैंने उजियारा।
निज गुण दरशायक ज्ञान दीप से, मिटा मोह का अधियारा।।
ये दीप समर्पित करके मैं, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।6।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहांधकार-विनाशनाय दीपं नि० स्वाहा

ये धूप अनल में खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी।
निज मे निज की शक्ति ज्वाला, जो राग द्वेष नशायेगी।
उस शक्ति दहन प्रगटाने को, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।7।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्म-विध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बदाम श्रीफल लवंग, चरणन तुम ढिंग मैं ले आया।
आतमरस भीने निजगुण फल, मम मन अब उनमें ललचाया।।
अब मोक्ष महाफल पाने को, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।8।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज मैं निज गुण प्रगट किये।
ये अर्घ्य समर्पण करके मैं, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।9।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्योऽनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

देव शास्त्र गुरु बीस जिन, सिद्ध अनन्तानन्त।
गुण गाऊँ जयमालिका, भव दुख नशे अनन्त।।

नशे घातिया कर्म अर्हन्त देवा, करे सुरअसुर नर मुनि नित्य सेवा।
दरश ज्ञान सुख बल अनन्त के स्वामी, छियालीस गुण युत महाईश नामी।।
तेरी दिव्य वाणी सदा भव्य मानी, महा मोह विध्वंसिनी मोक्ष दानी।
अनेकान्त मय द्वादशांगी बखानी, नमो लोक माता श्री जैन वाणी।।
विरागी अचारज उवज्झाय साधू, दरश ज्ञान भण्डार समता अराधू।
नगन वेषधारी सु एका विहारी, निजानन्द मण्डित मुकति पथ प्रचारी।।
विदेह क्षेत्र में तीर्थंकर बीस राजें, विहरमान बन्दू सभी पाप भाजें।
नमूँ सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी, अनाकुल समाधान सहजाभिरामी।।

देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थंकर, सिद्ध हृदय बिच धरले रे।
पूजन ध्यान गान गुन करके, भव सागर जिय तरले रे।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूत भविष्यत वर्तमान की, तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ।
चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीन लोक के मन लाऊँ।।

ॐ ह्रीं त्रिकाल-सम्बन्धि-विंशत्यधिकसप्तशत-तीर्थंकरेभ्यो कृत्रिमाकृत्रिम-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्य भक्ति आलोचन चाहूँ, कायोत्सर्ग अघ नाशन हेत।
कृत्रिमाकृत्रिम तीनलोक में, राजत हैं जिन बिम्ब अनेक।।
चतुर निकाय के देव जजें लें, अष्ट द्रव्य निज भक्ति समेत।
निज शक्ति अनुसार जजूँ मैं, कर समाधि पाऊँ शिवखेत।।

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व मध्य अपराह्न की बेला, पूर्वाचार्यों के अनुसार।
देव वन्दना करूँ भाव से सकल कर्म की नाशन हार।।
पञ्च महा गुरु सुमरन करके कायोत्सर्ग करूँ सुखकार।
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना जाऊँगा अब मैं भव पार।।

पुष्पाञ्जलि क्षिपेत् (नौ बार णमोकार मन्त्र का ध्यान करें)

श्रीजिन के प्रसाद तें, सुखी रहें सब जीव।
यातें-तन-मन-वचन-तें सेओ-भव्य सदीव।।

इत्याशीर्वादः

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जैन दर्शन में संयम और व्रत की मुख्यता है यदि व्रत संयम न होता तो जैन दर्शन आदर्शता को प्राप्त नहीं हो पाता। जैसे शरीर में रीढ़ की हड्डी जीवन को प्राणदायिनी मानी जाती है उसी प्रकार व्रत-संयम जैनदर्शन की रीढ़ है।

—ब्र. डॉ. प्रमिला जैन

अर्घ्यावली

अकृत्रिम चैत्यालय अर्घ्य

कृत्याकृत्रिम-चारु-चैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकीगतान्,
वन्दे भावन-व्यन्तर-द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान्।
सद्-गन्धाक्षत-पुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलै-
र्नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शान्तये।।

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धि जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि०।

वर्षेषु वर्षान्तर-पर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वन्दे जिनपुंगवानां।।1।।

अवनितल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां।
वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानाम्।।
इह मनुज-कृतानां देवराजार्चितानां।
जिनवर निलयानां भावतोऽहं स्मरामि।।2।।

जम्बू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्र-त्रये ये भवा-
श्चन्द्राम्भोज शिखण्डिकण्ठ-कनक-प्रावृड्घनाभाजिनाः।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः,
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः।।3।।

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचके कुण्डले मानुषांके,
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ-दधिमुख-शिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भवन-महितले यानि चैत्यालयानि।।4।।

द्वौ कुन्देन्दु-तुषार-हार-धवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ,
द्वौ बन्धूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ।
शेषाः षोडश जन्म-मृत्यु-रहिताः सन्तप्त हेम-प्रभा-
स्ते संज्ञान-दिवाकराः सुर-नुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः।।5।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धि-कृत्रिमाकृत्रिम-जिन-चैत्यालयेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इच्छामि भंते। चेइयभत्ति काउसग्गो कओ तस्सालोचेऊं अहिलोय-तिरियलोय- उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि-जिण-चेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसियकप्पवासिय त्ति चउविहा देवा सपरिवाराः दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धूवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति अहमवि इह सन्तो तत्थ सताइं णिच्चकालं अच्चेमि पूज्जेमि वंदामि णमस्स्म्मि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमण समाहिमरणं जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

इति पौर्वाह्लिक/माध्याह्निक/आपराह्निक-देववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा वन्दनास्तवसमेत चैत्यभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्।

वर्तमान चौबीसी अर्घ्य

जल फल आठों शुचिसार, ताको अर्घ्य करो।
तुमको अरपों भवतार, भव तरि मोक्ष वरों।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्दकन्द सही।
पद जजत हरत भवफन्द, पावत मोक्ष मही।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादि-वीरान्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपद-प्राप्तयेअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदिनाथ अर्घ्य

शुचि निर्मल नीर गन्ध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय।
दीप धूप फल अर्घ्य सु लेकर, नाचतताल मृदंग बजाय।।
श्रीआदिनाथ के चरण कमल पर बलि बलि जाऊँ मन वच काय।
हो करुणानिधि भव दुख मेटो, यातें मैं पूजों प्रभु पाय।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अजितनाथ अर्घ्य

जल फल सब सज्जै, वाजत वज्जै, गुनगनरज्जै मनमज्जै।
तुम पदजुगमज्जै सज्जन जज्जै, ते भव भज्जै निजकज्जै।।
तुम अजित जिनेशं नुत चक्रेशं चक्रधरेशं खग्गेशं।
मन वांछित दाता त्रिभुवन त्राता, पूजों ख्याता जग्गेशं।।
ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सम्भवनाथ अर्घ्य

जल चन्दन तन्दुल पुष्प चरु, दीप धूप फल अर्घ्य किया।
तुमको अरपो भावभगतिधर, जै जै जै शिवरमनि पिया।।
सम्भवजिन के चरन चरचते, सब आकुलता मिट जावै।
निज निधि ज्ञान-दरश-सुख-वीरज, निराबाध भविजन पावै।।
ॐ ह्रीं श्रीसम्भवनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री अभिनन्दन अर्घ्य

अष्ट द्रव्य सवारि सुन्दर, सुजस गाय रसाल ही।
नचत रजत जजों चरन जुग, नाय नाय सुभाल ही।।
कलुष ताप निकन्द श्री अभिनन्द, अनुपम चन्द हैं।
पदवन्द वृन्द जजे प्रभू भवद्वन्द-फन्द निकन्द है।।
ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री सुमतिनाथ अर्घ्य

जल चन्दन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप फल सकल मिलाय।
नाचिराचि शिरनाय समरचों, जय जय जय जय जयजिनराय।।
हरिहर वन्दित पाप निकन्दित, सुमतिनाथ त्रिभुवन के राय।
तुम पद पद्म सद्म शिवदायक, जजत मुदित मन उदित सुभाय।
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री पद्मप्रभ अर्घ्य

जलफल आदि मिलाय गाय गुन, भगति भाव उमगाय।
जजों तुमहिं शिवतियवर जिनवर, आवागमन मिटाय।।
पूजों भाव सों श्री पद्मनाथ पद सार, पूजों भाव सों।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री सुपार्श्वनाथ अर्घ्य

आठों दरव साजि गुनगाय, नाचत राचत भगति बढ़ाय।
दया निधि हो, जय जगबन्धु दयानिधि हो।।
तुम पद पूजों मन वच काय, देव सुपारस शिवपुरराय।
दया निधि हो जय जगबन्धु दयानिधि हो।।
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री चन्द्रप्रभ अर्घ्य

वसु विधि अर्घ्य बनाय मनोहर, श्री जिन मन्दिर जावो।
अष्टकर्म के नाश करन को, श्री जिन चरण चढ़ावो।।
चञ्चल चित को रोक, चतुर्गति चक्रभ्रमण निरवारो।
चारु चरण आचरण चतुरनर, चन्द्रप्रभ चितधारो।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री पुष्पदन्त अर्घ्य

जलफल सकल मिलाय मनोहर मनवचतन हुलसाय।
तुम पद पूजों प्रीति लायके जय जय त्रिभुवनराय।।
मेरी अरज सुनीजे, पुष्पदन्त जिनराय मेरी अरज सुनीजे।।
ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्त-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री शीतलनाथ अर्घ्य

कंश्री फलादि वसु प्रासुक द्रव्य साजे।
नाचे रचे मचत बज्जत सज्ज बाजे।।
रागादिदोष मलमर्द्दन हेतु येवा।
चर्चों पदाब्ज तव शीतल नाथ देवा।।

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री श्रेयांसनाथ अर्घ्य

जल मलय तन्दुल सुमन चरु, अरु दीप धूप फलावली।
करि अर्घ्य चरचों चरनजुग प्रभु मोहि तार उतावली।।
श्रेयांसनाथ जिनेन्द्र त्रिभुवन वन्द्य आनन्द कन्द है।
दुख द्वन्दफन्द निकन्द पूरनचन्द्र जोति अमन्द है।।

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री वासुपूज्य अर्घ्य

जल फल दरव मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई।
शिवपदराज हेतु हे श्री पति! निकट धरों यह लाई।।
वासुपूज्य वसुपूज तनुज पद, वासव सेवत आई।
बाल ब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री विमलनाथ अर्घ्य

आठों दरब संवार, मनसुखदायक पावने।
जजों अर्घ्य भर थार विमल विमल शिवतिय रमन।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री अनन्तनाथ अर्घ्य

शुचि नीर चन्दन शालितन्दुल, सुमन चरुदीपक धरों।
धूप फल जुत अरघ करके, कर जोर जुग विनती करों।।
जगपूज परमपुनीत मीत, अनन्त सन्त सुहावनें।
शिवकन्तवन्त महन्त ध्यावों, भ्रमणतन्त नशावनें।।

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री धर्मनाथ अर्घ्य

आठों दरव साज शुचि चितहर, हरषि हरषि गुन गाई।
बाजत दृमदृम दृम मृदंगगत, नाचत ता थेइ थाई।।
परम धरम शमरमण धरम-निज अशरनशरन तिहारी।
पूजूँ पाय गाय गुन सुन्दर, नाचूँ दै दै तारी।।

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री शान्तिनाथ अर्घ्य

वसु द्रव्य संवारी, तुम ढिग धारी, आनन्दकारी दृग प्यारी।
तुम हो भवतारी, करुणाधारी, यातै थारी शरनारी।।
श्री शान्ति-जिनेश, नुतशक्रेश, वृषचक्रेश, चक्रेशं।
हनि अरि चक्रेश, हे गुनधेशं, दयामृतेश, मक्रेशं।।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री कुन्थुनाथ अर्घ्य

जल चन्दन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप लेरी।
फलजुत जजन करों मन सुखधरि, हरों जगत फेरी।।
कुन्थु सुन अरज दासकेरी, नाथ सुन अरज दासकेरी।
भवसिन्धु परयो हों नाथ, निकारो बाँह पकर मेरी।।

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री अरनाथ अर्घ्य

शुचि स्वच्छ पटीरं, गन्धगहीरं, तन्दुलशीरं पुष्प चरुं।
वर दीपं धूपं, आनन्दरूपं, लै फल भूपं अर्घ्य करूं।।
प्रभु दीनदयालं अरिकुलकालं, विरद विशालं सुकुमालम्।
हरि मम जंजालं, हे जगपालं, अरगुनमालं वरमालम्।।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री मल्लिनाथ अर्घ्य

जलफल अरघ मिलायगाय गुन पूजों भगति बढ़ाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीधर, शरनगहो मैं आई।।
राग द्वेष मद मोह हरन को, तुम ही हो वरवीरा।
यातें शरन गही जगपतिजी, वेग हरो भव पीरा।।

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि०।

श्री मुनिसुव्रतनाथ अर्घ्य

जलगन्ध आदि मिलाय आठों, दरब अरघ सजों वरों।
पूजों चरनरज भगत जुत, जातें जगत सागर तरों।।
शिवसाथ करत सनाथ सुव्रतनाथ मुनिगुनमाल है।
तुम चरन आनन्दभरन तारन, तरन विरद विशाल है।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथ-जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं।

श्री नमिनाथ अर्घ्य

जल फलादि मिलाय मनोहरं, अरघ धारय ही भय भव हरं।
जजतु हों नमि के गुन गाय के, जुगपदाम्बुज प्रीति लगाय कें।।

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री नेमिनाथ अर्घ्य

जलफल अर्घ्य बनाय गाय गुन, रतन थाल भरिये सुखदान।
अष्टकर्म के नाशक प्रभु को, पूजूँ निजगुणदायक जान।।

बाल ब्रह्मचारी जगतारी, नेमिश्वर जिनराज महान।
मैं नित ध्यान करूँ प्रभु तेरा, मोकूँ दीजे अविचल थान।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री पार्श्वनाथ अर्घ्य

संघर्षों में उपसर्गों में तुमने समता का भाव धरा।
आदर्श तुम्हारा अमृत बन भक्तों के जीवन में बिखरा।।
मैं अष्टद्रव्य से पूजा का शुभथाल सजाकर लाया हूँ।
जो पदवी तुमने पाई है मैं भी उस पर ललचाया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री महावीर अर्घ्य

जलफल वसु सजि हिम थार, तन मन मोद धरों।
गुणगाऊँ भवदधितार, पूजत पाप हरों।।
श्री वीर महा अतिवीर सन्मति नायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर सन्मतिदायक हो।।

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमान-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री बाहुबलि अर्घ्य

वसु विधि के वश वसुधा सब ही परवश अति दुख पावें,
तिहिं दुख दूर करन को भविजन अर्घ्य जिनाग्र चढ़ावें।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहुबलि बलधारी,
तिनके चरण कमल को नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलि-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सोलहकारण अर्घ्य

जल फल आठों दरब चढ़ाय, द्यानत वरत करों मनलाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।
दरश विशुद्ध भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पद पाय।

परम गुरुहो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।

(श्री जिनपूजा जग में सार, भवदधिपार उतारनहार, परम०)

ॐ ह्रीं दर्शन-विशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्घ्यं निव० स्वाहा

रत्नत्रय अर्घ्य

आठ दरब निरधार, उत्तम सों उत्तम लिये।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं सम्यक्-रत्नत्रयाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

पञ्चमेरु का अर्घ्य

आठदरब मय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजों श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।
पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करो प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।
(अकृत्रिम जिनवर जिनथान, पूजत होत पाप की हान महा.)

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्ध्यशीति-जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो-अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वरद्वीप का अर्घ्य

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीज्यो शिव-खेत, भूमि समरपतु हों।।
नन्दीश्वर श्री जिनधाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द भाव धरों।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशत्-जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धचक्र अर्घ्य

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन धवल अक्षययुत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरुप्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ्य सिद्ध समूह पूजित कर्मअरि सब दलमले।।

ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टार अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप हैं।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य अदूज शिवकमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँगुण, ज्ञेय द्यो हम शुभमती।।

ॐ ह्रीं अर्ह अनाहत-पराक्रमाय सकल-कर्म-विमुक्ताय श्री-सिद्धचक्राधिपतये सम्मत्त-णाण-दंसण-वीर्य-सुहम-अवग्गहणं-अगुरुलघु-अव्वावाहं अष्टगुण-संयुक्ताय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दशलक्षण का अर्घ्य

आठों दरव संवार, 'द्यानत' अधिक उछाह सों।
भव-आताप निवार, दस-लक्षण पूजों सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवदेवता अर्घ्य

मध्ये कर्णिकमर्हदार्य-मनघं बाह्येष्ट-पत्रोदरे,
सिद्धान् सूरिवरांश्च पाठक-गुरुन् साधूंश्च दिक्पत्रगान्।
सद्धर्मागम-चैत्यचैत्यनिलयान् कोणस्थ-दिक्पत्रगान्,
भक्त्या सर्वसुरासुरेन्द्र-महितान् तानष्टधेष्ट्या यजे।।

ॐ ह्रीं अर्हदादि-नवदेवेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

विनायक यन्त्र अर्घ्य

सुवरण के थाल भराये, शुचि आठों द्रव्य मिलाये।
गुरुपञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंगलोत्तम-शरण्यभूतेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस्वती अर्घ्य

जल चन्दन अक्षत, फूल चरु, अरुदीप धूप अति फल लावै।
पूजा को ठानत, जो तुम जानत, सो नर'द्यानत' सुख पावै।

तीर्थंकर की ध्वनि, गणधर ने सुनी, अंग रचे चुनि ज्ञान मई
सो जिनवर वानी, शिवसुखदानी, त्रिभवुन मानी पूज्य भई।।
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तर्षि अर्घ्य

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरुवर दीप धूप सु लावना।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित अर्घ्य कीजे पावना।।
मन्वादि चारण ऋद्धि धारी मुनिन की पूजा करूँ।
ता करें पातक हटे सारे, सकल आनन्द विस्तरूँ।।
ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिचारणसप्तर्षिभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।

निर्वाणक्षेत्र अर्घ्य

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरुवर दीप धूपायन धरों,
द्यानत करो निर्भय जगत सों, जोरकर विनती करों।
सम्मेदगढ़ गिरनार चम्पा, पावापुरि कैलाश को,
पूजों सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि निवास को।।
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।

समुच्चय महार्घ्य

मैं देव श्री अर्हन्त पूजूँ सिद्ध पूजूँ चाव सों।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ साधु पूजूँ भाव सों।।
अर्हन्त-भाषित बैन पूजूँ द्वादशांग रची गनी।
पूजूँ दिगम्बर गुरुचरन शिव हेतु सब आशा हनी।।
सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि दया-मय पूजूँ सदा।
जजूँ भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहीं कदा।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम अकृत्रिम चैत्य चैत्यालय जजूँ।
पञ्चमेरु नन्दीश्वर जिनालय खचर सुर पूजित भजूँ।।

कैलाश श्रीसम्मेद श्रीगिरनार गिरि पूजूँ सदा।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ सर्वदा।।
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस-वसु जय होय पति शिवगेह के।।

दोहा- जल गन्धाक्षत पुष्प चरु दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूज हूँ बहु विधि भक्ति बढ़ाय।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्यो द्वादशांग-जिनागमेभ्यो उत्तमक्षमादि-दशलक्षण-धर्मेभ्यो दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो त्रिलोकस्थित-जिन-बिम्बेभ्यो पञ्चमेरुसम्बन्ध्यसीतिचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो नन्दीश्वरद्वीप-स्थित-द्विपञ्चाशत्-जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो श्री-सम्मेदाष्टापदूर्जयन्तगिरि - चम्पापावापुरादि - सिद्धक्षेत्रेभ्यो सातिशयक्षेत्रेभ्यो विद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्यो अष्टाधिक-सहस्र-जिननामभ्यो श्रीवृषभादि-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलादि- महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्ति पाठ

दोधक छंद

शान्तिनाथ मुख शशि उनहारी, शील-गुणव्रत-सयमधारी।।
लखन एक सौ आठ विराजे, निरखत नयन कमलदल लाजे।।
पञ्चम चक्रवर्तीपद धारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी।।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शान्तिहित शान्ति विधायक।।
दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा।।
छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी।।
शान्ति जिनेश शान्ति सुखदाई, जगत्पूज्य पूजौं शिर नाई।।
परम शान्ति दीजे हम सबको, पढ़ें तिन्हें पुनि चार संघ को।।

बसन्ततिलका

पूजें जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके,
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके।।

सो शान्तिनाथ वरवंश जगतप्रदीप,
मेरे लिये करहिं शान्ति सदा अनूप।।

इन्द्रवज्रा

सम्पूजकों को प्रतिपालकों, को यतीनकों को यतिनायकों को।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले, कीजै सुखी हे जिन शान्तिको दे।

स्रग्धरा छन्द

होवै सारी प्रजा को, सुख बलयुत हो, धर्मधारी नरेशा।
होवै वर्षा समय पै, तिलभर न रहै, व्याधियों का अन्देशा।।
होवै चोरी न जारी, सुसमय बरतै हो न, दुष्काल भारी।
सारे ही देश धारैं, जिनवर-वृषको जो, सदा सौख्यकारी।।

दोहा- घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शान्ति करो सब जगत में, वृषभादिक जिनराज।।

मन्दाक्रान्ता

शास्त्रों का हो, पठन सुखदा, लाभ सत्संगति का।
सद्‌वृत्तों का, सुजस कहके, दोष ढाकूँ सभी का।।
बोलूँ प्यारे, वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ।
तो लौं सेऊँ, चरण जिनके, मोक्ष जौ लौं न पाऊँ।।

आर्या

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में।
तब लौं लीन रहौ प्रभु, जब लौं न पाया मुक्ति पद मैंने।।
अक्षर पद मात्रा से दूषित, सो कछु कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब करुणा करि, पुनि छुड़ाहु भवदुख से।।
हे जगबन्धु जिनेश्वर!, पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय हो सुबोध सुखकारी।।

शान्तिभक्तिंसमाधिभक्तिंच पठित्वा कायोत्सर्गं करोम्यहम्
पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

विसर्जन-पाठ

बिन जाने व जानके रही टूट जो कोय।
तुम प्रसादतैं परम गुरु सो सब पूरन होय।।1।।
पूजन विधि जानूँ नहीं नहिं जानूँ आह्वान।
और विसर्जन हूँ नहीं क्षमा करहु भगवान।।2।।
मन्त्रहीन धनहीन हूँ क्रियाहीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे देहु चरणकी सेव।।3।।
श्रद्धा से आराध्य पद, पूजे भक्ति प्रमान।
पूजा विसर्जन मैं करूँ, सदा करो कल्याण।।4।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अर्हदादिपरमेष्ठिनः पूजाविधिं विसर्जनं करोमि अपराध-क्षमापणं भवतु जःजःजः।

(उक्त मंत्र पढ़कर ठोने पर पुष्प क्षेपण करें)

(निम्नांकित छन्द पढ़ते हुये गवासन मुद्रा से अर्हंत भगवान को नमोऽस्तु करके आशीर्वाद लेते हुए कायोत्सर्ग पूर्वक कार्य पूर्ण करें।)

श्री जिनवर जी की आशिका, लीजै शीश चढ़ाय।
भव भव के पातक कटैं, दुःख दूर हो जाय।।

विसर्जन

पूजा का समापन ही विसर्जन है। पूर्व में पूजन का संकल्प पंचमहागुरू भक्ति पूर्वक किया था अन्त में शांति एवं समाधि भक्ति पूर्वक पूजन को पूर्ण करते हैं। पूजन अनुष्ठान क्रिया में होने वाली त्रुटियों, असावधानियों। अज्ञानता के लिए प्रभु चरणों में क्षमायाचना करके मंत्र पूर्वक ठोने पर पुष्प क्षेपण करके पूजन के संकल्प का विसर्जन क्रिया करना चाहिए।

(विधान के पूर्व सिद्धभक्ति एवं विसर्जन के पश्चात् शान्ति भक्ति पढ़ें)

सिद्धभक्ति

असरीरा जीवघणा उवजुत्ता दंसणे य णाणे य।
सायार-मणायारा लक्खण-मेयं तु सिद्धाणं।।1।।
मूलोत्तर-पयडीणं बंधोदय-सत्त-कम्मउम्मुक्का।
मंगल-भूदा सिद्धा अट्ठगुणातीद-संसारा।।2।।
अट्ठविह-कम्म वियला सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा।
अट्ठ-गुणा किदकिच्चा लोयग्ग-णिवासिणो सिद्धा।।3।।
सिद्धा णट्ठट्ठमला विसुद्ध-बुद्धी य लद्धि-सब्भावा।
तिहुअण-सिर-सेहरया पसियंतु भडारया सव्वे।।4।।
गमणागमण-विमुक्के वियडिय-कम्म-पयडि-संघारा।
सासय-सुह-संपत्ते ते सिद्धा वंदिमो णिच्चं।।5।।
जय-मंगल-भूदाणं विमलाणं णाण-दंसणमयाणं।
तइलोइ-सेहराणं णमो सदा सव्व-सिद्धाणं।।6।।
सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवग्गहणं।
अगुरु-लघु अव्वावाहं अट्ठ-गुणा होंति सिद्धाणं।।7।।
तव-सिद्धे णय-सिद्धे संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि।।8।।

इच्छामि भंते। सिद्ध-भत्ति काओसग्गो कओ-तस्सालोचेओ, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं अट्ठविह-कम्मविप्प-मुक्काणं, अट्ठ-गुण-संपण्णाणं, उड्ढ-लोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं संजमसिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं अतीवाणागद-वट्टमाण कालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं सया णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहि-मरणं जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं। इति पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं कायोत्सर्गं करोमि।

शान्तिभक्ति

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन् पादद्वयं ते प्रजाः।
हेतुस्तत्र विचित्र दुःखनिचयः संसार-घोरार्णवः।
अत्यन्त-स्फुरदुग्र-रश्मिनिकर-व्याकीर्ण-भूमण्डलो
ग्रैष्मः कारयतीन्दुपाद-सलिलच्छायानुरागं रविः।।1।।
क्रुद्धाशीर्विष-दष्ट-दुर्जय-विष-ज्वालावली-विक्रमो
विद्या-भेषज-मन्त्र-तोय-हवनै-र्याति प्रशान्तिं यथा।
तद्वत्ते चरणारुणाम्बुज-युग-स्तोत्रोन्मुखानां नृणां।
विघ्नाः काय-विनायकाश्च सहसा शाम्यन्त्यहो विस्मयः।।2।।
सन्तप्तोत्तम-काञ्चन-क्षितिधर-श्री-स्पर्द्धि-गौरद्युते।
पुंसां त्वच्चरण-प्रणाम-करणात्पीडाः प्रयान्ति क्षयम्।
उद्यद्-भास्कर-विस्फुरत्कर-शतव्याघात-निष्कासिताः।
नाना देहि विलोचन-द्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी।।3।।
त्रैलोक्येश्वर-भंगलब्धविजयादत्यन्त-रौद्रात्मकान्।
नाना जन्मशतान्तरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः।।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्र-दावानलान्-
न स्याच्चेत्तव पादपद्म-युगलस्तुत्यापगावारणम्।।4।।
लोकालोकनिरन्तर-प्रवितत-ज्ञानैकमूर्ते विभो।
नानारत्न-पिनद्ध-दण्डरुचिर-श्वेतात-पत्रत्रयम्।
त्वत्पादद्वय-पूतगीत-रवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः
दर्पाध्मात-मृगेन्द्र भीमनिनदाद्वन्या यथा कुञ्जराः।।5।।
दिव्यस्त्री-नयनाभिराम-विपुल-श्रीमेरु-चूडामणे
भास्वबाल-दिवाकर-द्युतिहर प्राणीष्ट-भामण्डलम्।
अव्याबाध-मचिन्त्यसार-मतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम्।
सौख्यं त्वच्चरणारविन्द-युगलं स्तुत्यैव सम्प्राप्यते।।6।।

यावन्नोदयते प्रभा-परिकरः श्रीभास्करो-भासयं-
स्तावद्धारयतीह पंकज-वनं निद्राति-भारश्रमम्।
यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन्नस्यात्प्रसादोदय-
स्तावज्जीव-निकाय एष वहति प्रायेण पापं महत्।।7।।
शान्तिं शान्तिजिनेन्द्र शान्तमनसस्-त्वत्पाद-पद्माश्रयात्,
सम्प्राप्ताः पृथिवी-तलेषु बहवः शान्त्यर्थिनः प्राणिनः।
कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो दृष्टिं प्रसन्नां कुरु।
त्वत्पादद्वय-दैवतस्य गदतः शान्त्यष्टकं भक्तितः।।8।।
शान्तिजिनं शशि-निर्मल-वक्त्रं शील-गुणव्रत-सयम-पात्रं।
अष्ट-शतार्चित-लक्षण-गात्रं, नौमि जिनोत्तम-मम्बुज-नेत्रम्।।9।।
पञ्चममीप्सित-चक्रधराणां, पूजितमिन्द्र-नरेन्द्र गणैश्च।
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सुः षोडश-तीर्थकरं प्रणमामि।।10।।
दिव्य-तरुः सुरपुष्प-सुवृष्टिर्दुन्दुभिरासन-योजन-घोषौ।
आतप-वारण-चामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डल-तेजः।।11।।
तं जगदर्चित-शान्तिजिनेन्द्र शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं मह्यमरं पठते परमां च।।12।।
येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत-पादपद्माः।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्प्रदीपाः तीर्थंकराः सतत-शान्तिकरा भवन्तु।।13।।
सम्पूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानां।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवज्जिनेन्द्रः।
क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तुनाशम्।।14।।
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मा स्म भूज्जीवलोके।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्य-प्रदायि।।15।।

तद्-द्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स देशः सन्तन्यतां प्रतपतां सततं स कालः।
भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षु-वर्गे।।16।।
प्रध्वस्त-घातिकर्माणः केवलज्ञान-भास्कराः।
कुर्वन्तु जगतां शान्तिं वृषभाद्या-जिनेश्वराः।।17।।

इच्छामि भंते शान्तिभत्ति-काओसग्गो कओ तस्सालोचओ पञ्चमहाकल्लाण-सम्पण्णाणं अट्ठ-महापाडिहेर-सहियाणं चउतीसातिसय- विसेस-संजुत्ताणं बत्तीस-देवेन्द-मणिमय-मउड-मत्थय-महियाणं बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसिमुणि-जदि-अणगारोवगूढाणं थुइसय-सहस्स-णिलयाणं उसहाइवीर-पच्छिम मंगल-महापुरिसाणं सया-णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं समाहि-मरणं जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं। (कायोत्सर्गं करोम्यहम्)

मण्डल विसर्जन

जगतः शान्तिविवर्धनमहसां प्रलयमस्तु जिनस्तवनेन मे (ते)।
सुकृतबुद्धिरलं क्षमयायुतो जिनवृषे हृदये मम (तव) वर्तताम्।।
मोहध्वान्तविदारणं विशद विश्वोद्भासि दीप्तिश्रियम्।
सन्मार्गप्रतिभासकं विबुधसन्दोहामृतापादकम्।
श्रीपादं जिनचन्द्रशान्तिशरणं सद्भक्तिमानेऽपि ते।
भूयस्तापहरस्य देव भवतो भूयात्पुनर्दर्शनम्।।
मंगलार्थं समाहूता विसर्ज्याखिलदेवताः।
विसर्जनाख्यमन्त्रेण वितीर्य कुसुमाञ्जलिं।।

ॐ ह्रीं अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठामहोत्सवे (कर्मणि) आहूयमान-देवगणाः स्वस्थानं गच्छन्तु अपराधक्षमापणं भवतु।

आष्टाह्निक / नन्दीश्वरद्वीप व्रतोद्यापन

पूर्व-पीठिका

सर्वत्र लोकत्रय पूज्यपाद, जिनका त्रिलोक आभारी है।
जो मोक्षमार्ग के उपदेशक, कटु कर्म-विभेदन कारी हैं।।
सतज्ञान अनन्त विभूषित जो, केवलज्ञानी पद पाते हैं।
उनको त्रियोग श्रद्धा समेत, हम सविनय शीश झुकाते हैं।।
चौरासी लक्ष योनियों में, जो समुत्पन्न संसारी हैं।
अज्ञान तिमिर में भटकों को, जो पथ दर्शन व्रत धारी हैं।।
जिनमुख से मुखरित वाणी को, संसार तारिणी पाता हूँ।
उस सरस्वती जिनवाणी को, मैं सविनय शीश झुकाता हूँ।।
विषयाशा तथा परिग्रह से, जिनका मन महा विकारी है।
उन भ्रमित प्राणियों को जिनका, संदेश परम हितकारी है।।
जिनका निर्मल विरक्त जीवन, गुरुभक्तों को पतियाता है।
उन सत्य दिगम्बर सन्तों को, स्वयमेव शीश झुक जाता है।।
अष्टम नन्दीश्वर द्वीप जहाँ, जिनधर्म-ध्वजा फहराती है।
प्रत्येक ओर तेरह-तेरह, पर्वत माला गुण गाती हैं।।
शैलों के ऊँचे शिखरों पर, जिनमन्दिर मंगलकारी हैं।
जिनबिम्ब अकृत्रिम अति विशाल. जिनकी तन दीप्ति निराली है।।
उनकी शोभा का पार नहीं, उनमें जो बिम्ब विराजित हैं।
उनके वन्दन अभिनन्दन से, हो जाते पाप पलायित हैं।।
उन जिनालयों के बिम्बों का, संकटहर पूजन अर्चन है।
इस पुण्य स्थापन में उनका, शतशत सविनय आह्वानन है।।

दोहा– नन्दीश्वर दीपस्थ जो, बिम्ब अकृत्रिम सार।
उनकी करके स्थापना, पूजों विधि अनुसार।।
शुभ आष्टाह्निक व्रतों का, उद्यापन उर धार।
प्रस्तुत पूजन पाठ है, परम्परा अनुसार।।

श्री नन्दीश्वरद्वीप पूर्वदिशा जिनपूजा

दिशा प्राची द्वीप नन्दीश्वर, नाम महान सुहावना।
एक अञ्जन शैल दधिमुख, चार दिव्य-प्रभावना।।
आठ रतिकर गिरि जहाँ पर, सुर करें आराधना।
अकृत्रिम जिन मूर्तियों की, है जहाँ संस्थापना।।

दोहा

कर रहा श्रद्धा सहित, जैनेन्द्र-बिम्ब स्थापना।
इस नितान्त असक्त की, स्वीकारिये प्रस्तावना।।

ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां महामहोत्सवे श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां महामहोत्सवे श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां महामहोत्सवे श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधकरणम् पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

मन को पावन करने वाली, यह जल की धारा उज्ज्वल है।
जन्मादि रोग हरने वाली, हिम के अनुरूप समुज्ज्वल है।
नन्दीश्वर पूर्वस्थ जिनों को, निर्मल नीर चढ़ाता हूँ।
मैं भक्तिभाव से आठों दिन, नन्दीश्वर पर्व मनाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जो हृदय घ्राण के अञ्चल में, आनन्द गन्ध भर देता है।
कुंकुम आदिक मिश्रित चन्दन, मन का आतप हर लेता है।।नन्दीश्वर०

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

नव्योदित चन्दन सम किरण, अक्षत में ज्योति दमकती है।
बेला की कलियों के समान, स्वयमेव सुगन्ध महकती है।।नन्दीश्वर०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सन्तान प्रमुख वर पुष्पों में, जो पुष्प चित्त हर्षाता है।
खिलकर हरिचन्दन पारिजात, मोहक सौरभ बिखराता है।।नन्दीश्वर०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

परिपक्व विविध मिष्ठान्न शुद्ध, कञ्चन पात्रों में भर लाया।
नैवेद्य रूप में धार सहित, मैं इन्हें चढ़ाने को लाया।।नन्दीश्वर०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पीताम्बर कञ्चन के समान, जो दीप शिखा इठलाती है।
जो दशों दिशाओं का तमहर, उज्ज्वल प्रकाश फैलाती है।।नन्दीश्वर०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस मलय वृक्ष के सौरभ पर, भ्रमरों का दल मड़राया है।
यह उसी मलय चन्दन द्वारा, मैने वर धूप बनाया है।नन्दीश्वर०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर आम पिस्ता बदाम, अखरोट जायफल लाया हूँ।
बहुमूल्य सुगन्धित उत्तमफल, एकत्र चढ़ाने आया हूँ।।नन्दीश्वर०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वर द्वीप सकल, मोहान्धकार हर लेता है।
सम्पन्न अष्ट द्रव्यों द्वारा, वसुकर्म विजय फल देता है।।
नन्दीश्वर पूर्वस्थ जिनों को, निर्मल नीर चढ़ाता हूँ।
मैं भक्तिभाव से आठों दिन, नन्दीश्वर पर्व मनाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नन्दीश्वरद्वीप पूर्वदिशा जिन प्रत्येक पूजा

नन्दीश्वर की पूर्व दिशा में, महामनोहर अति अभिराम।
प्रथम दिव्य अञ्जनगिरि शोभित, वन्दनीय पावन जिनधाम।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
अचरज कारी उन बिम्बों को, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि प्रथमाञ्जनगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, पहिला दधिमुख रम्य विशाल।
अञ्जनगिरि की पूर्व दिशा में, शान्ति सौख्यदाता तत्काल।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
सुखोपलब्धि के हेतु उन्ही को, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि प्रथमाञ्जनगिरेः पूर्व वापिकामध्ये प्रथमदधिमुखगिरेः पूर्व जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वर की पूर्वदिशा मे, अञ्जन दक्षिण ज्योतिर्मान।
दूजा दधिमुख पर्वत सोहे, वन्दत देव समूह महान।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
पुण्योपार्जन हित उन सबको, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे पूर्वदिशि प्रथमाञ्जनगिरेः दक्षिण-वापिकामध्ये द्वितीयदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्वदिशा में गिरि सुमेरु सा, पश्चिम दिग्गत वृष भण्डार।
तीजा दधिमुख पर्वत सोहे, जिनपति का सुन्दर दरबार।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
ज्ञान लाभ कारक यह उनको, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि प्रथमाञ्जनगिरेः पश्चिम वापिकामध्ये तृतीयदधिमुखगिरेः जिनालस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं।

पूर्वदिशा में गिरि सुमेरु सा, उत्तर दिग्गत बिम्बागार।
जो चतुर्थ दधिमुख पर्वत है, अमरगणों को वृषकर्तार।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
सुख सम्प्राप्ति हेतु यह उनको, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि प्रथमाञ्जनगिरेः उत्तर वापिकामध्ये चतुर्थदधिमुखगिरेः जिनालस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं।

नन्दीश्वर की पूर्व दिशा में, पूर्व वापिका सलिलागार।
उसके प्रथमकोण में पहला, रतिकर पर्वत बिम्बागार।।
नन्दीश्वर की पूर्व दिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
कर्म विलय के हेतु उन्हीं को, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि प्रथमाञ्जनगिरेः पूर्ववापिका प्रथमकोणस्थ- प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं।

नन्दीश्वर की पूर्व दिशा में, पूर्व वापिका जलभण्डार।
जिसके द्वितिय कोण में दूजा, रतिकर पर्वत ढोलाकार।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
शिव उपलब्धि हेतु उनको यह, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि प्रथमाञ्जनगिरेः पूर्ववापिका द्वितीयकोणस्थ द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वर की पूर्व दिशा में, दक्षिण वापी नीराधार।
जिसके प्रथमकोण पर सोहे, पहिला रतिकर ढोलाकार।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
शिव सम्प्राप्ति हेतु उनको यह, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि प्रथमाञ्जनगिरेः दक्षिणवापिका प्रथम कोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं।

नन्दीश्वर की पूर्व दिशा में, दक्षिणवापी सलिलाधार।
जिसके द्वितिय कोण पर सोहे, दूजा रतिकर ढोलाकार।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमाकार।
निजानन्द के हेतु उन्हें यह, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि प्रथमाञ्जनगिरेः दक्षिणवापिका द्वितीय- कोणस्थ-द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वर की पूर्व दिशा में, पश्चिम वापी नीराधार।
जिसके प्रथम कोण में सोहे, पहिला रतिकर ढोलाकार।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
मोक्ष प्राप्ति के हेतु उन्हें यह, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि प्रथमाञ्जनगिरेः पश्चिम वापिका-प्रथम-कोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वर की पूर्व दिशा में, पश्चिम वापी तोयाधार।
जिसके द्वितिय कोण में सोहे, दूजा रतिकर ढोलाकार।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
सर्वसिद्धि के हेतु उन्हें यह, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि प्रथमाञ्जनगिरेः पश्चिमवापिका-द्वितीय-कोणस्थ-द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वर की पूर्व दिशा में, उत्तर वापी सलिलाधार।
जिसके प्रथम कोण में सोहे, पहला रतिकर ढोलाकार।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
परम मोद के हेतु उन्हें यह, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे प्रथमाञ्जनगिरेः उत्तरवापिका प्रथम कोणस्थ-प्रथम-रतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं.

नन्दीश्वर की पूर्व दिशा में, उत्तर वापी तोयाधार।
जिसके द्वितिय कोण में सोहे, दूजा रतिकर ढोलाकार।।
नन्दीश्वर की पूर्वदिशा में, बिम्ब अकृत्रिम सुषमासार।
पाप विमोचन हेतु उन्हें यह, अर्घ्य-समर्पण बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे प्रथमाञ्जनगिरेः उत्तरवापिका-द्वितीय कोणस्थ-द्वितीय-रतिकरगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं.

जयमाला

इस भूतल पर द्वीप अनेकों, और अनेकों पारावार।
जो थाली या चूड़ी जैसे, गोल-गोल सुन्दर आकार।।
प्रथम द्वीप का नाम मनोरम, जम्बूद्वीप महान ललाम।
एक स्वयंभूरमण नाम है, अन्तिम द्वीप परम सरनाम।

पहला सागर लवण नाम का, आगमोक्त उपरोक्त प्रकार।
सौम्य स्वयंभूरमण नाम का, अन्तिम सागर गोलाकार।।
इस भौगोलिक परिज्ञान से, भूगोलज्ञ अभी अज्ञात।
जैनागम की यह विशेषता, शिक्षित करें यत्न से ज्ञात।।

अष्टम द्वीप नाम नन्दीश्वर, विश्व विदित वृष का आधार।
इसमें कभी नहीं कर पाता, भव्यो मानव वर्ग विहार।।
किन्तु देवगण वहाँ निरंतर, जाते-आते बारम्बार।
जाकर पूजनपाठ रचाते, जिनबिम्बों को श्रद्धाधार।।

इसी द्वीप की चार दिशाएँ, जिनके बीचों बीच महान।
एक-एक अञ्जनगिरि शोभित, ऊपर नीचे एक समान।।
ये चारों ही उन्नत पर्वत, अति सुन्दर हैं ढोलाकार।
अञ्जन सदृश वर्ण के धारक, अञ्जन यथानाम गुणधार।।

भूतल के चारों अञ्जनगिरि, धरती से ऊपर की ओर।
पूरब से पश्चिम को एवं, दक्षिण से उत्तर की ओर।।
ये समस्त चौरासी योजन, महिमा महा स्वर्ग-सोपान।
अन्धकार नाशक विशालतम, अति आलोकित ज्योर्तिमान।।

एक लाख योजन चौतरफा, अञ्जन अन्तराल को छोड़।
चारों दिक् में एक-एक हैं, अकृत वापिकाएँ बेजोड़।।
चारों जल से भरीं लबालब, चौखूंटी चौकोर महान।
एक लाख योजन तक चारों, लम्बी चौंड़ी एक समान।।

सभी वापिकाएँ मनोज्ञतम, समतल चौखूटी चहुँ ओर।
इनकी दिव्य तरंगित लहरें, करती हैं आनन्द विभोर।।
कञ्चन निर्मित दृढ़ बँधान की, सभी वापिकाएँ छविमान।
भरी हुई जल राशि स्वयं ही, करतीं आत्मिक-शान्ति प्रदान।।

इसी द्वीप मे चार मनोरम, दधिगिरि पर्वत महा विशाल।
इन ही चार वापिकाओं में, खड़े मध्य में उन्नत-भाल।।
श्वेत स्फटिक वर्ण वाले यह, चित्ताकर्षक गोलाकार।
है दश दश हजार योजन का, इनका चौतरफा विस्तार।।
चारों वापियों के बाहर, दो दो कोनों पर अभिराम।
एक एक रतिकर पर्वत है, नन्दीश्वर का शोभाधाम।।
भूतल पर शोभायमान है, करते पथिक जहाँ विश्राम।
एक हजार महायोजन है, इनका चौदिश में आयाम।।
पूर्व दिशा में तेरह पर्वत, जो हैं एक सदृश मनुहार।
पर्वत पर्वत बने अकृत्रिम, बिम्ब जिनालय एकाकार।।

बुधागम्य रचना अकृत्रिमा, सम्भव रञ्च न अनुसंधान।
कोई अब तक जान न पाया, इसका भौगोलिक विज्ञान।।
आष्टाह्निक के महापर्व पर, मनुज-अर्चना यहाँ दुरूह।
इसमें जाकर पूजन करते, समय-समय पर देव समूह।।
नन्दीश्वर के जिन चैत्यालय, बिम्ब अकृत्रिम उन्नत द्वार।
इनकी भक्ति अर्चना करके, पाते मन वाञ्छित उपहार।

दोहा- श्री नन्दीश्वर द्वीप जा, पूजें देव अपार।
क्षमता मानव में नहीं, पहुँचे द्वीप मँझार।।
मानव अपने क्षेत्र में, करे स्थापना सार।
बिम्ब अकृत्रिम पूजकर, भरें पुण्य-भण्डार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशि एकाञ्जनगिरि- चतुर्दधि-मुखाष्टरतिकर-गिरीतित्रयोदश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री नन्दीश्वरद्वीप दक्षिणदिशा जिनपूजा

परम पूज्य अष्टम नन्दीश्वर, द्वीप मनोज्ञ महान उदार।
पूर्वदिशा जैसी दक्षिण में, रचना निर्विकार साकार।।
इसमें भी सालोक अकृत्रिम, तेरह जिनमन्दिर वृषखान।
यहाँ अकृत्रिम जिनबिम्बों का, सविनय संस्थापन आह्वान।।

ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां महामहोत्सवे श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवोषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां महामहोत्सवे श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां महामहोत्सवे श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधापनम्। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्री नन्दीश्वर की दक्षिणदिक, पावन और परम अभिराम।
जहॉ त्रयोदश पर्वत शोभित, नाना मणि मण्डित छविधाम।।
आठों दिन श्री नन्दीश्वर के, बिम्ब अकृत्रिम कर्म-कुठार।
उनको क्षीरोदधि निर्मल जल, अर्पण करूँ, करे भवपार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम श्री नन्दीश द्वीप की, दक्षिण दिशा पूर्व से दूर।
जहॉ त्रयोदश पर्वत सोहे, भासित मणियों से भरपूर।।
आठो दिन श्री नन्दीश्वर के, बिम्ब अकृत्रिम कर्म-कुठार।
उनका गन्धित चन्दन द्वारा, अर्चन करूँ, करे भव-पार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वर की दक्षिण दिक् में, बहु शोभायमान चिरकाल।
दिव्य अकृत्रिम तेरह पर्वत, कञ्चन-आभायुक्त निहाल।।
आठों दिन श्री नन्दीश्वर के, बिम्ब अकृत्रिम कर्म-कुठार।
परम अखण्डित उन्हें समर्पित, अक्षत द्रव्य करे भवपार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम श्री नन्दीश द्वीप की, दक्षिण दिशा विषद निस्तार।
उच्च त्रयोदश पर्वत सोहें, जिनवर भवनों के आधार।।
आठों दिन श्री नन्दीश्वर के, बिम्ब अकृत्रिम कर्म-कुठार।
चम्पादिक गन्धिक पुष्पों से पूजा करूँ करे भव-पार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम श्री नन्दीश द्वीप की, दक्षिणदिशा मोद दातार।
जहाँ त्रयोदश पर्वत राजें, कञ्चन मय अति सुषमासार।।
आठों दिन श्री नन्दीश्वर के, बिम्ब अकृत्रिम कर्म-कुठार।
विविध वर्ण स्वादिष्ट समर्पित, शुभ नैवेद्य करे भवपार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वर की दक्षिणदिक् में, महामनोहर शोभावान।
सुखद त्रयोदश पर्वत उन्नत, लसें अकृत्रिम आभावान।।
आठों दिन श्री नन्दीश्वर के, बिम्ब अकृत्रिम कर्म-कुठार।
तमो विनाशक लोक प्रकाशक, अर्पित दीप करे भवपार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम श्री नन्दीश द्वीप की, दिशा दक्षिण महिमावान।
जहाँ त्रयोदश पर्वत राजें, मुक्ता-माणिक-युक्त महान।।
आठों दिन श्री नन्दीश्वर के, बिम्ब अकृत्रिम कर्म-कुठार।
अष्टअंग से सहित समर्पित, धूप अनर्घ्य करे भवपार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम श्री नन्दीश द्वीप की, दिशा दक्षिण महिमावान।
जिस पर तेरह गिरिवर शोभित, मणिमुक्ता-संयुक्त महान।।
आठों दिन श्री नन्दीश्वर के, बिम्ब अकृत्रिम कर्म-कुठार।
नानाविध बहुमूल्य मनोहर, फल उपहार करे भवपार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम श्री नन्दीश द्वीप की, दक्षिण दिक् भवतारक पोत।
तुंग त्रयोदश पर्वत सोहें, धर्म वाहिनी के शुभ स्रोत।।
आठों दिन श्री नन्दीश्वर के, बिम्ब अकृत्रिम कर्म-कुठार।
अष्ट-द्रव्य-मिश्रण से निर्मित, अर्पित अर्घ्य करे भवपार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक पूजन (दक्षिणदिशा)

नन्दीश द्वीप की दक्षिण दिक्, जिसमें द्वितीय अञ्जन गिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है।।
आष्टाह्निक व्रत उद्यापन का, सत्फल विशाल बहुचर्चित है।
सद्धर्म-लाभ के हेतु यहॉं, देवोचित अर्घ्य समर्पित है।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

नन्दीश द्वीप की दक्षिण दिक्, पूरब दिगस्थ दधिमुख गिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है।। आष्टा.

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः पूर्व-वापिकामध्ये-प्रथम- दधिमुखगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

नन्दीश द्वीप की दक्षिण दिक्, दक्षिणदिगस्थ दधिमुख गिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है।। आष्टा

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः दक्षिण-वापिकामध्ये द्वितीयदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

दक्षिण दिशा नन्दीश्वर की, पश्चिमदिगस्थ दधिमुख गिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है।। आष्टा.

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीप दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेःपश्चिम-वापिकामध्ये तृतीयदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

दक्षिणकाष्ठा नन्दीश्वर की, उत्तर दिगस्थ दधिमुख गिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है।। आष्टा.

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः उत्तर-वापिकामध्य चतुर्थदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दक्षिण में पूर्व वापिका है, कोणस्थ प्रथमरति करगिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है।। आष्टा.

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः पूर्ववापिका प्रथम-कोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

दक्षिण में पूर्व वापिका है, जिसके द्वितीय कोण रतिकर गिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि हैं।। आष्टा.

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः पूर्व-वापिकाद्वितीय-कोणस्थ-द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

दक्षिण में दक्षिण वापी है, कोणस्थ प्रथम रतिकरगिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है।। आष्टा.

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीप दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः दक्षिणवापिका-प्रथम- कोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

दक्षिण दिश में दक्षिण वापी है, दूसरा कोण रतिकर गिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है।।
आष्टाह्निक व्रत उद्यापन का, सत्फल विशाल बहुचर्चित है।
सद्धर्म-लाभ के हेतु यहाँ, देवोचित अर्घ्य समर्पित है।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः दक्षिणवापिका द्वितीय- कोणस्थ द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

नन्दीश वापिका पश्चिम में, कोणस्थ प्रथम रतिकर गिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है।। आष्टा.

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः पश्चिम-वापिका प्रथम कोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।

पश्चिम वापिका दक्षिण दिशि, दूसरा कोण रतिकर गिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है। आष्टा..

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः पश्चिमवापिका द्वितीय- कोणस्थः द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।11।।

दक्षिण दिश में उत्तर वापी, कोणस्थ प्रथम रतिकर गिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है।। आष्टा.

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः उत्तरवापिका-प्रथमकोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।12।।

दक्षिणी दिशा उत्तरवापी, दूसरा कोण रतिकर गिरि है।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों की, जिसमें महिमा सर्वोपरि है।। आष्टा.

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि द्वितीयाञ्जनगिरेः उत्तरवापिका द्वितीय- कोणस्थ द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।13।।

जयमाला

पूजित देव सुरेश आठवाँ, श्री नन्दीश्वर द्वीप अपार ।
महायोजनों में फैला है, जिसका चौदिश में विस्तार।।
इकशत चौंसठ कोटि चुरासी, गुरुयोजन यह महाविशाल।
इस विचित्र व्यापक रचना की, यह मंगलकारी जयमाल।।
इसकी चार विशाल दिशायें, चारों एक सदृश चितचोर।
इनके बीचों बीच विराजित, श्री जिनमन्दिर चारों ओर।।
एक दिशा में तेरह तेरह, सब मिल बावन कहे पुरान।
सभी एक सौ आठ अकृत्रिम, जिनबिम्बों से शोभावान।।
चौरासी हजार योजन का, गोल गोल सा ढोलाकार।
जिसकी लम्बाई चौड़ाई, मोटाई सब एक प्रकार।।
नन्दीश्वर की चारों दिश में, बीचो-बीच विचित्र-वितान।
एक-एक अञ्जनगिरि पर्वत, खडा यहाँ वक्षस्थल तान।।
एक-एक अञ्जन गिरिवर की, चारों दिश में चारों ओर।
एक-एक मनहर वापी है, सदा समुद्‌गत नीर हिलोर।।
जो हैं लाख-लाख योजन की, ये चारों ही एक समान।
जल से भरी लबालब चारों, लम्बी चौड़ी एक प्रमान।।
चारों महावापिकाओं का, व्यास व्यवस्थित एकाकार।
इन चारों में एक-एक है, दधिमुख पर्वत सुषमाधार।।
जो हैं दश हजार योजन के, लम्बे चौड़े एक प्रमान।
निश्चय ही आश्चर्य जनक है, श्री नन्दीश्वर द्वीप महान।।
सभी वापिकाओं के बाहर, कोनों पर दो-दो विस्तीर्ण।
महिमा मण्डित रतिकर पर्वत, स्वाभाविकता से परिपूर्ण।।
जिनका एक सहस योजन का, है लम्बा चौड़ा विस्तार।
शब्दों से वर्णनातीत है, यह नन्दीश्वर द्वीप अपार।।

इस प्रकार नन्दीश द्वीप में, अञ्जन पर्वत चार अनूप।
दधिमुख पर्वत पूरे सोलह, धर्मस्थल वा मेरु स्वरूप।।
रतिकर पर्वत बत्तिस हैं सब, नाना भाँति धर्म के रूप।
चौदिश में बावन जिनमन्दिर, यहाँ विराजित जिन-चिद्रूप।।
सभी एक सौ आठ अकृत्रिम, जिनबिम्बों के केन्द्र अपार।
गूँज रहा है जिनालयों में, जिनबिम्बों का जय-जयकार।।
जिनका दर्शन पूजन करके, अपने कर्म उदय अनुसार।
अपना जीवन सफल बनाते, देव-देवियाँ विविध प्रकार।।

जिनबिम्बों के लाल ओंठ नख, सुन्दर नेत्र श्यामल श्वेत।
भोंह केश भ्रमरों से श्यामल, अनुपमेय सौन्दर्य-निकेत।।
निश्छल हँसती मुखर मुखाकृति, बरसाती मनमोहक फूल।
दर्शमात्र से क्षय हो जाते, भविक जनों के पाप समूल।।

कान्ति करोड़ों सूर्य चन्द्र की, है जिनके समक्ष निस्सार।
इतना प्रखर तेज है जिसको, सह न सके भौतिक ससार।।
इनकी आकृति से अगाधतम, भाव झलकता है निष्काम।
भक्ति भावना का फल मिलता, द्वन्दों से निर्द्वन्द विराम।।

यद्यपि सद्दर्शन उत्पादक, वचन बोलते नहीं ललाम।
तो भी केवल दर्शमात्र से, पाते भव्य सुखद परिणाम।।
पा जाते शाश्वत सद्दर्शन, नव उपलब्धि अनेक प्रकार।
उन्हें स्वय ही मिल जाता है, भक्ति भावना का उपहार।।

दोहा-श्री नन्दीश्वर द्वीप के, जिन-बिम्बों का सार।
कहने को गणधर थके, सुरगुरु मानें हार।।
आंशिक वर्णन मात्र से, अल्प बुद्धि अनुसार।
मान रहे हैं स्वय को, हम कृतकृत्य अपार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि एकाञ्जनगिरि-चतुर्दधिमुखाष्ट रतिकरगिरीति त्रयोदश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं नि.।

श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ पश्चिमदिशा जिनपूजा

श्री नन्दीश्वर द्वीप प्रधान, दिशा पश्चिम आलीशान।
मन्दिर तेरह महिमावान, बिम्ब अकृत्रिम धर्म वितान।।
आठों दिन आष्टाह्निक मान, पूजा में सादर आह्वान।
कर उनका बहुविध गुणगान, प्रस्तुत पूजन-पाठ विधान।।

ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां महामहोत्सवे नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिम-दिशि त्रयोदश जिनालयस्थ-जिन-बिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां महामहोत्सवे नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ-जिन-बिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां महामहोत्सवे नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ-जिन-बिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अष्टक

अष्टम नन्दीश्वर महाद्वीप, पश्चिम दिश मंगलकारी।
तेरह पर्वत नाना मणि युत, काञ्चन बिम्बों के धारी।।
इन सभी अकृत्रिम बिम्बों को, अन्तस्तल में पधराता हूँ।
मैं तीर्थानीत महापुनीत, निर्मल जल यहाँ चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वर महाद्वीप, पश्चिम दिश मंगलकारी।
तेरह पर्वत नाना मणि युत, काञ्चन बिम्बों के धारी।।
इन सभी अकृत्रिम बिम्बों को, श्रद्धा से शीश नवाता हूँ।
मलयादि अगर चन्दन मिश्रित, सित चन्दन यहाँ चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः सुगन्धं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वर महाद्वीप, पश्चिम दिश मंगलकारी।
तेरह पर्वत नाना मणि युत, काञ्चन बिम्बों के धारी।।
भास्वान अकृत्रिम बिम्बों का, मैं पूजन पाठ रचाता हूँ।
चन्द्रानन चन्द्र किरण जैसे, सित तन्दुल यहाँ चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वर महाद्वीप, पश्चिम दिश मंगलकारी।
तेरह पर्वत नाना मणि युत, काञ्चन बिम्बों के धारी।।
भास्वान अकृत्रिम बिम्बों को, मन वचन काय से ध्याता हूँ।
मैं परम सुगन्धित बकुल कमल, पुष्पाख्यक द्रव्य चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वर महाद्वीप, पश्चिम दिश मगलकारी।
तेरह पर्वत नाना मणि युत, काञ्चन बिम्बों के धारी।।
भास्वान अकृत्रिम बिम्बो को, एकाग्र हृदय से ध्याता हूँ।
मैं हेमपात्र में भर करके, यह चरु-नैवेद्य चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वर महाद्वीप, पश्चिम दिश मंगलकारी।
तेरह पर्वत नाना मणि युत, काञ्चन बिम्बों के धारी।।
भास्वान अकृत्रिम बिम्बों को, अपने उर में पधराता हूँ।
तामस हर मणि मय दीपों से, मैं दीपक यहॉ चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।

अष्टम नन्दीश्वर महाद्वीप, पश्चिम दिश मंगलकारी।
तेरह पर्वत नाना मणि युत, काञ्चन बिम्बों के धारी।।

जगवन्द्य अकृत्रिम बिम्बों का, मानस में अलख जगाता हूँ।
मलयज सुगन्ध से परिवेष्ठित, मैं अनुपम धूप चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

अष्टम नन्दीश्वर महाद्वीप, पश्चिम दिश मंगलकारी।
तेरह पर्वत नाना मणि युत, काञ्चन बिम्बों के धारी।।
अविरुद्ध अकृत्रिम बिम्बों से, उर उपवन को महकाता हूँ।
बादाम आम केलादिक ले, उत्तम फल यहाँ चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीप पश्चिमदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

अष्टम नन्दीश्वर महाद्वीप, पश्चिम दिश मंगलकारी।
तेरह पर्वत नाना मणि युत, काञ्चन बिम्बों के धारी।।
मन हरण अकृत्रिम बिम्बों पर, अपना सर्वस्व लुटाता हूँ।
मैं जल फलादि आठों पदार्थ, सामूहिक अर्घ्य चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक पूजा

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, अञ्जन गिरि तीजा अभिराम।
केन्द्र अकृत्रिम जिनबिम्बों का, इन्द्रादिक वन्दित निष्काम।।
आष्टाह्निक व्रत उद्यापन में, उनका माननीय आह्वान।
उनके गुण प्रापण के हित यह, अर्घ्य समर्पण मंगल दान।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, पूर्व दिशा अद्रि प्रत्येक।
पहिले श्री दधिमुख पर्वत पर, वन्द्य अकृत्रिम बिम्ब अनेक।।
आष्टाह्निक व्रत उद्यापन में, उनका माननीय आह्वान।
उनके गुण प्रापण के हित यह, अर्घ्य समर्पण मंगल दान।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः पूर्ववापिका मध्ये-प्रथमदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, दक्षिण दिग्गत परम महान।
दधिमुख गिरि दूजे पर शोभित, बिम्ब अकृत्रिम ज्योतिर्मान।।आष्टा०

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः दक्षिणवापिका- मध्ये द्वितीयदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, दधिमुख गिरि तीजा द्युतिमान।
जिसमें देव समूह-समर्चित, बिम्ब अकृत्रिम दिव्य महान।।आष्टाह्निक०

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः पश्चिम वापिकामध्ये तृतीयदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, यह उत्तर दिग्गत सद्रूप।
दधिमुख गिरि पर विद्यमान है, बिम्ब अकृत्रिम रूप अनूप।।आष्टाह्निक०

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः उत्तरवापिकामध्ये चतुर्थदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, पूर्व वापिका के प्रतिमान।
पहिले रतिकरगिरि पर शोभित, बिम्ब अकृत्रिम महिमावान।।

आष्टाह्निक व्रत उद्यापन में, उनका माननीय आह्वान।
उनके गुण प्रापण के हित यह, अर्घ्य समर्पण मंगल दान।।
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः पूर्ववापिका प्रथमकोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, पूर्व वापिका निर्मल नीर।
दूजे रतिकर गिरि के ऊपर, जिनबिम्बों की भीर।।आष्टाह्निक०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः पूर्ववापिका द्वितीय कोणस्थ-द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, दक्षिण वापी अति अभिराम।
जहाँ प्रथम रतिकर पर्वत पर, विम्ब अकृत्रिम महिमा धाम।।आष्टा०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः दक्षिणवापिका-प्रथमकोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, दक्षिण वापी द्वितिय विशाल।
जहाँ द्वितिय रतिकर पर्वत पर, बिम्ब अकृत्रिम परम रसाल।।आष्टा०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः दक्षिणवापिका द्वितीयकोणस्थ-द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, पश्चिम वापी महा विशाल।
जहाँ प्रथम रतिकर पर्वत पर, बिम्ब अकृत्रिम दिव्य-सुशाल।आष्टा०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः पश्चिमवापिका प्रथमकोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, पश्चिम वापी महा पुनीत।
जिसके दूजे रतिकर गिरि पर, बिम्ब अकृत्रिम कान्ति-गृहीत।।
आष्टाह्निक व्रत उद्यापन में, उनका माननीय आह्वान।
उनके गुण प्रापण के हित यह, अर्घ्य समर्पण मंगल दान।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः पश्चिमवापिका द्वितीयकोणस्थ-द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, उत्तर वापी ज्यों कलधौत।
जहाँ प्रथम रतिकर पर्वत पर, बिम्ब अकृत्रिम रवि-उद्योत।।आष्टा०

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः उत्तरवापिका-प्रथमकोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, उत्तर वापी सालोक।
दृश्य'ान दूजे रतिकर पर, बिम्ब अकृत्रिम शोभित लोक।।आष्टाह्निक०

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि तृतीयाञ्जनगिरेः उत्तरवापिका द्वितीयकोणस्थ-द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ- जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- नन्दीश्वर पश्चिमदिशा, तेरह जिनवर गेह।
कनक रतन मय सोहने, जजों बिम्ब सस्नेह।।

अष्टम नन्दीश्वर पश्चिम दिशि, अञ्जन पर्वत आनदकारी।
चारों दधिमुख रतिकर आठों, जिनबिम्ब अकृत्रिम तमहारी।।
इस पूजन का सौभाग्य यहाँ, पा सका न मानव तनधारी।
इसका पूजन कर पाते हैं, सुरगण सुरियाँ मंगलकारी।।.....(1)

नन्दीश्वर के आराधन से, संकट झट झट कट जाते हैं।
इसकी पूजन करने वाले, सर्वार्थ सिद्धियाँ पाते हैं।।
इस पूजन का ....(2)
चारों गतियों का जन्म सहज, इस पूजन से रुक जाता है।
शुभ कल्पवृक्ष का वाञ्छित फल, स्वयमेव पुजारी पाता है।।
इस पूजन का ....(3)
इसके प्रभाव से ज्ञानवृद्धि, उपलब्धि अपरिमित मिलती है।
अन्तस में लोक मान्यता के, वैभव की कलिका खिलती है।।
इस पूजन का ....(4)
जिन चैत्यालयों मूर्तियों का, महिमामय शुभ दर्शन चिन्तन।
अशरीरी सिद्ध बना देता, सुखकर अघहर वन्दन अर्चन।।
इस पूजन का ....(5)
नन्दीश्वर की पूजन को, मेरा भी मन पतियाता है।
कृतकृत्य अजन्मा अशरीरी, बनने को मन ललचाता है।।
इस पूजन का ....(6)
पूजन का अतिशयपूर्ण पुण्य, मानव भरपूर कमाता है।
पर शक्तिहीन इस पूजन का, शुभ पुण्य प्रसाद न पाता है।।
इस पूजन का ....(7)
प्रत्येक अवसरों पर सुरगण, पूजन करते शुभ फलदाई।
मानव ने वहाँ पहुँचने की, क्षमता-सामर्थ्य नहीं पाई।।
इस पूजन का ....(8)
यह हार्दिक मनोकामना है, हम भी नन्दीश्वर को जावें।
पूजन कर बिम्ब अकृत्रिम का, अर्चन कर अनुपम फल पावें।।
इस पूजन का ......(9)

दोहा-श्री नन्दीश्वर द्वीप का, पूजन मंगल-कार।
लोकालोक-प्रकाशिका, सर्वगुणों का द्वार।।

पश्चिम दिश नन्दीश का, संस्थापन सुख धाम।
शाश्वत पूजा पाठ कर, सविनय कोटि प्रणाम।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि एकाञ्जनगिरि-चतुर्दधिमुखाष्टरतिकरगिरीत्रयोदश जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ उत्तरदिशा जिनपूजा

आष्टाह्निक में चतुर्णिकाय, सुरगण महान श्रद्धा धारी।
कार्तिक फाल्गुन आषाढ़ इनके, अन्तिम आठो दिन सुखकारी।।
जिनराज अकृत्रिम बिम्बों का, 'नन्दीश्वर पाठ' रचाते है।
मगलमय आह्वानम् करके, अन्तस्तल में पधराते है।।

ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्। ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदश जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

उत्तरदिशा त्रयोदश पर्वत, अष्टम श्री नन्दीश्वर द्वीप।
कञ्चन वर्ण विविध मणि मण्डित, बिम्ब अकृत्रिम जैन महीप।।
निर्मल भावों से निर्मल जल, कञ्चनमयी कलश से ढाल।
गदगद अन्तस्तल से सविनय, रचा रहा पूजन नत भाल।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिशा त्रयोदश पर्वत, अष्टम श्री नन्दीश्वर द्वीप।
कञ्चन वर्ण विविध मणि मण्डित, बिम्ब अकृत्रिम जैन महीप।।
कुंकुम अगर तगर मलयादिक, मनवचकाय त्रियोग संभाल।
सर्व सुगन्धित द्रव्यों द्वारा, रचा रहा पूजन नतभाल।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः सुगन्धं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिशा त्रयोदश पर्वत, अष्टम श्री नन्दीश्वर द्वीप।
कञ्चन वर्ण विविध मणि मण्डित, बिम्ब अकृत्रिम जैन महीप।।
पूर्ण अखण्डित महिमामण्डित, उज्ज्वल निर्मल महा विशाल।
निर्वाचित अक्षत के द्वारा, रचा रहा पूजन नतभाल।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिशा त्रयोदश पर्वत, अष्टम श्री नन्दीश्वर द्वीप।
कञ्चन वर्ण विविध मणि मय, बिम्ब अकृत्रिम जैन महीप।।
विविध वर्ण के पुष्प सुगन्धित, खिले आज जो प्रातःकाल।
इन मनोज्ञ पुष्पों के द्वारा, रचा रहा पूजन नतभाल।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिश में तेरह पर्वत, अष्टम श्री नन्दीश्वर द्वीप।
कञ्चन वर्ण दमकते मणि मय, बिम्ब अकृत्रिम मुक्ति प्रदीप।।
नये-नये पकवान मनोरम, श्रम से संचित किये रसाल।
अति रुचिकर नैवेद्यों द्वारा, रचा रहा पूजन नतभाल।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिश में तेरह पर्वत, अष्टम श्री नन्दीश्वर द्वीप।
कञ्चन वर्ण दमकते मणि मय, बिम्ब अकृत्रिम मुक्ति प्रदीप।।
श्वेत वरण कर्पूर स्वयं ही, करता वातावरण निहाल।
इसको स्वर्ण दीप में धर कर, रचा रहा पूजन नतभाल।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिश में तेरह पर्वत, अष्टम श्री नन्दीश्वर द्वीप।
कञ्चन वर्ण विविध मणि मण्डित, बिम्ब अकृत्रिम मुक्ति प्रदीप।।
अष्ट अग युत धूप सुगन्धित, सविनय अग्नि पात्र में डाल।
इसके द्वारा भक्तिभाव युत, रचा रहा पूजन नतभाल।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिश मे तेरह पर्वत, अष्टम श्री नन्दीश्वर द्वीप।
कञ्चन वर्ण विविध मणि मण्डित, बिम्ब अकृत्रिम मुक्ति प्रदीप।।
मै अनेक ऋतुओं के शुभफल, लाया हूँ भर-भर कर थाल।
शिव दायक स्वादिष्ट फलों से, रचा रहा पूजन नतभाल।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिश में तेरह पर्वत, अष्टम श्री नन्दीश्वर द्वीप।
कञ्चन वरण विविध मणि मण्डित, बिम्ब अकृत्रिम मुक्ति प्रदीप।।
आठों द्रव्य सजोकर लाया, नाशक भवभव के जंजाल।
श्रद्धायुक्त अनर्घ्य अर्घ से, रचा रहा पूजन नतभाल।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक पूजा

नन्दीश द्वीप की उत्तरदिश, में है चतुर्थ अञ्जन गिरि पर।
शोभायमान हैं महिमामय, जिनबिम्ब अकृत्रिम सुषमाधर।।
आष्टाह्निक व्रत उद्यापन का, मैं पूजन यहाँ रचाता हूँ।
जिनराज सदृश गुण पाने को, श्रद्धायुत अर्घ्य चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीशद्वीप उत्तरदिश में, पूरब दधिमुख सुखदाता है।
जिनबिम्ब अकृत्रिम का समूह, देवों का हृदय लुभाता है।।
आष्टाह्निक व्रत उद्यापन का, मैं पूजन यहाँ रचाता हूँ।
जिनराज सदृश गुण पाने को, श्रद्धायुत अर्घ्य चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः पूर्ववापिकामध्ये प्रथमदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीशद्वीप उत्तरी दिशा, दक्षिणदिश में दधिमुखगिर है।
जिनबिम्ब अकृत्रिम का प्रकाश, करता तमतोम विनश्वर है।।आष्टा०

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः दक्षिण-वापिकामध्ये द्वितीयदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीशद्वीप उत्तरी दिशा, पश्चिम दधिमुख आकर्षक है।
जिनबिम्ब अकृत्रिम का समूह, अभिनन्दनीय मन हर्षक है।। आष्टाह्निक

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः पश्चिम-वापिकामध्ये तृतीयदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश द्वीप उत्तरदिश में, उत्तर दधिमुख गिरि शोभित है।
महिमाद्य अकृत्रिम बिम्बों का, इस पर समूह अलौकित है।।
आष्टाह्निक व्रत उद्यापन का, मैं पूजन यहाँ रचाता हूँ।
जिनराज सदृश गुण पाने को, श्रद्धायुत अर्घ्य चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः उत्तर-वापिकामध्ये चतुर्थदधिमुखगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरी दिशा पूरव दिश में, वापी कोने पर रतिकर है।
अनाद्यनन्त जिनबिम्बों का, इस पर समूह अविनश्वर है।। आष्टाह्निक

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः पूर्ववापिका प्रथमकोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरी दिशा पूरव दिश में, वापी कोणस्थ द्वितिय रतिकर।
इस पर जिनबिम्ब अकृत्रिम की, शुभ पूजन का उद्घोषित स्वर।।आष्टा०

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः पूर्ववापिका द्वितीयकोणस्थ द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरी दिशा दक्षिण वापी, है प्रथम कोण पहला रतिकर।
आनन्दित देवों कर वन्दित, जिनबिम्ब अकृत्रिम प्रखर प्रखर।आष्टा०

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः दक्षिणवापिका प्रथमकोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरी दिशा दक्षिणवापी, है द्वितियकोण दूजा रतिकर।
जैनेन्द्र अकृत्रिम बिम्बों का, पूजन करते सुरगण चितधर।। आष्टाह्निक.

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः दक्षिणवापिका द्वितीयकोणस्थ-द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरीदिश में पश्चिम वापी, है प्रथम कोण पहिला रतिकर।
जिनबिम्ब अकृत्रिम आलोकित, जिनकी आकृतियाँ अविनश्वर।।आष्टा०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः पश्चिम-वापिका-प्रथमकोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरी दिशा पश्चिम वापी, है द्वितिय कोण दूजा रतिकर।
दैदीप्यमान सुरगण वन्दित, जिनबिम्ब अकृत्रिम अघ तम हर।।आष्टा०
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः पश्चिम-वापिका-द्वितीयकोणस्थ-द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ-जिन बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरी दिशा उत्तर वापी, कोणस्थ प्रथम रतिकर पर्वत।
इस पर विराजते सुर वन्दित, जिनबिम्ब अकृत्रिम अतिशाश्वत।।आष्टा
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः उत्तरवापिका प्रथमकोणस्थ-प्रथमरतिकरगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरी दिशा उत्तर वापी, है द्वितिय कोण दूजा रतिकर।
इस पर विराजते वन्दनीय, जिनबिम्ब अकृत्रिम सुखसागर।। आष्टाह्निक
ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि चतुर्थाञ्जनगिरेः उत्तरवापिका द्वितीयकोणस्थ-द्वितीयरतिकरगिरेः जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- नन्दीश्वर उत्तरदिशा, जिनबिम्बों का धाम।
जिनके अर्चन से मिले, आत्मशान्ति विश्राम।।

अष्टम श्री नन्दीश द्वीप की, उत्तरदिशा विपुल विख्यात।
जहाँ एक अञ्जनगिरि पर्वत, बीचों बीच खड़ा अभिजात।।

इसके चार ओर चौखूटी, चार वापिकाएँ अवदात।
परिलक्षित लगते हैं जिनमें, खिले हुए अभिनव जलजात।।

इन्ही चार वापिकाओं के, बीचों बीच सुमेरु-समान।
एक-एक दधिमुख पर्वत है, विशद वर्णनातीत महान।।
बहुत जटिल है इस पर्वत की, महिमा गरिमा का अनुमान।
श्री नन्दीश्वर की शोभा का, दुष्कर है सम्पूर्ण बखान।।

इन प्रत्येक वापिकाओं मे, प्रकृती का अद्भुत विस्तार।
बाहर के दोनों कोनो पर, दैविक रचनाएँ साकार।।
मनमोहक रतिकर पर्वत है, एक समानान्तर छविमान।
श्री नन्दीश्वर उत्तरदिश का, सुरगुरु तक कर सकें न गान।।
इस प्रकार उत्तरी दिशा मे, अन्य दिशाओं के प्रतिमान।
लसे अकृत्रिम जिनचैत्यालय, ये सब तेरह एक समान।।
मन्दिर-मन्दिर बिम्ब अकृत्रिम, शोभित यहाँ एक सौ आठ।
यहाँ रचाते रहते सुरगण, जिनबिम्बों का पूजन पाठ।।

यह जो यहाँ वर्णनागत है, श्री नन्दीश्वर नामक द्वीप।
क्षमता के अभाव में इसके, मानव जा सकता न समीप।।
किन्तु देवगण यहाँ निरन्तर, दर्शन पूजन का प्रणधार।
समय-समय पर जाते रहते, अपनी श्रद्धा के अनुसार।।

देवगणों का अहोभाग्य यह, इसमें भक्ति समेत पधार।
पाठ रचाते हर्ष बढ़ाते, पुण्य कमाते विविध प्रकार।।
इसके पूजन का फल पाते, जाकर वहाँ देवगण-मात्र।
ऐसे बड़भागी पूजक ही, बनते मुक्तिरमा के पात्र।।

नाना भांति सराहनीय है, उन देवों का भाग्य विशेष।
जिन्हें अकृत्रिम जिनबिम्बों के, दर्शन मिलते एक निमेष।।

दर्शन पूजा द्वारा खुलते, दुर्लभ पुण्य लाभ के द्वार।
अनुपलब्ध फल को पाते हैं, मनोभावना के अनुसार।।
ऐसी उत्तम क्षमता जब तक, मुझे नहीं हो जावे प्राप्त।
तब तक उसे प्राप्त करने की, जगी रहे बाञ्छा पर्याप्त।।
यहाँ अकृत्रिम जिनबिम्बों का, संस्थापन करके बहु बार।
उनका सादर वन्दन पूजन, करता रहूँ अनेक प्रकार।।
इन्द्रों एवं देवगणों में, संस्थित ऐसी शक्ति विशाल।
निमिष मात्र में दिव्य शक्ति से, वहाँ पहुँच जाते तत्काल।।
दर्शन अकृत्रिम जिनबिम्बों का, इनके लिये बहुत आसान।
पुण्योपार्जन करते करके, वन्दन पूजन का अभियान।।
श्री नन्दीश्वर की पूजन से, जीवन बनता नित्य निहाल।
करें अकृत्रिम जिनबिम्बो का, भाव सहित पूजन प्रक्षाल।।
इसके द्वारा संचित होता, मुक्ति प्रदाता पुण्य महान।
सकल सफलताएँ पा जाते, यहाँ पहुँचकर निष्ठावान।।
समुपलब्ध सौभाग्य मुझे हो, इसके दर्शन का जिनराय।
परम सफलता पावे मेरी, यह दुर्लभ मानव-पर्याय।।
श्री जिनबिम्ब अकृत्रिम मेरी, करें प्रार्थना यह स्वीकार।
नन्दीश्वर दर्शन का मैं भी, अवसर पाऊँ बारम्बार।।
श्री नन्दीश्वर में साधारण, भक्त मानवों की क्या बात।
नहीं पहुँच पाते हैं इसमें, मुनिवर गणधर तक साक्षात।।
यहाँ अकृत्रिम जिनबिम्बों का, थापन कर आनन्द निकेत।
हम यह पूजन रचा रहे हैं, श्रद्धापूर्वक हर्ष समेत।।

दोहा- श्री नन्दीश्वर द्वीप है, सर्व लोक विख्यात।
बिम्ब अकृत्रिम हैं जहाँ, मानव से अज्ञात।।

कवि के मन की कामना, यह अनन्य दिनरात।
इस पूजन का श्रेय मैं, प्राप्त करुँ साक्षात।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि एकाञ्जनगिरि-चतुर्दधिमुखाष्ट रतिकरगिरी त्रयोदश जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा- जल चन्दन अक्षत पुहुप, नेवज दीपक धूप।
चढ़ा रहा हूँ हर्षयुत, महाअर्घ्य अनुरूप।।
बावन चैत्यालयों में, बिम्ब अकृत्रिम सार।
महा अर्घ्य जिनराज को, अर्पित श्रद्धा-धार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ-द्वापञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः महार्घ्यम् निर्वपामति स्वाहा।

श्री नन्दीश्वर व्रतपूजा

जोगीरासा

आष्टाह्निक व्रत दिवस अष्टमी, जो उपवास रचावे।
वह नन्दीश्वर व्रत के इकशत, अनशन का फल पावे।।
श्री नन्दीश्वर द्वीप जिनो के, बिम्ब अकृत्रिम ध्याऊँ।
बावन मन्दिर के बिम्बो का, पूजन पाठ रचाऊँ।।

ॐ ह्रीं एकशतोपवासफलप्रदे नन्दीश्वरोपवासे श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ-द्वापञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आष्टाह्निक व्रत नवमी के दिन, एकाशन सुख-दाता।
महाविभूती-उपवासों का, अर्धशतक फल-दाता।। श्री नन्दीश्वर०

ॐ ह्रीं अर्धशतोपवासफलप्रदे-महाविभूति सञ्ज्ञकोपवासे श्री नन्दीश्वर- द्वीपस्थ-द्वापञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टाह्निक व्रत दशमी के दिन, काञ्जिक भोजन सेवे।

अनशन नाम त्रिलोकसार का, अर्धशतक फल लेवे।।श्री नन्दीश्वर०

ॐ ह्रीं अर्धशतोपवासफलप्रदे त्रिलोकसार संज्ञकोपवासे श्री नन्दीश्वर- द्वीपस्थ-द्वापञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आष्टाह्निक व्रत नाम चतुर्मुख, एकादशि को ध्यावे।

अर्धशतक उपवासों का फल, एकाशन से पावे।।श्री नन्दीश्वर०

ॐ ह्रीं अर्धशतोपवासफलप्रदे चतुर्मुखोपवासे श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ-द्व:पञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आष्टाह्निक व्रत दिवस द्वादशी, एकाशन व्रत ध्याऊँ।

पच-महा-लक्षण से अनशन, अर्धशतक फल पाऊॅं।।श्री नन्दीश्वर०

ॐ ह्रीं अर्धशतोपवासफलप्रदे पञ्चमहालक्षणोपवासे श्री नन्दीश्वर-द्वीपस्थ-द्वापञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाम स्वर्ग सोपान त्रयोदशि, एकाशन फल दाई।

आम्ल सुरस से यह पञ्चाशत, अनशन-फल उपजाई।।श्री नन्दीश्वर०

ॐ ह्रीं पञ्चाशदुपवासफलप्रदे स्वर्गसोपाननामकोपवासे श्री नन्दीश्वर- द्वीपस्थ-द्वापञ्चाशज्जिनालस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आष्टाह्निक व्रत चतुर्दशी को, शुष्कोदन आहारी।

नाम सर्व सम्पत्ति अर्धशत, अनशन का फलकारी।।श्री नन्दीश्वर०

ॐ ह्रीं पञ्चाशदुपवासफलप्रदे सर्वसम्पत्तिनामकोपवासे श्री नन्दीश्वर-द्वीपस्थ-द्वापञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकाशन उपवास मनोचित, पूनम को अपनावें।
नाम इन्द्रध्वज अनशन का शुभ, अर्ध शतक फल पावे।।
श्री नन्दीश्वर द्वीप जिनों के, बिम्ब अकृत्रिम ध्याऊँ।
बावन मन्दिर के बिम्बो का, पूजन पाठ रचाऊँ।।

ॐ ह्रीं पञ्चाशदुपवासफलप्रदे इन्द्रध्वजनामकोपवासे श्री नन्दीश्वर-द्वीपस्थ-द्वापञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ले जल फलादिक द्रव्य आठों, अर्घ्य कीजे पावना।
वसुकर्म बिनसे प्राप्त नित, धर्म धी शुभकामना।।

ॐ ह्रीं आष्टाह्निकायां महामहोत्सवे आष्टाह्निकाव्रतोद्यापने श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ-द्वापञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः महार्घ्यम्।

जाप्य मंत्र

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ-द्वापञ्चाशतज्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो नमः। (इस मन्त्र की 108 बार जाप करें)

समुच्चय जयमाला

श्री नन्दीश्वर द्वीप मनोरम, धर्मतीर्थ अत्यन्त विशेष।
यह ऐसा धर्मस्थल जिसमें, श्री जिनबिम्बों का प्रतिवेष।।
सतत देवगण जहॉ पहुॅचकर, करते पूजन पाठ-विधान।
किन्तु मनुष्य नही कर पाया, इस नन्दीश्वर को प्रस्थान।।

श्री नन्दीश्वर का वर्णन है, इतना व्यापक गहन अपार।
कोई भी सक्षेप मात्र मे, नाप नही सकता विस्तार।।
स्वय पहुँचकर ही जब इसको, देखें प्यासे नयन निहार।
तभी समझ सकता है मानव, नन्दीश्वर को भली प्रकार।।

ऐसे द्वीप समुद्रों की है, संख्या से अविज्ञ इतिहास।
इसे बुद्धि का विषय न कहकर, जग को करता रहा निराश।।
द्वीप सागरों के रहस्य को, जान न पाया कोई शोध।
वर्तमान इतिहासज्ञों को, है रहस्य मय इसका बोध।।

भूतल पर है प्रथम द्वीप का, जम्बूद्वीप जिनोदित नाम।
इसी तरह पहिले सागर का, नाम लवण सागर अभिराम।।
अन्तिम द्वीप तथा सागर का, नाम स्वयम्भू-रमण विशाल।
इसी भाँति सर्वत्र लोक में, फैला द्वीप उदधि का जाल।।

पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण, जम्बूद्वीप सदृश-विस्तार।
लाख महायोजन तक जिसका, फैला है व्यापक विस्तार।।
जम्बूद्वीप व्यास से दूना, विशद लवण सागर का व्यास।
द्वीप सागरों का यह वर्णन, कैसे करे शब्द विन्यास।।

वर्तमान विज्ञान धरा तक, इनका मिलता नहीं विराम।
सभी सागरों वा द्वीपों का, दुगुना दुगुना है आयाम।।
दोनों का विस्तार परस्पर, स्वयम्भू-रमण तक इसी प्रकार।
सागर से सागर का चौगुन, द्वीप-द्वीप चौगुन विस्तार।।

द्वीपों तथा सागरों का है, आश्चर्यों से भरा खगोल।
द्वीप तथा सागर दोनों ही, वलयाकार पूर्णतः गोल।।
एक-दूसरे से यह दोनों, घिरे परस्पर इसी प्रकार।
जैनागम से बोध विदित है, सुगम तालिका के अनुसार।।

एक तीसरा द्वीप मनोरम, इसका पुष्कर नाम विशाल।
यहाँ मानुषोत्तर पर्वत है, बीचों-बीच समुन्नत भाल।।
लाख पैंतालिस गुरुयोजन तक, सीमित मानव क्षेत्र प्रसिद्ध।
इस निश्चित सीमा मे आगे, मानव-गमनागमन निषिद्ध।।

अष्टम द्वीप नामधारी है, यह नन्दीश्वर द्वीप अपार।
है प्रत्येक दिशा में इसका, अति अगम्य व्यापक विस्तार।।
इकशत त्रेसठ कोटि चुरासी, लाख महायोजन साकार।
जैनागम में विशद उल्लिखित, श्री नन्दीश्वर का विस्तार।।

इस अष्टम नन्दीश द्वीप की, चार दिशाओं में द्युतिमान।
एक-एक अञ्जनगिरि पर्वत, चारों दिश में एक समान।।
घोर तिमिर नाशक महानतम, श्यामल श्यामल जोतिर्मान।
चौरासी हजार योजन का, लम्बा चौड़ा एक प्रमान।।

इक-इक लाख महायोजन का, अञ्जनगिरि के अन्तर जान।
चहुँदिश चार वापिकाएँ हैं, एक व्यास की एक समान।।
इक लख योजन लम्बी चौड़ी, चार दिशाओं में चौकोर।
स्वर्णमयी बन्धान युक्त जल, भरा लबालब चारों ओर।।

इन गम्भीर वापिकाओं में, बीचों बीच स्फटिक समान।
एक-एक दधिमुख पर्वत है, श्वेत वर्ण का एक समान।।
है दश-दश हजार योजन का, इनका चौदिश में विस्तार।
ऐसे चार-चार दधिगिरि हैं, अञ्जनगिरि के पहरेदार।।

इन सोलहों वापिकाओं के, बाहर कोणों पर विख्यात।
दो-दो रतिकर नामक पर्वत, एक-एक योजन पश्चात।।
सोलह दधिमुख बत्तिस रतिकर, गणना में अञ्जनगिरि चार।
मन्दिर बावन दिव्य अकृत्रिम, नन्दीश्वर में इसी प्रकार।।

प्रति चैत्यालय मध्य एक सौ, आठ अकृत्रिम बिम्ब महान।
पाँच-पाँच सौ धनुष समुन्नत, पद्मासन राजित भगवान।।
इनके लाल-लाल सुन्दर नख, मनहारी अनुपम मुख श्वेत।
केश समूह नयन अतिसुन्दर, दोनों नील वर्ण समवेत।।

वचन बोलते हँसते लगते, मानों छिटक रहे हों फूल।
यद्यपि बोलना अथवा हँसना, यह जिनबिम्बों के प्रतिकूल।।
किन्तु मुखाकृति के द्वारा ही, होता है ऐसा आभास।
प्रकटाता सम्यक्त्व भक्त में, यही विचित्र विरोधाभास।।

इनके सन्मुख स्वयं करोड़ों, सूर्य चन्द्र हैं मन्द प्रकाश।
तेज रहित प्रतिभासित होते, फीके-फीके त्रस्त उदास।।
आठों याम झलकता रहता, आकृतियों से गुरु वैराग्य।
देवों को ही प्राप्त हो सका, इनके दर्शन का सौभाग्य।।

कार्तिक फाल्गुन और आषाढ़ के, शुक्लपक्ष अन्तिम दिन आठ।
देव देवियाँ चार जाति के, करने जाते पूजन-पाठ।।
भक्ति भाव से अपने-अपने, जाते सब परिवार समेत।
इतर समय भी जाते रहते, सुर गण पुण्योपार्जन हेत।।

यहाँ देवगण आठों दिन तक, भक्ति भाव से श्रद्धा धार।
सर्व अकृत्रिम जिनबिम्बों को, लक्ष्य बनाकर बारम्बार।।
वन्दन कीर्तन अर्चन पूजन, करते आस्था के अनुसार।
भक्ति सहित गाते हर्षाते, मुख से जय जयकार उचार।।

श्री जिनबिम्बों की अर्चा से, हो जाता है पाप विनाश।
पूर्ण रूप से अति आलोकित, होता उज्ज्वल आत्म विकाश।।
कभी-कभी तो यह पूजक सुर, मात्र एक भव के उपरान्त।
मोक्ष गमन तक का अधिकारी, बन जाता है भव्य प्रशान्त।।

इस नन्दीश पर्व के बाहर, अन्य दिनों में भी ये देव।
पाप विनाशक नन्दीश्वर में, जाते रहते हैं स्वयमेव।।
वहाँ अकृत्रिम जिनबिम्बों का, वन्दन कीर्तन कर साभार।
जीवन को सार्थक करते हैं, जाकर नन्दीश्वर के द्वार।।

जिन्हें मिला है दर्शनादि का, श्री नन्दीश्वर में अधिकार।
सुरगण इन्द्र प्रशंसनीय हैं, पुण्यवान हैं विविध प्रकार।।
परम धन्य वे शक्र देव हैं, प्राप्त जिन्हें दर्शन सौभाग्य।
हम सब अभी अनधिकारी हैं, यह अपना कितना दुर्भाग्य।।

श्री जिनेश से यही प्रार्थना, करते सविनय श्रद्धाधार।
पुण्योदय से प्राप्त हमें हो, इन्द्र-देव-पर्याय अपार।।
नन्दीश्वर के जिनबिम्बों को, देखें मेरे नयन निहार।
देव सदृश ही हमें प्राप्त हों, वन्दन पूजा का अधिकार।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ द्वापञ्चाश-ज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- श्री नन्दीश्वरद्वीप के, जिनगृह महा ललाम।
विजय तथा कल्याण हित, चिन्तितार्थ अविराम।।
समुपलब्धि के हेतु यह, पूजन लिखी विशाल।
मोहन शशि को कीजिये, करुणा सिन्धु निहाल।।

इत्याशीर्वादः

इति आष्टाह्निक व्रतोद्यापनं संपूर्णम्

अभिषेक की परपरा अनादि-निधन है। चतुर्निकाय के देव आष्टाह्निक पर्व में नन्दीश्वरद्वीप में जाकर चारों दिशाओं के अकृत्रिम चैत्यालयों में क्रमशः दो-दो प्रहर करके चौबीसो घटे भगवान का अभिषेक करते हैं। यह बात बड़ी महत्वपूर्ण है कि सौधर्म आदि इन्द्र और सभी देवगण विदेह क्षेत्र में सदा विद्यमान रहने वाले तीर्थंकरों के कल्याणक एवं साक्षात् दर्शन का सौभाग्य प्राप्त होने पर भी अकृत्रिम चैत्यालयों में भक्तिभाव से अभिषेक करने जाते है और स्वयं को धन्य मानते हैं।

मुनि क्षमासागर

कर्म निर्झर विधान

श्री गुलाब चन्द्र जैन, दर्शनाचार्य

अडिल्ल- चौतीसों अतिशय सहित जिनदेव हैं।
प्रातिहार्य पुनि आठ लखें स्वयमेव हैं।।
गुण अनन्त अरिहन्त चतुष्टय धाम हैं।
कहवत के छयालीस परम अभिराम हैं।।

दोहा- वीतराग सर्वज्ञ जिन, हित उपदेशी वान।
ऐसे श्री जिनको जजों, होय कर्म की हान।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक (चाल चौबीस तीर्थंकर)

गंगा सम शीतल नीर, लायो भर झारी।
पूजों तुम चरणन धीर, जन्म जरा हारी।।
श्री वीतराग जिनदेव, हित उपदेशक हो।
सर्वज्ञ लखो स्वयमेव, जग निर्देशक हो।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-रोग-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर कर्पूर मिलाय, चन्दन घिस लीनों।
जिन चरनन अरचों आय, भव तप हर दीनों।।श्री वीतराग......।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चंदनं नि.।

परिमल तंदुल जिनराज! बासमती लायो।
अक्षय पद पावन काज, पूजन रचवायो।।श्री वीतराग........।।

ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि.।

मंदार मोगरा फूल, चम्पा गंध सने।
मिट जाये मदन कृत शूल, जिनवर पूज ठने।।
श्री वीतराग जिनदेव, हित उपदेशक हो।
सर्वज्ञ लखो स्वयमेव, जग निर्देशक हो।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं नि.।

मोदक-मन-हरन अनूप, सुन्दर सद्य बने।
उत्तम प्रासुक रस कूप, यजत क्षुधादि हने।।श्री वीतराग..... ..।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

दीपक की ज्योति अपार, तम खण्डन हारी।
मम मोह तिमिर निरवार, पूजों दृग धारी।।श्री वीतराग. ......।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय मोह तिमिर विनाशनाय दीपं नि.।

ले धूप दशागी सार, तुम ढिग खेवत हूँ।
मिस धूम्र कर्म है क्षार, निज पद बेवत हूँ।।श्री वीतराग. ......।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि. स्वाहा।

षट् ऋतु के सुफल मगाय, नयनन सुखकारी।
पूजों श्री जिन उमगाय, शिव फल दो भारी।।श्री वीतराग...... .।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

जल चन्दन आदिक आठ, द्रव्य मिला दीजे।
जिन पूजन का कर ठाठ, वसु विधि हर लीजे।।श्री वीतराग.....।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

दोहा- घात घातिया चार विध, पायो केवल राज।
ऐसे श्री अरहंत की, रचूँ माल शिव काज।।

पद्धड़ि

जब गर्भ मांहि आवें जिनेश, भुवि लाय शीश नावें सुरेश।
पाकर आज्ञा छः मास पूर्व, धन देव रचे नगरी अपूर्व।।

रत्नों की वर्षा तीन काल, करता कुबेर गृह मही पाल।
फिर रुचिक वासिनी देवि आय, कर गर्भ शुद्धि जननी नमाय।।

श्री आदिक देवी आय आय, जिन जननी की सेवा कराय।
पुनि जन्में जब तीर्थेश देव, आवें निकाय के सर्व देव।।
इन्द्राणी माता पास जाय, कृत्रिम बालक धर जिन लहाय।
लख जिनको इन्द्र न तृप्त होय, निज नेत्र बनावे सहस सोय।।

फिर ऐरावत पर कर सवार, ले जांय मेरु पर चंवर ढार।
पंचम समुद्र से सलिल लाय, धारा डारें जिन शीश गाय।।
इन्द्राणी जिनका कर सिंगार, माता को सौंपे ला अगार।
जिन जनक जननि पूजा कराय, सुरगण पहुंचे निज वास जाय।।

क्रम-क्रम जिन बढ़ते मात क्रोड़, क्रीड़ा करते हुए हाथ जोड़।
काल क्रम से बचपन बिताय, पहुंचे तरुणाई में जिनाय।।
कोई जिन लेते राज पाट, रचते विवाह कर ठाठ बाट।
कोई नहिं करते राज ब्याह, केवल संयम में ही उछाय।।

तप के दिन की महिमा महान, लौकान्तिक आवें हर्ष मान।
हे भगवन धन धन दिवस आज, संसार समुद्र तारण जहाज।।
यह है असार संसार-भोग, नहीं सत पुरुषन के रमण जोग।
ले शिविका कांधे इन्द्र आप, उत्सव युत वन में देय थाप।।

भगवन पुनि भूषण बसन त्याग, दीक्षाधारें मन ही विराग।
द्वादश अनुप्रेक्षा चिंतन कीन, कचलोच तभी करते प्रवीण।।
दुर्द्धर तप द्वादश धरें धीर, गुण श्रेणी चढ़ते परम वीर।
सप्तम गुण थानक सात घात, स्वस्थान प्रमत की है जु बात।।

सातिशय माहिं पुनि तीन आय, घातैं प्रभु निज के हो सहाय।
नवमें में छत्तीसों खिपाय, फिर लोभ दशम गुण में नशाय।।
एकादश गुण छूते न कोय, द्वादशवे में सोलह विगोय।
इस विधि विधि त्रेसठ चूर्ण कीन, केवल लहि जग जाने प्रवीण।।

धर्मोपदेश देते उदार, जग जीवन का करते उद्धार।
समवश्रित में समता रखाय, सब भेद भाव दूरे भगाय।।
तब जय जय ध्वनि शत इन्द्र कीन, नावें निज शीश न होय दीन।
हे प्रभुवर अशरण शरण जान, हम शरण गही करुणा निधान।।
पुनि ध्यान शुक्ल को साथ लीन बेहतर तेरह की क्षीण कीन।
इस विधि सौ-अड़तालीस घात, अष्टम भू पहुँचे हो अगात ।।
प्रभु होय आप में आप लीन, आठों गुण अपने प्रकट कीन।
हे देव शिरोमणि नमस्कार, हमको भी भवदधि करो पार।।
यह 'चन्द' चरण में नमे भाल। जय जय जय जय जिनवर कृपाल।।

दोहा- तुम गुण महिमा अगम है, को कवि पावे पार।
अशरण शरण अधार प्रभु, भव नायक भवतार।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- जो जिन पूज रचाय, भाव भक्ति मन लाय के।
पावे सुर नर काय, शिवपुर जावे अन्त में।

इत्याशीर्वादः।

द्वादश मिथ्या-निवास छेदक प्रथम वलय पूजा

राग-टप्पा

मोहि राखो हो शरना, श्री जिनवर परम दयाल जी।
सब दुख राश निगोद वास है, तहँ जीना अरु मरना।
स्वांस अठारह भाग आयु जिन, तुम बिन किस विध टरना।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने निगोदमिथ्यानिवास दुःखविनाशनाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

पर्वत खान कठोर कांकरी, पृथ्वी कायनि परना।
महादुःख का कारन लख कर, गही तुम्हारी शरणा।मोहि।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने पृथ्वीकायिक मिथ्यानिवासहराय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

पाला ओस मेघ जल बुदबुद, बन्यो भरयो दुख गरना।
तहँ ते निकसन कारन जिनवर, यजूँ चरन सुख भरना।
मोहि राखो हो शरना, श्री जिनवर परम दयाल जी।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने जलस्थावर-मिथ्यानिवास विनाशनाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तृण अरु काष्ट अश्म लोहे की, पावक बन बहु जरना।
अग्नि काय के दुख हर जिनवर, जजूँ तिहारे चरना।मोहि.।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने अग्निकाय मिथ्यानिवास-हराय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

पवन योनि में जन्म धर, दुःख पाये क्या कहना।
सब कुछ जानत ज्ञाता स्वामी, हरो दुख जन्म मरणा।मोहि.।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने वायुकायिक मिथ्यानिवास-हराय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

घास फूस तरु बेल फूल बन, कटयो मरयो गो चरना।
वनस्पति दुख मेटन समरथ, यजूँ चरन सुख भरना।मोहि.।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने वनस्पति-कायिक मिथ्यानिवास-हराय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

लट लोडी अरु शंख सीप बन, नाना दुख नित भरना।
गही शरन जिन छुड़ा वेग इन, दो इन्द्रिय दुख परना।मोहि ।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने द्वीन्द्रियजनित मिथ्यानिवास विनाशनाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जूं पिपीलिका बिच्छू बन कर, ते इन्द्रिय में ढरना।
जला गला दब कर दुख पाया, तुम बिन और न शरना।मोहि।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने त्रीन्द्रियजनित मिथ्यानिवास विनाशनाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मक्खी भ्रमर मशक अरु टिड्डी, बनकर जनम बिगरना।
तुम बिन इनसे कौन छुड़ावे, पड़ूँ तिहारे चरना।
मोहि राखो हो शरना, श्री जिनवर परम दयाल जी।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने चतुरिन्द्रियजनित मिथ्यानिवास विनाशनाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जलचर थलचर नभचर तिर्यग, बनकर दुख बहु भरना।
इस गति के दुख से छूटन को, गही तुम्हारी शरना।मोहि ।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने तिर्यंचगतिजनित मिथ्यानिवास विनाशनाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1

सप्त नरक दुख के आगर हैं, काटन मारन करना।
इस गति से प्रभु मोहि छुड़ावो, परों तुम्हारे चरना।मोहि ।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने नरकगति-जनित मिथ्यानिवास-हराय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

है कुभोग भू मांहि दुःख अरु, पच म्लेच्छ में परना।
तद्दुख हरने को मैं पूजों, हे प्रभु तारन तरना।मोहि.।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने कुभोगभूमिम्लेच्छखण्ड-मिथ्यानिवासहराय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं निर्वपामति स्वाहा।।

जयमाला

चाल- जल बन कर बहु दुख पायो, रांध्यो गाल्यो सुखवायो।
पृथ्वी बन खोद करायो, चूनै माटी पिसवायो।।
पावक बन पाप कमाये, बाले जाले दहकाये।
वायु संग खाय थपेड़े, आँधी बन रूख उखेड़े।।
थावन की कोलों कहानी, काटयो रोध्यो दुखदानी।
दो इन्द्री लट बन मूवो, ते इन्द्री चिंउटी हूवो।।

कोई दाब दियो दुख भारी, सह लीनो हो लाचारी।
चौ इन्द्री माखी हूवो, घृत तेल पाड्यो झट मूवो।।

तिर्यंच गती दुख दाता, जहँ प्रति पल पाय असाता।
कोइ लादें मारे बाँधें, कोई धरदे जूडो कांधै।।
कोइ नाथें अरई लगावै, पशु कहने किसको जावै।
तृण खाकर दूध पिलावे, जन फिर भी मार लगावे।।

इस गति से कर निस्तारो, बस तेरो एक सहारो।
नारक भव दुःख अगारा, केवल प्रभु जानन हारा।।
असुरादिक देव भिड़ावें, मुद्‌गर की मार लगावें।
तातो सीसो पिलवावे, घाणी में घाल पिरावें।।

तहाँ भूख भयंकर जानो, पर मिले न कानो दानो।
प्यासे ही काल गमावो, पर बूंद न पीने पावो।।
नरकों के दुख विकराला, यह जीव सहे बहु काला।
इनसे प्रभु वेग छुड़ाओ, अपने ढिग वेग बुलाओ।।

इक श्वास में अठदश बारा, मरना जीना बहु बारा।
यह योनि निगोद तनी है, दुख से भरपूर सनी है।।
मानुष कुभोग भू के हैं, बिड़रूप भयंकर वे हैं।
पन म्लेच्छ बुरे दुख दाता, यह मानुष योनि असाता।।

छन्द-त्रोटक

जिनराज तुम्ही प्रतिपालक हो, वसुधा दुखदा विधि क्षालक हो।
जल कायिक योनि जु सात कही, थल कायिक भी लख सात वही।।
इमि पावक कायिक सात लखा, सब भाँति समीरण सात अखा।
दश लाख वनस्पति में भटका, कुल चौदह लाख निगोद सखा।।

इनसे जिनदेव बचा मुझको, बहुबार नमों नमों तुझको।
विकलत्रय के दुख की कथनी, किमि जाय कही मुझसे इतनी।।

लट दोय लखा लख दो चिउटी, भ्रमरादिक दोय लखा प्रकटी।
इमि लखा छहों दुख दायक है, तू ही जिन देव बचायक है।।
लख चार अधो गति योनि महा, दुख ताड़न मारन नित्य वहाँ।
इन माहिं निवास न हो जिनजी, तुम छोड़ भजूँ किन जी-किन जी।।
तिर्यंच महा दुख के भजना, चतु लाख सभी इनसे बचना।
मनवा दस चार निवास खरा, नर भोग कुभोग म्लेच्छ बुरा।।
जिनराज कुवास मिटा सगरा, जग माहि तु ही गुण का अगरा।
इन माहि स्वरूप न जाय लखा, बिन रूप लखे सुख नाहि चखा।।
सुख दायक रूप लखे अपना, मिट जाय कुवासनि का सपना।
दृग ज्ञान सु चारित पा रहिये, रतनत्रय के गुण गा रहिये।।
मुझको रखिये जिनजी शरणा, बन जाय भवार्णव का तरना।
यह निर्झर व्रत के हेतु रची, जयमाल प्रभो गुण माल धनी।।
तुम ही सब जग जन के पितु हो, तुम ही निष्कारण ही हितु हो।
इस हेतु समर्पण माल करी, मिट जाय कुवास निवास अरी।।

सोरठा-भव दुःख जलधि अपार, हे प्रभु पार लगाइये।
नाऊँ मैं हर बार, तुम बिन और न दूसरा।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने नरकगतिजनित मिथ्यावासहराय श्री भगवज्जिनाय जयमालार्घ्यं निर्वपामति स्वाहा।

अडिल्ल- मिथ्यावास मिटाय सुगति पावे सही।
भव-भव दुख मिट जाय मुक्ति पावे वही।।
द्रव्य कर्म नोकर्म भाव से मुक्त हो।
बने सिद्ध भगवान अष्ट गुण युक्त हो।।

।।इत्याशीर्वादः।।

अथ द्वादश तप सूचक द्वितीय वलय जिनपूजा

चाल-सोलह कारण पूजा

चौपाई- अनशन तप उपवास प्रधान, बेला तेला गुण की खान।
लहो निरवाण, तप बल होय परम कल्याण।।
द्वादश तप आगम अनुसार, इच्छा वशकर इनको धार।
लहो निरवाण, तप बल होय परम कल्याण।।

ॐ ह्रीं अनशन तप सूचक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।1।।

भूख होय तब भी कम खाय, ऊनोदर तप यही कराय।लहो.।
लहो निरवाण, तप बल होय परम कल्याण।।लहो.।

ॐ ह्रीं ऊनोदर तप सूचक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।2।।

दोय तीन घर संख्या मान, करै अहार वृत्ति गुणवान।लहो.।
द्वादश तप आगम अनुसार, इच्छा वशकर इनको धार।लहो ।

ॐ ह्रीं वृत्तिपरिसंख्यान तप सूचकाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं।3।

दूध दही घृत मीठा नोन, रस परित्याग करो रख मौन।लहो.।
द्वादश तप आगम अनुसार, इच्छा वशकर इनको धार।लहो.।

ॐ ह्रीं रसपरित्याग तप सूचकाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं।4।

आसन विविध प्रकार लगाय, शय्या परम पुनीत जमाय।लहो।
द्वादश तप आगम अनुसार, इच्छा वशकर इनको धार।लहो ।

ॐ ह्रीं विविक्त शय्यासन तप सूचकाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं।5।

पद्मासन वीरासन धीर, सहते काय क्लेश गहीर।लहो.।
द्वादश तप आगम अनुसार, इच्छा वशकर इनको धार।लहो.।

ॐ ह्रीं कायक्लेश तप सूचकाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।6।

आलोचन आदिक दश जान, प्रायश्चित्त करो गुणवान।लहो.।
द्वादश तप आगम अनुसार, इच्छा वशकर इनको धार।लहो.।

ॐ ह्रीं प्रायश्चित्त तप सूचक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।।7।।

दर्शन ज्ञान चरित तप सार, पंच विनय में इक उपचार।
लहो निरवाण, तप बल होय परम कल्याण।
द्वादश तप आगम अनुसार, इच्छा वशकर इनको धार।
लहो निरवाण, तप बल होय परम कल्याण।

ॐ ह्रीं विनय तप सूचक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।।8।।

आचार्यादि साधु दसजान, वैय्यावृत इनकी सुखदान।लहो.।
द्वादश तप आगम अनुसार, इच्छा वशकर इनको धार।लहो.।

ॐ ह्रीं वैय्यावृत्त तप सूचक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।।9।।

स्वाध्याय विधि पंच प्रकार, वाचन पृच्छन आदिक सार।लहो।
द्वादश तप आगम अनुसार, इच्छा वशकर इनको धार।लहो।

ॐ ह्रीं पंचविध स्वाध्याय तप सूचकाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं।10।

मन वच काया कर इक ठौर, कर व्युत्सर्ग तपस्या घोर।लहो।
द्वादश तप आगम अनुसार, इच्छा वशकर इनको धार।लहो.।

ॐ ह्रीं व्युत्सर्ग तप सूचकाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।11।

आर्त रौद्र दो ध्यान हटाय, धर्म शुक्ल में मन ठहराय।लहो।
द्वादश तप आगम अनुसार, इच्छा वशकर इनको धार।लहो.।

ॐ ह्रीं ध्यान तप सूचकाय श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।।12।।

जयमाला

अडिल्ल छन्द- अनशन ऊनोदर व्रत-संख्या आचरो।
विविक्त शयनासन काय-क्लेशा धरो।।
प्रायश्चित्त धर विनय और स्वाध्याय जी।
कर व्युत्सर्ग विचार ध्यान मन लाय जी।।

छन्द-बेसरी

चार प्रकार अनशन तज दीजे, अनशन व्रत सम्यक धर लीजे।।
खाद्य स्वाद्य अरु लेह्य गिनाया, पेय तजे अनशन तप गाया।।

भूख होय तब भी कम खाओ, ऊनोदर व्रत इसको पावो।।
एक दोय वा तीन सुजानो, व्रत परिसंख्या तप को मानो।।
षट् रस में से रस को त्यागो, रस परित्याग यही तप सागो।।
रक्षा जीव जन्तु की होई, विविक्त शैय्यासन है सोई।।
गुफा शैल मठ वन एकन्ता, शयनासन धारें गुणवंता।।
ग्रीष्म पर्वत शिखर मंझारा, शीत काल तटनी तट प्यारा।।
वर्षा में तरु तल तप होई, काय क्लेश वही तप होई।।
गुरु आचार्य समीप सिधारे, दोष कहे प्रायश्चित्त धारे।।
दर्शन ज्ञान चरित तप जानो, अरु उपचार विनय परवानो।।
जो जन विनय महातप धारे, सो ही कर्म शत्रु को टारे।।
रोगी वृद्ध तपस्वी साधू, दश प्रकार के कहे अबाधू।।
उनकी दश विध टहल करीजे, वैय्यावृत धर पाप हनीजे।।
जिन आगम को पढ़िये भाई, नहिं आवे तो पूछो जाई।।
बार-बार चिंतन रत होई, आम्नाय गुरु की रख जोई।।
धरो धर्म उपदेश सु ज्ञानी, यह स्वाध्याय कहै जिन वानी।।
काय महा दुखकारा जानो, काय सुखा व्युत्सर्ग प्रमानो।।
ममता तज समता उर धारो, करो तपस्या जन मन हारो।।
आर्त रौद्र दो ध्यान बुरे हैं, साधु सदा इन साथ दुरे हैं।।
इष्ट वियोग होय नहि रोवें, होय अनिष्ट योग नहिं जोवें।।
पीड़ा चिंतन नाहिं करे हैं, कर निदान नहिं बंध धरे हैं।।
हिंसा कर जो आनन्द माने, बोल झूठ सुख अनुभव ठाने।।
चोरी कर निज कला बतावे, परिग्रह रखकर जोर जतावे।।
ये दुर्ध्यान आठ दुखकारी, करे नहीं जो शिव मग धारी।।
आज्ञा जिनवर की ही धारे, आज्ञा विचय जगत से तारे।।

यह उन्मार्ग बहुत दुखकारी, इसमें जन की बुद्धि प्रचारी।।
कैसे छूटेंगे इस सेती, यह अपाय धर्म सम चेती।।

कर्म फलों के जो अनुभता, गुण थानक मार्गण विचरंता।।
है विपाक ध्यान शुभ धर्मा, रमते साधु वीर वर कर्मा।।
तीन लोक का रूप विचारे, द्वादश अनुप्रेक्षा मन धारे।।
सो संस्थान विचय शुभ धाना, रमते योगी ज्ञान निधाना।।

प्रथम पृथक्त्व वितर्क सुजानो, एकत्व वितर्क दूसरा मानों।।
सूक्ष्म क्रिया तीजा शुचि ध्याना, व्युपरत क्रिया चतुर्थ प्रमाना।।
शुक्ल ध्यान ये चार बताये, शेष ध्यान इस हेतु जताये।।
इस विधि द्वादश तप गुणवता, धारो निर्झर व्रत विचरंता।।

दोहा- द्वादश तप की भावना, कही जिनागम सार।
मन वच काय लगाय के, धरे भविक हितकार।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने द्वितीय वलय द्वादशतपसूचकाय श्री भगवज्जिनाय जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

सोरठा- तप धारे जो कोय, कर्म निर्जरा वे करें।
पावे शिवतिय सोय, वसु विधि कर्म खिपाय के।।

इत्याशीर्वादः

अथ द्वादश भावना सूचक तृतीयवलय जिनपूजा

छन्द-हरिगीतिका

है अथिर जग की वस्तु सारी, मोह वश थिर जानही।
धन धान धरणी दाम वामा, जात बार न आनही।।
जैसे चमक कर बिज्जु विनसै, सलिल बुदबुद नाश हो।
तैसे जगत के भोग सारे, लखो परम उदास हो।।

ॐ ह्रीं अनित्य-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।1।

मृगराज ज्यों मृग देख वन में, तुरत उसको फारता।
त्यों जगत जंतुन देख, काल कराल झटपट मारता।।
मणि मंत्र तंत्र सुशस्त्र सेना, देव विद्याधर सही।
मरते न शरण सहाय कोई, सार जिनवाणी कही।।

ॐ ह्रीं अशरण-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।2।

धन बिना निर्धन हैं दुखी, अरु धनिक के तृष्णा घनी।
दोनों दुखी हैं जगत में, यह बात सच्ची है बनी।।
इस भाति कोई पुत्र बिन, बहु पुत्र के कोई दुखी।
कोई दुखी बिन बाम के, कोई कुनारी से दुखी।।

ॐ ह्रीं संसार-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।।3।।

एक उपजे एक विनसे, एकलो सुख दुख बहै।
है स्वार्थ के सारे हितु, क्यों खेद इन कारण सहै।।
पाप कर नर नरक मे, बहु मार मुदगर की सहै।
दे दान भोग धरा लहे, वा स्वर्ग सुख इकलो लहै।।

ॐ ह्रीं एकत्व-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।।4।।

तिल तेल फूल सुगन्ध न्यारी, क्षीर नीर सु पेखिये।
तिस भाति आतमराम न्यारा, देह में नित देखिये।।
फिर धाम धरणी दाम बामा, प्रकट न्यारे हैं सही।
क्यो एक मान विमूढ़ हुआ, त्याग कर लो शिव मही।

ॐ ह्रीं अन्यत्व-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।5।

राध रुधिर कुवास वासित, देह मैली जानिये।
नव द्वार झरते रात दिन, फिर पूत किस विध मानिये।।
ज्यो स्वर्ण घट मल से भरा, त्यों यह अपावन गाइये।
मत रचो भविजन देह में, नित अशुचि भावन भाइये।।

ॐ ह्रीं अशुचि-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।6।

मन वचन काया योग से, आते अपावन कर्म हैं।
जो रात दिन करते दुखी, इनको न आती शर्म है।।
मिथ्यात पंच प्रकार पन्द्रह, योग अविरत द्वादशा।
पनबीस तजहु कषाय प्राणी, रोक आतम दुर्दशा।।

ॐ ह्रीं आस्रव-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।7।

जब आतमा में आवते, पुद्‌गल रुकेंगे हे सखे।
तब ही सुसंवर होयगा, श्री वीरवाणी यो अखे।।
गुप्ति सु समिति धर्म, अनुप्रेक्षा परीषह जीतना।
चारित्र पंच प्रकार भज, सवर करो सुख पावना।।

ॐ ह्रीं संवर-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।।8।।

जो काल पाकर कर्म झरते, काम के होते नहीं।
तप बल झरे ही निर्जरा, होती जिनागम मे कही।।
इस भाँति है सविपाक औ, अविपाक दो विधि निर्जरा।
नित चितवन कर भावना, भव पार पावन है नरा।।

ॐ ह्रीं निर्जरा-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।9।

कर पग पसार खड़ा पुरुष को, हाथ कटि पर धारिये।
यह लोक इस आकार भज, निज कर्म बैरी मारिये।।
ऊँचा चतुर्दश राजु जानो, एक का आयात है।
इस लोक मे यह जीव भटके, सहत भूख प्यास है।।

ॐ ह्रीं लोक-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।।10।।

सुलभ जग की वस्तु सारी, ज्ञान दुर्लभ जानिये।
बिन ज्ञान सम्यक् के लहे, नहि आत्म-तत्त्व पिछानिये।।
बिन आत्म के जाने अहो, भवदधि न उतरा जाएगा।
यह बोधि दुर्लभ ही तुझे, अपना स्वरूप बताएगा।।

ॐ ह्रीं बोधि दुर्लभ-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं।11।

वस्तु का जो भाव है, वह धर्म सुखकारी सदा।
दश भेद वा त्रय भेद तो व्यवहार से जानो मुदा।।
जग में दया ही धर्म है, यह बात जिनवर ने कही।
इस धर्म को धारे भविक, पाते सदा अष्टम मही।।

ॐ ह्रीं धर्म-भावना चिंतक श्री भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि.।।12।।

जयमाला

दोहा- यह द्वादश शुचि भावना, कही जिनागम सार।
अनुप्रेक्षा तिन नाम है, धारे हो भव पार।।

जोगीरासा

आतम को हित है चितन में, चितन कर सुख पावो।
तीर्थंकर तक इन आराधे, यातें भावन भावो।।1।।

चाहे राजा चाहे चक्री, सुरपति हो वा जोई।
मरते अपनी बारी आये, इसमें फेर न कोई।।2।।

किन्तु मोह वश जन निज मानें, राग रु रोष बढ़ावें।
अथिर न इनका रूप विचारें, नाहक दुःख उठावें।।3।।

दल बल शस्त्र मणि अरु औषध, मात पिता परिवारा।
मरते को न बचावन हारा, झूठा भरम पिटारा।।4।।

जब यह निश्चय जान चुके हो, कोई नहीं रखवाला।
फिर क्यों भूल रहे हो भाई, होते क्यों न निराला।।5।।

बिन धन निर्धन है दुखियारा, तृष्णा वश धनवाना।
सुख नहिं लेश जगत में भाई, झूठा ताना बाना।।6।।

आय अकेलो जाय अकेलो, दुख सुख इकलो भोगै।
फिर क्यों मात पिता सुत मोह्यो, यह नहीं दुविधा जोगै।।7।।

जहँ यह देह न अपनी कहिए, फिर क्या अपना जोई।
धन-धरती वनिता सुत नगरी, किस विधि अपनी होई।।8।।
हाड मांस चमडे की देही, मल मूरति घिनकारी।
निशि वासर नव द्वार झरे इस, किस विधि करिये यारी।।9।।
पोषण से दुख दोष बढे हुए, शोषण सुख उपजावे।
दुर्जन देह स्वभाव बराबर, क्यों इस प्रीति बढावे।।10।।
राग द्वेष के जोर अज्ञानी, पर को अपना माने।
मिथ्या अविरत योग कषायी, बन आस्रव को ठाने।।11।।
मोह नीद के उपशम होते, जीव स्वपर को जाने।
गुप्ति समिति अनुप्रेक्षा वृष दश, पालन कर सुख माने।।12।।
परिषह जीत भजे चारित तो, संवर होय सबेरा।
आते कर्म रुके जीवन के, होय कर्म निरवेरा।।13।।
तप प्रभाव से होय निर्जरा, तो जिय को सुखकारी।
बिन तप कर्म झरे तो समझो, ज्यो को त्यों ससारी।।14।।
पुरुषाकार लोक की रचना, स्वर्ग नरक नर तीनों।
इसमें भ्रमत अनादि काल से, निज स्वरूप न चीन्हों।।15।।
कर्ता हरता भरता नाही, इसको कोई दूजो।
खुद ही करता खुद ही भरता, खुद हरता सच पूछो।।16।।
धन दौलत परिवार आज सुख, पाये बहुत घनेरे।
ग्रैवेयक जा पहुँचा भाई, हुवो ज्ञान न तेरे।।17।।
सम्यक् ज्ञान बिना भव भटक्यो, याते इसको पावो।
आगम ज्ञान ज्ञान आतम को, पाय मुकति में जावो।।18।।
चाहे सब जग की सपति हो, चाहे पदवी पावो।
धर्म बिना सुख लेश नहीं है, यह निश्चय मन लावो।।19।।

द्वादश भावन मन में भावो, इनसे राग हटेगा।
राग हटे निज रूप पिछानो, आतम गुण प्रगटेगा।।20।।

दोहा- जो नर द्वादश भावना, भावे सुमति विचार।
कर्म निर्जरा वह करे, हो जावे भव पार।।

ॐ ह्रीं द्वादशभावना अनुप्रेक्षाचिंतक श्री भगवज्जिनाय जयमालार्घ्यं।

सोरठा- भावो सुमति विचार, जो चाहो हित आपना।
द्वादश भावन सार, शिव तिय संगिनि को सदा।।

इत्याशीर्वाद:

समुच्चय जयमाला

पद्धड़ि

जय ऋषभदेव ऋषिगण नमाय, जय अजितनाथ के गहूँ पाय।
सभव प्रभु की शरणा लहाय, यह जीव सदा आनन्द पाय।।
अभिनन्दन नन्दन जगत जान, कर सुमतिनाथ सुमती प्रदान।
जिनपद्म पद्मसी ज्योतिवत, जय हे सुपार्श्व भव पाश हन्त।
श्री चन्द्रनाथ द्युति चन्द्र जान, श्री पुष्पदन्त को शीश आन।
श्री शीतल शीतलता कराय, भव वन दावा में जरत काय।।
जय जय जय जय श्रेयांस देव, सुर नर विद्याधर करें सेव।
श्री वासुपूज्य गुण गण निवास, श्रीविमल विमल पदवी प्रकाश।
जय जय अनन्त जिनवर महान, भवि जीवन को नौका समान।
जय धर्म धुरन्धर धर्म धार, श्री शांति शांति के है अगार।
जय कुंथ कुंथु वादिक रखाय, जय अर जिन को मस्तक नमाय।
श्री मल्लि मोह को मल्ल मान, करते करमन को वेग हान।
श्री मुनिसुव्रत व्रत के निधान, नमिनाथ नमूँ जुग जोड़ पान।
श्री नेमि जिनेश्वर धर्म नेम, श्री पार्श्व हमें दो सदा खेम।

श्री वर्धमान अन्तिम जिनेश, जिनके न राग रुज मोह लेश।
यावत मुक्ति नहिं होय देव, तावत दीजे तुझ चरण सेव।

दोहा- चौबीसों महाराज की, भक्ति करो भवि लोय।
कर्म निर्जरा सहज हो, पार लहो भव तोय।।

ॐ ह्रीं कर्म निर्जरा व्रतोद्यापने समुच्चय जयमालार्घ्यं नि.।

अडिल्ल- भाव भक्ति मन लाय व्रतों को आचरे,
अतीचार को खोय शुद्धता को धरे।
करे निर्जरा कर्मतनी निश्चय सही,
वसुविधि कर्म खिपाय 'चद' ले शिवमही।।

।।इत्याशीर्वाद ।।

सम्यग्दर्शन पूर्वक व्रत को धारण करना एक दुर्लभता है। व्रती वही हो सकता है जिसे किसी अशुभ आयु का बध नही हुआ है और व्रत के काल मे यदि आयु कर्म का बध होता है तो वह देव आयु का बंध होता है।

व्रत का फल स्वर्ग मोक्ष कहा गया है। अभी पचम काल मे भव्य स्वर्गादिक सुख को प्राप्त कर परम्परा से मोक्ष पद पा सकते है। आज भी महाव्रती मुनि लौकांतिक पद पाकर एक भव के बाद निश्चित ही मुक्ति पद का लाभ प्राप्त कर सकते है।

मुनि आर्जवसागर

कल्याणमन्दिर विधान

पूर्वपीठिका

श्रीमद्गीर्वाणसेव्यं प्रबलतरमहा-मोहमल्लातिमल्लं।
कान्तं कल्याणनाथं, कठिनशठमनो-जातमत्तेभसिंहं।।
नत्वा श्रीपार्श्वदेवं, कुमुदविधुकृतो, रम्यकल्याणधाम्नः।
स्तोत्रस्योच्चै र्विशालं, विधिवदनुपमं, पूजनं कथ्यतेऽत्र।।1।।
पंचवर्णेन चूर्णेन, कर्त्तव्यं कमलं वरं।
वेदवार्धिकरं वेद्यां, कर्णिकामध्यगं बुधैः।।2।।
धौतवस्त्रधरः प्राज्ञः, श्लेष्मादिव्याधिवर्जितः।
बाह्याभ्यन्तर सशुद्धो, जिनपूजा विधानवित्।।3।।
गुरोराज्ञाविधायोच्चैः, शिरस्या-दरतस्ततः।
पृष्ट्वा सघपति पूजा प्रारम्भः क्रियतेऽञ्जसा।।4।।
आदौ गन्धकुटीपूजां, विधायामल-वस्तुभिः।
पञ्चानामर्हदादीना,ततोऽर्चांपरमेष्ठिनाम्।।5।।
ततो गत्वा गुरोरग्रे, भारती-मुनि-पूजनं।
कृत्वेलाशुद्धिकार्यं च, क्रमेणागमकोविदैः।।6।।
ततोऽम्लानां च सामग्रीं, कृत्वा सद्गीः बुधोत्तमः।
पूजन पार्श्वनाथस्य, कुर्यान्मन्त्र-पुरस्सरम्।।7।।

एतत्पद्मसप्तकं पठित्वा स्वस्तिकस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

विधान पूजन

प्राणतस्वः समायातं, फणिलांछन-संयुतम्।
वामामातृसुत पार्श्वं, यजेऽहं तद्गुणाप्तये।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न! श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र! मम हृदये अवतर अवतर संवौषट्। इत्याह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न! श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र! मम हृदये तिष्ठ तिष्ठ ठःठः। इति स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न! श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र! मम हृदय समीपे भव भव वषट् इति सन्निधिकरणम्।

अष्टकम्

वियद्गंगासिन्धु-प्रमुखशुचितीर्थाम्बुनिवहै.।
शरच्चन्द्राभासै· कनकमय भृंगार-निहितै.।।
यजेऽह पार्श्वेश, सुरनरखगाधीशमहितम्।
चिदानन्दप्राज्ञ कमठ-रचितोपद्रव-जितम्।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

स्फुरद्गन्धाहृत-प्रचुर-फणिसरुद्ध-तरुजै ।
रसै कर्पूरास्यै र्निविड भवसन्तापहरणै·।। यजे

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

अखण्डै शालीयै-रपगत तुषै-रक्षतमयै.।
प्रपुञ्जैरानन्द-प्रणयजनकै र्नेत्रमनसाम्।। यजे

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

मरुद्दारुद्भूतै र्विकचसरसी जातवकुलै.।
लवगैरामोद-भ्रमरमिलितै. पुष्पनिचयै.।।यजे ..

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय पुष्पम् कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

सदन्नैरापूर्ण - प्रवरघृतपक्वान्न सहितैः।
रसाढ्यैर्नैवद्यै-रतुलकाञ्चनपात्रविधृतैः।। यजे.....

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

हविर्जातैः रम्यै विदलित-दिशाकीर्णतमसैः।
प्रदीप्तै माणिक्यै, विशदकलधौतार्चिरमलैः।। यजे......

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

सुकर्पूरोत्पन्नै-रमतरतरु-सच्चन्दनभवैः।
सुधूपौघैः श्लाघ्यैर्मिलदलिगणागुञ्जितरवैः।। यजे......

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

सुपक्वैः नारग-कमुकशुचिकूष्माण्डकरकैः।
फलैर्मोचाम्राद्यै विबुधशिवसम्पद्वितरणैः।। यजे......

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जलै गन्धद्रव्यै विशदसदकैः पुष्पचरुकैः।
सुदीपैः सद्धूपै र्बहुफलयुतैरर्घनिकरैः।।
यजेऽहं पार्श्वेश, सुरनरखगाधीशमहितम्।
चिदानन्दप्राज्ञ कमठ-रचितोपद्रव-जितम्।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जयमाला

शताब्दजीवी समशत्रुमित्रौ, हरित्प्रभांगी हतमारदर्पः।
सपादचापद्वयतुंगकायो, यस्तं सदा पार्श्व जिनं नमामि।।
निराभूषशोभं, परिध्वस्तलोभम्, चिदानंदरूपं नतानेकभूपम्।
स्तुवे पार्श्वदेवं, भवाम्भोधिनावम्, त्रिषड्दोषहीनं, जगत्पूज्यमानम्।।1।।
शिवं सिद्धकार्यं, वरानन्ततुर्यम्, रमानाथमीशं, जितानंगपाशम्।।
स्तुवे पार्श्वदेवं, भवाम्भोधिनावम्, त्रिषड्दोषहीनं, जगत्पूज्यमानम्।।2।।
शतेन्द्रार्च्यपादं, स्फुरद्दिव्यनादम्, गणाधीशमाद्यं, लसद्देववाद्यम्।
स्तुवे पार्श्वदेवं, भवाम्भोधिनावम्, त्रिषड्दोषहीनं, जगत्पूज्यमानम्।।3।।

हरं विश्वनेत्रं, त्रिशुभ्रातपत्रम्, क्षुधावह्निनीरं, द्विधासंगदूरम्।
स्तुवे पार्श्वदेवं, भवाम्भोधिनावम्, त्रिषड्दोषहीनं, जगत्पूज्यमानम्।।4।।

दिशाचेलवन्त, वरं मुक्तिकांतम्, निरस्तारिमोहं, पुरु सौख्यगेहम्।
स्तुवे पार्श्वदेव, भवाम्भोधिनावम्, त्रिषड्दोषहीनं, जगत्पूज्यमानन्।।5।।

जराजन्ममुक्त, वरानन्दयुक्तम्, हतक्रोधमान, कृतज्ञानदानम्।
स्तुवे पार्श्वदेवं, भवाम्भोधिनावम्, त्रिषड्दोषहीन, जगत्पूज्यमानम्।।6।।

अविद्यापहारं, सविद्यागभीरम्, स्वय दीप्तिमूर्तिं, जगत्प्राप्तकीर्तिम्।
स्तुवे पार्श्वदेव, भवाम्भोधिनावम्, त्रिषड्दोषहीन, जगत्पूज्यमानम्।।7।।

यतिवरवृषचन्द्रं, चित्कलापूर्णचन्द्रम्, विमलगुणसमृद्ध नम्रनागामरेन्द्रम्।
जिनपति-महिधार, दु:खसन्तापहारम्, भजति नमति सारं, सौख्यसार लभेत।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जयमालऽर्घ्यं।

सर्वजीवदयायुक्त: सर्वलौकान्तिकार्चितः।
पार्श्वदेवः श्रिय दद्यात् नित्य पूजाविधायिनाम्।।

इत्याशीर्वाद:

विधानपूजा (हिन्दी)

स्थापना

दोहा- श्रीपारस के चरण मे, प्रणमूँ मन वच काय।
अत्र तिष्ठ थापूँ यहाँ, मन में हर्ष बढाय।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षर सम्पन्न श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षर सम्पन्न श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षर सम्पन्न श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्-सन्निधिकरणम्।।

यह जन्म मृत्यु का रोग दुख देता हम को।
शुभ भावों का जल लेय नाश करूँ उस को।।
श्री पार्श्वनाथ भगवान पूज करूँ तेरी।
मेटो तम सकल कषाय काटो भवफेरी।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

स्वारथमय सब संसार, मन को ना भाया।
भवताप नशाने आज, चन्दन ले आया।।श्री..

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

ले अक्षत विविध प्रकार, सुवरण थाल भरूँ।
तव चरण चढाऊँ आज, शिवपद प्राप्त करूँ।।श्री

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

शेवन्ति सुकमल गुलाब, द्वयपद भेट करूँ।
यह कामबाण नश जाय, मन मे भाव धरूँ।।श्री .

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

मन मोहन मोदक लेय, धारे तुम आगे।
मेटूँ मैं क्षुधा कुटेव, स्वातम गुण जागे।।श्री

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

यह जगमग दीप प्रकाश, तम का नाश करे।
करता सब पाप विनाश, ज्ञान विकास करे।।श्री.

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

मलयागिर चन्दन सार, चूर सुगन्ध करा।
मम अष्टकर्म नश जाय, मन में भाव धरा।।
श्री पार्श्वनाथ भगवान पूज करूँ तेरी।
मेटो तम सकल कषाय काटो भवफेरी।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

नाना फल के भर थाल, द्वयपद ढ़िग तैं धरूँ।
पाऊ में शिव साम्राज्य, मुक्ति फल को वरूँ।।श्री

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

कर मे ले अर्घ्य बनाय, तन भन मोद धरो।
भवदधि तारक जिनराय, मेरे पाप हरो।श्री

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तव चरणो मे नाथ मै, प्रणमू बारम्बार।
शान्तिधारा करूँ सदा, पहुँचू भव के पार।।

शांतये शातिधारा

कमल मालती केवडा, भाति भाति के फूल।
चरणो मे अर्पण करूँ, नाशूँ भव की धूल।।

इति आशीर्वादः पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्

जयमाला

दोहा- पारस तुम पारस प्रभु, हम लोहा यह जान।
लोहे से कचन बनें, दे दो इक वरदान।।

चौपाई छन्द

श्री पार्श्वेश जिनेश नमस्ते, हे अखिलेश महेश नमस्ते।
श्री विश्वेश गणेश नमस्ते, हे सर्वेश शुभेश नमस्ते।।1।।

अश्वसेन के लाल नमस्ते, माँ वामा के भाल नमस्ते।
हरित्प्रभांगी रूप नमस्ते, पाप विघातक भूप नमस्ते।।2।।
मुक्तिरमा पति देव नमस्ते, दीनबन्धु इकमेव नमस्ते।
जरा जन्म से मुक्त नमस्ते, वरानन्द से युक्त नमस्ते।।3।।
नत नागामर देव नमस्ते, जित कामेश सुरेश नमस्ते।
विषय विकार वियुक्त नमस्ते, केवल ज्ञान संयुक्त नमस्ते।।4।।
चिदानंद चिद्रूप नमस्ते, तीन लोक के भूप नमस्ते।
षोडशदोष विहीन नमस्ते, अरिविजेता जैन नमस्ते।।5।।
सिद्धिदाता तुम्हें नमस्ते, ऋद्धिदाता तुम्हें नमस्ते।
शतेन्द्रार्च्य पादं सु नमस्ते, जगत्सु पूज्य बुधेश नमस्ते।।6।।
नग्न दिगम्बर रूप नमस्ते, शिवपुर के हो भूप नमस्ते।
ध्वस्तलोभ जिनदेव नमस्ते, नष्ट क्रोध जिनदेव नमस्ते।।7।।
ब्रह्मा विष्णु महेश नमस्ते, हरिहर नागर ईश नमस्ते।
कर्मविजेता धीर नमस्ते, हरते भव की पीर नमस्ते।।8।।
परभावो से दूर नमस्ते, कर्म किये चकचूर नमस्ते।
एकमेव तुम शूर नमस्ते, समता से भरपूर नमस्ते।।9।।
हे तीर्थेश जिनेश नमस्ते, हे ज्ञानेश शिवेश नमस्ते।
हे विश्वेश वृषेश नमस्ते, हे परमेश परेश नमस्ते।।10।।

दोहा- पारस के परताप से, सुखी होत हैं जीव।
यातै मन-वच-शुद्ध कर, पूजौं भव्य सदीव।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रवजिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय जयमालार्घ्यम्।

श्री पार्श्वदेव जिन को सिर मैं नमाऊँ।
कन्दर्प दर्प दलने अब पास आऊँ।।
आरम्भ संग मद दोष पलाय मेरे।
सम्यक् प्रणाम कर के अघ नशाय सारे।।

इत्याशीर्वादः

अष्टदल कमल पूजा

(अथ प्रथमवलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

इच्छित कार्य साधक

कल्याण-मन्दिरमुदारमवद्य भेदि, भीताभय-प्रदमनिन्दितमङ्घ्रि-पद्मम्।
संसार-सागर-निमज्जदशेष-जन्तु, पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य।।1।।

सन्मंगलालयमुदासिकलंकहारि, संसारभीत मनसाममयप्रदायि।
जन्माब्धिमध्य असुमत्तरि यत्पदाब्जम्, तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।2।

अनुमन करुणा की सुमूर्ति शुभ, शिव मंदिर अघनाशक मूल।
भयाकुलित व्याकुल मानव के, अभय प्रदाता अति-अनुकूल।।
बिन कारन भवि जीवन तारन, भव समुद्र मे यान-समान।
ऐसे पाद पद्म प्रभु पारस, के अर्चूं मै नित अम्लान।।

ॐ ह्रीं भवसमुद्र-पतज्जन्तुतारणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

अभीप्सितसिद्धिकारक

यस्य स्वय सुरगुरु-र्गरिमाम्बुराशे·,
स्तोत्र सुविस्तृत-मति-र्न-विभु-र्विधातुम्।
तीर्थेस्वरस्य कमठ-स्मय-धूमकेतो-
स्तस्याहमेष किल सस्तवन करिष्ये।।2।।

वाचस्पति र्न गुरुवारिनिधेः समर्थः,
कर्तुं धिया स्तवमनन्तगुणस्य यस्य।
तीर्थाधिपस्य कमठोद्धतगर्वहर्तुः,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।2।।

जिनकी अनुपम गुण गरिमा का, अम्बु राशि सा है विस्तार।
यश-सौरभ सु-ज्ञान आदि का, सुरगुरु भी नहिं पाता पार।।

हठी कमठ शठ के मदमर्दन, को जो धूमकेतु-सा सूर।
अति आश्चर्य की स्तुति करता, उसी तीर्थपति की भरपूर।।2।।
ॐ ह्रीं अनन्तगुणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल भय निवारक

सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप-
मस्मादृशः कथमधीश! भवन्त्यधीशाः।
धृष्टोऽपि कौशिक-शिशु-र्यदि वा दिवान्धो,
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मेः।।3।।

संक्षेपतोऽपि भुवि विस्तरितुं महत्त्वम्,
दक्षा भवन्ति न हि तुच्छधियो यदीयम्।
घूका जड़ा दिनकरस्य यथा स्वरूपम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।3।।

अगम अथाय सुखद शुभ सुन्दर, सत् स्वरूप तेरा अखिलेश।
क्यो करि कह सकता है मुझसा, मन्द बुद्धि मूरख करुणेश।।
सूर्योदय होने पर जिसको, दिखता निज का गात नहीं।
दिवा कीर्ति क्या कथन करेगा, मार्तण्ड का नाथ कहीं?।।3।।
ॐ ह्रीं चिद्रूपाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

असमय निधन निवारक

मोह-क्षयादनुभवन्नपि नाथ! मर्त्यो,
नूनं गुणान्गणयितुं न तव क्षमेत।
कल्पान्त-वांत-पयसः प्रकटोऽपि यस्मा-
न्मीयेत केन जलधे-र्ननु रत्नराशिः।।4।।

निर्मोह कोऽपि मनुजो गुणसंहते र्नो,
संख्यां करोति गहनार्थ पदस्य यस्य।
रत्नस्य वा प्रलय वायु हतस्य वार्धे-
स्तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।4।।

यद्यपि अनुभव करता है नर, मोहनीय-विधि के क्षय से।
तो भी गिन न सकै गुण तुव सब, मोहेतर-कर्मोदय से।।
प्रलयकाल में जल निधि का, बह जाता है सब पानी।
रत्न राशि दिखने पर भी क्या, गिन सकता कोई ज्ञानी ?।।4।।

ॐ ह्रीं गहनगुणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रच्छन्न धनप्रदर्शक

अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ! जडाशयोऽपि,
कर्तुं स्तवं लसदसख्य-गुणाकरस्य।
बालोऽपि किं न निज-बाहु-युग वितत्य,
विस्तीर्णता कथयति स्वधियाम्बुराशे ।।5।।

इच्छन्ति मन्दमतयः स्तवनं विधातुम्,
यस्य प्रकृष्ट गुणिनः शिशवो यथात्र।
विस्तार्य बाहुयुगलं जलधेः प्रमाणम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।5।।

तुम अतिसुन्दर शुद्ध अपरिमित, गुण रत्नो की खानि स्वरूप।
वचननि करि कहने को उमगा, अल्प बुद्धि मै तेरा रूप।।
यथा मन्दमति लघु शिशु अपने, दोऊ कर को कहै पसार।
जल निधि को देखहु रे मानव, है इसका इतना आकार।।5।।

ॐ ह्रीं परमोन्नतगुणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सन्तान सम्पत्ति प्रसाधक

ये योगिनामपि य यान्ति गुणास्तवेश!
वक्तु कथं भवति तेषु ममावकाश·।
जाता तदेवमसमीक्षित-कारितेयम्,
जल्पन्ति वा निज-गिरा ननु पक्षिणोऽपि।।6।।

गम्या गुणा यदि महद्वपुषां न यस्य,
तत्रावकाश इह तुच्छधियां कथं स्यात्।
गायन्ति पक्षिण इवात्र जनास्तथापि,
तं पार्श्वनाथ मनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।6।।

हे प्रभु तेरे अनुपम सबगुण, मुनिजन कहने में असमर्थ।
मुझसा मूरख औ अबोध क्या, कहने को हो सके समर्थ।।
पुनरपि भक्ति भाव से प्रेरित, प्रभु-स्तुति को बिना विचार।
करता हूँ, पंछी ज्यों बोलत, निश्चित बोली के अनुसार।।6।।

ॐ ह्रीं अगम्यगुणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

अभीप्सित जनाकर्षक

आसतामचिन्त्य-महिमा जिन! संस्तवस्ते,
नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति।
तीव्राऽऽतपोपहत पान्त-जनान्निदाघे-
प्रीणाति पद्म-सरसः-सरसोऽनिलोऽपि।।7।।

स्तुत्या भवन्ति मनुजाः सुखिनोऽत्र किं न,
नाम्नैव यस्य मरुता नलिनाकरस्य।
सूर्यातपार्त पथिकाः शिविरं यथा नु,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।7।।

है अचिन्त्य महिमा स्तुति की, वह तो रहे आपकी दूर।
जबकि बचाता भक्तदुखों से, मात्र आपका 'नाम' जरूर।।
ग्रीषम ऋतु के तीव्र ताप से, पीड़ित पन्थी हुए अधीर।
पद्म सरोवर दूर रहे पर, तोषित करता सरस-समीर।।7।।

ॐ ह्रीं स्तवनार्हाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

कुपितोपदंश विनाशक

हृद्वर्तिनि त्वयि विभो! शिथिली भवन्ति,
जन्तोः क्षणेन निविडा अपि कर्म-बन्धाः।
सद्यो भुजंगम-मया इव मध्य-भाग-
मभ्यागते वन शिखण्डिनि चन्दनस्य।।8।।

यस्मिन्स्थिते हृदि विनाशमुपैति बन्धः,
पापस्य शुद्धमनसो भविनो मयूरे।
संरुद्ध चन्दननगोऽहिरिवात्र याते,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।8।।

मन मन्दिर में वास करहिं जब, अश्वसेन-वामा-नन्दन।
ढीले पड जाते कर्मों के, क्षण भर से दृढ़तर बंधन।।
चन्दन के विटपों पर लिपटे, हों काले विकराल भुजंग।
वन-मयूर के आते ही ज्यों, होते उनके शिथिलित अग।।8।।

ॐ ह्रीं कर्मबन्धविनाशनाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

पूर्णार्घ्य

उदक-चन्दन-तंदुल-पुष्पकैः, चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गानरवाकुले, जिनगृहे जिननाथ महंयजे।।

ॐ ह्रीं प्रथम वलयोपरि पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अथ द्वितीय वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

षोडशदलकमल पूजा

सर्व वृश्चिक विष विनाशक

मुच्यंत एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र,
रौद्रै-रुपद्रव-शतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि।
गो-स्वामिनि स्फुरित-तेजसि दृष्टमात्रे,
चौरेरिवाऽऽशु पशवः प्रपलायमानैः।।9।।

दृष्टे पलायनपराः किल भूतवर्गा,
यस्मिन् विमुच्य मनुजानिह संग्रहीतान्।
दोषाचराः पशुपताविव गोसमाजम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।9।।

बहु विपदाएँ प्रबल वेग से, करें सामना यदि भरपूर।
प्रभु दर्शन से निमिषमात्र में, हो जातीं वे चकनाचूर।।
जैसे गौ-पालक दिखते ही, पशु-कुल को तज देते चोर।
भयाकुलित हो करके भागे, सहसा समझ हुआ अब भोर।।9।।

ॐ ह्रीं दुष्टोपसर्गविनाशकाय क्लीं महाबीजाक्षरसहित श्री पार्श्वनाथाय जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तस्करभयविनाशक

त्वं तारको जिन कथं भविना त एव,
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः।
यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून-
मन्तर्गतस्य मरुत. स किलानुभावः।।10।।

संसारिणां भवति यो हृदि संस्थितोऽपि,
सन्तारकः किल निरन्तर चिन्तकानाम्।
भस्त्रागतो मरुदिवाम्बुनिधौ समर्थ-
स्तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।10।।

भक्त आपके भव-पयोधि से, तिर जाते तुमको उरधार।
फिर कैसे कहलाते जिनवर, तुम भक्तों की दृढ़ पतवार?
वह ऐसे जैसे तिरती है, चर्म-मसक जल के ऊपर।
भीतर उसमें भरी वायु का, ही केवल यह विभो! असर।।10।।

ॐ ह्रीं सुध्येयाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल अग्निभय विनाशक

यस्मिन्हर-प्रभृतयोऽपि हत-प्रभावाः,
सोऽपि त्वया रति-पतिः क्षपितः क्षणेन।
विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन,
पीतं न किं तदपि दुर्धर-वाड़वेन।।11।।

येनाहतं हरिहरादि-महत्त्वमुच्चैः,
सोऽनन्तको जिनवरेण हतो हि येन।
वारां निधेरिव जलं बड़वानलेन,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।11।।

जिसने हरि हरादि देवों का, खोया यश गौरव सम्मान।
उस मन्मथ का हे प्रभु! तुमने, क्षण में मेंट दिया अभिमान।।
सच है जिस जल से पल भर में, दावानल हो जाता शात।
क्यों न जला देता उस जल को? बड़वानल होकर अश्रान्त।।11।।

ॐ ह्रीं अनंगमथनाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

अग्निभयविनाशक

स्वामिन्ननल्प गरिमाणमपि प्रपन्ना-
स्त्वां जन्तवः कथमहो हृद्ये दधानाः।
जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन,
चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः।।12।।

यं वाहका हृदि जनाः कथमुत्तरन्ति,
संसार-वारिधिमहो गुरुमप्यतुल्यम्।
चिन्त्यो न जातु महतां महिमात्र लोके,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।12।।

छोटी से मन की कुटिया में, हे प्रभु! तेरा ज्ञान अपार।
धार उसे कैसे जा सकते, भविजन भव सागर के पार।।
पर लघुता से वे तिर जाते, दीर्घ भार से डूबत नाहिं।
प्रभु की महिमा ही अचिन्त्य है, जिसे न कवि कह सकें बनाहि।।12।।

ॐ ह्रीं अतिशयगुरवे क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जलमिष्टताकारक

क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथम निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्म-चौराः
प्लोपत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके,
नील-द्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी।।13।।

जित्वा क्रुधं पुनरलं शठ मोहदस्युः,
येन प्रणाशित उदार गुणेन चित्रम्।
सौम्येन कर्दमजमत्र हि मेनवाश्रु,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।13।।

क्रोध शत्रु को पूर्णशमन कर, शान्त बनाया मन आगार।
कर्म चोर जीते फिर किस विध, हे प्रभु अचरज अपरम्पार।।
लेकिन मानव अपनी आंखों, देखहु यह पटतर संसार।
क्यों न जला देता वन उपवन, हिम सा शीतल विकट तुषार।।13।।

ॐ ह्रीं जितक्रोधाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

शत्रुस्नेहजनक

त्वां योगिनो जिन! सदा परमात्मरूप-
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज-कोष देशे।
पूतस्य निर्मल रुचेर्यदि वा किमन्य-
दक्षस्य संभव-पदं ननु कर्णिकायाः।।14।।

यं साधवो ह्रवयतामसरे विकाशे,
ध्यायन्ति शुद्धमनसो यत ईड्यमानम्।
चित्तादृतेन हि पदं वपुषीह पूतम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।14।।

शुद्ध स्वरूप अमल अविनाशी, परमातम सम ध्यावहि तोय।
निजमन कमल कोष मधि ढूंढहि, सदा साधु तजि मिथ्यामोह।।
अति पवित्र निर्मल सुकांति युत, कमल कर्णिका बिन नहिं और।
निपजत कमलबीज उसमें ही, सब जग जानहिं और न ठौर।।14।।

ॐ ह्रीं महन्मृग्याय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

चोरीगत द्रव्यदायक

ध्यानाज्जिनेश भवतो भविनः क्षणेन,
देहं विहाय परमात्म-दशा व्रजन्ति।
तीव्रानलादुपल-भावमपास्य लोके,
चामीकरत्वमचिरादिव धातु-भेदाः।।15।।

यस्येह मानव उपैति पदं गरिष्ठम्,
सद्ध्यानतो झटिति संहननं विसृज्य।
हैमं यथानलवशाद्विदृषद्विशेषम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।15।।

जिस कुधातु सोना बनता, तीव्र अग्नि का पाकर ताव।
शुद्ध स्वर्ण हो जाता जैसे छोड़ उपलता पूर्व विभाव।।
वैसे हि प्रभु के सु-ध्यान से, वह परिणति आ जाती है।
जिसके द्वारा देह त्याग, परमात्म दशा पा जाती है।।15।।

ॐ ह्रीं कर्मकिट्टदहनाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

गहन वन-पर्वत भयविनाशक

अन्तः सदैव जिन! यस्य विभाव्यसे त्वम्,
भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम्।
एतत्स्वरूपमथ मध्य-विवर्तिनो हि,
यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः।।16।।

योऽन्तर्गतोऽपि भविनो वपुरत्र वेगा-
न्निर्नाशयत्यखिल दुःखमयं विचित्रम्।
माध्यस्थिकः किलमिवाशु महत्तरः स्वम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।16।।

जिन तन से भवि चिंतन करते, उस तन को करते क्यों नष्ट?
अथवा ऐसा ही स्वरूप है, है दृष्टांत एक उत्कृष्ट।।
जैसे बीचवान बन सज्जन, बिना किये ही कुछ आग्रह।
झगड़े कि जड़ प्रथम मिटाकर, शान्त किया करते विग्रह।।16।।

ॐ ह्रीं देहदेहिकलहनिवारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

युद्धविग्रह विनाशक

आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेद बुद्धया,
ध्यातो जिनेन्द्र! भवतीह भवत्प्रभावः।
पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानम्,
किं नाम नो विष-विकारमपाकरोति।।17।।

विद्वद्भिरत्र यदभिन्नधियायमात्मा,
सच्चिंतितं फलति मुक्तिपदं हि सद्यः।
मान्यं सुधेति सलिलं विषनाशकं वा,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।17।।

हे जिनेन्द्र! तुम में अभेद रख, योगीजन निज को ध्याते।
तव प्रभाव से तज विभाव वे, तेरे ही सम हो जाते।।
केवल जल को दृढ़ श्रद्धा से, मानत है जो सुधा समान।
क्या न हटाता विष विकार वह निश्चय से करने पर पान ?।।17।।

ॐ ह्रीं संसारविषसुधोपमाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सर्प विष विनाशक

त्वामेव वीत-तमसं परवादिनोऽपि,
नूनं विभो! हरि-हरादि-धिया प्रपन्नाः।
किं काच-कामलिभिरीश सितोऽपि शखो,
नो गृह्यते विविध-वर्ण-विपर्ययेण।।18।।

ये ध्वस्तमोहतिमिरं कुपथप्रलग्नाः,
कृष्णादिबुद्धिमनुदारमुपाश्रयन्ति।
नेत्रामया इव यथार्थ-विवेकहीना,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।18।।

हे मिथ्या-तम-अज्ञान रहित, सुज्ञान मूर्ति! हे परम यति।
हरिहरादि ही मान अर्चना, करते तेरी मन्दमती।।
है यह निश्चय प्यारे मित्रो, जिनके होत पीलिया रोग।
श्वेत शंख को विविध वर्ण, विपरीत रूप देखे वे लोग।।18।।

ॐ ह्रीं सर्वजनवन्द्याय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

नेत्र रोग विनाशक

धर्मोपदेश-समये सविधानुभावा-
दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः।
अभ्युद्गते दिनपतौ स महीरुहोऽपि,
किं वा विबोधमुपयाति च जीव-लोकः।।19।।

सद्धर्मजल्पनविधौ वसुधारुहोऽपि,
शोकातिरिक्त इह यस्य किमन्यवृत्तम्।
भानूदये सति यथा किल वारिजातम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।19।।

धर्म देशना के सु काल में, जो समीपता पा जाता।
मानव कि क्या बात कहूँ, तरु तक अशोक है हो जाता।।
जीव वृन्द नहिं केवल जागत, रवि के प्रकटित ही होते।
तरु सजग होत अति हर्षित, निद्रा तज आलस खोते।।19।।

ॐ ह्रीं अशोकवृक्षविराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

उच्चाटनकारक

चित्रं विभो! कथमवांगमुख-वृन्तमेव,
विष्वक्पतत्यविरला सुर-पुष्प-वृष्टिः।
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश!
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि।।20।।

रेजे सुरप्रसव-संततिवृष्टि-रुद्धा,
स्वामोदवासितदिशावलया यदीया।
यत्पादमाश्रितजना भृशमूर्ध्वगाः स्युः,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।20।।

है विचित्रता सुर बरसाते, सभी ओर से सघन सुमन।
नीचे डंठल ऊपर पँखुरी, क्यों होते हैं हे भगवन।।
है निश्चित सुजनों सुमनों के, नीचे को होते बन्धन।
तेरी समीपता की महिमा है, हे वामा-देवी नन्दन।।20।।

ॐ ह्रीं सुरपुष्पवृष्टि शोभिताय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

शुष्क वनोपवन विकाशक

स्थाने गम्भीर-हृदयोदधि-सम्भवायाः,
पीयूषता तव गिरः समुदीरयन्ति।
पीत्वा यतः परम-सम्मद-संग-भाजो,
भव्या व्रजन्ति तरसाप्य-जरामरत्वम्।।21।।

गम्भीर हृज्जलधि जातवचो हि यस्य,
प्रीणाति चारु जनताममृतोपमं तत्।
निःस्वाद्य गच्छति जनः किल मोक्षधाम,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।21।।

अति गम्भीर हृदय सागर से, उपजत प्रभु के दिव्य वचन।
अमृत तुल्य मानकर मानव, करते उनका अभिनन्दन।।
पी पीकर जग जीव वस्तुतः पा लेते आनन्द अपार।
अजर अमर हो फिर वे जग की, हर लेते पीड़ा का भार।।21।।

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनि-विराजिताय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मधुर फलदायक

स्वामिन्सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो,
मन्ये वदन्ति शुचयः सुर-चामरौघाः।
येऽस्मै नतिं विदधते मुनि-पुंगवाय,
ते नूनमूर्ध्व-गतयः खलु शुद्ध-भावाः।।22।।

यस्य प्रकीर्णक युगं वदतीव लोकान्,
दुग्धाऽब्धिफेनधवलं सुरवीज्यमानम्।
वन्दारुरुप्रगतिरेव जिनं सदेति,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।22।।

ढुरते चारु-चँवर अमरों से, नीचे से ऊपर जाते।
भव्य जनों को विविध रूप से, विनय सफल वे दर्शाते।।
शुद्ध भाव से नत शिर हो जो, तव पदाब्ज में झुक जाते।
परम शुद्ध हो ऊर्ध्वगति को, निश्चय करि भविजन पाते।।22।।

ॐ ह्रीं सुरचामरविराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

राज्य सम्मानदायक

श्यामं गभीर-गिरमुज्ज्वल-हेम-रत्न,
सिंहासनस्थमिह भव्य शिखण्डिनस्त्वाम्।
आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चै-
श्चामीकराद्रि-शिरसीव नवाम्बुवाहम्।।23।।

सद्धेमरत्नमय केशरि-विष्ठरस्थम्,
यं भव्य केकिन अभीक्ष्य नटन्त्यजस्रम्।
जाम्बूनदाचलशिखा घनमन्यमानाः,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।23।।

उज्ज्वल हेम सुरल-पीठ पर, श्याम सु-तन शोभित अनुरूप।
अति गम्भीर सु निः सृत वाणी, बतलाती है सत्य स्वरूप।।
ज्यों सुमेरू पर ऊँचे स्वर से, गरज गरज घन बरसैं घोर।
उसे देखने सुनने को जब, उत्सुक होते जैसे मोर।।23।।

ॐ ह्रीं पीठत्रयनायकाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

शत्रु विजित राज्य प्रदायक

उद्गच्छता तव शिति-द्युति-मण्डलेन,
लुप्त-च्छद-च्छविरशोक-तरुर्बभूव।

सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग,
नीरागता व्रजति को न सचेतनोऽपि।।24।।

श्याम प्रभावलयतोऽपि विचित्रकान्तिः,
रेजे ह्यशोकतरुरुच्चतमोऽपि यस्य।
संसर्गतो भवति राग युतो न कोऽत्र,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।24।।

तुव तन भामण्डल से होते, सुर तरु के पल्लव छवि-छीन।
प्रभु-प्रभाव को प्रकट दिखाते, हो जड़ रूप चेतना हीन।।
जब जिनवर की समीपता से, सुरतरु हो जाता गत राग।
तब न मनुज क्यों होवेगा जब, वीतराग खो करके राग?।।24।।

ॐ ह्रीं भामण्डलमण्डिताय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

पूर्णार्घ्य

उदक चन्दन तदुल पुष्पकै.. चरु सुदीप सुधूप फलार्घ्यकैः।
धवल मंगल गानरवाकुले, जिनगृहे जिननाथ महं यजे।।

ॐ ह्रीं द्वितीय वलयोपरि पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अथ तृतीय वलयोपरि पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्)

विंशति दल कमल पूजा

असाध्य रोग शामक

भो भो प्रमादमवधूय भजध्वमेन-
मागत्य निर्वृतिपुरीं प्रति सार्थवाहम्।
एतन्निवेदयति देव! जगत्त्रयाय,
मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते।।25।।

गीर्वाण दुन्दुभिरतीव वदत्यजस्र,
मेनं निषेवय जिनं प्रविहाय मोहम्।

यस्मै त्रिविष्टप जनाय नदन्नभीक्ष्णम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।25।।

नभ मण्डल में गूँज-गूँजकर, सुर-दुन्दुभि कर रही निनाद।
रे-रे प्राणी आतम हित नित, भज ले प्रभु को तज परमाद।।
मुक्ति धाम पहुँचाने में जो, सार्थबाहु बन तेरा साथ।
देंगे त्रिभुवनपति परमेश्वर, विघ्न विनाशक पारसनाथ।।25।।

ॐ ह्रीं देवदुन्दुभिनादाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

वचनसिद्धि प्रतिष्ठापक

उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ,
तारान्वितो विधुरयं विहताधिकारः।
मुक्ता-कलाप-कलितोल्ल-सितातपत्र-
व्याजातित्रधा धृत-तनुर्ध्रुवमभ्युपेतः।।26।।

येन प्रकाशित इहेत्य कृतत्रिरूपो,
लोकत्रयीधवलछत्रमिषेणचन्द्रः।
सोडुग्रहः किमिव यस्य करोति सेवाम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।26।।

अखिल-विश्व में हे प्रभु तुमने, फैलाया है विमल प्रकाश।
अतः छोड़कर स्वाधिकार को, ज्योतिर्गण आया तव पास।।
मणि-मुक्ताओं को झालर युत, आत पात्र का मिष लेकर।
त्रिविध रूपधर प्रभु को सेवे, निशिपति तारान्वित होकर।।26।।

ॐ ह्रीं छत्रत्रयसहिताय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

वैर विरोध विनाशक

स्वेन प्रपूरित-जगत्त्रय-पिण्डितेन,
कान्ति-प्रताप-यशसामिव संचयेन।
माणिक्य-हेम-रजत-प्रविनिर्मितेन,
सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि।।27।।

यः शोभते मणि सुवर्ण सुरौप्यजेन,
तेजः प्रभाव शुचि कीर्ति समुच्चयेन।
शालत्रयेण-दिवि चामर निर्मितेन,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।27।।

हेम रजत-माणिक से निर्मित, कोट तीन अति शोभित से।
तीन लोक एकत्रित होकर, किये प्रभु को वेष्ठित से।।
अथवा कान्ति-प्रताप-सुयश के, सचित हुए सुकृत से ढ़ेर।
मानो चारों दिशि से आ के, लिया इन्होंने प्रभु को घेर।।27।।

ॐ ह्रीं शालत्रयाधिपतये क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

यशःकीर्ति प्रसारक

दिव्यस्रजो जिन नमत्त्रिदशाधिपाना-
मुत्सृज्य रत्न-रचितानपि मौलि-बन्धान्।
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वापरत्र,
त्वत्संगमे सुमनसो न रमन्त एव।।28।।

माल्यं सुभक्तिभर नम्र सुराधिपानाम्,
सन्त्यज्य चारु मुकुटं पद्माश्रितं हि।
यस्यानिशं सुमनसां महदेव सेव्यम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।28।।

झुके हुए इन्द्रों के मुकुटों, को तजि कर सुमनों के हार।
रह जाते जिन चरणों में ही, मानो समझ श्रेष्ठ आधार।।
प्रभु का छोड़ समागम सुन्दर, सुमनस कहीं न जाते हैं।
तव प्रभाव से वे त्रिभुवनपति! भव समुद्र तिर जाते हैं।।28।।

ॐ ह्रीं भक्तजनानवनपतिराय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

आकर्षण कारक

त्वं नाथ! जन्म-जलधेर्विपरांगमुखोऽपि,
यत्तारयस्य सुमतो निज-पृष्ठ-लग्नान्।
युक्त हि पार्थिव-निपस्य सतस्तवैव,
चित्र विभो यदसि कर्म-विपाक-शून्यः।।29।।

यस्तारयत्य तनुरंगभृतो विचित्रम्,
संसारवार्धि विमुखोऽपि सुभक्तियुक्तान्।
यन्मृत्तिकामय इवात्र घटोऽम्बुराशौ,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।29।।

भव सागर से तुम परान्मुख, भक्तो को तारो कैसे?
यदि तारो तो कर्म-पाक के, रस से शून्य अहो कैसे?
अधोमुखी परिपक्व कलश ज्यों, स्वयं पीठ पर रख करके।
ले जाता है पार सिन्धु के, तिरकग और तिराकर के।।29।।

ॐ ह्रीं निजपृष्ठलग्नभयतारकाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

असंभव कार्य साधक

विश्वेश्वरोऽपि जन-पालक दुर्गतस्त्वम्,
किं वाऽक्षर-प्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश!
अज्ञानवत्यपि सदैव कथंचिदेव,
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्व-विकास हेतुः।।30।।

यः सर्वलोक जनताधिपति र्दरिद्रो,
व्यक्ताक्षरोऽप्यलिपिरित्युदितो महद्भिः।
ज्ञानी किलाज्ञ इति विस्मयनीयमूर्तिः,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।30।।

जगनायक जगपालक होकर, तुम कहलाते दुर्गत क्यों?
यद्यपि अक्षर मय स्वभाव है तो, फिर अलिखित अक्षत क्यों।।
ज्ञान झलकता सदा आप में, फिर क्यों कहलाते अनजान।
स्वपर प्रकाशक अज्ञ जनों को, हे प्रभु! तुमही सूर्य समान।।30।।

ॐ ह्रीं विस्मयनीयमूर्तये क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

शुभाशुभ प्रश्नदर्शक

प्राग्भार-सभृत-नभासि रजांसि रोषा-
दुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि।
छायापि तैस्तव न नाथ हता हताशो,
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा।।31।।

या लोकमूर्द्धवितता हि खलेन कोपा-
दुत्थापिता कमठपूर्वचरेण धूलिः।
आच्छादितां तनुरहो न तयापि यस्य,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।31।।

पूरव बैर विचार क्रोध करि, कमठ धूलि बहु बरसाई
कर न सका प्रभु तव तन मैला, हुआ मलिन खुद दुखदाई।।
कर करके उपसर्ग घनेरे, थकि कर फिर वह हार गया।
कर्मबन्ध का दुष्ट प्रपची, मुँह की खाकर भाग गया।।31।।

ॐ ह्रीं कमठोत्थापितधूल्युपद्रवजिताय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दुष्टता प्रतिरोधी

यद्गर्जदूर्जित-घनौघमदभ्र-भीमं-
भ्रश्यत्तडिन् मुसल-मांसल-घोरधारम्।
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तर-वारिदध्रे,
तेनैव तस्य जिन दुस्तर-वारिकृत्यम्।।32।।

नीरं विमुक्तमसुरेण सवज्रपातम्,
वर्षाभवं घनतरं यदुपद्रवाय।
तस्यासुरस्य वत दुःखदमेव जातम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।32।।

उमड़-घुमड़ का गर्जत बहुविध, तड़कत बिजली भयकारी।
बरसा अति घनघोर दैत्य ने, प्रभु के सिर पर कर डारी।।
प्रभु का कछु न बिगाड़ सकी वह, मूसल सी मोटी धारा।
स्वयं कमठ ने हठ धर्मी वश, निग्रह अपना कर डारा।।32।।

ॐ ह्रीं कमठकृत जलधारोपसर्ग निवारकाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

भूत पिशाचपीड़ा तथा शत्रुभयनाशक

ध्वस्तोर्ध्व-केश-विकृताकृति-मर्त्य-मुण्ड-
प्रालम्बभृद-भयदवक्त्र विनिर्यदग्निः।
प्रेतव्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः,
सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भव-दुःख-हेतुः।।33।।

पैशाचिको गण उपद्रव-भूरियुक्तो,
दैत्येन यं प्रतिनियोजित उद्धतेन।
तद्दैत्यकस्य पुनरुग्र-भयप्रदोऽभूत्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।33।।

कालरूप विकराल वक्ष विच, मृत मुण्डन की धरि माला।
अधिक भयावह जिनके मुख से, निकल रही अग्नि ज्वाला।।
अगणित प्रेत पिशाच असुर ने, तुम पर स्वामिन भेज दिये।
भव-भव के दुख हेतु क्रूर ने, कर्म अनेकों बाँध लिये।।33।।

ॐ ह्रीं कमठकृतपैशाचिकोपद्रव जयशीलाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

धर्मानन्दवर्धक

धन्यास्त एव भुवनाधिप! ये त्रिसध्य-
माराधयन्ति विधिवद्विधुतान्य-कृत्याः।
भक्त्योल्लसत्पुलक-पक्ष्मल-देह-देशा ,
पाद-द्वय तव विभो भुवि जन्मभाजः।।34।।

पादारविन्द युगलं प्रणमन्ति भक्त्या,
यस्य प्रशान्तमनसः किल धर्मवन्तः।
सद्भक्तयः परिहृताखिल-गेह-कार्या-
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।34।।

पुलकित वदन सुमन हर्षित हो, जो जन तज माया जंजाल।
त्रिभुवन पति के चरण कमल की, सेवा करते तीनों काल।।
तव प्रसाद ते भविजन सारे, लग जाते भव सागर पार।
मानव जीवन सफल बनाते, धन्य धन्य उनका अवतार।।34।।

ॐ ह्रीं धार्मिकवन्दिताय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मृगी उन्माद, अपस्मारविनाशक

अस्मिन्नपार भव-वारि-निधौ मुनीश!
मन्ये न मे श्रवण-गोचरतां गतोऽसि।
आकर्णिते तु तव गोत्र-पवित्र-मन्त्रे,
किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति।।35।।

यन्नाम नैव श्रुतमत्र जनेन येन,
स प्रायशो हि भववारिनिधौ निमग्नः।
श्रुत्वा गतः शिवपुरं बहवस्त्रिशुद्धया,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।35।।

इस असीम भव सागर में नित, भ्रमत अकथ दुख पायो।
तोऊ सु-यश तुम्हारो साँचो, नहिं कानों सुन पायो।।
प्रभु का नाम मन्त्र यदि सुनता, चित्त लगा करके भरपूर।
तो यह विपदा रूपी नागिन, पास न आती रहती दूर।।35।।

ॐ ह्रीं पवित्रनामधेयाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सर्ववशीकरण

जन्मान्तरेऽपि तव पाद-युगं न देव,
मन्ये मया महितमीहित-दान-दक्षम्।
तेनेह जन्मनि मुनीश पराभवानाम्,
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम्।।36।।

यत्पाद-पंकज मलं न हि येन पूतम्,
संपूजितं जगति संसरणान्तरेऽपि।
दुःखाशिनां भवति सोऽप्रचरः सदैव,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।36।।

पूरब भव मे तब चरनन की, मनवांछित फल की दातार।
की न कभी सेवा भावों से, मुझको हुआ आज निरधार।।
अतः रक जन मेरा करते, हास्य सहित अपमान अपार।
सेवक अपना मुझे बना लो, अब तो है प्रभु जगदाधार।।36।।

ॐ ह्रीं पूतपादाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सकलकष्ट निवारक

नूनं न मोह-तिमिरावृतलोचनेन,
पूर्वं विभो सकृदपि प्रविलोकितोऽसि।
मर्मा विभो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः,
प्रोद्यत्प्रबन्ध-गतयः कथमन्यथैते।।37।।

मोहान्धकार पटलावृत चक्षुषा यो,
नैवेक्षितो भुवि जवज्जवकूपगेन।
येनात्र तस्य मनुजत्वमल निरर्थम्,
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।37।।

दृढ़ निश्चय करि मोह तिमिर से, मुंदे मुंदे से ये लोचन।
देख सका ना उनसे तुमको, एक बार है दुख मोचन।।
दर्शन कर लेता गर पहले, तो जिसकी गति प्रबल अरोक।
मर्मच्छेदी महा अनर्थक, माना कभी न दुख के शोक।।37।।

ॐ ह्रीं दर्शनीयाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

असह्य कष्टनिवारक

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षतोऽपि,
नून न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या।
जातोऽस्मि तेन जन-बान्धव दुःखपात्रम्,
यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्या।।38।।

किं वा श्रुतोऽपि यदि येन सुपूजितोऽपि,
किं वीक्षितोऽपि हृद्भक्तिभराद्धृतो न।
यस्तस्य नैव फलदः खलु हीनभक्ते-
तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।38।।

देखा भी है पूजा भी है, नाम आपका श्रवण किया।
भक्ति भाव अरु श्रद्धा पूर्वक, किन्तु न तेरा ध्यान किया।।
इसीलिये तो दुखों का मैं, गेह बना हूँ निश्चित ही।
फले न किरिया बिना भाव के, है लोकोक्ति सुप्रचलित ही।।38।।

ॐ ह्रीं भक्तिहीनजनमाध्यस्थाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सर्व ज्वरशामक

त्वं नाथ! दुःखि-जन-वत्सल! हे शरण्य,
कारुण्य-पुण्य-वसते वशिनां वरेण्य।
भक्त्या नते मयि महेश! दयां विधाय,
दुःखाकुरोद्दलन-तत्परतां विधेहि।।39।।

वात्सल्यवान् जनन दुःख-कदर्थितेषु,
यः प्रत्यहं-नत-जनेषु दया समुद्रः।
सद्भक्ति भाव कलितेषु भृशं शरण्य-
तं पाश्र्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।39।।

दीन दुखी जीवों के रक्षक, हैं करुणा सागर प्रभुवर।
शरणागत के हे प्रति पालक, हे पुण्योत्पादका जिनवर।।
हे जिनेश! मैं भक्ति भाव वश, शिर धरता तुमरे पग पर।
दुःख मूल निर्मूल करो प्रभु, करुणा करके अब मुझ पर।।39।।

ॐ ह्रीं भक्तजनवत्सलाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

विषमज्वर विघातक

निःसंख्य-सार-शरणं शरणं शरण्य-
मासाद्य सादित-रिपु प्रथितावदानम्।
त्वत्पाद-पंकजमपि प्रणिधान-वन्ध्यो,
वन्ध्योऽस्मि चेद्भुवन पावन हा हतोऽस्मि।।40।।

भूयिष्ठ भाग्य सदनं मदनाग्नि नीरम्,
यत्पादतामरस युग्ममनल्प तेजः।
संपूज्य गच्छति जनः शिवतामनर्घ्यम्,
तं पार्श्वनाथ मनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।40।।

हे शरणागत के प्रति पालक, अशरण जन को एक शरण।
कर्म विजेता त्रिभुवन नेता, चारु-चन्द्रसम विमल चरण।।
तब पद पकज पा करके हे, प्रतिभाशाली बड़भागी।
कर न सका यदि ध्यान आपका, हूँ अवश्य तव हतभागी।।40।।

ॐ ह्रीं सौभाग्यदायकपदकमलयुगाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

अस्त्र शस्त्र विघातक

देवेन्द्र-वन्द्य विदिताखिल-वस्तुसार!
संसार-तारक! विभो भुवनाधिनाथ!
त्रायस्व देव करुणा-ह्रद मा पुनीहि,
सीदन्तमद्य भयद-व्यसनाम्बुशेः।।41।।

गीर्वाणनाथ नुत-पादपयोजयुग्म-
स्त्राता भवाम्बुनिधिमग्न शरीरभाजाम्।
यः सर्वलोक-परमार्थ-पदार्थवेदी,
तं पार्श्वनाथ मनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।41।।

अखिल वस्तु के जान लिये हैं, सर्वोत्तम जिसने सब सार।
हे जगतारक! हो जगनायक, दुखियों के हैं करुणासार।।
वन्दनीय हे दया सरोवर, दीन दुखी का हरनाभास।
महा भयंकर भव सागर से, रक्षा कर अब दो सुखदास।।41।।

ॐ ह्रीं सर्वपदार्थवेदिने क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

स्त्री संबंधि समस्त रोगशामक

यद्यस्ति नाथ भवदंघ्रि-सरोरुहाणाम्,
भक्तेः फलं किमपि सन्तत-सञ्चितायाः।
तन्मे त्वदेक-शरणस्य शरण्य! भूयाः,
स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि।।42।।

यत्पूर्वजन्मकृत-पुण्यवतां जनानाम्,
संभाव्यते भवभवेऽपि हि यस्य सेवा।
उन्मार्गवासितवतां ननु पापभाजाम्,
तं पार्श्वनाथ मनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।42।।

एकमात्र है शरण आपकी, ऐसा मै हूँ दीन दयाल।
पाऊँ फल यदि किंचित करके, चरणों की सेवा चिरकाल।।
तो हे तारनतरन नाथ, हे अशरण शरण मोक्षगामी।
बने रहे इस परभव में, बस मेरे आप सदा स्वामी।।42।।

ॐ ह्रीं पुण्यबहुजनसेव्याय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

बन्धन मोचक

इत्थं समाहित-धियो विधिवज्जिनेन्द्र!
सान्द्रोल्लसत्पुलक-कञ्चुकितांगभागाः।
त्वद्बिम्ब-निर्मल-मुखाम्बुज-बद्ध-लक्ष्या,
ये संस्तवं तव विभो रचयन्ति भव्याः।।43।।

यन्मूर्तिरम्यवदनाम्बुज-दत्त-नेत्रा,
ये मानवा स्तुति सुधारस-मापिबन्ति।
नूनं भवन्ति सततं मरणातिगास्ते,
तं पार्श्वनाथ मनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।43।।

है जिनेन्द्र जो एक निष्ठ तव, निरखत इकटक कमल-वदन।
भक्ति सहित सेवा से पुलकित, रोमाञ्चित है जिनका तन।।
अथवा रोमावलि के हो जो, पहिने हैं कमनीय वसन।
यों विधि पूर्वक स्वामिन तेरा, करते हैं जो अभिनदन।।43।।

ॐ ह्रीं जन्ममृत्युनिवारकाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

वैभव वर्द्धक

आर्या- जन नयन-कुमुदचन्द्र प्रभास्वराः स्वर्ग-संपदो भुक्त्वा।
ते विगलित-मल-निचया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते।।44।।

ये लोकनेत्र-कुमुदेन्दुनिभ प्रतुष्टा, सम्पूजयन्ति यमनन्त चतुष्टयाद्यम्।
ते मोक्षव्ययपदं ध्रुवमाप्नुवन्ति, तं पार्श्वनाथमनघं प्रयजे कुशाद्यैः।।44।।

जगद्रूपी कुमुद वर्ग के, विकसावन हारे राकेश।
भोग-भोग स्वर्गों के वैभव, अष्टकर्ममल कर निःशेष।।
स्वल्प काल में मुक्ति धाम की, पाते हैं वे दया विशेष।
जहाँ सौख्य साम्राज्य अमर है, आकुलता का नहीं प्रवेश।।44।।

ॐ ह्रीं कुमुदचन्द्रयतिसेवितपादाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्री पार्श्वनाथय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

पूर्णार्घ्य

उदक चन्दन तंदुल पुष्पकैः, चरु सुदीप सुधूप फलार्घ्यकैः।
धवल मंगल गानरवाकुले, जिनगृहे जिननाथ महंयजे।।

ॐ ह्रीं तृतीय वलयोपरि पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काशीदेशे वाराणसी पुरेशो, यो बालत्वे प्राप्त वैराग्यभावः।
देवेन्द्राद्यैः कीर्तितं तं जिनेन्द्रं, पूर्णार्घ्येण प्रार्चयेवार्मुखेन।।

ॐ ह्रीं सर्वगुण सम्पन्नाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य मंत्र

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्रूर-कमठोपद्रवजिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः। (इस मंत्र की 108 बार जाप्य करें)

समुच्चय जयमाला

शतमखनुतपादं शान्तकर्मारिचक्रम्, शमदमयमगेहं, शंकरं सिद्धकार्यम्।
सरसिज दलनेत्रं, सर्वलौकान्तिकार्च्यम्, सकलगुणनिधानं, संस्तवे पार्श्वदेवम्।।

भवजलनिधि पततामुत्तरणं, देवमनन्त गुणं जनशरणम्।
चिद्रूपं बहुगुणसमुदायं, उत्तमगुणगण हतभवपाशम्।।
रम्यारम्य गुणस्तवनीयं, कर्मबन्ध निर्बन्धमजेयम्।
दुष्टोपद्रव नाशन वीरं, सुध्येयं जितमन्मथशूरम्।।

गरिमाक्रोधमहानल-कुशद, हृदि मृग्यं महतामतिविशदम्।
कर्मदाहतीव्राग्नि-मतुल्यं, गतपरमात्मपदं गतशल्यम्।।
संसृतिविषहरणामृत कूपं, पदनतनाग-नरामर भूपम्।
तुगाशोक महीरुह-सरितं, उद्गमवृष्टियुतं सुरमहितम्।।

योजनमितदिव्यध्वनिनिनदं, सुरचामर-विज्य हतविपदम्।
पीठत्रय-नायकमघमथनं, हरितविभावलयं, गुणसदनम्।।
दानवारिदुन्दुभि-सद्ध्वानं, श्वेतातपवारण-गुणमानम्।
मणिहेमार्जुन-शालत्रितयं, पदनतभक्त-जनावनसुदयम्।।

पृष्ठलग्न-जनतारण-दक्षं, विस्मयनीयं हतमदकक्षम्।
हतकमठोत्थापित-बहुधूलि, जितमुसलोपम-जलधारालिम्।।
हतपैशाचिक विप्लवजालं, नतधर्मिष्ठजनं गुणमालम्।
पूतनामधेय शिवभाजं, वर पवित्र पादं जिनराजम्।।

दर्शनीयमपहत घनपापं, भक्तिहीन-भविमध्यमरूपम्।
भक्तिनम्रजन वत्सलवन्तं, भूरि भाग्य दायकमरिहन्तम्।।

लोकालोक-पदार्थविवेद्यं, पदनतसुकृति-जनैरभिवन्द्यम्।
जन्मजरा-मरणच्युत देद, कुमुदचन्द्र यतिकृत पदसेवम्।।

घत्ता- विश्वादिसेनान्वयव्योमतिग्मं सद्भव्य वारांनिधि धर्मचन्द्रम।
देवेन्द्रसत्कीर्तित पादयुग्मं, श्री पार्श्वनाथं प्रणमामि भक्त्या।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्रूरकमठोपद्रव-विजिताय श्रीपार्श्वनाथाय जयमालार्घ्यम्।

यः प्राग्विप्रभोऽनुद्वादशदिवि, स्वर्गी ततः खेचरः।
पश्चादच्युतकल्पजो निधिपतिः, ग्रैवैयके मध्यमे।।
इन्द्रोऽभूतत ईशतां शुभवच., आनन्द मानते।
गीर्वाणस्तत उग्रवशतिलक., पार्श्वेट् स वो रक्षतात्।।

इत्याशीर्वाद. परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जयमाला

तेइसवे तीर्थेश को, वन्दूँ मन-वच-काय।
गाऊँ जयमाला अबै, मन मे हर्ष बढ़ाय।।

पद्धरि छन्द

इक आतम का नित किया ध्यान, जीवाजीव का किया बखान।
प्रभु रत्नत्रय के हो धारक, तुम चतुर्गति के हो वारक।।
पण बन्ध हेतु को किया नाश, षट् द्रव्यों पर डाला प्रकाश।
तुम सप्त तत्त्व के हो उपदेशक, तुम अष्टकर्म के हो नाशक।।
तुम नव पदार्थ के हो ज्ञायक, दश धर्मों के हो तुम नायक।
ग्यारह प्रतिमा का दिया ज्ञान, बारह भावन का किया ध्यान।।
तेरह चारित्र को लिया धार, चौदह गुणथान जूं किये पार।
पण दश योगों को दिया टार, षोडश कारण है भाव सार।।
असजम के सतरह हैं भेद, अष्टादश दोष किये उछेद।
जीव समास उन्नीस बताई, तुम बीस प्ररूपण सुन लो भाई।।

इक्कीस औदारिक भाव जान, बाइस अभक्ष्य किये बखान।
तुम तो तेईसवें हो महेश, होते हैं चौबीसों जिनेश।।

होती कषाय पनबीस भेद, छब्बीस देशघाति उच्छेद।
सत्ताइस इंद्रिय विषय जान, अट्ठाईस गुण साधक महान्।।
उन्तीस अंक सब मनुष होय, सब भोग भूमि भी तीस जोय।
इकतीस प्रथम स्वर्ग पटल, हैं बत्तीसों भूपति अटल।।

तेंतीस दोष हैं आसादन, चौंतीसों अतिशय मनभावन।
पैंतीस वर्ण हैं णमोकार, छत्तीस गुण आचार्य सार।।
ग्यारह गुण में कहि मग सैंतीस, नरको मे पाद कहे अड़तीस।
उदीरन तेरम में उनतालीम, भवनालय के इन्द्र चालीस।।

इक्तालीस भेद हैं आराधन, बैयालिस उदय तीर्थंकर भन।
बन्ध तेतालीस ज्ञाता नहि, चवालिस द्वारा नर चौथे महि।।
पल्य के पैंतालीस अक्षर, छियालिस दोष विरहित ईश्वर।
किस तरह से गाऊँ गुणगान, मैं ज्ञानहीन तुम सुगुणवान।।

दोहा-अल्पबुद्धि से युक्त मै, करता तव गुणगान।
भक्ति का फल दो जिनेश, पाऊँ पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्रूर कमठोपद्रवजिताय श्री पाश्र्वनाथाय जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जैन परम्परा में व्रत और उपवास का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। गृहस्थ और साधु दोनों के लिए विभिन्न प्रकार के व्रतों के माध्यम से तपानुष्ठानों का पर्याप्त उल्लेख मिलता है। महापुराण और हरिवंशपुराण में अनेक व्रतों और उनकी विधियों का उल्लेख है। मूलतः व्रतों का उद्देश्य तपः साधना है।

मुनि प्रमाणसागर

कर्मदहन विधान

पं. टेकचंद्र कवि कृत

आडिल्ल- लोक-शिखर तनु छांडि, अमूरति ह्वे रह्यो,
चेतन ज्ञान-स्वभाव, ज्ञेयतें भिन्न भये।
लोकालोक सु काल, तीन सब विधि धनी,
जानी सो जिनदेव, जजों बहुथुति ठनी।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चाल जोगीरासा

अजर अखण्ड सदा अविनाशी, तीन लोक सिरताजा।
हैं सर्वज्ञ अनाकुल मूरति, तीन भुवन के राजा।।
ऐस सिद्ध सदा तिनके पद, पूजों भक्ति उपाई।
क्षीरोदधि-जल कनक झारिका निर्मल भरकरि लाई।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

वाततलय तनु वात तीसरो, तामें जिन थिति कीनी।
आवागमन न रह्यो भव भीतर, अपनी परिणति चीनी।।
ऐसे सिद्ध सदा तिनके पद, पूजों भक्ति उपाई।
बावन चंदन घसि निर्मल जल, अलि-पंकति सुखदाई।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जा तनुतें शिवथान पधारे, तातें कछुक घटाई।
है व्यंजन-परजाय ज्ञान-घन, दुख नहिं पइये भाई।।
ऐसे सिद्ध सदा तिनके पद, सिरधरि हाथ नवाऊँ।
अक्षततें पूजा तिन केरो, कर-कर धरि स्वर गाऊँ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

अष्टकरम-रज रंच न पइये, निर्मल अति अघहारी।
तिनके चरण-कमल प्रति, प्रतिदिन होवे धोक हमारी।।
सुरतरु-फूल महा गंधथानक, तिनके चरण चढ़ाऊँ।
ता फल नाशे मदन महादुठ, और कहा जस गाऊँ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने काम वाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

ज्योति सरूपी निज गुण-गर्भित, कर्म कलंक न पइये।
ताकी थुति हरि सुर से गावें, ता फल शिव-सुखलइये।।
ऐसे सिद्ध सदा तिनके पद, सुध नैवेद्य चढ़ाऊँ।
ताफल होय क्षुधा नहिं कबहूँ, थिर है जिनगुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोका-लोका पदारथ सब तिन, ज्ञान विषें झलकाये।
तिन जानन में खेद न उपजे, दर्पणसम समझाये।।
ऐसे सिद्ध सदा तिनके पद, दीपक मन में लाऊँ।
ता फल नाश अज्ञान तनो है, पूजन फेर न आऊँ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन निजभाव बनाये, शुक्लध्यान करि बह्नी।
अष्टकरम शुभ बनाई, हरष करि दहनी।।
ऐसे सिद्ध सदा तिनके पद, पूजों भक्ति उपाई।
ताके फल शिवपदवी लहिये, काल नान्त सुखदाई।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने अष्ट कर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम गति तिनको सुधवासी और थान नहिं जावें।
ऐसो सुख पायो तँह थिति करि, और ठाम नहिं जावें।।
ऐसे सिद्ध सदा तिनके पद पूजों भक्ति उपाई।
ताके फल शिवको फल लहिये, और कहा अधिकाई।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने मोक्ष फल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

अष्टागुणा तिनके मुख गाये, गुण अनन्त के धारी।
नाम लिये नित मगल होवे, तिन पद धोक हमारी।।
ऐसे सिद्ध सदा तिनके पद, पूजो भक्ति उपाई।
अष्ट कर्म ताते क्षय पावे, अष्ट गुणोत्सव थाई।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा- पूजा जिनकी करत ही, सिद्ध होंय सब काम।
तातें वसुविध द्रव्य ले, पूजों सब सिध-धाम।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्व० स्वाहा।

ज्ञानावरणकर्म विनाश पूजा

गीतिका छन्द

ज्ञानावरणी पञ्च विध है, ज्ञानगुण जियको हरयो।
तातें सुजिय बिन ज्ञान है, काल चिर चउ गति फिरयो।

ते ज्ञानवरनी घात निजगुन, ज्ञान कों निरमल कियो।
सो सिद्ध चेतन ज्ञान सुख पिंड, जन्म वन कों छेदियो।।1।।

ॐ ह्रीं पंचप्रकार-ज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तीन शत छब्बीस विध, मतिज्ञान है, के परनयो।
मतिज्ञानवरनी ज्ञानमति को, घात के जयपद लया।।
ते ज्ञानवरनी घाति निजगुन, ज्ञान को निरमल कियो।
सो सिद्ध चेतन ज्ञान-सुख पिंड, जन्म वन को छेदियो।।2।।

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशदधिकत्रिशतप्रकारमतिज्ञानावरणकर्म विनाशनाय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जो अर्थते जाने अथन्तिर, ज्ञान श्रुत से बरनयो।
सो अग पूरब दोयदिध श्रुत, ज्ञानवरणी सो जयो।।
ते ज्ञानवरनी घाति निजगुन, ज्ञान को निर्मल कियो।
सो सिद्ध चेतन ज्ञान-सुख पिड जन्म वन को छेदियो।।3।।

ॐ ह्रीं द्विप्रकार-श्रुतज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जे अवधि तीन प्रकार-देशा, सर्व परमा जानिये।
इन घाति है सो अवधिवरनी, अवधि त्रयविध हानिये।।
ते ज्ञानवरनी घाति निज गुन, ज्ञान को निर्मल कियो।
सो सिद्ध चेतन ज्ञान सुखपिंड जन्म वन कों छेदियो।।4।।

ॐ ह्रीं अवधिज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मनज्ञान ऋजु अरु विपुल दो विध, और के मन की लखे।
इमि घात मन पर जय सुवरनी, ज्ञान की घातक अखे।।

ते ज्ञानवरनी घाति निज गुन, ज्ञान को निर्मल कियो।
तो सिद्ध चेतन ज्ञान सुखपिंड, जन्म वन कों छेदियो।।5।।

ॐ ह्रीं मनःपर्ययज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

लोक सर्व त्रय काल की, पर्याय केवल मैं रही।
इस ज्ञानघातक वरन केवल, सर्वघाती वरनही।।
ते ज्ञानवरनी घाति निजगुन, ज्ञान कों निर्मल कियो।
सो सिद्ध चेतनज्ञान सुख पिंड, जन्म वन कों छेदियो।।6।।

ॐ ह्रीं केवलज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

वरनि पाचों ज्ञानमल धा, ज्ञान सब निज सुध करयो।
छांडि जड़ तन लखि अपावन, मूरती बिन तन धरयो।।
अब न है जामन मरन करते, ज्ञान अविचल तिन ठयो।
तू नमोकार शिरधारि पल-पल, मनुष भव हम फल लयो।।7।।

ॐ ह्रीं पंचप्रकार-ज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दर्शनावरण कर्म विनाश पूजा

आडिल्ल- नौ दर्शन की घात, करनहारी प्रकृति।
तिन घातें ते जियकी, अनन्त दर्शन शकति।।
दर्शन घातनहारी, तिन घाती सही।
ता सिध पद थुति धारि, नमूँ त्रिभुवन मही।।8।।

ॐ ह्रीं नव-प्रकार-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

चक्षु थकी अवोलकन, दर्शन-चखु कह्यो।
या दर्शन कों हने सु, चखुवरनी चह्यो।

दर्शन घातनहारी, तिन घाती सही।

ता सिध पद थुति धारि, नमूँ त्रिभुवन मही।।9।।

ॐ ह्रीं चक्षुदर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

चक्षु बिना भिन इन्द्री, मन तें जो लखे।

सो अचक्षु दृग जान, घाति वरनी अखे।।

दर्शन घातनहारी, तिन घाती सही।

ता सिध पद थुति धारि, नमूँ त्रिभुवन मही।।10।।

ॐ ह्रीं अचक्षुदर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

बिन इन्द्री जो लखे, अवधिदर्शन कह्यो।

अवधिदर्शनावरनी, ताको क्षय रह्यो।।

दर्शन घातनहारी, तिन घाती सही।

ता सिध पद थुति धारि, नमूँ त्रिभुवन मही।।11।।

ॐ ह्रीं अवधिदर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

लोकालोक निहार, दरश केवल कह्यो।

केवल दर्शनावरणी, यह गुन जय लह्यो।।

दर्शन घातनहारी, तिन घाती सही।

ता सिध पद थुति धारि, नमूँ त्रिभुवन मही।।12।।

ॐ ह्रीं केवलदर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

चाल-जोगीरासा

निद्रा अल्प सु होय जीव कों, हाँक दिये उठि आवे।

निद्रा नामक कर्म यही है, या वसि चेत न थावे।।

ऐसी निद्रा घाति आपनी, शक्ति सकल परकाशी।
ते सिध सुख-सागर में गर्भित, लोक शिखर में भाषी।।13।।

ॐ ह्रीं निद्राकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

निद्रा-निद्रा कर्म उदै जिय, शयन बहुत ही सुहावे।
अपनी शक्ति गमाय दर्श बल, मूरति जड़सी थावे।
ऐसी निद्रा घाति आपनी, शक्ति सकल परकाशी।
ते सिध सुख-सागर में गर्भित, लोक शिखर में भाषी।।14।।

ॐ ह्रीं निद्रानिद्राकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि०।

प्रचला कर्म उदय जब होवे, जीव चेत युत सोवे।
तुच्छ शोर थकी तत्क्षण ही, सुनकरि चेत सु होवे।
ऐसी निद्रा घाति आपनी, शक्ति सकल परकाशी।
ते सिध सुख-सागर में गर्भित, लोक शिखर में भाषी।।15।।

ॐ ह्रीं प्रचलाकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि०।

प्रचला-प्रचला होय उदय तव, नीर मुख अग हाले।
अर्ध मुदे वा अर्ध खुले चखु, जीव जोर नहिं चाले।।
ऐसी निद्रा घाति आपनी, शक्ति सकल परकाशी।
ते सिध सुख-सागर में गर्भित, लोक शिखर में भाषी।।16।।

ॐ ह्रीं पचला-प्रचला-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि०।

कर्मस्त्यानकगृद्धि उदय तें, जोर होय अधिकाई।
भूलै निजसुख काज करे बहु, ज्ञान न रंच रहाई।।
ऐसी निद्रा घाति आपनी, शक्ति सकल परकाशी।
ते सिध सुख-सागर में गर्भित, लोक शिखर में भाषी।।17।।

ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धि-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि०।

दोहा- दर्शनावरणी नौ प्रकृति, घाति भये सिध सोय।
ते सब अर्घ्य चढायके, पूजों मन-मद खोय।।

ऐसी निद्रा घाति आपनी, शक्ति सकल परकाशी।
तेसिध सुख-सागर में गर्भित, लोक शिखर में भाषी।।18।।

ॐ ह्रीं नव-प्रकार-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वेदनीय कर्म विनाश पूजा

पद्धरि-यह कर्म वेदनी दोष भेद, यावस जिय सुखदुख लहै स्वमेव।
यह कर्मघात शिवथान पाय, ते सिद्ध नमें मन वच काय।19।

ॐ ह्रीं वेदनीय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

जब साता कर्म उदय जू होय, भोगी जिय सुख माने जुहोय।
यह कर्मघात शिवथान पाय, ते सिद्ध नमें मन वच काय।।20।।

ॐ ह्रीं सातावेदनीय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

जब उदय असाता होय आय, जियमोह-विवश थिरता न थाय।
यह कर्मघात शिवथान पाय, ते सिद्ध नमें मन वच काय।।21।।

ॐ ह्रीं असाता-वेदनीय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

ये कर्म मोह-बल स्वरूप फलदाय, बिन मोह विफल या उदय थाय।
सुख दुखदायक ये स्वांग धारि, येकर्मजयो ते जगत तारि।।22।।

ॐ ह्रीं वेदनीय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

मोहनीय कर्म विनाश पूजा

कड़वा छन्द- मोह ने जगत के जीव सम जय लिये,
जड़ विषें ममत्व, सबको करायो।।
जीव भी मोह वश आपदा भोग के,
नाच करि चार गति देश आयो।।
इंद्र धरणेन्द्र चक्री सबै मोह की,
शूरता देख भागे सबै ही।।

या मोह जाने जयो धन्य ते जन भये,

अर्घ्य ले चर्ण ताके, मैं जजें ही।।1।।

ॐ ह्रीं मोहनीय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

क्रोध वश आप उर दाहि पर कों दहे,

नांहि बहु काल लों संग छोरे।

रेख पाषाण की क्रोध अनन्तान को,

यो रहे धर्म तें नांहि जोरे।।

जीव सब जगत के जेर याने किये,

मोक्ष-मग रोकि मद आप छायो।

तास को घात शिवराह लीन्हीं सरल,

छांड़ि भव गैल सिध-थान धायो।।

ॐ ह्रीं अनंतानुबंधी-क्रोध-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

मान अनन्तान थम्भ भयो पाषाण ज्यो,

फूटि है नेक नही नमन ठाने।

या उदय जीव टेड़ो रहे अकड़ि के,

वाय की व्याधि ज्यों रीत आने।।जीव०।।

ॐ ह्रीं अनंतानुबंधी-मान-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

कर्म माया उर्द जीव पर कों छले,

बांसजड़ ज्यों हिये गांठिसारे।

वचन औछे कहे दोष सारे लहे,

याही वश जीव तर्कराहधारे।।

ॐ ह्रीं अनंतानुबंधी-माया-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।।

लोभ अनन्तान वश जीव निज प्राण दे,

नाहि पर भावसों प्रीत मोरे।

वरन मंजीठ ज्यों ठाम नाहीं तजे,

याही वश जीव भव मांहि दौरे।

ॐ ह्रीं अनंतानुबंधी-लोभ-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

चौपाई छन्द

या वश जीव अनन्ते काल, आपा पर को लया न ताल।

यह शिव-मारग घातनहार, याकों हरे सिद्ध निरधार।।

ॐ ह्रीं अनंतानुबंधी-कषाय-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

हल रेखावत क्रोध सुजान, अप्रत्याख्यान संयम की हान।

याको हने महाभट सोय, ते सिध पूजें सब सिध होय।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यान-क्रोध-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

मान अप्रत्याख्यान सुभाव, अस्थि थम्भवत याको दाव।

याको हने महाभट सोय, ते सिध पूजें सब सिध होय।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यान-मान-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

माया हिरण सींग-बल जिसी, सुधी होय ज्ञान में फँसी।

याकों हने महाभट सोय, ते सिध पूजें सब सिध होय।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यान-माया-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

लोभ कुसुभ-रंग समजान, याके उदय चाह परमान।

याकों हने महाभट सोय, ते सिध पूजें सब सिध होय।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यान-लोभ-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

आडिल्ल-ये चारों भट जान अप्रत्याखान के,

हनि करें अणव्रत्ततनी दुख थान के ।

याकों हने सिध भये लोक मंगल लयो,

तिनकों अर्घ्य चढ़ाय जजों भव धनि भयों।।

याकों हने महाभट सोय, ते सिध पूजें सब सिध होय।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यान-कषाय-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

बेसरी- प्रत्याख्यान रेख-रज जानों, क्रोध करे मुनिपद को हानो।
याकों धाते सो शिव पावे, लोक पूजा सिधनाम कहावे।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यान-क्रोध-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

काष्ठ थम्भवत नरमी जामें, प्रत्याख्यान मान बल जामें।
याकों घाते सो शिव पावे, लोकपूज जियनाम कहावे।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यान-माया-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

प्रत्याख्यान लोभ के सरसो, ताके उदयजीव अघ करिसो।
याकों घाते सो शिव पावे लोकपूज सिध नाम कहावे।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यान-लोभ-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

दोहा- चौ भट प्रत्याख्यान के , इन तिथि सब व्रत हानि।
इनको क्षयकरि सिध भये, ते पूजों अघ भानि।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यान-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

पद्धरि- सज्वलन-क्रोध जल-रेख जोय, याके बल केवलगम्य होय।
मुनिहु पै जार करें सुजान, याको हित सिध पायो स्वथान।।

ॐ ह्रीं संज्वलन-क्रोध-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

सज्वलन मान थंभ वेत्र जोय, बड़पद को घाते मन्द होय।
मुनि से पद यातें जेर जानि, याको हति सिध पायो स्वथान।।

ॐ ह्रीं संज्वलन-मान-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

माया संज्वलन वृषसींग जोय, मुनिवर में बैठा दीन होय।
शिव के मारग नहिं देय जान, याकों हति सिध पायो स्वथान।।

ॐ ह्रीं संज्जवलन-माया-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि।

रंग पतंग जे संज्वलन लोभ, जिन पाड़यो शिवमग माहिं छोभ।
ताको दल निर्जरैं नाहिं जान याकों हति सिध पायो स्वथान।।

ॐ ह्रीं संज्जवलन-लोभ-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि।

ये संज्वलन भट चार जोय, जिन बिन इन जय पावे न कोय।
ये यथाख्यात मग-हरणवान, इनको हत सिध पायो स्वथान।

ॐ ह्रीं संज्वलन-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

हास्य उदय उर हास्य होय, सुन भाई रे।
संजम को परिहार, चेत मन भाई रे।
थाको घाति सु शिव गये, सुन भाई रे।
सिद्ध जजों भवतार, चेत मन भाई रे।।22।।

ॐ ह्रीं हास्य-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

रति प्रकृति के जोर सों सुन भाई रे।
पुद्गल सदा सुहाय, चेत मन भाई रे।
थाकों घाति जू शिव गये सुन भाई रे।
ते सिध सेऊँ भाय चेत मन भाई रे।।23।।

ॐ ह्रीं रति-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अरति कर्म के जोर सो सुन भाई रे।
अरति वस्तु सों होय, चेत मन भाई रे।
याको हनि शिव थल गये, सुन भाई रे।
ते सिध-थुति सिध होय, चेत मन भाई रे।।24।।

ॐ ह्रीं अरति-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शोक कर्म जब बल करे, सुन भाई रे।
परिणति शोक कराय, चेत मन भाई रे।
याकों घाति जु सिध भये, सुन भाई रे।
पूजों सो चित ल्याय, चेत मन भाई रे।।25।।

ॐ ह्रीं शोक-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भय कर्म उदय जब होय, सुन भाई रे।
तब जिय उर कम्पाय, चेत मन भाई रे।

याकों घाति सु शिव गये सुन भाई रे।
पूजों सो चित ल्याय, चेत मन भाई रे।।26।।

ॐ ह्रीं भय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कर्म जुगुप्सा बल उदय, सुन भाई रे।
पर लखि लहें गिलानि, चेत मन भाई रे।
ताकों तिन घत्यो सही सुन भाई रे।
पूजों सो चित ल्याय, चेत मन भाई रे।।27।।

ॐ ह्रीं जुगुप्सा-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

पुरुष वेद जब बल करे, सुन भाई रे।
होय नारि उर चाह, चेत मन भाई रे।
या हनि तिन शिवपद लह्यो, सुन भाई रे।
पूजों सो शिवनाथ, चेत मन भाई रे।।28।।

ॐ ह्रीं पुरुष-वेद-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वेद जु स्त्री के उदय, सुन भाई रे।
पुरुष चाह उर होय, चेत मन भाई रे।
याकों हनि जे शिव गये सुन भाई रे।
ते पूजो सिध जोय, चेत मन भाई रे।

ॐ ह्रीं स्त्री-वेद-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वेद नपुंसक के उदय, सुन भाई रे।
नर तिय जुगपत भाय, चेत मन भाई रे।
ताकों हर जो शिव गये सुन-भाई रे।
पूजों सो सिध आय, चेत मन भाई रे।

ॐ ह्रीं नपुंसक-वेद-कर्म रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि।

ये नव कर्म हास्यादि, हैं सुन भाई रे।
शिवगम रोकनहार, चेत मन भाई रे।

इन हर जे शिव-थल गये, सुन भाई रे।

अर्घ्य जजों सिध सार, चेत मन भाई रे।।31।।

ॐ ह्रीं हास्यादिकनवनो-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

आडिल्ल

मिथ्या-वश पर आप, एक कर जानिया,

चौगति धरि-धरि स्वांग, आप करि मानिया।

याके उदय अज्ञान, मोक्ष-बांछा नहीं,

ताको हत सिध भये, अर्घ्य अरपों सही।।32।।

ॐ ह्रीं मिथ्यात्व-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

(जोगी रासा छन्द)

मिश्र मिथ्यात्व उदय जियके उर द्विविध स्वांग सो होवे।

नाहिं यथावत सम्यक् जाके, नाहिं मिथ्यात्व सु जोवे।।

या वश जीव अभय नहिं होवे, नाहिं मोक्ष पद पावे।

याकों घाते सो शिव परने, ताको अर्घ्य चढ़ावे।।33।।

ॐ ह्रीं मिथ्यात्व-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

सम्यक्परकति कर्म उदय तै, क्षय-उपशम दृढ़ हट्टों हो।

देव-धर्म-गुरु में अपनायत, वृष जिन सुखदा सो हो।

शातिनाथ जिन शांति करत हैं, ऐसी भांति विचारें।

याको घात करै सो सिध हैं, सो ही शरण हमारे।।34।।

ॐ ह्रीं सम्यक्प्रकृतिमिथ्यात्व-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

दर्शन मोह तनी तिथी कोड़ा, कोड़ी सत्तर होई।

चारितमोह तनै वश संयम, धार सके नहिं कोई।

यो ही मोह महाभट या वश जीव जगत को वासी।

याकों घाति गये शिव-थानक, ते पूजों श्रुति भाषी।।35।।

ॐ ह्रीं दर्शनमोहनीय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

आयु कर्म विनाश पूजा

गीता-आयु कर्म वशाय आतम, खोड़ ज्यों तन में रहे।
नर-देव-नारक-पशु की थिति, भोग के वपुकों जहे।।
आयु पूरी खिरक नाहिं तन, भोग सुख-दुख बावरे।
यह आयु कर्म हर गये शिवपुर, तें जजों करि चाव रे।।

ॐ ह्रीं आयुष्कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देव आयु उदय तब तन, देव मे थिति जिय करे।
थिति भये पूरी एकपल तिस, ठाम नहि थिरता धरे।।
करि है उपाय अनेक विधि सो लगे नाही दाव रे।
यह आयु कर्म हर गये शिवपुर, ते जजों कर चाव रे।।

ॐ ह्रीं देवायुष्कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मनुष आयु वशाय आतम, तन विषें सुख दुख भरें।
पूरी भये तिथि एक छिन फिर, नही तहॉ धीरज धरे।
रैनदिन वर्षाऽरु गर्मी, शीत नांहि लगाव रे।।
यह आयु कर्म हर गये शिवपुर, तें जजों कर चाव रे।।

ॐ ह्रीं मनुष्यायुष्कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

आयु तिर्यक कर्म के वश, जीव पशु तन में बँध्यो।
पंच थावर विकलत्रय, पंचन्द्रिय द्वय विधि हो सँध्यों।।
लहे दुख बहु शीत गरमी, भगन नाहिं उपाव रे।
यह आयु कर्म हर गये शिवपुर, तें जजों कर चाव रे।।

ॐ ह्रीं तिर्यगायुष्कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

पाप परणति ठान नरक की, आयुवश आतम परयो।
दुख सहे छेदन-भेदनादिक, तड़न-ताडन में फिरयो।।
नहिं कोई एक उपाय दीखे, आयुवश जहँ जाव रे।
यह आयु कर्म हर गये शिवपुर, तें जजों कर चाव रे।।

ॐ ह्रीं नरकायुष्कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

यों कर्म चारों आयु हर विन, काय त्रिभुनपति भये।
तनुवात में तब पैढ़ि तिष्ठे, काय धरने तें गये।।
ऐसे अनन्तानन्त सिध इक, एकसिध में राज हैं।
पूजों अरघ धरि हरष उरमें, सिद्धि के फल काज हैं।।

ॐ ह्रीं आयुष्कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नाम कर्म विनाश पूजा

चौपाई-नव्वे तीन नाम भट जोय, या वश जीव स्वांग बहु होय।
याको हतै बिना शिवनाहिं, हत्योनाम ते सिद्ध कहांहि।।

ॐ ह्रीं त्रिनवति-नाम-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

करड़ी परकृति जब बल करे, जीव तबै तन काठो धरै।
याकोहरि शिवथानक लह्यो, तिनकों अर्घ्य जजों नितठयो।।

ॐ ह्रीं कठोर-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नरम कर्म जब ही बल करें, तब जिय काया मृदुता धरें।
यामें वसि जिय सुखदुखपाय, याकों हरे सिद्धथल जाय।।

ॐ ह्रीं मृदु-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

उष्ण कर्म-वश आतम भयो, तबतन उष्ण रूपता लयो।
यामें वसि जिय सुखदुखपाय, याकों हरे सिद्धथल जाय।।

ॐ ह्रीं उष्ण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जाके शीत करम बल होय, शीत शरीर लहे जिय सोय।
याकों हते बिना शिव नाहि, हत्यो नाम ते सिद्ध काहांहि।।

ॐ ह्रीं शीत-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

हलको तन जाके है सही, हलकी प्रकृति उदै तिन लही।
याकों हते बिना शिव नाहिं, हत्यो नाम ते सिद्ध कहांहि।।

ॐ ह्रीं लघु-कर्म-प्रकृति रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि।

भारी तन पावे जिय सोय, ताके भारी कर्मरस होय।
याकों हते बिना शिव नाहिं, हत्यो नाम ते सिद्ध कहांहि।।

ॐ ह्रीं गुरुत्व-प्रकृति-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

रूखा कर्म उदय जब होय, जीव धरे तन रूखो सोय।
याकों हते बिना शिव नाहिं, हत्यो नाम ते सिद्ध कहांहि।।

ॐ ह्रीं रुक्ष-प्रकृति-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

कर्म चीकनो जब रस देय, ताके उदय चिकन तन लेय।
याकों हते बिना शिव नाहिं, हत्यो नाम ते सिद्ध कहांहि।।

ॐ ह्रीं स्निग्ध-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा- खाटी प्रकृति उदय थकी, खाटो तन जिय पाय।
तार्को घाते शिव भये, पूजों अर्घ्य चढाय।।

ॐ ह्रीं आम्ल-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मिष्ठकर्म जब बल करे, जीव मधुर तन पाय।
तार्को घाते शिव भये, पूजों अर्घ्य चढ़ाय।।

ॐ ह्रीं मिष्ठ-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कटुक कर्म रस दे जबै, जीव कटुक तन पाय।
तार्को घाते शिव भये, पूजों अर्घ्य चढ़ाय।।

ॐ ह्रीं कटुक-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

उदय कषायल कर्म के, काय कषायल थाय।
तार्को हनि शिवथल गये, पूजौं अर्घ्य चढ़ाय।।

ॐ ह्रीं कषायल-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

काय तिक्त जिय जब धरे, तिक्तार्क रस थाय।
तार्को घाते सिध भये, पूजों अर्घ्य चढ़ाय।।

ॐ ह्रीं तिक्त-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सोरठा- लाल कर्म फल जोय, काय अरुण ताको बने।
ताकों घाते सोय, ते सिध पूजों अर्घ्य सों।।

ॐ ह्रीं अरुण-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

हरित कर्म फल जोय, काय हरित ताको बने।
ताकों घाते सोय, ते सिध पूजों अर्घ्य सों।।

ॐ ह्रीं हरित्कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्याम कर्मफल होय, जब जिय तन कालो लहे।
ताकों घाते सोय, ते सिध पूजों अर्घ्य सों।।

ॐ ह्रीं श्याम-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्वेत कर्म बल जोय, उज्ज्वल तन सब पाइये।
ताकों घाते सोय, ते सिध पूजों अर्घ्य सों।।

ॐ ह्रीं श्वेत-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पीतकाय तब होय, पीतकर्म जॅह बल करे।
ताकों घाते सोय, ते सिध पूजों अर्घ्य सो।।

ॐ ह्रीं पीत-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कर्म सुगन्ध उदै बने जो, तन के मॉंहि सुगन्ध।
ताकों हनि शिवथल गये जी,
काट कर्म दुखफंदजी-भाई, सिद्ध सबै सुखदाय।।

ॐ ह्रीं सुगंध-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दुर्गन्ध तन ताको बने जी, दुर्गन्ध कर्म बल होय।
ताकों हनि शिवथल गये जी,
मन वच पूजों सोय जी भाई, सिद्ध सबै सुखदाय।।

ॐ ह्रीं दुर्गन्ध-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अडिल्ल-अस्थि नसा नाराच, वज्र के जो लहे,
वज्रवृषभनाराच काय, ताकों कहे।

यह ही काय सो पाय, मगन हो के रहे,
इसे काटि सिध भये, जर्जे तिन अघ दहे।।

ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराचसंहनन-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

कीली अस्थि सु दो, वज्र कैसे लहे,
वज्रनाराच सु संहनन, ताकों श्रुत कहे।
यह ही काय सो पाय, मगन हो के रहे,
इसे काटि सिध भये, जर्जे तिन अघ दहे।।

ॐ ह्रीं वज्रनाराचसंहनन-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

वज्रमयी हो हाड़, कर्म ताके उदै,
बेडी अठ नाराच, वज्रवत हों जुदे।
यह ही काय सो पाय, मगन हो के रहे,
इसे काटि सिध भये, जर्जे तिन अघ दहे।।

ॐ ह्रीं नाराचसंहनन-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

कील नसे अरु हाड, वज्र के ना कहे,
अर्धकीलिका संधि, विषे दिढ़के रहे।
यह ही काय सो पाय, मगन होके रहे,
इसे काटि सिध भये, जर्जे तिन अघ दहे।।

ॐ ह्रीं अर्धनाराचसंहनन-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

कीली रहित जु हाड़, सन्धि ता तन विषें,
अस्थि तनों बहु गाढ़, परस्पर धुनि अखे।
यह ही काय सो पाय, मगन होके रहे,
इसे काटि सिध भये, जर्जे तिन अघ दहे।।

ॐ ह्रीं कील-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जुदे जुदे है हाड़, नसनित दृढ़ भये,
फाटिक तन तिन धार, रसी जिमि कसि दये।

यह ही काय सो पाय, मगन होके रहे,
इसे काटि सिध भये, जजें तिन अघ दहे।।

ॐ ह्रीं स्फटिक-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

चाल-जोगीरासा

आंगोपांग सु घाट सकल अँग, जैसो जिन-धुनि गायो।
सुन्दर काय सुहावे सबको, पुण्य-जोगते पायो।।
सो संस्थान समचतुर महाठग, तामें जीव लुभानो।
यो ठग जान हरयो धनि ते सिध, पूजों अरघ चढ़ानो।।

ॐ ह्रीं समचतुरस्रसंस्थान-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

ह्यां बैठ आतम महासुख धर, बन्ध की खबरें नहीं।
तब चेतकर हर कर्म या ठग, पहुंचि है शिव की मही।।

ॐ ह्रीं न्यग्रोधपरिमंडलनामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब उदै स्वभाविक कर्म ठाने, जीव ऐसे तन बंधें।
जो लहे ऊपर नसें दीरघ, हेठ को कानी सँधे।
ह्यां बैठ आतम महासुख धर, बन्ध की खबरें नहीं।
तब चेतकर हर कर्म या ठग, पहुंचि है शिव की मही।।

ॐ ह्रीं स्वातिनामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

जब कर्म कुब्जक देय निजरस, काय तब ऐसा लहे।
उदय पीठ उतंग जाके, गांठ बहुती तन रहे।।
ह्यां बैठ आतम महासुख धर, बन्ध की खबरें नहीं।
तब चेतकर हर कर्म या ठग, पहुंचि है शिव की मही।।

ॐ ह्रीं कुब्जकनामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

कर्म बामन उदै आतम, काय लघु पावे सही।
तिस माहिं आतम बैठि हरखे, कर्म वश सब बुधि ठही।

ह्यां बैठ आतम महासुख धर, बन्ध की खबरें नहीं।
तब चेतकर हर कर्म या ठग, पहुंचि है शिव की मही।।

ॐ ह्रीं बामनकृतिनामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

कर्म हुंडक तने वश जिय, विकट तन रुंड मुड बहे।
तिन देखि परको अरति उपजे, पापवश को ना चहे।।
ह्यां बैठ आतम महासुख धर, बन्ध की खबरें नहीं।
तब चेतकर हर कर्म या ठग, पहुचि है शिव की मही।।

ॐ ह्रीं हुंडक नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

बेसरी

देवतनी गति ताको कहिये, देवाकार धार शुभ रहिये।
ऐसी प्रकृति हरे शिव पाई, ते सिध पूजों अर्घ्य चढ़ाई।।

ॐ ह्रीं देवगति नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि।

मानुष तन धर जग विचरावे, सो ही गति मानुष की पावे।
ऐसी प्रकृति हरे शिव पाई, ते सिध पूजों अर्घ्य चढ़ाई।।

ॐ ह्रीं मानुषगति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

तिर्यक तन धरि भू विचरावे, सो तिर्यक गति नाम धरावे।
ऐसी प्रकृति हरे शिव पाई, ते सिध पूजो अर्घ्य चढ़ाई।।

ॐ ह्रीं तिर्यक-गति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

नरक विषे नारकि तन होवे, नर्क-गती को बन्धन जोवे।
ऐसी प्रकृति हरे शिव पाई, ते सिध पूजों अर्घ्य चढ़ाई।।

ॐ ह्रीं नरकगति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

चौपाई

सुरतन छांड़ि अन्य मैं आत, मार्ग विषें वह उदै करात।
सो सुपूरब जानो सही, ता हति लही शुद्धशिवमही।।

ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वीनामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

नरगति छांड़ि भिन्न तन पाय, अन्तर विषे सु उदै कराय।
सो मनुषानुपूर्वी सही, ता हति लही शुद्ध शिवमही।।

ॐ ह्रीं मनुष्यगत्यानुपूर्वी-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिर्यक्ता तज पर आन पाय, आवे राह उदै सो थाय।
सो तिर्यंचानुपूर्वी सही, ता हति लही शुद्ध शिवमही।।

ॐ ह्रीं तिर्यगत्यानुपूर्वी-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नारकगति तजि परगति होय, मग में वह प्रकृति बलजोय।
नरकानुपूर्वी जानो सही, ता हति लही शुद्ध शिवमही।।

ॐ ह्रीं नरकगत्यानुपूर्वी-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता-जा कर्म औदारीप्रकृति, पुद्गल प्रमाणों जो लहें।
तनपिंड में जिय आय निवसे, सो उदारिक तन कहे।।
या कर्म-वश नर पशु आये, जोर नाहिं वश राग के।
इस घाति पाई नारि शिवसी, सिध जजों बड़भाग के।।

ॐ ह्रीं औदारिक-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

वैक्रियक कर्म-वश यहै पुद्गल, तास में आतम रहे।
सो जान तन वैक्रियक तातें, देव नारकि जिस लहे।।
कोई पुण्य तें ले सुभग पुद्गल, पापतें दुखदा सही।
यह घाति कर्म वैक्रियक पहुँचे, जजों ते सिधकी मही।।

ॐ ह्रीं वैक्रियक-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

प्रकृति आहारक उदय वश, तथा पुद्गल परिणभे।
वह आहारक नाम पावे, श्वेत शुभ अति दमदमें।।
हो ऋद्धिधारी महामुनि के, षष्ठ गुणथानक सही।
तिन घाति शिवथल लयो ते धनि, जजों तिनकीसुध मही।।

ॐ ह्रीं आहारक-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

जानि तैजस पुद्गल को पिंड, कर्म तैजस बल लहे।
सो रहे सब जिय संग लगि के, मोक्ष में नाहीं रहे।।
जो लहे तैजस मुनि शुभाशुभ, दोय विधि सो रिधि कही।
वो छांडि सकल स्वस्थान पायो, पहुँचि हैं सिध की मही।।

ॐ ह्रीं तैजस-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

ज्ञान दर्शन वेदनीय अरु, मोह आयु जो नाम है।
फिर गोत्र अरु अंतराय आठों, कर्म पुद्गल धाम है।।
ये होय इकठे भयो तन जो, कारमाण बखानिये।
हति तास को शिवथान पायो, तेज सो थुति आनिये।।

ॐ ह्रीं कार्मण-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

आडिल्ल

हैं बँधान सरूप, पाच विध गाइये।
गारा ईंट दिवाल, विषें जिमि पाइये।।
ज्यों तन में पल हाड़, नसे बधन सही।
दे विधि हर सिध भये, जजो तिन सिध मही।।

ॐ ह्रीं पंचप्रकारबंधन-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा-औदारिक तन माहिं, तैसो ही बधन वने।
सो हर जिन शिव पाहिं, ते सिध पूजों अर्घ्य सों।

ॐ ह्रीं औदारिक-बंधन-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैक्रियक वपु माहिं, तैसी बन्धन होत है।
सो हर जिन शिव पाहिं, ते सिध पूजों अर्घ्य सों।

ॐ ह्रीं वैक्रियक-बंधन-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आहारक तन होय, तैसो बन्धन होत है।
सो हर शिव ले घोर, ते सिध पूजों अर्घ्य सों।

ॐ ह्रीं आहारक-बंधन-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तैजस होय शरीर, तैसो सो बन्धान ले।
सो हर शिव ले धीर, ते सिध पूजों अर्घ्य सों।।

ॐ ह्रीं तैजस-बंधन-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्माण तन पाय, तब तैसा बन्धान ले।
सो हर शिवथल जाय, ते सिध पूजों अर्घ्य सों।।

ॐ ह्रीं कार्मण-बंधन-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता- होय पंच संघात तन जिमि, भित्ति पर लेपन सही।
तिमि तन विषें चहुँ ओर लिपटी चामतें शुभसी वही।।
तन भवन में बहु धात गारो, लेप चाम संघात है।
तिस कर्म हर शिवथान पायो, ते जजों हरषात है।।

ॐ ह्रीं पञ्चजाति-संघात-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- औदारिक तन के विषें, तथा होय संघात।
ताको हर हो सिद्ध सो, तब शिवथानक पात।।

ॐ ह्रीं औदारिक-संघात-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैक्रियक तन जो लहे, होय तथा संघात।
ताकों हर हैं सिद्ध सो, तब शिवथानक पात।।

ॐ ह्रीं वैक्रियक-संघात-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आहारक तन संग में, होय तथा संघात।

ताकों हर हैं सिद्ध सो, तब शिवथानक पात।।

ॐ ह्रीं आहारक-संघात-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तैजस जाके हो वपू, लखो वही संघात।

ताको हर हैं सिद्ध सो तब शिवथानक पात।।

ॐ ह्रीं तैजस-संघात-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्माण तन सब जे, हो तैसो संघात।

ताको हर हैं सिद्ध सो तब शिवथानक पात।।

ॐ ह्रीं कार्मण-संघात-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चाल-वीर जिनेन्द्र की

जाति इकेन्द्री की लहे, तेतो ही होय ज्ञान।

ता द्वारे सुख-दुख लहे जी सो हर ले शिवथान-

जी भाई, धर्म बिना सुख नाहिं।।

ॐ ह्रीं एकेन्द्रियजाति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल-क्षय उपशम दो इन्द्रिय को तन पाय है।

कर्म दुइन्द्रिय नाम उदय तब थाय है।

ताही धारे सुख-दुख तेतो पाय जी।

याहि कर्म जो हरे सिद्धता थाय जी।।

ॐ ह्रीं द्वीन्द्रियजाति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेइन्द्रिय को क्षय उपशम जो जिय लहे।
जातें त्रीन्द्रिय नामकर्म तँह रस कहे।।
ताही धारे दुख सुख आतम पाय जी।
याहि कर्म जो हरे सिद्ध सी थाय जी।।

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियजाति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौ इन्द्रिय के उदय जीव चौ अख बने।
ज्ञान तितो ही होय अधिक बुधिको हने।।
या वश जीव असंख्याते भव में रहे।
याको हर सुध भये ताहि धुनि सिध कहे।।

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रय-जाति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्चेन्द्रिय वश जीव नरक नर सुर बने।
जाति पशु भी होय कर्म-वश बुधि हने।
यथाकर्म रस देय ज्ञान तैसो लहे।
याको हर सुध होय ताहि धुनि सिध कहे।।

ॐ ह्रीं पञ्चेन्द्रियजाति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता-

अंग आठ नितम्ब मस्तक, हाथ युग पद उर सही फिर पीठ मिल।
वसु जान तन में, बहु उपांग श्रुतियों कही।।
सो होय तीन शरीर माहीं, होय के पे ना कहे।
इन घाति के शिवथान पहुँचे, लोकत्रय मंगल ठहेह।।

ॐ ह्रीं अंगोपांग-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो गने औदारिक तन में, अंग उपंग सुहावते।
सो जान औदारिक अंगी-पागकर्मते पावने।
इस तने वश सुख मान निवस्यो, रोग की सुधबुध नहीं।
तिसघाति के शिवथान पहुचे, ते जजों मन वच ठही।।
ॐ ह्रीं औदारिकांगोपांग-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
वैक्रियक अंगोपांग कर्म के, उदै सेती सो लहे।
नर्क तन माहिं नहिं इष्ट पावे, देव के शुभसों रहे।
ये हरष और विषाद वश जिय, काल चिर इन वश रहे।
जे घाति तिनको गये शिवपुर, ते जजों तहँ थिर ठहे।।
ॐ ह्रीं वैक्रियिकांगोपांग-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
ऋद्धिबल यति लहे अहारक, तन महा हितदाय जी।
ताहँ होय अगोपाग सुखदा, कर्मवश सो पाय जी।।
सो आहार आगोपाग सुन्दर, पाय करि आगे बढ़े।
इस टारि धारि सुरूप अपनो, शुद्ध कर सिध-थल चढ़े।।
ॐ ह्रीं आंगोपांग-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

चौपाई

जो निज चाल सुभग उरवेय, ताको भली चाल रस देय।
यह भी भव में राखन हार, या हति सिद्ध भये भव पार।।
ॐ ह्रीं प्रशस्तगति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अशुभ चाल जो अपनी लह, करम अशुभ चाल रस लहे।
यह भी भव में राखन हार या हत सिद्ध भये भव पार।।
ॐ ह्रीं अप्रशस्तगति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पैसठ पिण्ड प्रकृति ये जान, चौथे अंग कहे भगवान।

इनको हत शिवथानक पात तिन सिध पाँय जजों हरषात।।

ॐ ह्रीं पंचषष्ठिपिण्ड-प्रकृति-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उदै अगुरुलघु कर्म सुजान, रहे जथारथ जिय तन ठान।

ताकों हत पहुँचे शिव जाय ते सिध जजों अर्घ्यतें भाय।।

ॐ ह्रीं अगुरुलघु-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वासोच्छ्वास जीव को लहे, ताकों स्वास कर्म रस कहे।

सो कर करि शिवथानक गये, ते सिध मन वच तन हम नये।

ॐ ह्रीं स्वासोछ्वासनामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उदय कर्म उपघात सु होय, ता तन ऐसे लक्षण होय।

जातें अपने तन का घात, याहि कर्म घातें शिव पात।।

ॐ ह्रीं उपघात-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परतन घातक अंग जु होय, सो परघात कर्म बल जोय।

याकों हत पाई शिवनारि, ते सिध जजों अरघ मद-हारि।।

ॐ ह्रीं परघात-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आतप कर्म उदै जब जोय, निज तन ज्योति गर्भ आति होय।

सुर्य-विमान उदै यह जान, याको हनि पायो शिवथान।।

ॐ ह्रीं आतप-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजतन शीत शीत दुति होय, सो उद्योत कर्मरस जोय।
शशि विमान आदिक बहु थान, याको हरे होय शिवजान।।

ॐ ह्रीं उद्योतनाम-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता-निर्माण-प्रकृति दोय बिध है, थान अरु परमान जी।
होय अंगोपांग निज थल, निर्माण सोई थान जी।।
फिर अंग-उपांग प्रमानतें है, सो प्रमान सु जानिये।
तजि दोय विध निर्माण कर्महि, लहें शिवथल ठानिये।।

ॐ ह्रीं निर्माण-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जहँ होय तीसरु चार अतिशय, समवशरण सुहावनों।
फिर पञ्चकल्याणादि मंगल, जगत को सुखदावनी।।
होय तीर्थंकर नाम प्रकृति, जहाँ यह विध थाय जी।
तजि तास का शिवथान पायो, ते जजों थुति लाय जी।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-जिय सम्पूरण पावे काय, कर्म उदै पर्यापत थाय।
याकों हति पायो शिव थान, ते सिध जजों अर्घ्य शुभ ठान।।

ॐ ह्रीं पर्याप्ति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन पर्याप्ति पूर्ति ना लहे, विन पर्याप्ति काय सु जहे।
याको हत पायो शिवथान, ते सिध जजों अरघ करि आन।।

ॐ ह्रीं अपर्याप्ति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक तन स्वामी इक जिय होय, प्रकृति प्रत्येक सुबलतें सोय।
ताकों हर पहुंचे शिवथान तिनकों अर्घ्य जजों हित ठान।।

ॐ ह्रीं प्रत्येक-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक तनके स्वामी बहु जीव, ते साधारण उदय सदीव।
ताकों हर पहुँचे शिवथान, ते सिध जजों अरघ शुभ ठान।।

ॐ ह्रीं साधारण-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकेन्द्रिय में जन्म लहाहिं, सो जिय थावर उदै सुपाहिं।
ताकों हर पायो ध्रुवथान, ते सिध जजों हरष उरआन।।

ॐ ह्रीं स्थावर-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परको रोके वा रुक जाय, बादरकर्म उदय जाहँ थाय।
ताकों हर पायो शिवथान, ते सिध जजों हरष उरआन।।

ॐ ह्रीं बादर-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वज्र थकी भी रुके न जीव, ताके सूक्षम कर्म सदीव।
ताकों नाशि गये शिवथान, ते सिध पूजों अरघ सुठान।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्म-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुस्वरकर्म उदै जब देय, जो निज शब्द भलो उर वेय।
ताकों नाशि भये सुध धीर, ते सिध जजों भक्तिकरि वीर।।

ॐ ह्रीं सुस्वर-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब निज शब्द भलो नहिं लगे, जब ही दुस्वर-कर्म-रस लहे।
ताकों नाशि भये सुध जीव, ते सिध जजों सुहरष सदीव।।

ॐ ह्रीं दुस्वर-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन में शुभ लच्छन सुन्दरो, ताको उदै कर्म शुभ खरो।
ताकों नाशि भये सुधधाम, ते सिध जजों हरष के काम।।

ॐ ह्रीं शुभ-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अशुभ चहत तन रूप न कोय, जाके अशुभ कर्म रस होय।
ताकों हानि पायो निर्वान, ते सिध पूजों जै जै ठान।।

ॐ ह्रीं अशुभ-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तधातु तनके थिर रहें, ताके कर्म प्रबल थिर कहें।
कर्मनाशि लीया सुधधाम, ते सिध जजों हरष के काम।।

ॐ ह्रीं स्थिर-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तधातु तन की थिर नाहिं, तबही अथिर कर्म-रस-ठाहिं।
यहू कर्म हर गये शिव सोय, ते सिध पूजों मन वच जोय।।

ॐ ह्रीं अस्थिर-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब आदेय कर्म रस देय, देहप्रभा-मय तब ही होय।
याकों नाशि गये निर्वान, ते सिध पूजों अर्घ्य महान।।

ॐ ह्रीं आदेय-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनादेय प्रकृति रस आय, तब जिय देहप्रभा न लहाय।
याको हति पायो निर्वान, ते सिध पूजों मन वच काय।।

ॐ ह्रीं अनादेय-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आडिल्ल-सुभग प्रकृति जब उदै, जीव के आय है।
तापर पर का नेह महा, दिखलाय है।।
याकों नाशि गये, शिवथानक में सही।
सो सिध पूजों भावसहित, वसु द्रव लही।।

ॐ ह्रीं सुभग-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपने प्रति अनुराग परका, जासतें होवे यही।
प्रकृति दुर्भग उदय ताके, तासर्से या हो सही।।
हो कर्म जाके उदय जसो, भाव भी तैसो बने।
यह नाशि के शिवथान पायो, ते जजों सुखदा बने।।

ॐ ह्रीं दुर्भग-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस कर्म से जस जगत माने, और जग शोभा कहे।
सो कर्म यश जाकै उदय है, तासतें महिमा लहे।।
यों जान खुश हो रहे तन में, बंध भेद न पाय है।
यह नाशि के शिवथान पायो, ते जजों सुखदाय है।।

ॐ ह्रीं यशःकीर्ति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यश नाहिं के है अयश को बल, तासतें शोभा नहीं।।
ये कर्म-प्रकृति पाप है सो, तासतें या विध बनीं।
ते सिद्ध पूजों भाव शुभकर, जासतें प्रकृति हनी।।

ॐ ह्रीं अयशःकीर्ति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाम कर्म के सुभट बहुविध, स्वांग अति धारें सही।
गिन तिरानव तिन्हें आगे, जीव इन वश चिर गही।।
यह नाम कर्म निवार पहुँचे, लोक शिखर-शिरोमनी।
ते पूजों सिद्ध अर्घ्य करिके, देहु शिव मो शिवधनी।।

ॐ ह्रीं त्र्यधिकनवति-नामकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोत्र कर्म विनाश पूजा

गोत्र करम है सूरजवशी, भूपतिसा रिझवारी।
ऊँच नीच ताके घर दौलत, सेवक सो अधिकारी।
ऊँच नीच करे बिन रीझे, नीच दशा कर डारे।
ऐसो कर्म घात शिव पहुँचे, ते सिध शरन हमारे।।

ॐ ह्रीं गोत्रकर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नीव गोत्र के उदय जीव यो, नारक पशु बन आवे।
मनुष विर्षे कुल वैश्य विप्र वा, क्षत्री कुल नहि पावे।।
या कर्म के वश जीव परे सब, तें ही नीच कहाये।
याकों हत शिवथान गये धनि, पूजो मन वचकाये।।

ॐ ह्रीं नीचगोत्र-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

उच्चगोत्र के ही बल सेती, सुर नर जीव कहावे।
नरक पशुगति नाहीं पावे, सुन्दर कुल उपजावे।।
वर्ण उच्च लहि मानुष स्याना, भव भव में भरमाई।
ऐसे कर्म नाश शिव पायो तिन युत पूजों भाई।।

ॐ ह्रीं उच्चगोत्र-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

ये गोत्र दोयविध उच्च नीच, इनसे जिय सुखदुख लहे खींच।
यो कर्मनाश शिवसौख्य पाय, तिनको नितप्रति पूजों सुभाय।

ॐ ह्रीं गोत्र-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अन्तराय कर्म विनाश पूजा

गीता-पंचविध अंतराय ताने, जीव वीरज हर लियो।
तब वीर्य बिन जिय निबल है कै, चारगति निजघर कियो।।
है महाभट अंतराय शिव-मग घाति के छलकों चहे।
ताकों सु हर शिवथान पाया, जजे ताकों शिव लहे।।

ॐ ह्रीं पंचप्रकारअंतराय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

जब है उदै अंतराय दान, सु जिय सो ना करे।
परभाव मोहित रहे निशदिन, त्यागबुधि सो ना धरे।।
इस कर्म के वश जीव है करि, रहे सकति गमाय जी।
ताकों सु हति शिव लयो जाकों, नमों मन वचकाय जी।।

ॐ ह्रीं दानान्तराय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

लाभ के अंतराय के वश, जीव लाभ सु ना लहे।
जो करे कष्ट अपाय सगरे, कर्मवश विरथा रहे।।
नहिं जोर याको चले इक छिन दीनसो जग में फिरे।
ते जजों सिद्ध जु अर्घ्य धरिके, कर्म को जिननें हरे।।

ॐ ह्रीं लाभांतराय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि.।

भोग के अंतराय के वश, भोग वस्तु जु ना मिले।
जो मिले तो नहिं भोग सक हैं, कर्म-वश नित ही बले।।
ते धन्य कर्म निवार ऐसे, भोग निज परनति कियो।
ते सिद्ध पूजों अर्घ्य सेती, त्याग के निज भौ लियो।।

ॐ ह्रीं भोगान्तराय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि।

रत्नभूषण नारि वस्तु सु, सुभग मन्दिर सोहना।
इत्यादि जो उपभोग के द्रव, मिलें शुभ मन मोहना।।
हो सके नाहीं भोग करि जिय, उदय कर्म उपभोग है।
जा गये याकों छांड़ि शिवपुर, जजों तहाँ नहिं रोग है।।

ॐ ह्रीं उपभोगान्तराय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

वीर्य कर्म अन्तराय जाके, उदय बल जिय ना लहे।
पुरुषार्थ जामें होय कुछ नहिं, दीनशक्ति सु जुत रहे।।
पहिं जोर यापे चले का को, महाबलधर कर्म है।
हर तासकों शिवथान पायो, जजों ते शुभ धर्म है।।

ॐ ह्रीं वीर्यान्तराय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि।

दोहा- पांचों ही अन्तराय से, आतम वीरज ढाय।
इनको हर शिवथल गये, सो सिध पूजों भाय।।

ॐ ह्रीं पञ्चप्रकारान्तराय-कर्म-रहिताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं

जयमाला

दोहा- कर्म सुभट यह जग जयो, ते धनि ये क्षय लाय।
यों विध बन्ध उदय सता, नाश सिद्ध थल पाय।।

बेसरी छन्द

सब प्रकृति इक सौ अड़ताली, बँधतनी शतबीस सँभाली।
शत बाईस उदय की भाई याविध क्षय करि के शिवपाई।।
जीव अनादि मिथ्यापुर माहीं, बन्ध उदय सत्ता-वशथाहीं।
जब कोई काल लब्धि ढिग आवे, तबयों कर्मनाश शिवपावे।।
जब कोई काललब्धि ढिग आवे, तबयों कर्मनाश शिवजावे।
जब जिय दूजे थानक होवे, तहँ सतकी प्रकृति नहिं खोवे।
बन्धविषें षोडश भट तीरे, उदै तने भट पंच मरोरे।।
तब जिय नशि तीजेपुर आवे, तो भी बहुभट साथ धकावे।
सत्ता के सब ही भट लारे, बंध तने पच्चीस निवारे।।
उदय तने नव शूरा खोवे, फिरि जिय सम्यग्दृष्टी होवे।
बहुतक शूर तहां संग आवें, सत्ता सुभट सबै ही पावें।।
बन्ध तने नहिं सभट खपावे, उदय तनों इक जोधा ढावे।
फेरि नाश पचमपुर आवे, सत्ता सों इस शूर खपावें।।

बँधविषें दस परकति तोरी, सत्रह उदय मध्य तें मोरी।
फेरि जीव मुनिपद को पायो, सत्ता को इक शूर खिपायो।।
चार शूर बंध के क्षय कीने, वसु जोधा सु उदय के छीने।
तो भी सुभट सँग बहु आये, तब चेतन सप्तमपुर धाये।।
सत्ता सुभट गैल हैं सारे, बन्ध तने जोधा षट् मारे।
उदय तने पच शूरा जीते, तो भी कर्म नसें नहिं बीते।।
सो जिय अष्टमपुर को आयो, सत्ता के वसुभट जयधायो।
बंधविषें की इक भटडार्‌यो, उदयचार भट को मदमार्‌यो।।
क्षायकश्रेणी सो भट जावे, उदय तने यहँ षट्भट ढावे।
सो उपशम ग्यारहमें खोवें, जो दुय भट इस रहजहाँ धोवे।।
फिर नवमें पुर आयो भाई, सत्ता शूर सबै सँग धाई।
शूर छत्तीस बन्ध के खोये, उदै तने षट् जोधा वोये।।
फिर दशवें पुर आयो शूरा, पीछे करम लगे दुख पूरा।
सत्ता शूर छत्तीस न आये, उदय तने षट् शूर नसाये।।
पञ्च संघ के जोधा मारे, यों करि दशवे पुरहि पधारे।
ह्यां सत्ता को इक भट तोयों, षोडश भटबँध को मदमार्यों।।
उदै तनो इक जोधा खोयो, तब आतम द्वादश पुर जोयो।
उलंघि ग्यार में गढ़ यहँ आयो, मोहतना सबकुल कहलायो।।
फिर यहँ तैं जिनपद में धाये, षोडश भट सत्ता के धाये।
उदै तने भट तीस मरोरे, बन्ध एक भट सो यहँ तोरे।।
तुछथिति कर शिवसहज विराजे, तीन लोक नायक फिर बाजे।
सत्ता सुभट पचासी खोये, उदय तने द्वादश भट वोये।
ऐसे आतम शिव जो आवे, या विध कर्मबन्ध को ढावे।
ले सुख काल अनन्ता राजे, ते नित पूजे भवि शिवकाजे।।

सिधथल सिद्ध अनन्ते जानो, इक में सिद्ध अनंते मानो।
सब ही समसुख हैं समज्ञानी, बिन मूरति चेतन भगवानी।।
जो सिध सुख सोजग में नाहीं, जगदुख जे नहिं सिद्धन ठाहिं।
उनके सुख को कति को गावे, जाने सो सबकर्म खिपावे।।
इनको सेये पद इन पावे, अधिक कहा फल मुखतें गावे।
यो फल सुनिहम मन ललचायो, तातें 'टेक' छाँड़ि शिरनायो।।

दोहा- धोय करम-रज शिव वरी, महा सुभटता लाय।
ते सिध सबकों सरण हैं, और कहा थुति गाय।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं अष्टकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- नमों सिद्ध सिध कारने, भक्ति महा मन लाय।
पूजें सो शिव-सुख लहे, और कहा अधिकाय।।

इत्याशीर्वादः

व्रत अनुष्ठान तो व्रती व्यक्ति तक ही सीमित रहता है लेकिन उद्यापन क्रिया अन्य लोगों को भी लाभान्वित करती है उससे धर्म की प्रभावना और समाज में धार्मिक वातावरण निर्मित होता है इसीलिए व्रतों के साथ में उद्यापन अनिवार्य रूप से करने का विधान आचार्यों ने किया है। इसलिए व्रती श्रावक को अभिषेक, बृहद शांतिधारा (प्रतिमा पर) एव पूजा विधान पूर्वक उद्यापन अपनी शक्त्यनुसार अवश्य करना चाहिए।

व्रत का उद्यापन व्रत का समापन नहीं है बल्कि उद्योतन है जिसका सबल जीवन भर मिलता रहता है जो समाधि में सहयोगी होता है। इस प्रकार व्रत पूर्ण होने के पश्चात् भी शक्त्यनुसार व्रतों को करते रहना चाहिए।शारीरिकक्षीणता होने पर भी व्रत के दिनों में पूजन एव जाप करते रहना चाहिए।

मुनि सुधासागर

गणधरवलय विधान

गणधर स्तवन शंभु

मैं नमूँ जिनों को जो अर्हत्, अवधीजिन मुनि को नमूँ नमूँ।
परमावधि जिन को नमूँ तथा, सर्वावधि जिन को नमूँ नमूँ।।
मैं नमूँ अनंतावधि जिन को, अरु कोष्ठबुद्धि युत साधु नमूँ।
मैं नमूँ बीजबुद्धियुत मुनि, पदानुसारियुत साधु नमूँ।।1।।
संभिन्नश्रोतृयुत साधु नमूँ, मैं स्वयंबुद्ध मुनिराज नमूँ।
प्रत्येक बुद्ध ऋषिराज नमूँ, पुनि बोधित बुद्ध मुनीश नमूँ।।
ऋजुमतिमनपर्यय साधु नमूँ, मैं विपुलमतीयुत साधु नमूँ।
मैं नमूँ अभिन्न सुदशपूर्वी, चौदशपूर्वी मुनिराज नमूँ।।2।।
अष्टांगमहाणिमित्तकुशली, नमूँ नमूँ विक्रियाऋद्धि प्राप्त।
विद्याधरऋषि को नमूँ नमूँ, मैं संयत चारणऋद्धि प्राप्त।।
मैं प्रज्ञाश्रमण मुनीश नमूँ, आकाशगामि मुनिराज नमूँ।
आशीविषयुत ऋषिराज नमूँ, दृष्टीविषयुत मुनिराज नमूँ।।3।।
मैं उग्रतपस्वी नमूं दीप्ततपि, नमूँ तप्ततपसाधु नमूँ।
मैं नमूँ महातपधारी को, अरु घोरतपोयुत साधु नमूँ।।
मैं नमूँ घोरगुणयुत साधु, मैं घोरपराक्रम साधु नमूँ।
मैं नमूँ घोरगुणब्रह्मचारि, आमौषधिप्राप्त मुनीश नमूँ।।4।।
क्ष्वेलौषधिप्राप्त मुनीश नमूँ, जल्लौषधि प्राप्त मुनीश नमूँ।
विप्रुष औषधियुत साधु नमूँ, सर्वौषधि प्राप्त मुनीश नमूँ।।
मैं नमूँ मनोबलि मुनिवर को, मैं वचनाबली ऋद्धीश नमूँ।
मैं कायबली मुनिनाथ नमूँ, मैं क्षीरस्रावी मुनिराज नमूँ।।5।।
मैं घृतस्रावी मुनिराज नमूँ, मैं मधुस्रावी मुनिराज नमूँ।
मैं अमृतस्रावी साधु नमूँ, अक्षीणमहानस साधु नमूँ।।

मैं वर्द्धमान ऋद्धीश नमूँ, मैं सिद्धायतन समस्त नमूँ।
मैं भगवान् महति महावीर, श्री वर्धमान बुद्धर्षि नमूँ।।6।।

शेर-जिसके निकट में धर्मपथ को प्राप्त किया हूँ।
उनके निकट ही विनयवृत्ति धार रहा हूँ।।
नित काय से वचन से और मन से उन्ही को।
पंचांग नमस्कार करूँ भक्ति भाव सों।।

अथ जिनगणधर-वलयय-ज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

गणधर वलय पूजा

चौबोला छद

आवो हम सब करें अर्चना, गणधर देव प्रधान की।
जिनवर दिव्यध्वनी को झेले, द्वादशाग श्रुतवान की।।
वदे गणधरम्।।

अडतालिम ऋद्धि को धारे, द्वादशगण के ईश्वर हैं।
यत्ररूप है मंत्ररूप है, तत्ररूप भी परिणत है।
ऐसे गुरु को वंदन करते, मिले राह कल्याण की।। आवो०।।

श्री गणधर गुरु की पूजा से, सर्व विघ्न संहार करें।
ज्चर अतिसार आदि रोगों का, क्षण भर मे परिहार करें।।
अह्वानम् कर जजते इनको, मिले ज्योति निज ज्ञान की।।आवो०।।

ॐ ह्रीं श्रीगणधरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।
ॐ ह्रीं श्रीगणधरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्रीगणधरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

गणधर की अर्चा, सकल विश्व में शाति सुधा बरसाये। गणधर०
अगणित नदियों का नीर पिया, नहिं अब तक प्यास बुझा पाये।

इस हेतु आपकी पूजा को, कंचन झारी में जल लाये।
गुरुपद में धारा करते ही..... सब मन प्यास बुझायें।। गणधर०
ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भव में रोग शोक संकट, मानस देहज दुख पाये हैं।।
इसलिये आपकी पूजा को, चंदन केशर घिस लाये हैं।।
गुरुपद में चर्चन करते ही... तन मन शीतल हो जाये।। गणधर०
ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

नश्वरसुख पाने की इच्छा, से दुःख अनंत उठाये हैं।
सरसों सम सुख नहिं मिला किंतु, भवदधि में गोते खाये हैं।।
इसलिये धौत सित अक्षत ले... हम पुंज चढ़ाने आये।। गणधर०
ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मकरध्वज ने तीनों जग में, निज शर से जन को वश्य किया।
प्रभु के चरणाम्बुज मे आकर, वह भी तो क्षण में वश्य हुआ।।
इसलिये तुम्हारे चरणों में... हम पुष्प चढ़ा सुख पायें।। गणधर०
ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

यह क्षुधा पिशाची पिंड लगी, हम कैसे छुटकारा पायें।
तुम परमानंदामृत पीते, इसलिये प्रभो! शरणे आये।।
नैवेद्य चढ़ाकर तुम सन्मुख...हम परम तृप्ति को पायें।। गणधर०
ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्यत्व अंधेरे में हमने, नहिं निज को किंचित् पहिचाना।
प्रभु तुम हो केवलज्ञान सूर्य, इसलिए उचित समझा आना।।
दीपक से तुम आरति करते... मन का अंधेर मिटायें।।
गणधर की अर्चा, सकल विश्व में शांति सुधा बरसाये।
ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शाश्वत जिनमंदिर में असख्य भी, धूप घड़ों में अग्नि जले।
नित सुरगण सुरभि धूप खेते, तब धूम्र दशों दिश में फैले।।
हम धूपायन में धूप खेय...निज के सब कर्म जलायें।। गणधर०
ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर अनार आम केला, फल अनंनास ले आये हैं।
वर मोक्ष महा फल पाने को, तुम निकट चढ़ाने आये हैं।।
फल से पूजा करके भगवन्! रत्नत्रय निधि पा जायें।। गणधर०
ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गधादिक वसु अर्घ्य लिये, उसमें नवरत्न मिलाये हैं।
निज भाव अपूर्व-अपूर्व मिले, यह आशा लेकर आये हैं।।
चरणों में अर्घ्य वढ़ा करके... नवनिद्धि ऋद्धि पा जायें।। गणधर०
ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्रग्विणी

नाथ पदकंज में शांतिधारा करूँ।
विश्व में शांति होवे यही कामना।।

आधि सब दूर हों चित्त में शांति हो।
भक्ति से प्राप्त हो शांति आत्यंतिकी।।

शांतये शांतिधारा

नाथ के गुण सुमन आज चुन के लिये।
विश्व में यश सुरभि फैलती है प्रभो!।।
पुष्प अंजलि समर्पण करूँ प्रेम से।
पुण्य संपत्ति पाऊँ सुयश वृद्धि हो।।

दिव्य पुष्पांजलिः

अथ प्रथम वलय पूजा

शंभु छन्द

गणधर के गुणों को गाते चलो, मनवांछित फल पा जाओगे।
भक्ति से अर्घ्य चढ़ाते चलो, धन सुख संपद पा जाओगे।।
कर्मों को जीते वे जिन हैं, आचार्य उपाध्याय साधू भी।
जिनकी मुनि की अर्चा कर लो, आतम सुख भी पा जाओगे।।
बहुविध अतिसार रोग हैजा, आदिक सब दोष विनश जाते।
सब कर्म शत्रु भी दूर भगें, सब ऋद्धि समृद्धी पाओगे।।
घर पुत्र पिता परिजन पुरजन, ये अपने नहीं पराये हैं।
भगवान को अपना मान चलो, जिनगुण संपद् पा जाओगे।।गणधर.

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं जिनेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।।1।।

जो अवधिज्ञान धरें मुनिवर, जिन बने मुक्ति को वर लेते।
वे आत्म रसास्वादी प्रभु हैं, उन नमत अवधि पा जाओगे।।
नाना विध के ज्वर रोग नशे, तन में मन में भी शांती हो।
ऋद्धीधारी गणधर पूजा, करते भवदधि तर जाओगे।।
माया के अंधेरे में प्राणी, नहिं ज्ञान किरण पा सकते हैं।
गुरुओं की शरण में आ जावो, फिर ज्ञान ज्योति पा जाओगे।गणधर

ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहिजिणाणं अवधिजिनेभ्यः अर्घ्यं नि.।।2।।

जो मुनि परमावधि पा लेते, उस ही भव से शिव प्राप्त करें।
तुम उनकी शरण में आ जावो, जिनधर्मामृत पा जाओगे।।
भक्तों के शिरोरोग सबही, नश जाते जिनवर भक्ती से।
परमावधि जिनकी भक्ति करो, परमावधि को पा जावोगे।।
नानाविधि के संक्लेश किये, ज्ञानावरणादि बंधा करते।
इन कर्मों से छुटकारा हो, ऐसी युक्ती पा जाओगे।।
गणधर के गुणों को गाते चलो, मनवांछित फल पा जाओगे।
भक्ति से अर्घ्य चढाते चलो, धन सुख सपद पा जाओगे।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहिजिणाणं परमावधिजिनेभ्यः अर्घ्यं.।3।
जो मुनि सर्वावधि ज्ञानी हैं, त्रिभुवन के मूर्त सभी जानें।
इनको भी मुक्ति इसी भव से, नमते युक्ती पा जाओगे।।
भक्तों की सर्व नेत्र व्याधी, गणधर भक्ती से नश जातीं।
सर्वावधि ज्ञान मिलेगा तुम्हें, निज भेदज्ञान पा जाओगे।।
इन मुनियों की श्रद्धा भक्ती, भवदधि से पार लगा देगी।
तुम इनकी शरण में आ जावो, फिर ज्ञान ऋद्धि पा जाओगे।।गणधर.
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहिजिणाणं सर्वावधिजिनेभ्यः अर्घ्यं.।4।
जिनकी अवधि की अत नहीं, वे ही अनंत अवधी मानें।
ये केवलज्ञानी ऋषि होते, इनसे निजरश्मी पाओगे।
गणधर भक्ती से नानाविध, भी कर्ण रोग नश जाते हैं।
इन्द्रिय विषयों को तजते ही, निज ज्ञान अतीन्द्रिय पाओगे।
सब जन में केवलज्ञान भरा, यह कर्मावरण उसे ढँकता।
कैसे विनाश हो कर्मों का, भक्ति से शक्ती पाओगे। गणधर...
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहिजिणाणं अनंतावधिजिनेभ्यः अर्घ्यं।5।
जैसे कोठे में धान्य भरें, सब पृथक् पृथक् रह सकते हैं।
वैसे ही कोष्ठबुद्धि मुनि को, नमते बुद्धि पा जावोगे।।

नाना कुशूल गुल्मादि रोग, सब उदर रोग नश जाते हैं।
जिन कोष्ठ बुद्धि की पूजा से, मानस शांती पा जाओगे।।
मति ज्ञानावरण क्षयोपशम से, बुद्धि में अतिशय आ जाता।
तुम इन मुनियों की भक्ति करो, धारणा शक्ति पा जाओगे।।गणधर.

ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठबुद्धीणं कोष्ठबुद्धिऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।

ज्यों बीज से खेत फलें कोसों, त्यों ज्ञान बढ़े जिन मुनियो का।
उन बीज बुद्धि ऋषि को पूजों, तुम ज्ञान किरण पा जाओगे।।
हिचकी व श्वास संग्रहणि आदि, नाना विध रोग विनश जाते।
जिन बीजबुद्धि की पूजा से, तुम पूर्ण स्वस्थ्य हो जाओगे।।
आत्मा में ज्ञान अनंत भरा, कर्मों से इसको क्षीण किया।
गुरुभक्ति से इसे बढ़ाकर तुम, आकाश को भी छू जाआगे।।गणधर.

ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धिणं बीजबुद्धिऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।7।

जो एक मात्र पद पढ़ते ही, संपूर्ण ग्रन्थ का अर्थ करे।
यह पदानुसारी बुद्धि ऋद्धि, जजते इसको पा जाओगे।।
सब जन के बैर परस्पर के, गणधर पूजा से दूर भगें।
आपस में परम प्रीति होगी, त्रैलोक्य प्रेम पा जाओगे।।
सब पाठ याद कर कर भूलें, धारणावरण स्मृति हरता।
ऋषियों की पदरज शिर पे धरो, स्मरण शक्ति पा जाओगे।। गणधर

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पादाणुसारीणं पदानुसारिणी-बुद्धिऋद्धि-संपन्नेभ्यः गणधरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

दोहा- जिन से पदानुसारि तक, ऋद्धिप्राप्त गणनाथ।
पूर्ण अर्घ से पूजहूँ, नमूं नमाकर माथ।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं प्रभृति पदानुसारिणी-बुद्धिऋद्धि-संपन्नेभ्यः गणधरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

अथ द्वितीय वलय पूजा

शंभु-आत्म ज्योति, जय आत्मज्योति, मम हृदय विराजो-2।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।।
हो नगर नगर में जिनभक्ति, सारे जग में शुभ मंगल हो।। हम..
श्रोत्रेन्द्रिय के उत्कृष्ट क्षेत्र, के बाहर का भी जो सुन लें।
संख्यातों योजन तक मानव, पशु के सब शब्द समझ भी लें।।
संभिन्न श्रोतृबुद्धी मुनि को, वंदन करले मन उज्ज्वल हो।। हम...
जो परम तपस्या करते हैं, वे ही ऐसी ऋद्धि पाते।
इनसे जन-जन का हित करके, वे मुक्ति बल्लभा पा जाते।।
इन मुनियों की पूजा करते, मेरा जीवन भी उज्ज्वल हो। हम...
मानव के खासी श्वास आदि, नाना रोगों की शांती हो।
सब पीड़ायें भी तत्क्षण ही, नश जावें यदि जिन भक्ती हो।।
ऐसे गणधर गुरु को वंदन, सब विघ्न नशें सुख अविचल हो।। हम.
ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिण्णसोदाराणं संभिन्न-श्रोतृत्वऋद्धि संपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।
जो जन गुरु के उपदेश बिना, स्वयमेव बोध को पाते हैं।
वे स्वयंबुद्ध ऋद्धि धरते, भक्तों की बुद्धि बढ़ाते हैं।।
इन मुनियों को वदन करते, मेरा मन अतिशय उज्ज्वल हो।।हम..
यह तन नाना रोगों का घर, नश्वर है घृणित अपावन है।
इन तन से संयम धारण कर, मुनि बनते तरण व तारण हैं।।
ऐसे मुनियों की पूजा कर, मेरा जीवन भी उज्ज्वल हो।। हम...
जो कविता अरु वादित्व शक्ति, अतिशायी पाकर भी निस्पृह।
जिन धर्म प्रभावन करें सतत्, निजमुक्तिरमा में भी सस्पृह।।
ऐसे गणधरगुरु हो वंदत, मेरा मन निज में निश्चल हो।। हम...
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धाणं स्वयंबुद्धत्वऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।।10।

जो उल्का पतन आदि लख कर, वैराग्य लिये संयम धारें।
ऐसे मुनि ही प्रत्येक बुद्ध, होकर अगणित जन को तारें।।
इन मुनियों की पूजा करते, भक्ती ध्वनि का कोलाहल हो। हम...
जो मुनी बहुत विध तप तपते, वे मुक्ति राज्य को पा लेते।
ऐसे मुनि के चरणोदक से, जन मस्तक पावन कर लेते।।
इन गुरु की पूजा करने से, मेरा जीवन भी उज्ज्वल हो। हम...
परवादी मिथ्या विद्या के, मद से जिनधर्म विरोधी हों।
शास्त्रार्थ कुशल परमत भेदी, जिनधर्म प्रभावक बुद्धी हो।।
ऐसे गणधर गुरु स्वयं बुद्ध, इन वंदन से सुख अविचल हो। हम..
ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धाणं प्रत्येकबुद्धऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।11।
जो गुरुओं का उपदेश सुने, बोधित हो रत्नत्रय धारें।
अट्ठाइस मूलगुणों से युत, वे साधू भव्यों को तारें।।
इन गुरुओं की पूजा करते, मिल जावे पूजा का फल हो। हम...
जिनकी भक्ती से चोर लुटेरों, के भय स्वयं विनश जाते।
जो हित मित भाषा समिति धरें, सब जन को तर्पित कर पाते।।
ऐसे गणधर गुरु को वंदत, मेरा मन अतिशय निश्छल हो।। हम..
यह मोहनीय है महाशत्रु, सब कर्मों का यह राजा है।
इसका दर्शन मोहनीय भेद, नशते सम्यक्त्व प्रकाशा है।।
क्षायिक सम्यक्त्व मिले मुझको, मेरा जीवन अति उज्ज्वल हो।। हम.
ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धाणं बोधितबुद्धऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।12।
मन वच तन से अति सरल मनोगत, सभी वस्तु को जो जानें।
वे ऋजुमति मन पर्ययज्ञानी, मूर्तिक पदार्थ को ही जानें।।
उन मुनियों की पूजा करते, सब जन मन में भी हलचल हो। हम.
सब जन को शांति करें गणधर, इस ऋजुऋद्धी को पाकर के।
सब बैर विरोध तजे तत्क्षण, इन गुरु की चरण शरण आके।।
सब ज्ञान स्वयं ही प्रगटित हों, निज आत्मा में मन निश्चल हो।।हम

प्रथमानुयोग करणानुयोग, चरणानुयोग पढ़ते पढ़ते।
द्रव्यानुयोग के पात्र बने, जिनवाणी को पढ़ते पढ़ते।।
इन ऋषियों को वंदन करते, मेरा जीवन भी उज्ज्वल हो।।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजुमदीणं ऋजुमतिऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं.13।
जो जन के सरल कुटिल मन गत, सपूर्ण मूर्त वस्तू जानें।
वे विपुलमती मनपर्यय मुनि, इस भव से सकल कर्म हानें।।
ऐसे सिद्धों की पूजा कर, भक्तों का मन अति निर्मल हो। हम..
जिनकी भक्ती से बहुश्रुत ज्ञान, प्रगट हो परमानद मिले।
जिनके वन्दन से ज्ञान सूर्य, प्रगटे निज हृदय सरोज खिले।।
ऐसे गणधर गुरु को वदत, मेरा मन अतिशय निर्मल हो।। हम..
जो पॉच महाव्रत पाँच समिति, तीनों गुप्ती को धरते है।
वे नरतन को पावन करके, निज आत्मनिधी को वरते है।।
इन मुनियों को शत शत वंदन, मेरा जीवन भी उज्ज्वल हो।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं विपुलमतिऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।14।
ग्यारह अगों दशपूर्वों को, पढ़कर दशपूर्वी मुनि इनसे।
जब दशवां पूर्व पढ़े तब ही, विद्यादेवी के आने से।।
जो चारित से विचलित नहिं हों, इन नमते आतम निर्मल हो।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।।
हो नगर नगर में जिनभक्ति, सारे जग में शुभ मगल हो।।
इन गुरुओं की भक्ती करते, संपूर्ण शास्त्र का ज्ञान मिले।
व्रत शील पूर्ण हो जाते हैं, इन जजते ज्ञान प्रभात खिले।।
ऐसे गणधर की पूजा कर, मेरा मन निज में निश्चल हो।। हम...
इन मुनियों का व्रत ब्रह्मचर्य, त्रैलोक्य पूज्य कहलाता है।
इन शरणागत में आने से, चारित्र विमल हो जाता है।।
इन मुनि की पूजा करने से, लौकांतिक सुरपद का फल हो।। हम.
ॐ ह्रीं अर्हं णमो दसपुव्वीणं दशपूर्वित्वऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं15।

जो चौदह पूर्वों के ज्ञाता, श्रुतकेवलिज्ञानी पद लभते।
उनके चरणों का आश्रय ले, क्षायिक समकित भी पा सकते।।
ये परोक्ष से त्रिभुवन जानें, इन भक्ति से श्रुतनिधि फल हो।। हम.
इन गुरु की भक्ती से तत्क्षण, निज पर का शास्त्र ज्ञान होवे।
स्वपर समयविद् गणधर गुरु, अज्ञान पापमल भी धोवें।।
इन गणधर का वंदन करते, मेरा मन निज में निश्चल हो।। हम.
जो आर्त रौद्र दुर्ध्यान रहित, शुभ धर्म शुक्ल के ध्यानी हैं।
इन गुरु की महिमा अद्भुत है, ये पाते शिव रजधानी हैं।।
इन गणधर की पूजा करते, मेरा जीवन अति उज्ज्वल हो।। हम..

ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदसपुव्वीणं चतुर्दशपुर्वित्वऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।16।।

शंभु छंद

यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयों में मत फंस जाना।
भवसिंधु अगर तरना चाहो, जिनचरण शरण में आ जाना।।
स्वर व्यंजन लक्षण चिह्न स्वप्न, नभ भौम अंग ये आठ निमित।
इनसे शुभ अशुभ बताते जो, उनके ऋद्धी अष्टांग निमित।।
इन मुनियों का वंदन करके, पूजन कर पुण्य कमा जाना।। यह...
ये जीवन मरण आदि ज्ञाता, फिर भी समरस का पान करें।
निजशुक्लध्यान के द्वारा ही, सब कर्मनाश शिवनारि वरें।।
उन गणधर की पूजा करके, परमानंदामृत पा जाना।। यह...

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठांगमहाणिमित्तकुसलाणं अष्टांगनिमित्त-ज्ञातृत्वसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।17।।

अणिमा महिमा लघिमा गरिमा, प्राप्ती प्राकाम्य ईशित्व वशी।
अप्रतीघात अंतर्धानी, विक्रिया कामरूपी आदी।
विक्रिया ऋद्धि गुरु को पूजो, तुम इनका वंदन कर जाना।। यह..

ये ऋद्धी जो मुनि पाते हैं, वे विष्णुकुमार सदृश होते।
मुनियों की रक्षा करके वे, सातिशय पुण्य भागी होते।।
गणधर भक्ती से इच्छित फल, पाकर आतमनिधि पा जाना।।
यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयों में मत फंस जाना।
भवसिंधु अगर तरना चाहो, जिनचरण शरण में आ जाना।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वणपत्ताणं विक्रियाऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।18।।

जातिविद्या कुलविद्या तज, तपविद्या धर जो साधू हैं।
विद्यानुवाद पढ़कर भी मुनि, माने विद्याधर साधू हैं।
ये विद्याओं से काम न लें, इनकी पूजा कर सुख पाना।। यह...
जो महासाधु संयनधारी, तपकर अज्ञान हटाते हैं।
इनकी भक्ती से गगन गमन, शक्ती भाक्तिक जन पाते हैं।
ये आत्मसुधारस पीते हैं, इनका वंदन कर हर्षाना।। यह...

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं विद्याधरत्वऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।

जल जंघा तंतू फल व पुष्प, ये बीज गगन अरु श्रेणी हैं।
इन पर चलते नहिं जीव मरें, आठों विध चारण ऋद्धी हैं।।
इन चारण ऋद्धी गुरुओं की, पूजा कर पुण्य कमा जाना। यह...
इनकी भक्ती से नष्ट वस्तु का, ज्ञान मनोगत ज्ञान मिले।
इनके प्रसाद से विक्रिय कर, अतिशय ऋद्धी भी स्वयं मिले।।
इन परमानंद रसास्वादी, को नमते निजसुख पा जाना।। यह..

ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं चारणऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं नि।।20।।

पूरब भव के संस्कारों से, ज्यों का त्यों ज्ञान प्रगट होता।
गुरुमुख से विनय सहित पढ़कर, वैनयिक ज्ञान विकसित होता।।
या तप बल से प्रज्ञा प्रगटे, इन मुनि का वंदन कर जाना।। यह..

गणधर की प्रज्ञा स्वाभाविक, ये प्रज्ञाश्रमण महामुनि हैं।
औत्पत्तिक विनयज कर्मज अरु, परिणामिक प्रज्ञा चउविध हैं।।
आयु अवसान ज्ञानधारी, प्रज्ञाश्रमणों के गुण गाना।। यह..

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं प्रज्ञाश्रमणऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।21।।

मनुजोत्तर पर्वत पर्यंते, इच्छानुसार नभ में विहरें।
आकाशगमनचारी वे मुनि, तप बल से ऋद्धी प्राप्त करें।।
इन महासंयमी मुनियों की, अर्चा कर पाप नशा जाना।। यह..
प्राणीवध का परिहार करें, रत्नत्रय साधन में रत हैं।।
इनके प्रसाद से अंतरिक्ष में, गमन शक्ति मिल जाती है।
इन गणधर की पूजा करके, जिनगुण संपत्ति पा जाना।। यह..

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामीणं आकाशगामिऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।22।।

हालाहल विष का जहर चढ़ा, जिनके वचनों से दूर भगे।
ऐसी आशीविष ऋद्धी धरें, वे जन जन का उपकार करें।।
इन गणधर गुरु का आश्रय ले, दुख से छुटकारा पा जाना।। यह.
नानाविध व्याधी से पीड़ित, या दरिद्रता से दुखी हुये।
इन गुरु का आशिष मिलते ही, सब दुख से जन-जन मुक्त हुये।।
इन भक्ती से विद्वेष मिटे, इनसे मन पावन कर जाना।। यह..

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं आशीर्विषत्वऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।23।।

यदि क्रोधित हों मुनि कह देवें, "मर जा" तत्क्षण जन मर जावें।
नहिं किंतु दिगंबर मुनि ऐसा, दुष्कृत्य कभी नहिं कर पावें।।
इनके अवलोके विष उतरे, तुम इनकी शरण में आ जाना।। यह..

इनको देख अस्वस्थ्य जीव, हों पूर्ण स्वस्थ्य धन धान्य भरें।
ये दृष्टीविष गणधर कृपालु, सब जन का ही उपकार करें।।
इनकी पूजा कर स्थावर, त्रस कृत सब विघ्न नशा जाना।।
यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयो में मत फस जाना।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं दृष्टिविषत्वऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।24।।

दोहा- गणधर ऋषिवर साधुगण, संभिन्न श्रोतृ आदि।
दृष्टीविष तन ऋद्धियुत, जजत मिटे सब व्याधि।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अर्हंसंभिन्नश्रोतृ प्रभृति दृष्टिविषांतर्द्धिप्राप्तेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ तृतीयवलय पूजा

नमन है सर्व गणधरो को, जिन्होंने कर्म अरि नाशे।
नमन उन ऋद्धियों को भी, जिन्हों से आत्मगुण भासे।।टेक।।
पराक्रम घोर है जिनका, त्रिजग संहार में क्षम हैं।
जलधि शोषण धरा निगलन, प्रभृति सब कार्य कराते हैं।।
विरोधी के वचन कीलित, स्वयं होते यही फल है।
गुरु की भक्ति से निश्चित, सभी जन इष्ट पाते हैं।। नमन....

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं उग्रतपः ऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।25।

बहुत उपवास करके भी, जिन्हों की दीप्ति बढ़ जावे।
बिना आहार के भी वे, अतुल शक्ती बढ़ाते हैं।
महामुनि दीप्ततपधारी, मुक्ति कन्या वरण करते।
भक्ति से सैन्य स्तंभन, भक्ति कर यश कमाते हैं। नमन....

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं दीप्ततपः ऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।26।

अधिक उपवास करने से, मूत्रमल आदि नश जावें।
करें आहार नहिं नीहार, ऐसी ऋद्धि पाते हैं।।

महामुनि तप्ततपधारी, अतीन्द्रिय सुख के अधिकारी।
इन्हों से अग्नि स्तंभन, शक्ति पा यश कमाते हैं।।
नमन है सर्व गणधरो को, जिन्होंने कर्म अरि नाशे।
नमन उन ऋद्धियों को भी, जिन्होंसे आत्मगुण भासे।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्ततवाणं तप्ततपः ऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।27।

अनेकों ऋद्धि से संयुत, महातप को सदा तपते।
देह की कांति से शोभे, सभी के दुख नशाते हैं।।
भक्ति से नीर स्तंभन, शक्ति को भक्त पा जाते।
करें हम वंदना इनकी, ये आतमनिधि दिलाते हैं।। नमन....

ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं महातपः ऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।28।

घोर तप ऋद्धि जो धारें, सु बारह तप सभी तपते।
भयकर वन में रह करके, अभय पद वे ही पाते हैं।।
करें सर्पादि विष को दूर, रोगादी विनाशें भी।
त्रिविध योगी महामुनि ये, स्वयं शिवधाम पाते हैं।। नमन....

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं घोरतपः ऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।29।

मुनि के घोर गुणऋद्धि, डरे सब भूत प्रेतादी।
लाख चौरासि उत्तरगुण, धरें निजधाम पाते हैं।।
काँच कामल प्रभृति रोगादि, गुरुभक्ती से नश जाते।
इन्हों की भक्ति पूजा से, भक्तनिज सिद्धि पाते हैं।। नमन ...

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणाणं घोरगुणः ऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।30।

पराक्रम घोर है जिनका, त्रिजग संहार में क्षम हैं।
जलधि शोषण धरा निगलन, प्रभृति सब कार्य कर पाते।।
महामुनि वीतरागी हैं, अशुभ किंचित् नहीं करते।
भक्तगण सिंह के भय को, दूर कर सौख्य पाते हैं।। नमन....

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणपरक्कमाणं घोरगुणपराक्रमऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।31।।

घोरगुण ब्रह्मचारी मुनि, अखंडित ब्रह्मचारी हैं।।
परम शांति धरें निज में, अखंडित सौख्य पाते हैं।।
उपद्रव रोग कलहादी, वैर दुर्भिक्ष वध बंधन।।
भूतप्रेतादि भय नाशें, जो गुरुपूजा रचाते हैं।।
नमन है सर्व गणधरो को, जिन्होंने कर्म अरि नाशे।
नमन उन ऋद्धियों को भी, जिन्होंसे आत्मगुण भासे।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणबंभचारीणं घोरगुणब्रह्मचारित्व-ऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।32।।

श्री गणधर गुरु भगवंत, महागुणवंत, नमूँ शिर नाऊँ।
भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।
जिनका संस्पर्श परम औषधि, सब रोग शोक दुख हरे तुरत।
उनकी पूजा भक्ती कर पाप नशाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।1।।
ये मुनि आमौषधि ऋद्धि धरें, निज आत्मा को भी स्वस्थ्य करें।
इनके चरणों का आश्रय ले सुख पाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढाऊँ।।2।।
जो जन्मजात ही बैर धरें, वे गुरु भक्ती से प्रेम करें।
इनकी भक्ती से निज में प्रीति बढ़ाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहिपत्ताणं आमौषधिऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।33।।

जिनके तन का मल किंचित् भी, सब रोग शोक हर देता भी।
उन खेलौषधि मुनि चरणों में शिर नाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।1।।
रोगी मुनि की सेवा करते, जो मन में ग्लानी नहिं धरते।
उनको हो ऐसी ऋद्धि प्रगट गुण गाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।2।।
जो ऐसे गुरु की भक्ति करें, अपमृत्यु नाश दीर्घायु धरें।
इनको पूजत ही निज आतम निधि पाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेल्लौसहिपत्ताणं क्ष्वेलौषधिऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।34।।

तन का बाहिर मल जल्ल कहा, ये भी औषधि सम प्रगट रहा।
इन जल्लौषधि मुनि नमते रोग नशाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।1।।
तप तपते तन पावन होता, सब जन के दुख दारिद धोता।
ऐसे गुरुओं के गुण गाकर हर्षाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।2।।
जो मन के भ्रम को दूर करें, व्याघ्रादि जंतु की भीति हरें।
ऐसे गुरु को पूजत निर्भय बन जाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लौसहिपत्ताणं जल्लौषधिऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।35।।

जिनकी पसेव कण आदि सभी, तन मल बन जाते औषधि भी।
इन ऋषियों की ऋद्धी को शीश नमाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।1।।
जो गुरु की सेवा करते हैं, आहारदान बहु देते हैं।
वे पुण्य सातिशय भरें जजत सुख पाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।2।।
इनकी भक्ती से इस जग में, गजमारि उपद्रव आदि भगें।
ऐसे गुरु की पूजा से शांति बढ़ाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पोसहिपत्ताणं विप्रुषौषधिऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।36।।

जिनके तन से स्पर्श वायु, करती रोगी को दीर्घ आयु।
उनके चरणों की धूली शीश चढ़ाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।1।।
जो मुनि सर्वौषधि ऋद्धि धरें, सब व्याधि विषादिक कष्ट हरें।।
उनकी पूजा कर पूर्ण स्वस्थ्यता पाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।2।।
जो सर्प बिच्छुमारी संकट, नरमारि उपद्रव आदि विविध।
इन गुरु की पूजा से दूर भगें सुख पाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं सर्वौषधिऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।37।।

जो इक मुहूर्त में द्वादशांग, चिंतन करते नहिं होय श्रांत।
उन मनोबली मुनियों को नित प्रति ध्याऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।1।।
इन गुरुओं के गुण को गावें, मेरा मन सुस्थिर हो जावे।
इन भगवंतों को हृदय कमल में लाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।2।।
जो अश्वमारि आदिक संकट, भग जाते पशुओं के बहुविध।।
इन गुरु प्रसाद से मानस शक्ति बढ़ाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणवलीणं मनोबलऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।।38।।
जो द्वादशांग का पाठ करें, बस इक मुहूर्त में पूर्ण करें।
फिर भी नहीं थकता कंठ उन्हें शिर नाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।1।।
इन मुनि को वचन सिद्धि वरती, केवलि से दिव्यध्वनि खिरती।
इन मुक्तिरमा पति के गुण को नित ध्याऊँ, भक्ती से अर्घ्य ढ़ाऊँ।।2।।
अज मेषमारि संकट बहुविध, गुरु पूजा से नशते सब दुख।
बहुभोग अभ्युदय सुखप्रद गुरुगुण गाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचिवलीणं वचोबलऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।38।
संवत्सर भी उपवास करें, बाहूवलि सम वो शक्ति धरें।
इन कायबली के चरण हृदय में लाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।1।।
ये त्रिभुवन को भी अंगुलि पर, बस उठा सकें यह शक्ति प्रवर।।
शिवधाम बसें ऐसे गुरु के गुण गाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।2।।
गो महिष मारि संकट नाना, गुरुभक्ति हरे यह सरधाना।।
तन शक्ति बढ़े निज आतम गुण विकसाऊँ, भक्ती से अर्घ्य चढ़ाऊँ।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायवलीणं कायबलऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।40।

चाल-मेरे मन मंदिर में आन...

वंदूँ श्रीगणधर गुणखान, करो मेरे कर्मों की हान।
नीरस या विषमय भोजन हो, पाणि पात्र में आते पय हो।।
क्षीरस्रावी ये ऋद्धि महान्, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
मुक्तिरमा इनको ही चाहे, भक्त भक्तिनद में अवगाहें।
मैं भी नमूँ सदा गुणखान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।

गण्डकमाला कुष्ठ क्षयादी, गुरुभक्ति से नशतीं व्याधी।
मिले आतम आरोग्य महान्, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं क्षीरस्रावीऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।41
करपुट में आहार दिया जो, रूखा भी घृतमय होता वो।।
घृत स्रावी ये ऋद्धि महान्, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
ये मुनि शिवपद पा जाते हैं, हम इनके आश्रय आते हैं।।
इनके भक्त बने धनवान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
एक दोय त्रय दिन अंतर में, इकांतरा आदिक ज्वर तन में।
सब विध ज्वर नशते दुखदान, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवीणं सर्पिःस्रावीऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।42।
करपुट में कटु भी भोजन हो, मुधवत् मधुर स्वाद परिणत हो।।
भक्त स्वस्थ्यता लहें महान्, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
इनके वचन मधुर प्रिय हितकर, पुण्य उदय से भक्त शिवंकर।।
नमु नमुं ये सौख्य निधान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
पित्त कुपित से बहुविध व्याधी, अल्सर आदि देह में व्यापीं।
गुरुभक्ति से स्वास्थ्य महान, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवीणं मधुस्रावीऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं।43।
पाणिपात्र में आया भोजन, अमृत सम बन जाता तत्क्षण।।
अमृतस्रावी मुनि सुखदान, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
इनके वच अमृतसम पोषें, भक्ती कर जन मन संतोषें।
नमुं नमुं ये समसुख खान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
स्मृति शक्ती बढ़ती प्रतिक्षण, सब उपसर्ग दूर होवें तत्क्षण।
इन गुरु की करुणा सुखदान, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमियसवीणं अमृतस्रावीऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।44।।

जिस घर में आहार करें मुनि, भोजन क्षीण न होता उस दिन।
संख्यातों करते क्षुध हान, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
मुनि के चहुंदिश चार हाथ में, जीव असंख्ये एक साथ में।।
ये अक्षीण ऋद्धि अमलान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
सब जन वश हों गुरुभक्ती से, इन अक्षीण ऋद्धि मुनि जजते।
मनवश कर तिष्ठूँ निज थान, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीणमहाणसाणं अक्षीणमहानसऋद्धिसंपन्नेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।45।।

वृद्धिंगत महिमा के धारी, प्रभु तुम गुण अनंत भण्डारी।।
जिनका केवलज्ञान महान, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
नमूं नमूं में भक्ति भाव से, मेरा ज्ञान पूर्ण हो प्रगटे।
सर्व सुखों के आप निदान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
सुगती के साधन बढ़ते हैं, राजतत्र के भय नशते है।
वृद्धि आत्मगुण की अमलान, करो गेरे कर्मों की हान।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं वर्द्धमानेभ्यः अर्घ्यं नि.।।46।।

कृत्रिम अकृत्रिम जिनमदिर, सिद्धायतन कहाते सुंदर।।
सिद्धक्षेत्र भी पूज्य महान, करो मेरे कर्मो की हान।।1।।
ज्ञानकिरण से सर्वलोक को, व्याप्त किया सारे अलोक को।।
जगत व्याप्त विष्णु भगवान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
निशदिन यही मंत्र जपने से, राजा आदिक वश में होते।।
सर्व ऋद्धियाँ हो वश आन, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सिद्धायदणाणं सर्वसिद्धायतनेभ्यः अर्घ्यं नि।।47।।

बुद्धि ऋषी केवलज्ञानी हैं, पंचकल्याणक के स्वामी हैं।।
नमुं चरण कमल में आन, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
सभी ऋद्धियों को प्रगटित कर, शिवलक्ष्मी के हुये श्रेष्ठ वर।
नमते नवनिधि ऋद्धि प्रधान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।

इसे जपें जो भक्ती भाव से, सभी सिद्धियाँ प्रगटे उनके।
महति महावीर भगवान्, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो भयवदो महदिमहावीरवड्ढमाणबुद्धिरिसीणं भगवते महतिमहावीर वर्द्धमानबुद्धर्षिभ्यः अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।48।।

पूर्णार्घ्य

नरेन्द्र-उग्र तपादिक से भगवन्, महती महावीर प्रभू तक।
चौबिस ऋद्धि सहित मुनियों के, नाममन्त्र हैं सुखप्रद।।
शिवसुख दाता महर्षियों को, अर्घ चढ़ाऊँ रुचि से।
सर्व उपद्रव कष्ट दूर कर, सुख पाऊँ श्रुतवच से।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं उग्रतपः प्रभृति महति महावीरवर्द्धमानपर्यंतर्द्धि प्राप्तेभ्यः पूर्णार्घ्यं.....।

अड़तालिस ऋद्धी के धारी, सपूर्ण महर्षी को वदूँ।
सपूर्ण रोग सब शोक हरें, ऐसे गणधरगुरु अभिनदूँ।।
वरबुद्धि समृद्धी के दाता, रत्नत्रय वृद्धि करें ऋषिवर।
सब सिद्धि हेतु पूर्णार्घ्य करूँ, ये गणधर गुरु है भव भयहर।।2।।

ॐ ह्रीं क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शातिधारा। दिव्य पुष्पाजलि·

जाप्य मंत्र

ॐ ह्रीं क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा। (108 बार जाप करें)

जयमाला

जय जय गणधर, गुण ऋद्धीश्वर, हम गायें तुम जयमाल को।
वसु द्रव्य सजाकर लाये हैं।
नग्न दिगंबर वेष धार के, पिछी कमंडलु धारा।
मूलोत्तर गुण अगणित उत्तम, धार के स्वात्म सवारा।।प्रभू जी0।।
पर्वत पर चढ़, निज में अति दृढ़, नित ध्याते आतमराम को। वसु द्रव्य

ग्रीष्म ऋतु में पर्वत ऊपर, वर्षा में तरु नीचे।
शीतकाल में नदी किनारे, आत्मध्यान में तिष्ठें।। प्रभू जी०।।
पद्मासन से, खड्गासन से, ध्यावें पहने गुणमाल को। वसु द्रव्य..
तीर्थंकर की दिव्यध्वनी सुन, द्वादशाग में गूथे।
भव्य असंख्यो को संबोधे, चतुर्गती से छूटें।।प्रभु जी०।।
निज रागद्वेष, हरकर अशेष, नित चखते साम्यरसाल को। वसु द्रव्य
सूरी के छत्तीस मूलगुण, उपाध्याय के पच्चिस
साधू के अट्ठाइस मानें, तीनो में से निश्चित।।प्रभु जी०।।
गुरु गणधर के, सब गुण चमके, इनसे है मालामाल वो।। वसु द्रव्य
दर्शमोह का मूल नाश कर, क्षायिक सम्यग्दृष्टी।
छठे सातवे गुणस्थान मे, करे धर्म की वृष्टी।। प्रभू जी०।।
श्रेणी पे चढ़े, चउ घाति हने, फिर पाते केवलज्ञान को। वसु द्रव्य
मोक्षमार्ग मे विघ्न असख्ये, किस विध मार्ग सरल हो।
गणधर गुरु की पूजा करते, सर्व विघ्न निष्फल हो।।प्रभू जी०।।
गुरु भक्ती से, सब पाप नशें, सब कार्य सिद्धि तत्काल हो। वसु द्रव्य
बहुविध रोग शोक दुख दारिद, मानस ताप असख्ये।
इष्टवियोग अनिष्ट योग के, आर्तध्यान दुखकदे।। प्रभू जी०।।
गुरुवंदन से, अभिनदन से, नश जाते दुख दुर्वार जो। वसु द्रव्य
गणधर गुरु के सर्व ऋद्धियॉ, प्रगट हुई श्रुत गाये।
अन्य तपस्वी ऋषियों के भी, कतिपय ऋद्धि कहाये।। प्रभू जी०।।
रस त्याग करें, रस ऋद्धि वरें, ये करे स्वपर कल्याण को। वसु द्रव्य
उग्र-उग्र तप करके साधू, दीप्ततपो ऋद्धीयुत।
नहिं आहार करें फिर भी ये, काय दीप्ति वृद्धीयुत।। प्रभू जी०।।
इन चरण नमें, भव मे न भ्रमें, पा लेते निज गुणमाल को। वसु द्रव्य
वीर प्रभू के समवसरण में, गौतम ब्राह्मण आये।
तत्क्षण मुनिदीक्षा ले करके, गणधर प्रथम कहाये।। प्रभू जी०।।

जिन भक्ती से, वर मंत्र रचे, अड़तालिस ऋद्धीमान को। वसु द्रव्य
हे भगवन् हम शरण में आये, एक याचना पूरो।
केवल 'ज्ञानमती' बस एकहि, ऋद्धी दे यम चूरो।। प्रभू जी0।।
कर जोड़ खड़े, तुम चरण पड़े, दे दो रत्नत्रय माल को। वसु द्रव्य

दोहा-अड़तालीस गणधर वलय, मंत्र नमूँ तिहुँकाल।
श्री गणेश गुरुदेव को, नमूँ नमूँ नतभाल।।12।।

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे-फट्-विचक्राय झौं झौं नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शातये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः

गीता-जो '.व्यजन गुरुभक्ति से, "गणधरवलय" पूजा करें।
सब रोग शोक दरिद्र सकट, मानसिक पीड़ा हरें।।
दीर्घायु स्वास्थ्य सुकीर्ति वैभव, सौख्य संपति विस्तरें।
रवि "ज्ञानमति" के उदय से जन, मन कमल विकसित करें।1।

इत्याशीर्वादः

द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव के साथ-साथ मनुष्य का पुरुषार्थ सर्वोपरि होता है, विषम परिस्थतियों में भी अपने संयम एवं संकल्प का निरतिचार पालन करना साधक की परीक्षा के क्षण होते हैं। अनुकूलता में तो साधना सहज रूप में हो जाती है, परन्तु सांसारिक व्यस्तता एव शारीरिक प्रतिकूलता में कभी-कभी व्रतों का सम्यक् रूपेण पालन नहीं हो पाता है। ऐसी स्थिति में साधक किन्हीं मुनिराज से प्रायश्चित्त लेकर उस त्रुटि का परिमार्जन कर संकल्प पूर्ण करे। व्रतों के पालन में किया गया प्रमाद व्रतों की अवमानना का कारण बनता है। इससे व्रती श्रावक को सदैव सचेत रहना चाहिए।

उपाध्याय मुनि ज्ञानसागर

चन्दनषष्टी - व्रत पूजा

दोहा- सुखदयाक सुख निधि सदा, गुण अनन्त सुखधाम।
विघ्न विनाशक चंद्रप्रभ! बारम्बार प्रणाम।।
गुरु गौतम गणधर नमू, कुन्दकुन्द आचार्य।
पूज्यपाद अकलक को. सिद्ध हेतु. मम कार्य।।
चंदन षष्ठी व्रत महा, पूजा अनि सुखदाय।
भव वाधा के नाश हित, करना चित उमगाय।।

इति पुष्पांजलिं क्षिपेत्

प्रथम कोष्ठ पूजा

चन्द चिह्न पद में है जिनके, चचल चित्त जहॉ ठहराया।
श्वेतवर्ण अति आनन्द दायक, भक्तों के चित को हरषाय।।
दोष विनाशक तिहूँ जग शासक, दया धुरधर परम उदार।
चन्द्र समान शाति सुखदायक नमो चन्द्रप्रभ बारबार।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-पष्ठी-व्रतोद्यापने श्री चन्द्रप्रभ परमदेव ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्री चन्द्रप्रभ परमदेव ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतो द्यापने श्री चन्द्रप्रभ परमदेव ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम्।

अष्टक

उज्ज्वल यश सम निर्मल जल ले, आया मैं चरणो में नाथ।
जन्म जरा औ मरण मिटाकर, प्रभो ! निभाओ मेरा साथ।।
चन्द्रप्रभ अष्टम तीर्थंकर, चन्द्रनाथ त्रिभुवन के राय।
चन्दन - षष्ठी व्रत कर पूजा, रोग शोक दुख दारिद जाय।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने-चन्द्रप्रभदेवाय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

मलयागिरि का लेकर चन्दन, केशर संग मिलाया नाथ।

भव भव के संताप मेट दो, बार बार मैं जोडूं हाथ। चन्द्र.

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने-चन्द्रप्रभदेवाय संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

मुक्ता फल सम उज्ज्वल अक्षत, लेकर आया तेरे द्वार।

अक्षय पद दे दीजे मुझको, हे अक्षय सुख के भडार।।चन्द्र.

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने-चन्द्रप्रभदेवाय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

सब प्रकार के फूल सुगंधित, दशों दिशा जिनसे महकाय।

काम वाण विध्वस हेतु ले, मन वच तन से पूजूं पाय।।चन्द्र.

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने-चन्द्रप्रभदेवाय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

सुन्दर सरल स्नेहयुक्त, व्यजन चरण चढाऊँ भर भर थाल।

क्षुधा वेदनी नाश करो मम, दीनबन्धु शरणागत पाल।।चन्द्र

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने-चन्द्रप्रभदेवाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मणिमय दीप सजाकर सुन्दर, करूं आरती त्रिभुवन ईश।

भ्रम तम मोह निवारो मेरा,पुनि पुनि चरणन नमाऊँ शीश। चद्र.

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने-चन्द्रप्रभदेवाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

दश विधि गध मनोहर लेकर, तुम चरणन ढिंग खेऊं आय।

अष्ट कर्म कष्टो के कारण, दयानिधे ! सारे जल जाय। चंद्र.

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने-चन्द्रप्रभदेवाय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

नीबू आम अनार नरंगी, श्रीफल लौंग छुहारा लाय।
चरण कमल पूजूं प्रभु तेरे,महा मोक्ष फल आनन्ददाय।।चंद्र.

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने-चन्द्रप्रभदेवाय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल फलादि सब द्रव्य मिलाकर, चरण चढाऊ हे जगपाल।
हो अनर्घ्य पद प्राप्त मुझे यह, करू प्रार्थना दीनदयाल।।चद्र

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने-चन्द्रप्रभदेवाय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तोटक छन्द

कलि पचम चैत सुहात अली, गरभागम मंगल मोद भली।
हरि हर्षित पूजत मात पिता, हम ध्यावत पावत शर्मसिता।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णापंचम्यां गर्भकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कलिपौष एकादशि जन्म लयो,तब लोक विषे सुख थोक भयो।
सुरईश जजे गिरशीश तवे, हम पूजत है नुत शीश अवे।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तपदुद्धर श्रीधर आप धरा, कलि पौष ग्यारस पर्वपरा।
निजध्यान विपै लवलीन भये, धनिसो दिन पूज विघन गये।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर केवल भानु उद्योतकियो, तिहुलोक तनो भ्रम भेद दियें।
कलि फाल्गुनवदि सप्तमि इन्द्र जजे, हम पूजे सर्व कलक भजे।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवल-ज्ञान-कल्याणक प्राप्त चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सित फाल्गुन सप्तमि मुक्तिगये, गुणवन्त अनन्त अवाध भये
हरि आय जजै तित मोद धरें, हम पूजत ही सब पाप हरें।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लासप्तम्यां मोक्षकल्याणक प्राप्त चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा -वन्दों चन्द्रप्रभ सदा, जगती तल आधार।
देव इन्द्र नागेन्द्र भी, पा न सके गुण सार्।।
है अचिन्त्य महिमा अगम, मिली न अब तक थाह।
गुण वर्णन क्या कर सकें, गुणातीत तुम ताह।।

जय चन्द्रनाथ देवाधिदेव, सुर नर विद्याधर करत सेव।
जय राग द्वेष मद मोह मार, सब जीत लिये तुम निराकर।।
जय भव भव भजन निर्विकार, जय रोग शोक दुःख विपतटार।
जय शाति सुधा के सिधु देव, तुम स्वयं बुद्ध ज्ञाता स्वमेव।।
जय मोह शत्रु नाशक प्रवीन, जय ज्ञान ध्यान में सदालीन।
जय महा तपस्वी गुण निधान, जय दयानिधे ! सुख वीर्यवान।।
जय जन्म-जरा-मृत-हरणधीर, जय खेद स्वेद विजयी सुधीर
तुम दोष अठारह सभी जीत, हो गये पूर्ण हे गुणातीत।।
पा लिया सहज दर्शन सुज्ञान, सुख वीर्य अनन्त दयानिधान।
सब को दे तुमने सदुपदेश, हर लिये जगत के सभी क्लेश।।
जय भव भव की हर पीर नाथ, सन्मार्ग दिखा न छोड़ साथ।
जय धर्म धुरधर धीर वीर, सब हरलो मेरे कष्ट पीर।।
मैं यही याचना करूं देव, हो ज्ञान प्रगट जानूं स्वमेव।
भव भव के पातक कटें आप,सब शांत स्वयं हो विघ्नताप।।
मिल जाय मुझे वह निज स्वरूप, जो समझूं अपना स्वयं रूप।
हो दूर सभी मद मोह जाल, सद्ज्ञान प्राप्त हो सदा काल।।
है यही प्रार्थना और नाथ, तेरे चरणों में रहूँ साथ।
वरदान मिले बस यही एक, तुम सदा निभाते रहो टेक।।

घत्ता-जय ज्ञान उजागर, गुण गण आगर, मोह महा मद हर्ता हो।
जय सन्मति दाता, ज्ञान प्रदाता, विश्ववद्य सुख कर्ता हो।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभ-जिनाय जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

अथ द्वितीय कोष्ठ पूजा

सोरठा- निर्मल जल शुचि लाय, चरण चढाऊँ चन्द्र के।
जन्म रोग मिट जाय, चन्दन षष्टी व्रत किये।।1।।

ॐ ह्रीं क्षीरवत् उज्ज्वल-यश-धारकाय श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन मलय सुलाय, केशर से जिन पूजते।
भव बाधा नश जाय, चन्दन षष्ठी व्रत किये।।2।।

ॐ ह्रीं क्षीरवत् उज्ज्वल-यश-धारकाय श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

उज्ज्वल अक्षत लाय, मन वच जिन पूजा करे।
अक्षय पद मिल जाय चन्दनषष्ठी व्रत किये।।

ॐ ह्रीं क्षीरवत् उज्ज्वल-यश-धारकाय श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

पुष्प सुगन्धित लाय, श्री जिनकी पूजा करे।
काम वाण नश जाय, चन्दन षष्ठी व्रत किये।।

ॐ ह्रीं क्षीरवत् उज्ज्वल-यश-धारकाय श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

व्यंजन सरस बनाय, भर भर थाल चढाइये।
क्षुधा रोग मिट जाय, चन्दन व्रष्ठी व्रत किये।।

ॐ ह्रीं क्षीरवत् उज्ज्वल-यश-धारकाय श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सुन्दर दीप संजोय, कर कर जिनवर की आरती।
भ्रम तन सब क्षय होय, चन्दन षष्ठी व्रत किये।।

ॐ ह्रीं क्षीरवत् उज्ज्वल-यश-धारकाय श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

धूप सुगन्धित खेय, जिनवर आगे अग्नि में।
अष्ट कर्म क्षय होय, चन्दन षष्ठी व्रत किये।।

ॐ ह्रीं क्षीरवत् उज्ज्वल-यश-धारकाय श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्रीफल लौंग बादाम उत्तम, बहु विध फल लिए।
पूजत पद शिवधाम चन्दन षष्ठी व्रत किए।।

ॐ ह्रीं क्षीरवत् उज्ज्वल-यश-धारकाय श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल फल आदि मिलाय, अर्घ्य चढाऊँ चर्ण में।
अनुपम पद मिल जाय, चन्दन षष्ठी व्रत किये।।

ॐ ह्रीं क्षीरवत् उज्ज्वल-यश-धारकाय श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा-चैत्र असित पचम चये, वैजयन्त ते इन्द्र।
उदर सुलक्षणा अवतरे, जजूँ त्रिविध गुणवृन्द्र।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णापंचम्यां गर्भकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

असित पौष एकादशी जन्मे जुत त्रयज्ञान।
वासव उत्सव करि जजें जजूँ जन्म कल्याण।।

ॐ ह्रीं पौषकष्णैकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रपुरी साम्राज्य तज कृष्ण एकादशि पौह।
धरयो उग्रतप वन विषें जजूँ नाश मनद्रोह।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन सप्तमि कृष्ण की धाति हनें लहिज्ञान।
भव्यातम बोधे घने जजतु ज्ञान कल्याण।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्ला फाल्गुन सप्तमी शेष कर्म हनिमोख।
गये सम्मेदाचल यकी जजूँ गुणन के कोख।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लासप्तम्यां निर्वाणकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-कृपा करो मुझ पर प्रभो कृपा सिन्धु महाराज।
अष्ट कर्म सब नष्ट कर, हे अष्टम जिनराज।।

जय जिनन्द दुति चन्द नमस्ते, निर्विकार गुण वृन्द नमस्ते।
निराकार निरमान नमस्ते, गुण गरिष्ठ गुण थान नमस्ते।।
चिदानन्द चिद्रूप नमस्ते, स्वयं बुद्ध शुचि रूप नमस्ते।
ज्ञान ध्यान शुभ योग नमस्ते, महा मोक्ष सुख भोग नमस्ते।।
चन्द्रपुरी सुख धाम नमस्ते, जन्मभूमि अभिराम नमस्ते।
राग द्वेष मद ध्वांत नमस्ते, शुद्ध स्वयंभू शांत नमस्ते।।
गर्भ जन्म तप ज्ञान नमस्ते, शिखर शैल निर्वाण नमस्ते।
जय जय पंचकल्याण नमस्ते,जय जय जय गुणगान नमस्ते।।
धीर वीर भगवान नमस्ते, कर्म हान गुण खान नमस्ते।
संसारांबुधि तार नमस्ते, क्षुधा तृषादि निवार नमस्ते।।

चक्रीपद दातार नमस्ते, मुक्ति रमा भरतार नमस्ते।
मुझे भवोदधि तार नमस्ते, सब सुख के आधार नमस्ते।।
हे अष्टम जिनराज नमस्ते, दया निधे सुख राज नमस्ते।
कृपा सिंधु जग पाल नमस्ते, शरणागत प्रतिपाल नमस्ते।।
शुद्धि बुद्धि दातार नमस्ते, सुखकारी दुखहार नमस्ते।
शांति सुधा के सार नमस्ते, चन्द्रप्रभ जग सार नमस्ते।।
रोग शोक दुख हार नमस्ते, भव भव के दुख टार नमस्ते।
चरण शरण को तार नमस्ते, मोह महा मद मार नमस्ते।।

घत्ता

सुख शाति विधाता, शिव पद दाता, जन्ममरण भय दूर करो।
तुम ज्ञान प्रकाशक, भ्रम तम नाशक, रोक शोक संताप हरो।।

ॐ ह्रीं क्षीरवत् उज्ज्वलयशधारकाय चन्दनषष्टी-व्रतोद्यापने श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय जयमाला निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय कोष्ठ पूजा

सोरठा-गंगा जल समनीर, निर्मल झारी में भरौ।
पूजों चन्द्र सुधीर, जन्म मरण भय परिहारो।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

चन्दन गंध समेत, घिस घिस लायो चर्ण में।
भव भय भजन हेत, पूजौं श्री जिनराज को।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

मुक्ता फल सम श्वेत, अक्षत की थाली भरी।
अक्षय पद के हेत, पूजों चन्द्र जिनेश को।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

जूही चंपक लाय, पुष्प सुगन्धित आदि ले।

पूजों श्री जिनराय, काम त्राण विध्वस हित।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

षट् रत व्यंजन लाय, स्नेह सुवासित रसमयी।

क्षुधा रोग मिट जाय, श्री जिनके पद पूजते।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जगमग दीप सवार, वाति कपूर बनायके।

भ्रम तम जड से तार, श्री जिनवर नित पूजकर।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

धूप दशाग बनाय, खेऊँ अग्नि समूह में।

कर्म बन्ध जल जाय, पूजॅू श्री जिन भावसों।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

केला दाख मँगाय, श्री फल लौंग बादाम ले।

मोक्ष सुफल मिल जाय, श्री जिन पूजूँ हर्ष युत।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल फल अक्षत धूप, दीप पुष्प चरु गंध ले।

पूजूं श्री जिन रूप, पद अनर्घ्य के प्राप्ति हित।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

कुसुमलता छन्द

चैत्र प्रथम पंचम दिन जानों, गरभागम मंगल सुखखान।
मात लक्षणा के उर आये, तज दिवलोक चन्द्रभगवान।।
षट् नवमास रतन वर्षाये, इन्द्र हुकमते धनद महान।
जिनके चरण कमल में पूजा अरघ चढ़ाय करूँ नित ध्यान।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णापंचम्यां गर्भकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूसवदी ग्यारस को जन्में, चन्द्रपुरी जिन चन्द्र महान।
महासेन राजा के प्यारे, सकल सुरासुर माने आन।।
सुरगिर पर अभिषेक करो हरि, चतुरनिकाय के देव सब आन।
सो जिनचन्द्र जयो जगमाही अरघ चढ़ाय करूँ नितध्यान।।

ॐ ह्रीं पौषकष्णैकादश्यां जन्मकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पौषसुदी ग्यारस तप लीनों, जाने जगत अथिर दुखदान।
राज त्यागि वैराग्य धरो, वन जाय कियो आतम कल्याण।।
सुर नरखग मिल पूज रचायी मन में अति ही आनंदमान।
ऐसे चन्द्रनाथ जिनवर को, अरघ चढ़ाय करूँ नित ध्यान।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन वदि सप्तम दिनजानों, चार घातिया घात महान।
सकल सुरासुर पूजि जगतपति, पायो तिह दिन केवलज्ञान।।
समवसरण महिमा हरि कीनी, दीनीदृष्टि चरण जिन आन।
ऐसे चन्द्रनाथ जिनवर को, अरघ चढ़ाय करूँ नित ध्यान।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सातें सुदी फाल्गुन को, महिना सम्मेदा चल श्रग महान।
ललित कूट ऊपर जगपतिने, पायौ आतम शिव कल्याण।।
सुर सुरेश मिल पूजा रचाई, गायो गुण हर्षित चितठान।
सुगुरु समन्तभद्र स्वामी ने, प्रगट किया जिनबिम्बमहान।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लासप्तम्यां निर्वाणकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा–आया शरण जिनेश मैं, रखिये मेरी लाज।
भव-दधि से प्रभु तारिये, तुम ही एक जहाज।।

जय श्रीचन्द्र जिनेश वीर, जय चन्द्रानन अतिशय गभीर।
जय शांति सुधा के सुखद सिंधु, भवि कमल विकासन भव्य इदु।।
अद्‌भुत महिमा तव चन्द्र नाथ, प्रभु सदा निभाओ चरण साथ।
यश विमल तुम्हारा चन्द्र देव, फैला है चहु दिशि में स्वमेव।।
हम तुम पद करते नमस्कार, सुर नर विद्याधर ऋषि अपार।
जय चन्द्रप्रभु तुम करे गान। सब धरें तुम्हारा सुखद ध्यान।।
तुम जन्म महोत्सव में जिनेश, सब देव इन्द्र आये खगेश।
ले पाडु शिला पर गया इन्द्र, अभिषेक तुम्हारा किया चन्द्र।।
निर्मल यश फैला सभी ओर, सब सदा चाहे नक कृपा तोर।
कुछ दिन ही तुमने राज भोग, तज दिये सभी को समझ रोग।।
दीक्षा धर केवलज्ञान धार, उपदेश दिया आनंद कार।
सबको तुमने शिव मग बताय, हेदया निधे आनंद पाय।।
वे कर्म सताते महा नीच, गोता देते भव सिन्धु बीच।
तुम चार घातिया किये नष्ट, जगजन क काटे सकल कष्ट।
पतितोद्धारक हे दीन बधु, उद्धार करो हे कृपा सिंधु।
सम्मेदशैल जा किया ध्यान, पाया अति उत्तम मोक्षथान।।

मेरे उर आओ हे दयाल, सब दूर करो मम जगत जाल।
मै भव दुःख से होकर अधीर, आया हूँ तेरी शरण बीर।।
हे जगत बन्धु प्रभु सुन पुकार, भव सागर से अब तारतार।
घत्ता- हे जग उजियाला, परम कृपाला, भरो ज्ञान भंडारीजी।
मै शरणे आया, शीश नमाया, भव भव आनन्द काराजी।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्थ कोष्ठ पूजा

अति उज्ज्वल निर्मल नीर लेकर प्रभु आया।
हर जन्म मरण दुख नाथ इन से घबराया।।
श्री चन्द्र नाथ जिनराज तेरे चरण जजों।
हर रोग शोक भय क्लेश निश दिन नाम भजों।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन केशर कर्पूर घिसि घिसि कर ल्याया।
प्रभु भव भव की संताप मेटन मैं आया।।श्रीचंद्रनाथ.।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

ले उत्तम अक्षत पुज, तेरे दर आयो।
दे अक्षय पद जिन देव, अब मैं अकुआयो।।श्रीचद्रनाथ.।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

अति दिव्य सुगन्धित पुष्प अलि गुंजार करे।
तुम चरण चढाये नाथ, मनमथ बाण हरे।।श्रीचंद्रनाथ.।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

सब व्यंजन सरस मंगाय, चरण धरों तेरे।

मम क्षुधा रोग मिट जाय, पाप कटें मेरे।।

श्री चन्द्र नाथ जिनराज तेरे चरण जजों।

हर रोग शोक भय क्लेश निश दिन नाम भजों।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

शुचि सुन्दर दीप जगाय, रखता तुम आगे।

कर कृपा दयानिधि देव, मोह तिमिर भागे।।श्रीचंद्रनाथ।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रिय धूप दशाग अनूप, लेकर अग्नि धरो।

सब कर्म पुंज जल जाय, मेरे चर्ण परों।।श्रीचदनाथ।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

ले नीबू आम अनार, श्रीफल भेट करूँ।

प्रभु सहज मुक्ति मिल जाय, तेरे पॉव परूँ।।श्रीचंद्रनाथ।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जलफल वसुद्रव्यमिलाय पूरनअर्घ करों।

प्रभुपद अनर्घ्य मिलजाय तुमपद भेट धरों।।श्रीचंद्रनाथ।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा-चैत्रवदी पंचम को प्रभुजी, मंगल गर्भ में आये।

रत्नवृष्टि कीनी देवो ने, सुरनर सब हरषाये।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपंचम्यां गर्भकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पौषकृष्ण एकादशी को, प्रभुचन्द्रपुरी अवतारे।

इन्द्र करे अभिषेक मेरु पर, कलश भरें सुर सारे।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो रागरंग से प्रभु विरक्त, द्वादश अनुप्रेक्षा भायें।

लौकान्तिक सुरगण आकर के प्रभुवैराग्य बढाये।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्ण सप्तमी को फागुन की, केवलज्ञानी प्रभु हुए।।

मिटासकल अज्ञान अंधेरा, भविजन नम्रीभूत हुये।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्मेद शिखर के ललित कूट से, सिद्ध प्रभु भगवन्त हुये।

इस गिरराज को पूजें हम सब जहाँ सिद्ध अनन्तानन्त हुये।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लासप्तम्यां निर्वाणकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-सब जीवों के प्राण धन, जग जीवन आधार।

क्यों न यह सुनते प्रभो, मेरी आप पुकार।

गुण गाऊं मैं आपके, निश दिन हे भगवान।

कृपा करो सद्ज्ञान दो, जागृति मंत्र महान।।

प्रभु चन्द्रनाथ गुणगण अगार,तुम गुण का किसने लहा पार।

तुम नीति निपुण जयवान देव, जानत भव भव की तुम स्वमेव।।

तुम स्वयं बुद्ध शुभ ध्यान धीर, हरते हो जग की महापीर।

उपदेशामृत बरसा अनूप, समझाया तुमने तत्व रूप।।

षट् द्रव्य बताकर सप्त तत्व, बतलाया तुमने परम तत्व।
है जीव चेतनामयी जान, जड़ रूप सदा पुदगल बखान।।
मन वचन काय की क्रिया योग, कहलाता आश्रव महा रोग।
जब आत्म साथ पुद्गल प्रदेश, लग जाय ये ही बन्धन विशेष।।
कर्मों का आना रूके आप, संवर हो जाता कटे पाप।
धीरे धीरे जब खिरे कर्म, है वही निर्जर तत्त्व मर्म।।
जब सब कर्मों का मिटे सत्त्व, हो प्रगट अनूपम मोक्षतत्त्व।
इन तत्त्वों का श्रद्धान पूर्ण, करने से होते कर्म चूर्ण।।
ये ही तप जप सयम पवित्र, सदृष्टि ज्ञानसम्यक् चरित्र।
हे दया सिधु सद्ध्यान धीर, काटो भव भव की दुख पीर।।
हम दुखी दरिद्री दीन लोग, लग रहा हमें ससार रोग।
अब करो कष्ट चक चूर चूर, उस आनन्द से भर पूर पूर।।
घत्ता-यह गुणिमणमाला, परम रसाला, पढते ही काटे भवफंदा।
शिव सुखकारी जग दुखहारी, सहज प्रकट हो परमानन्दा।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम कोष्ठ पूजा

कनक कलश में शुचि जल लेकर, आया नाथ तुम्हारे द्वार।।
जन्म मरन दुखहारी नाशे, सहज प्रकट हो शिवसुखकार।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशक जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर मिश्रित वारि सुगंधित, ले तव चरण चरचता नाथ।
भवभव के संताप मिटा दो, विनती करूँ जोड़ कर हाथ।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोती सम शुचि अक्षत लेकर, भरकर कंचन थाल अनूप।
अक्षय पद के प्राप्ति हेतु मैं, पूज रहा हे त्रिभुवन भूप।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

चंपक बेला चमेली जूही, पुष्प गुलाब के थाल सजाय।
चरण शरण मे आया तेरे, कामव्यथा सारी नशजाय।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

नाना विधि पकवान मनोहर, सरस शुद्ध लाया स्वादिष्ट।
चरण कमल जिनराज पूजते, क्षुधा रोग हो जावे नष्ट।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दीपक जगमग जगमग करता, लिये हाथ मैं आया देव।
ज्ञान ज्योति हो प्रकट अनुपम, हो जाऊं ज्ञाता स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

रुला रहे है अष्ट कर्म ये, भवदधि बीच मुझे लग साथ।
धूप दशांग सुगन्धित खेऊँ, कर्म क्षय के कारण नाथ।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री फल केला दाख छुआरा, कमल बीज बादाम अनार।
महा मोक्ष प्राप्ति हेतु मैं, आया लेकर प्रभु के द्वार।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल आदिक सब अष्ट द्रव्य ले, अर्घ्य बनाया शुद्ध पुनीत।
अब अनर्घ्य पद मिले मनोहर, सब कर्मों को लेऊ जीत।।

ॐ ह्रीं चन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

पंचकल्याणक

जबगर्भ में प्रभुजी आये थे इन्द्रों ने नगर सजाया था,
छह मास प्रथम ही आकर के रत्नों का मेह वरसाया था।
तिथि चैतवदी पंचम प्यारी जब गरभ में प्रभुजी आये थे,
लक्ष्मणा मात को पहले ही सपने सोलह दिखलाये थे।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णापंचम्यां गर्भकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ बेला मे प्रभु का जन्म हुआ वदिपौष एकादशि थी प्यारी,
श्री महासेन नृप के घर में हुई जयजयकार बडी भारी।
पाण्डुक शिल पर अभिषेक किया सब देव मिले थे चतुरनिकाय,
सो जिन चन्द्र जयो जगमाही विघ्नहरण और मगलदाय।।

ॐ ह्रीं पौषकष्णैकादश्यां जन्मकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के झझट से मन ऊबा तप कीना श्रीचन्द्र जिनराय,
पौषवदि ग्यारस को इन्द्र ने तपकल्याण कियो हरषाय।
सर्वतुक वन मे जाय विराजे केशलुच कियो नित गुणगाय,
वर्तमान जिन चन्द्र प्रभू को आरघ चढ़ाऊँ नित गुणगाय।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन वदी सप्तमी के दिन चार घातिया घात महान,
समवशरण रचना हरिकीनी जा दिन पायो केवलज्ञान।

साढे आठ योजन परिमित था समवशरण श्री जिन भगवान,
ऐसे श्री जिन चन्द्रप्रभ को अर्घ चढ़ाय करूँ नित ध्यान।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्ला फाल्गुन सप्तमि के दिन ललित कूट शुभ उत्तम थान,
श्री जिन चन्द्रप्रभ जगनामी पायो आतम शिवकल्याण।
आठ करम जिनचन्द्र विनाशे पहुँचे स्वामी मोक्ष मंझार,
निर्वाण महोत्सव कियो इन्द्र ने देव करें सब जयजयकार।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लासप्तम्यां निर्वाणकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-चिदानन्द चिद्रुप को, ध्याऊ बारंबार।
विघ्न सफल सबके कटें, होवे शीघ्र सुधार।।
भव सागर का अंत न, नौका है बेकार।
कृपा करो अब दास पर, पहुँचे भवदधि पार।।

चौपाई

जय चन्द्रप्रभ देवाधि देव, सुर नर विद्याधर करें सेव।
तुम दिव्य विलक्षण परम धीर,हो ज्ञान सिधु से अति गंभीर।।
तुम दया धुरंधर दया धाम, जीता है तुमने अजय काम।
तुम शांति मूर्ति औ सत्य निष्ठ, समझा है जगको अति निकृष्ट।।
धन धान्य दास दासी अनेक, सब तजे परिग्रह धर विवेक।
तज राज पाट वैभव अपार, चल दिये अरण जगलख असार।।
समझा दुखमय संसार रूप, तुम छोड़ चले जग अंध कूप।
जाना ये विषय असाध्य रोग, ठुकरा कर इनको धरा योग।।
तज गये पुत्र पुत्री सुमित्र, प्रिय बांधव स्नेही जन कलत्र।
जन परिजन से मुँह लिया मोड़, बन गये संत सब विभव छोड़।।

उपदेश दिया जग को महान, करने को सब आतम कल्याण।
तप सत्य अहिंसा दया दान, सिखलाया तजना मोह मान।।
फिर तुमने कर चहुं दिशि विहार, धर्मोपदेश देकर अपार।
तारे भव जीवनि को अनेक, बतलाकर सच्चा मार्ग एक।।
तुम पूर्ण तपस्वी ज्ञानवान, बन गये स्वयं ही अति महान।
तुमने पद अविचल किया प्राप्त, कहलाये सबसे बड़े आप्त।।
अब दया दृष्टि कर दो दयाल, हम हो जावे जगसे निहाल।
हों ज्ञानवान विद्या संयुक्त, सब वैभव युक्त सक्लेश मुक्त।।
तुम चरणों में मैं धरूं शीश, देवाधिदेव ! सुनलो मुनीश।
भव सिंधु बीच में तार तार, करूणानिधि भव भय हार हार।।

घत्ता

जय श्रीजिनचन्दा, आनन्द कन्दा, जनम मरण दुख दूर करो।
मैं भव मे भटका, तुम बिन अटका, कर्म शत्रु को चूर करो।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्टम कोष्ठ पूजा

अमल सुगन्धित वार सु लेकर, चरण कमल पर देऊँ धार।
भव के कष्ट निवारण कारण, आ पहुँचा प्रभु तेरे द्वार।।
चन्द्रकला सम शांति सुवर्द्धक, चन्द्रप्रभ सन्मति दातार।
पूर्णत्तान की ज्योति जगा दो, हो जाऊॅ तुम सा अविकार।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन केशर और कपूर घिस, चरण सरोज जजूँ तब देव।
भव संताप मिटे प्रभु मेरा, पहिचाने निज को स्वयमेव।। चन्द्रकला।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

उज्ज्वल यश सम धवल अनूपम, अक्षत से पूजूँ पद नाथ।
अक्षय पद की प्राप्ति स्वयं हो, हो जाऊँ मैं सदा सनाथ।।चन्द्रकला।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

सुन्दर फूल सुवासित की भर, अँजुलि भेंट चढाता आज।
कामव्यथा नशजाय समूची, सद्भावों का जुटे समाज।।चन्द्रकला।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

महा मनोहर स्नेह प्रपूरित, उत्तम व्यंजन से भर थार।
क्षुधा वेदनी के क्षय कारण, पूजूँ पद तब बारंबार।। चन्द्रकला।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जगमग जगमग दीप शिखा से, करूँ आरती धरे विवेक।
नाश होय अज्ञान तिमिर का, जले ज्ञान के दीप अनेक।।चन्द्रकला।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

अगर तगर कृष्णागुरु निर्मित, धूप सुगन्धित ले भरपूर।
खेऊँ बीच हुताशन में मैं, होवें कर्म सभी चकचूर।।चन्द्रकला।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

अति स्वादिष्ट सुपक्व मनोहर, फल ले चरण जजूँ तिहुँकाल।
महामोक्ष फल मिले तुरत ही, कटे सकल जग के जंजाल।।चन्द्रकला।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

आठों द्रव्य मिलाकर उत्तम, अर्घ बनाया पूजन काज।
भव भव की प्रभु व्याधि मिटादो, अविचल पद देओ जिनराज।चन्द्रकला।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन-षष्ठी-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

चौपाई

पचम असित चैत में आये, मात लक्ष्मणा उदर बसाये।
पन्द्रह माह रतन बरसाये, गर्भ महोत्सव इन्द्र मनाये।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णापंवम्यां गर्भकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष एकादशि मंगल गाये, तीन ज्ञान मय जनमं सुपाये।
महासेन नृपतनुज कहाये पाण्डुक शिल अभिषेक कराये।।

ॐ ह्रीं पौषकष्णैकादश्यां जन्मकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रनगर का राज्य सुत्यागा, देख विराग राग सबभागा।
सर्वर्तुग वन दीक्षा धारी, पौष एकादशि तिथि है कारी।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चार घातिया कर्म नशाया, सर्वज्ञान जिनवर ने पाया।
समवशरण तव धनद बनाये, फाल्गुन असित सप्तमी पाये।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मपचासी प्रकृति विनाशी, गिर सम्मेद भये अविनाशी।।
ललितकूट ते शिवपद पाया, फाल्गुन सितसातम दिनगाया।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लसप्तम्यां निर्वाणकल्याणक-प्राप्त चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-तारण तरण जिनेश हे, ध्याऊँ तुम दिन रैन।
कृपा करो निज दास पर, खुलें ज्ञान के नैन।।
तुम ज्ञान प्रकाशक भवतम नाशक सब जगके उजियारे हो।
सुख शांति प्रदाता जग विख्याता, त्रिभुवन के रखवारे हो।।
मैं दीप अनाथ महा हत भागी, रागी द्वेषी दोषी हूँ।
मैं पर निंदक आलोचक हूँ, पंचेन्द्रि विषय का कोषी हूँ।।
सन्मार्ग दिखाओ कष्ट मिटाओ मोह महा मद दूर करो।
मै शरणे आया अति सुख पाया शांति सुधा रस पूर करो।।
चौ श्रीचन्द्रप्रभ महिमा विधान, यश गोरव गरिमा सुगुणथान।
सुख शांति सुधा के जलधिरूप, शुचि सत्य अहिंसा के स्वरूप।।
तुम चन्द्र वदन लखि चन्द्र देव, सुर नर विद्याधर करत सेव।
तुम गुणगण को, को! लहे पार, कर सके नही वर्णन अपार।।
महिमा प्रभु तेरी जगत व्याप्त, तुम परम पिता सर्वज्ञ आप्त।
तुम चन्द्रप्रभ जग के सुचन्द्र,यश गान करें निशिदिन कवींद्र।।
तुमने ससार असार जान, तज दिया सकल वैभव महान।
जन परिजन समझा पापमूल, ये ही दुख दायक महाशूल।।
इनसे मुह मोड़ा है जिनेश, मिटगई सकल सतति अशेष।
वन में जा दीक्षा धरी आप, तोड़ा बंधन सब पुण्य पाप।।
क्रोधादि कषायें भगा दूर, रागादि दोष को किया चूर।
मद मोह मान माया प्रचंड, कर दिये सहज ही खंड खंड।।
कर चार घातिया कर्म नाश, पा लिया आपने शुचि प्रकाश।
सुख दर्शन वीर्य अनन्त ज्ञान, कर प्राप्त बने तुम शक्तिमान।।
पा केवल ज्ञान जिनेशचन्द्र, भविजीवन को आनन्दकन्द।
कर समवशरण रचना विशाल, कर दिया दूर भ्रम तिमिर जाल।।

दर्शाया तुमने जगत रूप, समझाया सबको शिवस्वरूप।
तुन गंध कुटी राजत जिनेश, जयकार करे सुर नर अशेष।।
मणिमय सिंहासन लसत जान, ता ऊपर चउ अगुल प्रमान।
प्रभु आप विराजो जगतईश, सुरनर इन्द्रादिक नमत शीश।।
चहुं दिशि मुख दीखत है अनूप, खिर रही दिव्यध्वनि विशदरूप।
तुमने दर्शाया जगतरूप, समझाया सबको शिवस्वरूप।।
अमृतमय वाणी का प्रभाव, तज दिये सिंह मृग बैर भाव।
बैठे मयूर अहि एक ठौर, ना बैर परम्पर रहा और।।
सुन जिनवाणी आनन्दकार, हो मन मे हर्षित सब अपार।
कितने जाते भव सिधु पार, निश्चित हो पाते मुक्ति द्वार।।
प्रभु करो वेग मेरी सहाय, मै तुम चरणों में पडा आय।
मेरी भव वाधा टार टार, पहुचा मुझको अब लोक पार।।
मेरी यह विनती बार बार, भव सागर अब प्रभु तार तार।

घत्ता-चन्द्रप्रभु स्वामी, है जगनामी, दयाधुरधर दया करो।
अनुपम गुण गाऊँ, शीश झुकाऊँ, प्रभु मेरे सब पाप हरो।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्दन षष्ठि-व्रतोद्यापने श्रीचन्द्रप्रभजिनाय जयमालार्घ्यं।

दोहा-चन्दन षष्ठी व्रत करे, जो भवि मन वच काय।
सब प्रकार आनन्द हो, विघ्न सकल नश जाय।।

।।इत्याशीर्वाद।।

दोहा-श्रावण शुक्ल अष्टमी, है रविवार महान।
सवत दो हज्जार अरु, ऊपर चौदह जान।।
व्रत पूजा रचना करी, सस्कृत के अनुसार।
भाव सहित पूजा किये, लग जाते भव पार।।

::इति::

जिनगुण सम्पत्ति विधान

समुच्चय पूजन

गीता-जिनगुण महासम्पत्ति के, स्वामी जिनेश्वर को नमूँ।
त्रिभुवनगुरु श्रीसिद्ध को, वन्दन करत भव विष वमूँ।।
त्रयकाल के तीर्थंकरों की, मैं करूँ आराधना।
निज आत्मगुण सम्पत्ति की, इस विध करूँ मैं साधना।।1।।
जिनगुण अतुल सम्पत्ति का, व्रत जो भविक विधिवत् करें।
व्रत पूर्णकर उद्योत हेतु, नाथ गुण अर्चन करें।
मंगल महोत्सव वाद्य से, जिन यज्ञ उत्सव विधि करें।
संगीत नर्तन भक्ति वर्धन, पुण्य अर्जन विधि करें।।2।।

ॐ ह्रीं जिनयज्ञ प्रतिज्ञानाय दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

दोहा- चौबीसों जिनराज को, निजप्रति करूँ प्रणाम।
व्रतउद्योतन अर्चना, करूँ आज इत ठाम।।3।।

आडिल्ल

महावीर अतिवीर, महति जिनवीर हैं।
वर्धमान श्री सन्मति, गुण गंभीर हैं।।
गुण मणि भर्ता, तीर्थंकर को नित नमूँ।
जिन गुण संपति अर्चाकर, नहिं भव भ्रमूँ।।

ॐ ह्रीं जिनगुण सम्पत्ति समूह-अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं जिनगुण सम्पत्ति समूह- अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जिनगुण सम्पत्ति समूह- अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अथाष्टक-नरेन्द्रछंद

भागीरथी नदी के शीतल, जल से झारी भरिये।
श्री जिनवर के पादयुगल में, धारा कर दुःख हरिये।।
जिनगुण सम्पति व्रत उद्योतन, हेतु जजूँ गुण संपद।
परमानंद परमसुख सागर, पाऊँ निजगुण संपद।।
ॐ ह्रीं सकलजिनगुणसंपदे जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व०।
कंचनद्रव सम कुंकुम चदन, भव आतप हर लीजे।
श्री जिनवर के पादयुगल में, अर्चन कर सुख लीजे।। जिनगुण ..
ॐ ह्रीं सकलजिनगुणसंपदे संसारताप विनाशनाय चदनं निर्व०।
मुक्ताफल सम उज्ज्वल अक्षत, सुरभित थाल भराऊँ।
श्री जिनवर के सन्मुख सुन्दर, सुखप्रद पुञ्ज रचाऊँ।। जिनगुण
ॐ ह्रीं सकलजिनगुणसंपदे अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्व०।
कमल मालती पारिजात, अरु चंपक पुष्प मगाऊँ।
भवविजयी जिनवर पदपकज, पूजत काम नशाऊँ।। जिनगुण ..
ॐ ह्रीं सकलजिनगुणसंपदे कामवाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्व०।
लड्डू पेड़ा मिष्ट अंदरसा, फेनी गुजिया लाऊँ।
क्षुधा रोगहर सर्व शक्तिधर, सन्मुख चरू चढ़ाऊँ। जिनगुण ....
ॐ ह्रीं सकलजिनगुणसंपदे क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व०।
मणिमय दीपक गो घृत से भर, जगमग ज्योति जले है।
लोकालोक प्रकाशी जिनवर, पूजत मोह टले है।। जिनगुण ....
ॐ ह्रीं सकलजिनगुणसंपदे मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्व०।
सुरभित धूप धूपघट में नित, खेवत कर्म जले हैं।
आत्मगुणों की सौरभ दशदिश, फैले अयश टले हैं।। जिनगुण ....
ॐ ह्रीं सकलजिनगुणसंपदे अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्व० स्वाहा।

एला केला सेव संतरा, पिस्ता द्राक्ष मंगाऊँ।
अमृतफल के हेतु आपके, सन्मुख आन चढ़ाऊँ।। जिनगुण ....

ॐ ह्रीं सकलजिनगुणसंपदे मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्व० स्वाहा

जल गंधाक्षत पुष्प सुनेवज, दीप धूप फल लाऊँ।
रत्नत्रय निधि हेतु आपके, सन्मुख अर्घ्य चढ़ाऊँ।। जिनगुण ....

ॐ ह्रीं सकलजिनगुणसंपदे अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व०।

दोहा- सकल जगत में शांतिकर, शांति धार सुखकार।
जिनपद में धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।

शांतये शान्ति धारा

सुरतरु के सुरभित सुमन, सुमनस चित्त हरंत।
पुष्पांजलि अर्पण करत, मिटता दुःख तुरंत।।

दिव्य पुष्पांजलिः

ॐ ह्रीं सकल-जिनगुण-संपद्भ्यो नमः। (108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा- चिन्मय ज्योति स्वरूप जिन, परमानंद निधान।
तिन गुण मणिमाला कहूँ, निजसुख सुधा समान।।1।।

स्रग्विणीछंद-

जै तुम्हारे गुणों को सदा गावना, फेर संसार में ना कभी आवना,
जै गुणाधार गुण रत्न भंडार हो, जै महापंच संसार से पार हो।।1।।
श्रेष्ठ दर्शनविशुद्ध्यादि जो भावना, जो धरें सोलहों तीर्थपद पावना।
वो सकल विश्व में धर्म नेता बने, धर्मचक्राधिपति सर्ववेत्ता बने।।2।।
पंचकल्याण भर्ता जगत वंद्य हों, प्रातिहार्यों सुआठों से अभिनंद्य हों।।
जन्म से ही उन्हें दश चमत्कार हों, केवलज्ञान लक्ष्मी के भरतार हों।3।
पूर्ण संज्ञान के दश सुअतिशय कहे, देवकृत चौदहों अतिशयों को लहें।।
नाथ चौंतीस अतिशय महागुण भरें, मुख्य त्रेसठ गुणों से महा सुख धारें।4।

मैं करू भक्ति से नित्य आराधना, हो मुझे आत्म संपत्ति की साधना।।
फेर ना हो जनम मृत्यु का धारना, ज्ञानमति पूर्ण कैवल्यमय पारना।।5।।
घत्ता-जय जय श्रीजिनवर, करम भरमहर, जय शिवसुंदरि के भर्ता।
मैं पूजूँ ध्याऊँ, तुम गुण गाऊँ, निजपद पाऊँ दुख हर्ता।।6।।
ॐ ह्रीं सकल जिनगुण संपद्भ्यो जयमालाअर्घ्यं निर्व० स्वाहा०
गीता-जो भव्य श्रद्धा भक्ति से, जिनगुण सुसंपत्ति व्रत करें।
व्रत पूर्णकर प्रद्योत हेतु, यज्ञ उत्सव विधि करें।।
वे विश्व में संपूर्ण सुखकर, इंद्र चक्रीपद धरें।
फिर 'ज्ञानमति' से पूर्ण गुणमय, तूर्ण शिव लक्ष्मी रें।।1।।
इत्याशीर्वादः

प्रथम वलय पूजा

दर्शनविशुद्धि आदि सोलह, भावना भवनाशिनी।
जो भावते वे पावते अति, शीघ्र ही शिवकामिनी।।
हम नित्य श्रद्धा भाव से, इनकी करें आराधना।
पूजा करें वसुद्रव्य ले, करके विधीवत थापना।।1।।
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणभावना समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणभावना समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणभावना समूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।
अथाष्टक (नदीश्वर...)
पयसागर को जल स्वच्छ, हाटक भृंग भरूँ।
जिनपद में धारा देत, कलिमल दोष हरूँ।।

वर सोलह कारण भाय, तीरथनाथ बनें।

जो पूजें मन वच काय, कर्म पिशाच हनें।।1।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारण-भावना-जिनगुण-संपद्भ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज चंदन कर्पूर, केशर संग घिसा।

जिनगुण पूजा कर शीघ्र, भव भव दुःख पिसा।।2।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारण-भावना-जिनगुण-संपद्भ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल शशि रश्मि समान, अक्षत धोय लिये।

अक्षय पद पावन हेतु, सन्मुख पुंज दिये।3।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारण-भावना-जिनगुण-संपद्भ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चंपक सुम हरसिंगार, सुरभित भर लीने।

भवविजयी जिनपद अग्र, अर्पण कर दीने।।4।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारण-भावना-जिनगुण-संपद्भ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नानाविध घृत पकवान, अमृत सम लाऊँ।

निज क्षुधा निवारण हेतु पूजत सुख पाऊँ।।5।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारण-भावना-जिनगुण-संपद्भ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचन दीपक की ज्योति, दशदिश ध्वाँत हरे।

जिनपूजा भ्रमतम टार, भेद विज्ञान करे।।6।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारण-भावना-जिनगुण-संपद्भ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु धूप सुगंध, खेवत धूम्र उड़े।
निज अनुभव सुख से, दुष्ट कर्मन भस्म उड़े।।7।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारण-भावना-जिनगुण-संपद्भ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता अखरोट बदाम, एला थाल भरें।
जिनपद पूजत तत्काल, सब सुख आन वरें।।8।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारण-भावना-जिनगुण-संपद्भ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चदन अक्षत पुष्प, नेवज दीप लिया।
वर धूप फलों से पूर्ण, तुम पद अर्घ्य दिया।।9।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारण-भावना-जिनगुण-संपद्भ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- सकल जगत में शान्तिकर, शान्तिधार सुखकार।
झारी से धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।10।।

शान्तये शान्तिधारा

कुंद कमल बेला वकुल, पुष्प सुगंधित लाय।
जिनगुण हेतु मैं करूँ, पुष्पाजलि सुखदाय।।11।।

दिव्यपुष्पाजलिः

प्रत्येक अर्घ्य

जो पच्चिस मल दोष विवर्जित, आठ अग पूर्ण रहा।
भक्ति आदी आठ गुणों युत, सम्यग्दर्शन शुद्ध कहा।।
जल गंधादिक अष्ट द्रव्य ले, पूजत ही भवसिंधु तिरूँ।
परमानंद सुखामृत पीकर, भवकानन में नाहिं फिरूँ।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा दर्शनविशुद्धिभावनायै-जिनगुणसंपदे-मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि0 स्वाहा।1।

दर्शन ज्ञान चारित्र तथा, उपचार विनय ये चार कहें।
इनसे सहित सदा जिनवचरत, भविजन शिव का द्वार लहें।।
जल गंधादिक अष्ट द्रव्य ले, पूजत ही भवसिंधु तिरूँ।
परमानंद सुखामृत पीकर, भवकानन में नाहिं फिरूँ।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा विनयसंपन्नताभावनायै-जिनगुण-संपदे मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।2।

शील और व्रत के पालन में, निरतिचार जो रहें सदा।
सहसअठारह शीलपूर्णकर, निजआतमरत रहें सदा।।जल०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा शीलव्रतेष्वनतिचारभावनायै-जिनगुणसंपदे-मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।3।

जो सतत ही चार तरह के, अनुयोगों का मनन करें।
पढ़ें पढ़ावें गुणें गुणावें, वे ही श्रुतमय तीर्थ करें।।जल०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अभीक्ष्णज्ञानोपयोगभावनायै -जिनगुणसंपदे मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।4।

भवतन भोग विरागी होकर, सत्यधर्म में प्रेम करें।
वे संवेग भावना बल से, स्वात्मसुधारस पान करें।।जल०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा संवेगभावनायै-जिनगुणसंपदे-मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।5।

यथाशक्ति जो चार दान औ, रत्नत्रय का दान करें।
वे प्राणी वर त्यागधर्म से, सुखमय केवलज्ञान वरें।।जल०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा शक्तितस्त्यागभावनायै-जिनगुण-संपदे -मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।6।

अनशन आदी बाह्यतपों को, यथाशक्ति रुचि सहित करें।
प्रायश्चित्त विनय वैयावृत आदिक से मन शुद्ध करें।।

जल गंधादिक अष्ट द्रव्य ले, पूजत ही भवसिंधु तिरूं।
परमानंद सुखामृत पीकर, भवकानन में नाहिं फिरूं।।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा शक्तितस्तपोभावनायै-जिनगुण-संपदे -मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।7।

साधूजन मन समाधान कर, धर्म शुक्ल में अचल करें।
साधुसमाधी पालन करके, तीर्थंकर पद अमल धरें।।जल०।।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा साधुसमाधिभावनायै-जिनगुणसंपदे -मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।8।

प्रासुक औषधि आदि वस्तु से, मुनि की वैयावृत्य करे।
संयम साधक, मन को रुचिकर, सेवा कर बहुपुण्य भरें।।जल०।।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा वैयावृत्यकरणभावनायै-जिनगुण-संपदे -मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।9।

छ्यालिस गुण धर दोष अठारह, शून्य प्रभु अर्हंत कहे।।
समवशरण में राजित जिनवर, उनकी भक्ति नित्य रहे।।जल०।।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अर्हद्भक्तिभावनायै-जिनगुणसंपदे -मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।10।

पंचाचार स्वयं पालें नित, शिष्यों को भी पलवावें।
शिक्षा दीक्षा प्रायश्चित्त दे, सूरी सबके मन भावें।।जल०।।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा आचार्यभक्तिभावनायै-जिनगुण-संपदे-मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।11।

द्वादशांगमय श्रुत के ज्ञाता, श्रुतपारंगत गुरु कहें।
अथवा तत्कालिक पूरण श्रुत, जाने बहुश्रुत गुरु रहें।।जल०।।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा बहुश्रुतभक्तिभावनायै-जिनगुण-संपदे-मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।12।

जिनवर भाषित प्रवचन में रत, प्रवचन भक्ति धरें मन में।
अथवा चतुःसंघ में, रत जो उन पद पूजूँ मैं।।जल०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा प्रवचनभक्तिभावनायै-जिनगुण-संपदे-मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।13।

आवश्यक की हानि न करते, समय-समय निज क्रिया करें।
षट् आवश्यक के बल निश्चय, आवश्यक को पूर्ण करें।।जल०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा आवश्यकापरिहाणिभावनायै जिनगुणसंपदे-मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।14।

शिवपुरमार्ग प्रभावन करते, विद्या तप दानादिक से।
मार्गप्रभावन भावन भाकर, निज आतम पावन करते।।जल०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा मार्गप्रभावनाभावनायै-जिनगुण-संपदे-मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।15।

प्रवचन में वत्सलता धारें, जिनवच रत में प्रीति धरें।
चार संघ में गाय वत्सवत्, सहज प्रेम भव भीति हरे।।जल०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा प्रवचनवत्सलत्वभावनायै-जिनगुण-संपदे-मुक्तिपद-कारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।16।

पूर्णार्घ्य

सोलह कारण भावन जग में, पुण्य सातिशय की जननी।
तीर्थंकर पद की कारण हैं, निश्चित भवसागर तरणी।।जल०।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारण-भावनाभ्यो जिनगुणसंपद्भ्यो मुक्तिपद-कारण-स्वरूपेभ्यः पूर्णार्घ्यं।

दोहा- सकल जगत में शान्तिकर, शान्तिधार सुखकार।
झारी से धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।

शान्तये शान्तिधारा

कुंद कमल वेला वकुल, पुष्प सुगंधित लाय।
जिनगुण हेतु मैं करूँ, पुष्पांजलि सुखदाय।।11।।

दिव्यपुष्पांजलिः

जयमाला

दोहा- स्वातम रस पीयूष से, तृप्त हुये जिनराज।
सोलह कारण भावना, भाय हुये सिरताज।।1।।

चामर छन्द

दर्श की विशुद्धि जो पचीस दोष शून्य है।
आठ अंग से प्रपूर्ण सप्त भीति शून्य है।।
सत्य ज्ञान आदि तीन रत्न में विनीत जो।
साधुओ में नम्रवृत्ति धारता प्रवीण वो।।1।।
शील मे व्रतादि में सदोषवृत्ति न धरें।
विदूर अतीचार से तृतीय भावना धरें।।
ज्ञान के अभ्यास में सदैव लीनता धरें।
भावना अभीक्ष्ण ज्ञान मोहध्वात को हरें।।2।।
देह मानसादि दुःख से सदैव भीरुता।
भावना सवेग से समस्त मोह जीतता।।
चार सघ को चतुःप्रकार दान जो करें।
सर्व दु.ख से छुटें सुज्ञान संपदा भरें।।3।।
शुद्ध तप करें समस्त कर्म को सुखावते।
साधु की समाधि में समस्त विघ्न टारते।।
रोग कष्ट आदि में गुरुजनों कि सेव जो।
प्रासुकादि औषधी सुदेत पुण्यहेतु जो।।4।।
भक्ति अरिहत सूरि बहुश्रुतों की भी करें।
प्रवचनों की भक्ति भावना से भवदधी तरें।
छै क्रिया अवश्य करण योग्य काल में करें।
मार्ग की प्रभावना सुधर्म द्योत को करें।।5।।

वत्सलत्व प्रवचनों में धर्म वात्सल्य है।
रत्नत्रयधरों में सहज प्रीति धर्म सार है।।
सोलहों सुभावना पुनीत भव्य को करें।
तीर्थनाथ संपदा सुदेय मुक्ति भी करें।।6।।
वंदना करूँ पुनः पुनः करूँ उपासना।।
अर्चना करूँ पुनः पुनः करूँ सुसाधना।
मैं अनत दुःख से बचा चहूँ प्रभो सदा।
ज्ञानमती संपदा मिले अनत सौख्यदा।।7।।

दोहा- तीर्थंकर पद हेतु ये, सोलह भावन सिद्ध।
जो जन पूजें भाव से, लहे अनूपम सिद्धि।।8।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावनाभ्यो जयमाला अर्घ्यं।

गीता छन्द-जो भव्य श्रद्धा भक्ति से, जिनगुण सुसंपति व्रत करें।
व्रत पूर्ण कर प्रद्योत हेतु, यज्ञ उत्सव विधि करें।।
वे विश्व में संपूर्ण सुखकर, इन्द्र चक्री पद धरें।
फिर ज्ञानमती से पूर्ण गुणमय, तूर्ण शिवलक्ष्मी वरें।।1।।

इत्याशीर्वादः

द्वितीय वलय पूजा

गीता छन्द

वरपंच कल्याणक जगत् में, सर्वजन से वंद्य हैं।
त्रैलोक्य में अति क्षोभ कर, सुर इन्द्रगण अभिनंद्य हैं।।
मैं पंचमी गति प्राप्त हेतु, पचकल्याणक जजूँ।
आह्वाननादी विधि करूं, संपूर्ण कल्याणक भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणक समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणक समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणक समूह! अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अथाष्टक

पयोसिंधु को नीर झारी भराऊँ, प्रभो आपके पाद धारा कराऊँ।।
महापचकल्याणकों को जजूँ मै, महापचसंसार दुख से बचूँ मैं।।

ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणकेभ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

सुगंधीत चदन कपूरादि वासा, चढ़ाते तुम्हें सर्व सताप नाशा।
महापचकल्याणकों को जजूँ मैं, महापचसंसार दुख से बचूँ मैं।।

ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणकेभ्यः संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

पयोराशि के फेन सम तंदुलो को, चढ़ाऊँ तुम्हें सौख्य अक्षय मिले जो।
महापचकल्याणकों को जजूँ मैं, महापंचसंसार दुख से बचूँ मैं।।

ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणकेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

जुही केवड़ा चपकादि सुमन हैं, तुम्हें पूजते काम व्याधी शमन हैं।
महापंचकल्याणकों को जजूँ मैं, महापंचसंसार दुख से बचूँ मैं।।

ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणकेभ्यः कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

कलाकंद लाड्डू भरा थाल लाऊँ, क्षुधा डाकिनी नाश हेतु चढ़ाऊँ।
महापंचकल्याणकों को जजूँ मैं, महापंचसंसार दुख से बचूँ मैं।।

ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणकेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मणीदीप ज्योती भुवन को प्रकाशे, करूँ आरती मोह अंधेर नाशे।
महापंचकल्याणकों को जजूँ मैं, महापंचसंसार दुख से बचूँ मैं।।
ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणकेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।
अगनि पात्र में धूप खेऊँ दशांगी, करम धूम्र फैले चहुँदिक सुगंधी।
महापचकल्याणकों को जजूँ मै, महापंचसंसार दुख से बचूँ मैं।।
ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणकेभ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।
नारगी मुसम्बी अनंनास लाऊँ, महामोक्षफल हेतु आगे चढ़ाऊँ।
महापचकल्याणकों को जजूँ मैं, महापंचसंसार दुख से बचूँ मैं।।
ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणकेभ्यः मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।
जलादी वसुद्रव्य से थाल भरके, चढ़ाऊँ तुम्हें अर्घ्य संसार उर के।
महापचकल्याणकों को जजूँ मैं, महापचसंसार दुख से बचूँ मैं।।
ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणकेभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा- सकल जगत में शांतिकर, शांतिधार सुखकार।
जिनपद में धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।

शांतये शांतिधारा

सुरतरु के सुरभित सुमन, सुमनस चित्त हरंत।
पुष्पाञ्जलि अर्पण करत, मिटता दुःख तुरंत।।

दिव्य पुष्पांजलिः

प्रत्येक अर्घ्य (गीता छन्द)

छह मास पहले गर्भ आगम, से रतन बरसें यहाँ।
छप्पन कुमारी देवियाँ, जिनमात को सेवें यहाँ।।

सोलह सुपन से गर्भ मंगल, सूचना होती यहाँ।
हम गर्भ कल्याणक जजें, वसु अर्घ्य ले कर में यहाँ।।2।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा स्वर्गावतरणगर्भकल्याणजिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन जन्म से सुरलोक, मे घंटादि बाजे बज उठें।
जिन जन्म उत्सव के लिये, इन्द्रादि आसन कँप उठें।।
सुरशैल पर अभिषेक कर, प्रभु को पुनः लाते यहाँ
हम जन्म कल्याणक जजे, वसु अर्घ्य ले कर में यहॉं।।1।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा जन्माभिषेककल्याणजिनगुणसंपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव लोक तनु मे हो विरत, द्वादस अनुप्रेक्षा करें।
लौकातिको का मस्तवन सुन, नाथ फिर दीक्षा धरे।।
इन्द्रादि सुरगण कर रहे, दीक्षा महोत्सव विधि यहॉं।
हम निष्क्रमण कल्याण पूजे, अर्घ्य ले कर में यहॉं।।3।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा परिनिष्क्रमणकल्याणजिनगुणसंपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु शुक्ल ध्यानानल जला, सब घातिया को ज्वालते।
कैवल्य लक्ष्मी पाय के, द्वादश गणों मे राजते।।
निज दिव्य ध्वनि पीयूष से, भवि खेत को सींचे यहाँ।
हम ज्ञानकल्याणक जजें, वसु अर्घ्य ले कर में यहाँ।।4।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा केवलज्ञानकल्याणजिनगुणसंपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यमराज को जड़मूल से, संहार कर शिवपति बने।
स्वात्मोत्थ परमाल्हाद सुख, संतृप्त त्रिभुवनपति बने।।

निर्वाण कल्याणक महोत्सव, सुर तभी करते यहाँ।
हम मोक्षकल्याणक जजें, वसु अर्घ्य ले कर में यहाँ।।5।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा निर्वाणकल्याणजिनगुणसंपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- गर्भ जन्म तप ज्ञान अर, कल्याणक निर्वाण।
पाँचों को पूर्णार्घ्य ले, पूजूँ हो कल्याण।।6।।

ॐ ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः पंचकल्याणकेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- सकल जगत में शान्तिकर, शान्तिधार सुखकार।
झारी से धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।

शान्तये शान्तिधारा

कुंद कमल वेला वकुल, पुष्प सुगंधित लाय।
जिनगुण हेतु मैं करूँ, पुष्पांजलि सुखदाय।।11।।

दिव्यपुष्पांजलिः

जयमाला

सोरठा- परम पुण्यमय तीर्थ, तीर्थंकर तिहुँलोक में।
शरण गही धर प्रीति, कर्म पक प्रक्षालने।।1।।

रोला- छह महीने ही पूर्व, पृथ्वी पर आने से।
अतिशय पुण्य प्रभाव, दिव से च्युति पाने से।।
रत्न बरसते नित्य, नभ से पंद्रह मासा।
श्री ही देवी आदि, सेव करें जिनमाता।।1।।
सोलह स्वप्न प्रदर्श, मात गरभ जब बसते।
इन्द्रादिक सुर आय, गर्भ महोत्सव करते।।
मति श्रुत अवधि सुज्ञान, तुमको नित्य रहे हैं।
गर्भ विषें भी आप, सुख से तिष्ठ रहे हैं।।2।।

जन्म समय तत्काल, इन्द्रन आसन कंपे।
नमन करें तत्काल, सुरगण तुम गुण जंपे।
जिनशिशु सद्योजात, मेरु शिखर ले जाके।
इन्द्र करें अभिषेक, उत्सव अधिक रचाके।।3।।
स्वर्गों से ही वस्त्र, भोजन आदि सुखन में।
बाल्य समय सुरसंग, खेलें मात अँगन में।।
जब होवे वैराग्य, लौकांतिक सुर आते।
जिनगुणमंगलकीर्ति, गाकर पुण्य कमाते।।4।।
पुनः इन्द्रगण आय, परिनिष्क्रमण मनावें।
महामहोत्सव साज, करके पुण्य बढ़ावें।।
प्रभू महाव्रतधार, आतम ध्यान धरे हैं।
कर्म घातिया चूर, केवलज्ञान वरे हैं।।5।।
समवसरण रचदेव, ज्ञान कल्याणक पूजें।
जब जिन करत विहार, जनमनपावन हूजें।।
भव्य अनंतानंत, धर्मामृत को पीते।
जन्म मरण की व्याधि, नाश करमरिपु जीतें।।6।।
जिनवर योग निरोध, करके करम जलावें।
तत्क्षण शिवतिय संग, लोक शिखर पर जावें।।
सकल सुरासुर आय, मोक्षकल्याणक पूजें।
जिनपद पंकज पूज, भविजन अघरिपु धूजें।।7।।
इसविध पचकल्याण, जिनगुण नित्य जजूँ मैं।
पंचभ्रमण चकचूर सर्वकल्याण भजूँ मैं।।
परमसुखास्पद धाम, परमानंद स्वरूपी।
ज्ञानमती से पूर्ण, पाऊँ मैं चिद्रूपी।।8।।

दोहा- पंच महाकल्याणमय, जिनगुणसंपद जान।
जो जन पूजें भाव से, लहें सौख्य निर्वाण।।9।।

ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणक जिनगुणसंपद्भ्यो जयमालार्घ्यं निर्व० स्वाहा।

गीता- जो भव्य श्रद्धा भक्ति से, जिनगुण सुसंपति व्रत करें।
व्रत पूर्ण कर प्रद्योत हेतु, यज्ञ उत्सव विधि करें।।
वे विश्व में संपूर्ण सुखकर, इन्द्र चक्री पद धरें।
फिर ज्ञानमती से पूर्ण गुणमय, तूर्ण शिवलक्ष्मी वरें।।1।।

इत्याशीर्वादः

तृतीय वलय पूजा

गीता- शुभ प्रातिहार्य सुआठ, जिनगुण संपदा सूचित करें।
तीनों जगत की ऋद्धियाँ, इस भांति से प्रभु को वरें।।
आनंदकंद महान, परमानंद अमृत विस्तरें।
जो भव्यजन उन पूजते, वे स्वात्मरस अमृत भरें।।1।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपदसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपद समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपद समूह! अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं

अथाष्टक

सुरगंगा को नीर कनक झारी भरूँ।
श्रीजिनवर पद पूज व्यथा सारी हरूँ।।
प्रातिहार्य वर आठ सु जिनगुण संपदा।
जो अर्चे धर प्रीति लहें सुख संपदा।।1।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपद्भ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

अष्टगंध वर सुरभित चंदन लाइया।
सकल तापहर जिनवर चरण चढ़ाइया।।
प्रातिहार्य वर आठ सु जिनगुण संपदा।
जो अर्चे धर प्रीति लहैं सुख संपदा।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपद्भ्यः संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

उत्तम अक्षत धोय अखंडित लाइया।
कर्म पुंज क्षय हेतू पुंज रचाइया।।प्राति०।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपद्भ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

मौलसिरी औ पारिजात सुम लायके।
पूजूँ श्री जिनपाद पद्म हरषायके।।प्राति०।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपद्भ्यः कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

घेवर फेनी बरफी मोदक आदि ले।
स्वातम अनुभव हेतु जजूं तुम पद भले।।प्राति०।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपद्भ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

कनक पात्र मे दीप जलाकर लाइया।
अतर ज्योति हेतु जिनेश्वर ध्याइया।।प्राति०।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपद्भ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

धूप सुगधित अग्नि पात्र में खेवते।
कर्म शत्रु को नाश करूँ तुम सेवते।।प्राति०।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपद्भ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

केला एला दाडिम आदिक फल लिये।
मोक्ष महाफल हेतु नाथ पद अर्चिये।।प्राति०।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपद्भ्यः मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल गंधादिक अर्घ्य मिलाकर थाल में।
तीर्थंकर पद पद्म जजूँ त्रय काल में।।प्राति०।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपद्भ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा- सकल जगत में शांतिकर, शांतिधार सुखकार
जिनपद में धारा करूँ, सकलसघ हितकार।।

शातये शांतिधारा।

सुरतरु के सुरभित सुमन, सुमनस चित्त हरंत।
पुष्पांजलि अर्पण करत, मिटता दु.ख तुरंत।।

पुष्पाजलि·

प्रत्येक अर्घ्य

शभु छंद-

विकसित पुष्पों के गुच्छों से, तरुवर अशोक है शोभ रहा।
रत्नों की अनुपम कांति से, जन-जन के मन को मोह रहा।।
भविजन के मन का शोक हरे, यह प्रातिहार्य महिमाशाली।
हम पूजें अर्घ्य चढ़ाकर के, जिनगुण संपत्ती मणिमाली।।1।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अशोकवृक्ष-महाप्रातिहार्यजिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर द्वारा नभ से वर्षाये, ये खिले कुसुम मानो हँसते।
श्रीजिनवर का शुभ उज्ज्वल यश, मानो प्रमुदित वर्णन करते।।
भविजन के मन को विकसाता, यह प्रातिहार्य महिमाशाली।हम पूजें०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सुरपुष्पवृष्टि-महाप्रातिहार्य-जिनगुणसंपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

जो सात शतक औ अठ्ठारह, भाषा मय जिनवर की वाणी।
जो स्याद्वाद पीयूष भरी, दिव्यध्वनि त्रिभुवन कल्याणी।।
नित भविजन के भवरोग हरे, यह प्रातिहार्य महिमाशाली।।
हम पूजें अर्घ्य चढ़ाकर के, जिनगुण संपत्ती मणिमाली।।1।।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा दिव्यध्वनि-महाप्रातिहार्यजिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
यक्षों द्वारा ढोरे जाते ये, चौंसठ चमर बताते हैं।
जो श्री जिन आश्रय लेते हैं, वे निश्चित ऊपर जाते हैं।।
भविजन को ऊर्ध्वगतीकारी, यह प्रातिहार्य महिमाशाली।हम पूजें०
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा चतुःषष्टि-चामर-महाप्रातिहार्य-जिन-गुणसंपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।
नाना रत्नों से जडा हुआ, सिंहासन सुर नर मन मोहे।
प्रभु के तन की काति से वह, शतगुणित चमकता नित सोहे।।
अनुपम वैभव को प्रगट करे, यह प्रातिहार्य महिमाशाली।हम पूजें०
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सिंहासन-महाप्रातिहार्यजिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
प्रभु के तन की द्युति ही मानो, भामडल बन कर प्रगट हुई।
जन उसमें अपने सात भवों, को देख रहे हैं सही सही।।
भविजन वैराग्य बढ़ाने को, यह प्रातिहार्य महिमाशाली।हम पूजें०
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा भामंडल-महाप्रातिहार्यजिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
देवों की दुन्दुभि बाज रही, मानो भविजन आह्वान करें।
आवो आवो हे भव्य जीव, जिनदर्शन कर निज भान करें।।
श्रीजिन का गौरव प्रगट करे, यह प्रातिहार्य महिमाशाली।हम पूजें०
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा देव-दुंदुभि-महाप्रातिहार्यजिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ये तीन छत्र शशि मंडल सम, उनमें मुक्ता फल लटक रहे।
जिनदेव देव के त्रिभुवन की, प्रभुता को मानो प्रगट कहें।।
भविजन के तीन ताप शामक, यह प्रातिहार्य महिमाशाली।हम पूजें०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा छत्रत्रय-महाप्रातिहार्यजिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा- तीर्थंकर के आठ ये, प्रातिहार्य जग सिद्ध।
पूजूँ पूरण अर्घ्य ले, पाऊँ जिनगुणरिद्ध।।9।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अष्टमहाप्रातिहार्यजिनगुण-संपदे पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- सकल जगत में शान्तिकर, शान्तिधार सुखकार।
झारी से धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।

शान्तये शान्तिधारा

कुंद कमल बेला वकुल, पुष्प सुगंधित लाय।
जिनगुण हेतु मैं करूँ, पुष्पांजलि सुखदाय।।11।।

जयमाला

दोहा-परमशुद्ध परमात्मा, परमपुण्य की खान।
तुम गुणमणि माला कहूँ, स्वात्म सौख्य हित जान।।1।।

छन्द-अशोक पुष्प मंजरी

नाथ आप को निहार चर्म नेत्र से तथापि,
हर्ष हो महान तीन लोक में नमावता।
ज्ञान नेत्र से यदी विलोक लूँ जिनेश आप,
तो पुनः कियंत हर्ष हो न पार पावता।।
आप ही अनंत सौख्य राशि तेज पुंज देव,
आप ही त्रिलोक में अपूर्व कांतिमान हो,
योगिवृंद चित्तपद्म के विकास हेतु सूर्य,
भव्यस्वांत कौमुदी विकास हेतु चाँद हो।।1।।

आपकी अनक्षरी ध्वनि सुने अनंत भव्य,
चित्त में धरें सदैव जन्म रोग टारते।
आप नाम मात्र को जपें यदी स्वचित्त में,
अनंत दुःख वार्धि से निजात्म को उबारते।।
आप ज्ञान हैं महान् तीन लोक के समान,
हो असख्य लोक तो भी एक कोण में रहें।
सत्य में अनंत औ अनंत मान अभ्र भी,
निलीन आप ज्ञान में विशालता किती कहें।।2।।
आप भक्त से समीप सर्व सौख्य आय के,
अह प्रथम अहं प्रथम कि बुद्धि से हि धावते,
कल्पवृक्ष कामधेनु चिंतितार्थ दायिरत्न,
आपकी अचिन्त्य शक्ति देख के लजावते।
सर्व सिद्धि दायिनी जिनेन्द्र भक्ति एक ली।,
समस्त दुःख चूरणी धरा विषें प्रसिद्ध है।
साधु वृद के अनेक चित्त के विकल्प को,
क्षणेक मे निवारणे अमोघ शस्त्र सिद्ध है।।3।।
आप कीर्ति बार बार शास्त्र में सुनी अतः
जिनेन्द्रदेव! आज आप शर्ण आन के लिया।
तारिये न तारिये जंचे प्रभो सुकीजिये,
प्रमाण आप ही मुझे स्वचित्त में दृढ़ी किया।।
आज तो दयानिधान! भक्त पे दयार्द्रभाव
कीजिये उबारिये अनंत दुःख सिंधु से।
ज्ञान दर्श सौख्य वीर्य संपदा निजात्म की जु
मोहशत्रु से अभी दिलाय दीजिये मुझे।।4।।

दोहा- प्रातिहार्य गुण के धनी, सिद्धि वधू के कांत।
'ज्ञानमती' सुख पूर्ण कर, करिये पूर्ण प्रशांत।।5।।

ॐ ह्रीं अष्ट महाप्रातिहार्य-जिनगुण-संपद्भ्यो जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता- जो भव्य श्रद्धा भक्ति से, जिनगुणसुसंपति व्रत करें।
व्रत पूर्ण कर प्रद्योत हेतु, यज्ञ उत्सव विधि करें।।
वे विश्व में संपूर्ण सुखकर, इन्दचक्री पद धरें।
फिर 'ज्ञानमती' से पूर्ण गुणमय, तूर्ण शिवं लक्ष्मी वरें।।1।।

चतुर्थ वलय पूजा

गीता-जिन जन्म के अतिशय सहज, दश विश्व मे विख्यात है।
जो तीर्थकर्ता के अपूरव, पुण्य के फल ख्यात हैं।।
मैं नित्य जिनगुण सपदा, को पूजहूँ अति चाव से।
आह्वान करके अर्चना विधि, मै करूँ अति भाव से।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं दशसहजातिशय जिनगुणसंपद समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं अर्हं दशसहजातिशय जिनगुणसंपद समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अर्हं दशसहजातिशय जिनगुणसंपद समूह! अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक (गीता छन्द)

गंगानदी का नीर निरमल, बाह्य मल शोधन करे।
जिनपद पंकज धार देते, कर्ममल तत्क्षण हरे।।
तीर्थेश के दश जन्म के, सहजातिशय जो पूजते।
निज आत्म सहजानंद अनुभव, पाय दुख से छूटते।।1।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

वर अष्टगंध सुगंध शीतल, ताप सब तन की हरे।

जिनपाद पंकज पूजते, भव ताप को भी परिहरे।।तीर्थेश०।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यः संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

उज्ज्वल अखंडित शालि, सुरभित पुंज तुम आगे धरूँ।

निजज्ञान सुख गुण पुज हेतु, नाथ पद अर्चन करूँ।।तीर्थेश०।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

बेला चमेली कुद जूही, सर्वदिक सुरभित करें।

मदनारि जेता जिनचरण, पूजत सुमन सुमनस करें।।तीर्थेश०।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यः कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

अमृत सदृश पकवान नाना, भाँति के भर थाल मे।

गुण सिधु जिन पद पूजते, स्वात्मानुभव हो हाल में।।तीर्थेश०।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

घृत दीप औ कर्पूर ज्योति, बाह्य तम को परिहरे।

कैवल्य ज्योति पूजते, निजज्ञान ज्योति अघहरे।।तीर्थेश०।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

कृष्णागरु वरधूप सुरभित, खेवते जिन पास में।

सब दुरितशत्रू दूर भागें, पुण्य सागर पास में।।तीर्थेश०।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

अंगूर दाडिम आम्र अमरख, सरस फल अर्पण करूँ।
निज आत्म गुण की प्राप्ति हेतु, आप पद अर्चन करूँ।।तीर्थेश०।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यः मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल गंध तंदुल पुष्प नेवज, दीपधूप फलार्घ्य ले।
त्रैलोक्यपति के पाद-राराসিज, पूजते शिवफल मिले।।तीर्थेश०।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा- सकल जगत मे शांतिकर, शांतिधार सुखकार।
जिनपद में धारा करूँ, सकल सघ हितकार।।

शातये शांतिधारा।

सुरतरु के सुरभित सुमन, सुमनस चित्त हरत।
पुष्पांजलि अर्पण करत, मिटता दुःख तुरंत।।

दिव्य पुष्पाजलि

प्रत्येक अर्घ्य

नरेन्द्र-तीर्थंकर के जन्म काल से, स्वेद न तन में जानो।
मातु उदर से जन्मे फिर भी, जन्म अपूरब मानो।।
अर्घ्य चढ़ाकर जिनगुण अतिशय, पूजूँ भक्ति बढ़ाके।
रोग शोक दुख संकट तत्क्षण, नाशूँ जिनगुण गाके।।1।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा निःस्वेदत्व-सहजातिशय-जिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के निर्मल तन में, मल मूत्रादि न होवें।
प्रभु के गुण नाम मंत्र भी, भव भव का मल धोवे।।अर्घ्य०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा निर्मलत्व-सहजातिशय-जिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के जन्म समय से, तन में रुधिर नहीं है।
दुग्ध सदृश है धवल रुधिर जो अतिशय सहज सही है।।अर्घ्य०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा क्षीरगौररुधिरत्व-सहजातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

प्रभु के तन की सुन्दर आकृति, समचतुरस्र बखानी।
नाम कर्म ब्रह्मा ने सचमुच, अनुपम रचना ठानी।।अर्घ्य०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा समचतुरस्रसंस्थान-सहजातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

वज्रवृषभनाराच सहनन, उत्तम प्रभु का जानो।
परमपुण्यमय अद्भुत तन को, गुण गाकर भव हानो।।अर्घ्य०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा वज्रवृषभनाराच-संहनन-सहजातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपद- कारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिशय सुन्दर रूप मनोहर, उपमा रहित सुहाता
इन्द्र हजार नेत्र कर निरखे, तो भी तृप्ति न पाता।।अर्घ्य०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सौरूप्य-सहजातिशय-जिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के अनुपम तन मे, अति सौगध्य सुहावे
इस गुण का अर्चन करके जन, यश सुरभी महकावें।।अर्घ्य०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सौगन्ध-सहजातिशय-जिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक हजार आठ लक्षण शुभ, प्रभु के तन में भासें।
एक एक लक्षण की पूजा, जिन लक्षण परकाशे।।अर्घ्य०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सौलक्षण्य-सहजातिशय-जिनगुण-संपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपाये नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

बल अतुल्य तीर्थंकर तन का, तुलना नहीं जगत में।
इस गुण की पूजा करने से, आतम बल हो क्षण में।।अर्घ्य०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अप्रमितवीर्य-सहजातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

प्रियहित वचन प्रभू के अनुपम, अमृतसम सुखदायी।
सरस्वती ने मुक्तकंठ से, जिनगुण महिमा गायी।।अर्घ्य०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा प्रियहितवादित्व-सहजातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अंर्घ्यं नि० स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा- तीर्थंकर शिशु के सहज, दश अतिशय अभिराम
पूरण अर्घ्य चढ़ाय मैं, पूजूँ विश्व ललाम।।11।।

ॐ ह्रीं दश-सहजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यः पूर्णार्घ्यं निर्व.स्वाहा।

दोहा- सकल जगत में शान्तिकर, शान्तिधार सुखकार।
झारी से धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।

शान्तये शान्तिधारा

कुद कमल बेला वकुल, पुष्प सुगंधित लाय।
जिनगुण हेतु मैं करूँ, पुष्पांजलि सुखदाय।।11।।

पुष्पाञ्जलि.

जयमाला

सोरठा- त्रिभुवन जन उद्धार की, करुण भावना चित्त।
तीर्थंकर पद पावते, गाऊँ तिन गुण नित्त।।1।।

चाल-हे दीन बन्धु

जैवंत तीर्थमंत अतुल गुणनिधी भरें।
जैवत देहमंत दश अतिशय सहज धरें।।
जो नाथ के इन अतिशयों की अर्चना करें।
लोकातिशायि पुण्य की उपार्जना करें।।2।।

तन में न पसीना-नही मल मूत्र हो कभी।
पयसम रुधिर हो समचतुष्क सौम्य आकृति।।
होता है वज्र वृषभमय नाराच संहनन।
महिमानरूप तनसुगध सहज सुलक्षण।।3।।
परिमाण रहित वीर्य हो प्रियहितकारी वाणी।
भविजन के जन्म रोग नाश हेतु कल्याणी।।
दश जन्म के अतिशय त्रिलोक पूज्य कहाते।
मुक्त्यगना का आप मे आकर्ष बढाते।।4।।
सब लोक औ आलोक का साम्राज्य दिलाते।
फिर अत मे त्रैलौक्य के मस्तक पे बिठाते।।
सद्गुण अनतानत से भण्डार भराते।
आनन्त्य काल सौख्य सुधा पान कराते।।5।।
मैं भक्ति भाव से गुणो की अर्चना करूँ।
अपने गुणो की प्राप्ति हेतु वदना करूँ।।
हे नाथ! तुम प्रसाद से अब जन्म ना धरूँ।
बस 'ज्ञानमती' पूरिये अभ्यर्थना करूँ।।6।।

घत्ता-

तीर्थंकर गुणगण, अनुपम निधि मणि, जो भविजन निजकठ धरे।
सो शिवरमणी वर अनुपमसुखकर जिनगुणसंपति शीघ्र वरे।।7।।

ॐ ह्रीं जन्मसंबंधि-दशसहजातिशय-जिनगुणसंपदभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता- जो भव्य श्रद्धा भक्ति से, जिनगुणसुसपति व्रत करें।
व्रतपूर्णकर प्रद्योत हेतू, यज्ञ उत्सव विधि करें।।
वे विश्व मे सपूर्ण सुखकर, इन्द्र चक्रीपद धरें।
फिर 'ज्ञानमति' से पूर्ण गुणमय, तूर्ण शिव लक्ष्मी वरें।।1।।

इत्याशीर्वाद.

पंचम वलय पूजा

नरेन्द्र- केवल ज्योति प्रगट होते ही, दश अतिशय प्रगटे हैं।
अखिल विश्व में शांती हेतु, अद्भुत गुण चमके हैं।।
तीर्थंकर के इन अतिशय को, पूजूँ मन वच तन से।
गुणरत्नाकर में अवगाहन कर, छूटूँ भव वन से।।1।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय-जिनगुणसंपद समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसंपद समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसंपद समूह! अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं

अष्टक

क्षीराबुधि जल अति स्वच्छ, प्रासुक भृंग भरूँ।
जिनगुण की पूजन हेतु, धारा तीन करूँ।।
घातीक्षय से उत्पन्न, अतिशय नित्य जजूँ।
निज घातिकरम क्षय हेतु, जिनपद पद्म भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

मलयज चदन कर्पूर, केशर मिश्र करूँ।
निज आतम गुण सौगंध्य हेतू, अर्च करूँ।।घाती०।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यः संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

मुक्तासम अक्षत श्वेत, जिनगुण सम सोहें।
मैं पुज चढ़ाऊं नित्य, अनुपम सुख हो है।।घाती०।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

सुरतरु के सुरभित पुष्प, नाना वर्ण लिये।
सौगंधित जिनपद पद्म, रुचि से भेंट किये।।
घातीक्षय से उत्पन्न, अतिशय नित्य जजूँ।
निज घातिकरम क्षय हेतु, जिनपद पद्म भजूँ

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यः कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

बरफी पेड़ा पकवान, पायस थाल भरे।
क्षुधा रोग निवारण हेतु, तुम ढिंग भेंट करें।।घाती०।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दीपक की ज्योति उद्योत, भ्रम तम दूर करे।
जिनगुण का अर्चन शीघ्र, भेद विज्ञान करे।।घाती०।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

दश गंध सुगंधित धूप, खेऊँ तुम आगे
निज आतम अनुभव होय, कर्म अरी भागें।।घाती०।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

पिस्ता अखरोट बदाम, आम अनार लिये।
जिन गुण को अर्चूं नित्य, पाऊ सौख्य हिये।।घाती०।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यः मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल चंदन आदि मिलाय, उत्तम अर्घ्य करूँ।
जिनवर पद पद्म चढ़ाय, सम्यक् रत्न भरूँ।।घाती०।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा- सकल जगत में शांतिकर, शांतिधार सुखकार।
जिनपद में धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।

शांतये शांतिधारा

सुरतरु के सुरभित सुमन, सुमनस चित्त हरंत।
पुष्पांजलि अर्पण करत, मिटता दुःख तुरन्त।।

दिव्य पुष्पांजलिः

अथ प्रत्येक अर्घ्य

शंभु छंद

प्रभु घाति कर्म का क्षय करते, चउ शत कोसों दुर्भिक्ष टले।
जन-जन सुखकारी हो सुभिक्ष, यह अतिशय होता प्रगट भले।।
मैं वसुविध अर्घ्य बना करके, जिनगुण की नित अर्चना करूँ।
अतिशय गुणराशी प्राप्ति हेतु, श्रद्धा से नित वंदना करूँ।।1।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा गव्यूतिशतचतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय जातिशय-जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु घाति चतुष्टय क्षय करके, गगनांगण में ही गगन करें।
वे बीस हजार हाथ ऊंचे, शुभ समवसरण में अधर रहें।।मैं0।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा गगनगमनत्व-घातिक्षयजातिशय जिनगुणसंपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि0 स्वाहा।

प्रभु के शरीर और गमन आदि से, प्राणीवध नहिं हो सकता
करुणारत्नाकर स्वामी का, यह अतिशय पूर्ण अभय करता।।मैं0।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अप्राणिवधत्व-घातिक्षयजातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि0 स्वाहा।

केवलि के कवलाहार नहीं, क्षुध आदि अठारह दोष नहीं।
परमानंदामृत आस्वादी, प्रभु के सुख तृप्ती पूर्ण कही।।मैं0।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा भुक्त्यभाव-घातिक्षयजातिशय जिनगुणसंपदेमुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि0 स्वाहा।

केवली जिन के उपसर्ग नहीं, हो सके कदाचित यह जानो।
बस कर्म असाता साता में, सक्रमण करे यह सरधानो।।
मैं वसुविध अर्घ्य बना करके, जिनगुण की नित अर्चना करूँ।
अतिशय गुणराशी प्राप्ति हेतु, श्रद्धा से नित वंदना करूँ।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा उपसर्गाभावघातिक्षय-जातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

प्रभु का मुख एक तरफ रहता, फिर भी चउ दिश में दीख रहा।
यह अतिशय अद्भुत चतुर्मुखी, सब जन जन का मन मोह रहा।।मै०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा चतुर्मुखत्व-घातिक्षयजातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

प्रभु सब विद्या के ईश्वर है, सब जनता के भी ईश्वर हैं।
सौ इन्द्रों से पूजित गुरुवर, मुनिगण से वंद्य निरंतर हैं।।मै०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वविद्येश्वर-घातिक्षयजातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

वर केवलज्ञान प्रगट होते, नहिं छाया पड़ती है तन की।
परमौदारिक शुभ देह कहा, दीप्ती से लाजें रविगण भी।।मै०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अच्छायत्व-घातिक्षयजातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

नेत्रों की पलकें नहिं झपकें, फिर भी वे अंतर्दृष्टि कहे।
मानो अनिमिष दृग हो करके, करुणा से सब जग देख रहे।।
मैं वसुविध अर्घ्य बना करके, जिनगुण की नित अर्चना करूँ।
अतिशय गुणराशी प्राप्ति हेतु, श्रद्धा से नित वंदना करूँ।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अपक्ष्मस्पंदत्व-घातिक्षयजातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

प्रभु के नख केश न बढ़ सकते, यह भी इस अतिशय तुम मानो।
बस पूर्ण ज्ञान के होते ही, त्रैकालिक वस्तु प्रगट जानो।।मैं०।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा समाननखकेशत्व-घातिक्षयजातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा- जिन आतम गुण ज्ञान को, पूर्ण कियां भगवान।
पूरण अर्घ्य चढ़ाय के, मैं पूजूँ धर ध्यान।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यः पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

दोहा- मोहनीय द्वय आवरण, अंतराय को घात।
ज्ञान दर्श सुख वीर्य गुण, प्राप्त किया निर्बाध।।1।।

स्रग्विणी छन्द

जै महासौख्य दातार भरतार हो।
जै महानंद करतार भव पार हो।।
पूरिये नाथ! मेरी मनोकामना।
हो सदा स्वात्मतत्त्वैक की भावना।।
वान व्यंतर भवन वासि औ ज्योतिषी।
कल्पवासी सभी देव ध्याके सुखी।।पूरिये०
इंद्र धरणेन्द्र मनुजेन्द्र वंदन करें।
योगि नायक सदा आप गुण उच्चरें।।पूरिये०
मोह के वश्य हो नाथ मैं दुख सहा।
जो तिहूं लोक में भी भटकता रहा।।पूरिये०
नर्क के दुःख की क्या कहूँ मैं कथा।
नाथ! तुम केवली सर्व जानो व्यथा।।पूरिये०

योनि तिर्यंच में काल बीता घना।
दुःख ही दुख जहां सुक्ख का लेश ना।।पूरिये०
मैं मनुष योनि में सौख्य को चाहता।
किंतु सब ओर से क्लेश ही पावता।।पूरिये०
देवयोनि मिली फिर भी शांती नहीं।
मानसिक और मृत्यु की पीड़ा सही।।पूरिये०
रत्न सम्यक् बिना मैं भिखारी रहा।
सौख्य की चाह से दुःख पाता रहा।।पूरिये०
नाथ! तुम भक्ति से आज सम्यक् मिला।
कर कृपा दीजिये ज्ञान सूरज खिला।।पूरिये०
मुक्ति जब तक न हो नाथ! माँगूं यही।
आपके पाद की भक्ति छूटे नही।।पूरिये०
बोधि का लाभ हो 'ज्ञानमति' पूर्ण हो।
सर्व संपत्ति मिले सौख्य परिपूर्ण हो।।पूरिये०

घत्ता

जय जय केवल रवि, अतिशय गुणछवि, तुम धुनि किरण प्रकाश करें।
प्रभु समवसरण में, जो तुम प्रण में, निज सुख कर में शीघ्र धरें।।

ॐ ह्रीं घातिक्षय जातिशय जिनगुणसंपद्भ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- सकल जगत में शान्तिकर, शान्तिधार सुखकार।
झारी से धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।

शान्तये शान्तिधारा

कुंद कमल बेला वकुल, पुष्प सुगंधित लाय।
जिनगुण हेतु मैं करूँ, पुष्पांजलि सुखदाय।।11।।

दिव्य पुष्पाञ्जलिः

गीता- जो भव्य श्रद्धा भक्ति से, जिनगुण सुसंपतिव्रत करें।
व्रत पूर्ण कर प्रद्योत हेतु, यज्ञ उत्सव विधि करें।।
वे विश्व में संपूर्ण सुखकर, इंद्र चक्रीपद धरें।
फिर 'ज्ञानमति' से पूर्ण गुणमय, तूर्ण शिव लक्ष्मी वरें।।

इत्याशीर्वादः

षष्ठ वलय पूजा

गीता- अतिशय अतुल चौदह सुदेवों, कृत जिनागम ख्यात हैं।
उन पूजते अतिशय अनूपम, पद मिले निर्बाध हैं।।
तीर्थंकरो के श्रेष्ठ गुण की, जो करें नित अर्चना।
वे कर्म शत्रू नाशकर, फिर से धरेंगे जन्म ना।।1।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद समूह! अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं

अष्टक

भागीरथी पवित्र नीर स्वर्ण भृंग में भरूँ।
पदारविंद नाथ के त्रिधार भक्ति से करूँ।।
सुरोपनीत चौदहों महातिशायि गुण जजूँ।
न गर्भवास दुःख में पुनः कदापि मैं पचूँ।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

सुगंध गंध चंदनादि स्वर्ण पात्र में भरूँ।
समस्त दुःख शाति हेतु चर्ण चर्चना करूँ।।सुरोपनीत०

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यः संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

अखंड धौत श्वेत शालि स्वर्ण थाल में भरें।

अखंड सौख्य पुंज हेतु, पुंज को यहाँ धरें।।सुरोपनीत०

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

गुलाब केवड़ा जुही सुगंधि पुष्प को लिये।

रतीपति जयी जिनेन्द्र पाद मे चढ़ा दिये।।सुरोपनीत०

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यः कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

रसादियुक्त मिष्ट मोदकादि थाल में भरे।

निजात्म सौख्यस्वाद हेतु आप अर्चना करे।।सुरोपनीत०

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

कपूर ज्योति अधकार नाश मे प्रधान है।

सुआरती उतारते उदीत ज्ञान भानु है।।सुरोपनीत०

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

दशाग धूप ले सुगंध अग्निपात्र में जरे।

समस्त पाप शत्रु आप पूजते तुरत टरे।।सुरोपनीत०

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

अनार सतरा बदाम द्राक्ष थाल में भरे।

जिनेन्द्र को चढ़ावते, निजात्म सपदा भरे।।सुरोपनीत०

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यः मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जलादि अष्ट द्रव्य में मिलाय रत्न अर्घ्य ले।

चढ़ाय आपके समीप, तीन रत्न लूँ भले।।सुरोपनीत०

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपद्भ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा- सकल जगत में शांतिकर, शांतिधार सुखकार।
जिनपद में धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।

शांतये शांतिधारा

सुरतरु के सुरभित सुमन, सुमनस चित्त हरंत।
पुष्पांजलि अर्पण करत, मिटता दुःख तुरंत।।

दिव्य पुष्पांजलिः

प्रत्येक अर्घ

नरेन्द्र छन्द

जिन अतिशय सर्वार्ध, मागधी भाषा मय सुखकारी।
सुनने वाले भव्य जनों के, भव भव दु ख परिहारी।।
अर्घ्य चढाऊँ भक्ति भाव से, जिन गुण गण मणि ध्याऊँ।
अतिशय पुण्य बढाके निज की, रत्नत्रय निधि पाऊँ।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वार्धमागधीयभाषा-देवोपनीतातिशय जिनगुण-संपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जात विरोधी सभी जीवगण, बैर भाव सब तजते।
मैत्रीभाव धरें आपस में, बड़े प्रेम से रहते।।अर्घ्य०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

सब ऋतु के फल फूल फलित हों, एक साथ मन मोहें
संख्यातों योजन तक ऐसा, अतिशय अद्भुत होवे।।अर्घ्य०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वर्तुफलादिशोभित तरुपरिणाम देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्पण तल सम रत्नमयी हो, पृथ्वी अतिशयकारी।
प्रभु के विहरण हेतु देवगण, रचना करते सारी।।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भक्ति भाव से, जिन गुण गण मणि ध्याऊँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके निज की, रत्नत्रय निधि पाऊँ।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा आदर्शतलप्रतिमा-रत्नमयीमही देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं।

वायुकमार देव विक्रिय बल, शीतल पवन चलाते।
प्रभु विहार अनुकूल वायु से, जन-जन मन सुख पाते।।अर्घ्य०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा विहरणमनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं।

सब जन परमानद प्राप्त कर, प्रभु के गुण गाते है।
रोग शोक भय सकट दुख को, तुरत भूल जाते है।।अर्घ्य०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वजनपरमानंदत्व-देवोपनीतातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं

कंटक धूलि आदि दूर कर, वायु सुखद बहती है।
प्रभु विहार के समय दूर तक, भूमि स्वच्छ रहती है।अर्घ्य०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा वायुकुमारोपशमित-धूलिकंटकादि देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं

मेघ कुमार करें नित रुचि से, गधोदक की वृष्टि।
सौधर्मेद्र करे नित आज्ञा, प्रभुपद में अति भक्ति।।अर्घ्य०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा मेघकुमारकृत-गंधोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं

श्रीविहार के समय प्रभु के, चरण कमल के तल मे।
स्वर्णकमल सौगधित सुरगण, रचे उसी ही क्षण में।।अर्घ्य०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा पादन्यासे कृतपद्मरचना देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं

शाली आदिक खेती बहुविध, फल के भार झुकीं हैं।
देवोंकृत यह अतिशय सुन्दर, सब जन पूर्ण सुखी हैं।।अर्घ्यं०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा फलभार-नम्रशालि-देवोपनीतातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं

शरद् ऋतु के स्वच्छ गगनसम, निर्मल अभ्र सुहाता।
उल्कापात धूम आदि से, रहित प्रभु यश गाता।।अर्घ्यं०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा शरत्कालवन्निर्मलगगनत्व-देवोपनीतातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं।

सभी दिशायें निर्मल होतीं, शरद् मेघ सम दिखतीं।
रोगादिक पीड़ायें जन को, वहॉं नहीं हो सकतीं।।अर्घ्यं०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा शरन्मेघवन्निर्मलदिग्भागत्व-देवोपनीतातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं।

चतुर्निकाय देवगण सत्वर, आवो आवो आवो।
इद्राज्ञा से देव बुलाते, आवो प्रभु गुण गावो।।
अर्घ्य चढ़ाऊं भक्ति भाव से, जिन गुण गण मणि ध्याऊँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके निज की, रत्नत्रय निधि पाऊँ।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा एतैतेति-चतुर्निकायामरपरा-पराह्वान- देवोपनीतातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यक्षेन्द्रों के मस्तक ऊपर, धर्मचक्र चमके हैं।
चार दिशा में दिव्य चक्र ये, किरणों से दमके हैं।।अर्घ्यं०

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय जिनगुणसंपदे-मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं नि० स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

देवों कृत ये चौदह अतिशय, पुण्य रतन आकर हैं।
इन गुण का स्मरण मात्र भी, जिनगुण रत्नाकर है।।अर्घ्यं०

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय-जिनगुणसंपदभ्यः पूर्णार्घ्यं नि० स्वाहा।

जयमाला

सोरठा

तीन लोक के भव्य, तुम पद पकज सेवते।
महापुण्य फलराशि, गाऊं तुम जयमालिका।।1।।

शंभुछंद

जय जय त्रिभुवन के चूड़ामणि, जय जय तीर्थंकर गुण भर्ता।
जय चिंतित दाता चिंतामणि, जय कल्पवृक्ष वांछित फलदा।।
जय समवसरण में कमलासन, पर चतुरगुल से अधर रहें।
वैभव अनंत को पाकर भी, प्रभु उससे नित्य अलिप्त रहें।।2।।
तुमने सोलह कारण भाके, तीर्थंकर वैभव पाया है।
प्रभु पंचकल्याणक के स्वामी, इंद्रो ने तुम गुण गाया है।।
चौतीसों अतिशय सहित आप, वसु प्रातिहार्य के स्वामी हैं।
आनन्त्य चतुष्टय से शोभित, सब जग के अतर्यामी है।।3।।
प्रभु समवसरण में जन असख्य, जिनदेव वदना करते है।
नर तिर्यक् सुरगण भी असख्य, बारह कोठो मे बसते है।।
यद्यपि वह क्षेत्र बहुत छोटा, फिर भी अवकाश सभी को है।
जिनवर महात्म्य से यह अतिशय, सब आपस मे अस्पृष्ट रहें।।4।।
इन कोठो में मिथ्या दृष्टि, संदिग्ध विपर्यय नहि होते।
नहि होय असंज्ञी औ अभव्य, पाखडी द्रोही नहि होते।।
नहि वहाँ कभी आतक रोग, क्षुध तृष्णा कामादिक बाधा।।
नहि जन्ममरण नहि वैर कलह, नहि शोक वियोग जनित बाधा।।5।।
सब सीढी एक हाँथ ऊँची, जो बीस हजार प्रमाण कही।
बालक औ वृद्ध पंगु आदिक, अतर्मुहूर्त में चढें सही।।
अभिमानी मानस्तंभ देख, सव मान कषाय नशाते हैं।
जिन दर्शन कर सम्यक्त्व निधी, पाकर निहाल हो जाते हैं।।6।।
प्रभु की कल्याणी वाणी सुन, निज भव त्रैकालिक जान रहे।
अतिशय अनतगुणश्रेणीमय, परिणाम विशुद्धी ठान रहे।।

सब असंख्यात गुणी श्रेणि रूप, कर्मों का खंडन करते हैं।
क्रम से वे बोधि समाधी पा, मुक्ति कन्या को वरते हैं।।7।।
निजगुण संपत्ति में प्रधान, त्रेसठ गुण मणि को लभते हैं।
निज आत्म सुधारस पीकर के, शाश्वत परमानंद चखते हैं।।
इस विध प्रभु तुम कीर्ति सुनकर, मैं चरण शरण में आया हूँ।
अब जो कर्तव्य आपका हो, वह कीजे मैं अकुलाया हूँ।।8।।
प्रभु मेरी यही प्रार्थना है, मेरा सम्यक्त्व नहीं छूटे।
जब तक नहि मुक्ति मिले मुझको, नहिं तुमसे मम नाता टूटे।।
सयम का पूर्ण लाभ होवे, मरणांत समाधी हो मेरी।
भव भव 'सुज्ञानमति' होवे, जब तक न मिटे भव की फेरी।।9।।

घत्ता

जय जय जिन अतिशय, अनुपम निधिमय, जय जय त्रेसठ गुण पूरे।
जो पूजे ध्यावे, भक्ति बढ़ावे, जिनगुणसंपति निज पूरे।।10।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसंपद्भ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा– सकल जगत में शान्तिकर, शान्तिधार सुखकार।
झारी से धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।

शान्तये शान्तिधारा

कुद कमल बेला वकुल, पुष्प सुगंधित लाय।
जिनगुण हेतु मै करूँ, पुष्पांजलि सुखदाय।।11।।

दिव्य पुष्पाञ्जलिः

गीता छन्द

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से, जिनगुण सुसंपति व्रत करें।
व्रत पूर्ण कर प्रद्योत हेतू, यज्ञ उत्सव विधि करें।।
वे विश्व में संपूर्ण सुखकर, इंद्रचक्री पद धरें।
फिर 'ज्ञानमति' से पूर्ण गुणमय, 'तूर्ण' शिवलक्ष्मी वरें।।

इत्याशीर्वादः

श्री दशलक्षणमण्डल विधान (उद्यापन)

कविवर श्री प टेकचन्द्र कृत

जोगीरासा

नेमीनाथो दे तो साथो, भव भव और न चाहूँ।
भक्ति तिहारी निशदिन मनवच, काय लाय करि गाऊँ।
धर्म कह्यो तुम वानी दशविध, सो मोहि होउ सहाई।
करुणासागर समरस-गर्भित, शीश नमों थुति गाई।।

गीता छन्द

धर्म के दश कहे लक्षण, तिन थकी जिय सुख लहे।
भवरोग को यह महा औषधि, मरण जामन दुख दहे।।
यह वरत नीका मीत जी का, करो आदरतें सही।
मै जजो दशविध धर्म के अग, तासु फल है शिवमही।।

पद्धड़ी छन्द

यह धर्म भवोदधि नाव जान, या सेये भवदुख होय हान।
यह धर्म कल्पतरु सुक्खपूर, मैं पूजों भवदुख करन दूर।।

गीता छन्द

यह विरत मन कपि गले माहीं, सांकली सम जानिये।
तज अक्ष जीतन सिह जैसो, मोह तम रवि मानिये।।
सुरथान माही विरत नाहीं, मनुज हू शुभकुल लहे।
तातें सुअवसर है भलो, अब करो पूजा धुनि कहे।।4।।

बेसरी छन्द

जाने दशलक्षण व्रत कीना, ते सतपुरुषनि में परवीना।
भवसागर फिरनो मिट जावे, जो नर दशलक्षण वृष भावे।।5।।

भुजंगप्रयात छन्द

यही धर्म सारं, करे पापक्षारं, यही धर्म सारं, करे सुख अपारं।
यही धर्म धीरा, हरे लोक पीरा, यही धर्ममीरा करे लोक तीरा।।

त्रिभंगी छन्द

यह धर्म हमारा, सब जग प्यारा, जगत उधारा हितदानी।
यह दशविध गाया, जगमन भाया, उच्च बताया जिनवानी।।
यह शिव करतारा, अघतैं न्यारा, भवि उद्धारा मुनिधारा।
ताकों मैं ध्याऊँ, शीश नवाऊँ, अर्घ्य चढ़ाऊँ सुखकारा।।7।।

चौपाई छन्द

या व्रत की महिमा कही वीर, दशविध धर्म हरे भवपीर।
इसी धर्म बिन जग भरमाय, जजहुँ धरमअति दुरलभ पाय।।

दोहा- दश प्रकार को धर्म यह, दशविध सुरतरु जान।
वाछित पद सेवक लहें, अधिक कहा सुखदान।।9।।

सोरठा- धर्म हमारा नाथ, धर्म जगत का सेहरा।
भव भव में हो साथ, और न वांछा मन विषें।।10।।

मण्डलमध्ये पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्।

समुच्चय पूजा

त्रिभंगी छन्द

यह धर्म क्षमावा, मान गुमावा, सरल सुभावा, सतवानी।
शुचिभाव करावा, सजम लावा, तप करवावा, अधिकानी।।
शुभ त्याग बतावे, नगन पुजावे, शील बढ़ावे, शिवदाई।
यह धर्म दशारा, थाप करारा, पूजन धारा, शिरनाई।।

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्म अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्म अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्म अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् पुष्पाञ्जलिं।

मणुयणानन्द की चाल

क्षीरसागर तना नीर शुभ लाइये,
कनक झारी विषें धार गुण गाइये।
मरण उत्पत्ति नहीं होय तो फल सही,
जानि इमि धर्म दशधा जजों शिवमही।1।

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यः जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

नीर सग अगुरु चन्दन घिस लाय जी,
सुभग पातर विषें धारि थुति गाय जी।
जगत ताप तासु फल तुरत नाशे सही। जानि इमि०

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यः संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

लेय अक्षत भले मुक्तिफल से कहे,
उजले अखण्ड सुभग स्वर्ण पातर लहे।
अखयपद पावने आप मनमें सही। जानि इमि०

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यः अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि० स्वाहा।।

फूल कञ्चनवरन कल्पतरु के भले,
गन्ध जुत रग शुभ लेय निज कर चले।
माल तिन गूथि कामवाण नाशक सही। जानि इमि०

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यः कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं नि० स्वाहा।।

सुभग नैवेद्य मोदक घने लाइये,
विविध स्वादमय सुधारि भक्ति उर भाइये।
भूख दुःख हर्ण स्वर्णपात्र धरिके सही। जानि इमि०

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि० स्वाहा।।

दीप मणि रत्नमय और घृतमय सही,
धारि कनक थाल में सुआरती जुकरि लही।
धर्मज्योति मोह अन्धकार नाशिका सही। जानि इमि०

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यः मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

धूप दश अगमय लायकर सार जी,
अग्नि सग खेवहूँ सुभक्ति उर धार जी।
कर्म छयकार भव-वास-नाशन सही,
जानि इमि धर्म दशधा जजों शिवमही।।

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यः अष्टकर्मदहनाय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

लोंग खारक सुनारिकेल सौख्यकार जी,
और बादाम पुंगी-फलादि सार जी।
लेय निजहाथ में सुभक्ति धरि के सही। जानि इमि०

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

नीर गन्ध अक्षत सुफूल चरु सोय जी,
दीप अरु धूप फल अरघ संजोय जी।
पुरट थाली विषें भक्ति करके सही। जानि इमि०

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यः अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

धर्म भवकूप तै काढने को रसी,
भव उदधि पार करतार नोका इसी।
धर्म सुखदैन जिमि तात माता सही। जानि इमि०

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- दश वृष रतन मिलायके, माल करे भवि जोय।
धरे आपने उर विषें, ता सम और न कोय।।

बेसरी छन्द

दशलक्षण वृष शिवमग दीवा, धर्म थकी सुख पावे जीवा।
मुकति मही पहुँचावन नावा, ये दशधर्म जजों जुत भावा।।
दश विध धर्म धरे जो कोई, करमनाशि फिर दुख नहि होई।
धरम जु साधन और न कोई, यों दशधर्म भजों मद खोई।।
धरम जीव का पालनहारा, धरम मान को खण्डनयारा।
धरम थकी जावे कुटिलाई, इमि दशधर्म जजों चितलाई।।
साँच वचन सम धरम न आनो, धर्मभाव निर्मल पहिचानो।
धर्म जीव रख इन्द्रिय जीत, इमि लखि धर्म जजो करि प्रीत।।
तप ही सर्वधर्म का मूला, त्याग धरमतें क्षय अघथूला।
धर्म नगन सम और न कोई, इमि दशधर्म जजों मदखोई।।
नारी त्याग धरम शिवदाई, ये दशधरम जगत में भाई।
जो दशलक्षण मन मे आने, सो भवतप हर शिवपद ठाने।
दशलक्षणव्रत इहविध कीजे, उत्कृष्टैं दशवास करीजे।
नातर बेला पारन भाई, तथा इकन्तर वास कराई।
शक्तिहीन है तो सुन मीता दश एकन्त करो धरि प्रीता।।
व्रत दशबरस करे मन लाई, कर उद्यापन मनवचकाई।।
नहि उद्यापन शक्ति तुम्हारी, तो दूनो व्रत कर सुखकारी।
पीछे यथाशक्ति खरचावे, पूजन धर्म उद्योत करावे।।

दोहा- इत्यादिक विधिसहित जो, धर्म करे दश सार।
पावे सुख मनभावनो, अनुक्रम ले भवपार।।

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

उत्तमक्षमाधर्म पूजाप्रारम्भ

अडिल्ल छन्द

जीव तिरस थावर जेते जग में सही,
देव नरक नर पशु चारि गति की मही।
तिन सब ऊपर दया भाव उर माहिं जो,
सो है उत्तमक्षमा थापि जजूँ याहि जो।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांग ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांग ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांग ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

पद्धड़ी छन्द

गगानदि को जल विमल सोइ, धरि रतन पियाले शुद्ध होइ।
यह धरम क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजो मन वच भक्ति आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

बावन चन्दन घसि नीर लाय, धरि कनक रकेबी जिन चढ़ाय।
यह धरम क्षमा उत्तम सुजान, मै पूजो मन वच भक्ति आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय संसार ताप विनाशनाय चंदनं नि स्वाहा।

अक्षत मुक्ताफल सम जु लाय, अति उज्ज्वल नखशिख शुद्धभाय।
यह धरम क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि० स्वाहा।।

शुभ फूल कल्पतरु के अनूप, करि माला सुभग सुगन्धरूप।
यह धरमक्षमा उत्तम सुजान, मै पूजो मन वच भक्ति आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं नि० स्वाहा।।

नानारस पूरित चरु सम्हार, शुभ मोदक आदि अनेक धार।
यह धरम क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि० स्वाहा।।

मणि दीपकसार बनाय लाय, धरि कनकथाल भरि भक्तिलाय।
यह धरमक्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।।

ले धूप अगरुजा गन्धकार, दुर्भाव-हुताशन माहि जार।
यह धरम क्षमा उत्तम सुजान, मै पूजों मन वच भक्ति आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

फल नारिकेल बादाम सोइ, पुंगीफल खारक भक्ति जोइ।
यह धरम क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजो मन वच भक्ति आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल चन्दन अक्षत फूल लाय, चरुदीप धूप फल अरघ भाय।
यह धरम क्षमा उत्तम सुजान, मै पूजों मन वच भक्ति आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रत्येकार्घ्याणि

अडिल्ल छन्द

पापप्रकृति करि जीव अशुभ बन्धन करयो,
थावर नामाकर्म उदय दुख को भरयो।
पृथ्वीकायिक होय सहे बहु अघ फला,
तिनका रक्षण भाव क्षमा उत्तम भला।।1।।

ॐ ह्रीं पृथ्वीकायिक-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं।

जे जलकायिक जीव ज्ञान बिन दुख लहैं,
इक इन्द्रिय के द्वार अतुल विपदा सहैं।

तिनको दुखमय जान मुनी करुणा करें,
तसु प्रसाद तें झटिति मुक्ति कामिनि वरें।।2।।

ॐ ह्रीं जलकायिक-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं।

अग्निकाय धर जीव एक इन्द्रिय सही,
नानादुख तन सहें जलें सब जगमही।
इन पर करुणाभाव धरें जे भवि सही,
सो ही उत्तमक्षमा मोक्षदाता कही।।3।।

ॐ ह्रीं अग्निकायिक-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं।

पवनकाय के जीव महासंकट सहें,
हाथ पॉव मुख वचन थकी बाधा लहें।
इन पर करुणाभाव जती धारें सही,
सो ही उत्तमक्षमा कही शिव की मही।।4।।

ॐ ह्रीं वायुकायिक-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं।

हरितकाय में प्राणी अति वेदन लहें,
छेदन भेदन महाकष्ट अघफल सहें।
इन पर समताभाव सुखी इनको चहें,
सो ही उत्तमक्षमा धारि मुनि शिव लहें।।5।।

ॐ ह्रीं वनस्पतिकायिक-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं।

थावर के पनभेद पाप फलतैं बने,
सूक्षम बादर भेद दोय यों जिन भने।
इनको दुखमय जानि दया मन लाय हैं,
सो ही उत्तमक्षमा जजों सिर नाय हैं।।6।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्मस्थूलपञ्चस्थावर-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लट अरु जोंक गिंडोला इल्ली जानिये,
कोंड़ी शंख दुइन्द्रिय अतिदुख थानिये।
इन पर करुणाभाव यती धारें सही,
सो ही उत्तमक्षमा जजों शिव की मही।।7।।

ॐ ह्रीं द्वीन्द्रियजीव-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं।

चींटी कुन्था खटमल बीछू दुख मही,
तेइन्द्रिय परजाय भई घुण आदि ही।
इनको दुखमय जानि मुनी करुणा धरें,
सो ही उत्तमक्षमा जजों सब अघ जरैं।।8।।

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियजीव-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं।

माखी मच्छड टीडी भँवरादिक सही,
बर्र ततइया मकड़ी चतुरिन्द्रिय कही।
इनको दुखिया देखि मुनी करुणा धरें।
सो ही उत्तमक्षमा जजो वसुविधि जरैं।।9।।

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रिय-जीवपरिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं।

इन्द्रिय पॉचो होय नही मन जो लहें,
ते जिय जानि असैनी अघफल अति दहे।
इनको दुख भरपूर जानि करुणा करें,
सो ही उत्तमक्षमा जजो शिवथल धरे।।10।।

ॐ ह्रीं असंज्ञिपञ्चेन्द्रिय-जीवपरिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं

नरक जीव अतिदुखी पापफलते सही,
छेदन भेदन पीर सहे जाते न कही।
इन पर करुणाभाव यती अति लाय है,
सो ही उत्तमक्षमा जजो सुखदाय है।।11।।

ॐ ह्रीं नारकजीव-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

गीता छन्द

मनुज क्रोध रु मान माया, लोभवश दुखिया घने।
बहु चाह पीड़ित रागद्वेषी, अघ घनो उपजे तिने।।
तिन देख यतिवर दया लावें, महा दीनदयाल जी।
सो धर्म उत्तम क्षमा निर्मल, जजों भाग्यविशाल जी।।12।।

ॐ ह्रीं मनुष्यजीव-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं।

परकार चारों देवगति में, जीव सुख राचैं सही।
लच्छि देखि परकी झुरैं नितही, मानतें पीड़ा कही।।
तिन देखि मुनि उर दयाभावे, महाकोमल भाव जी।
सो धर्म उत्तम क्षमा पूजों, अर्घ्य तैं कर चाव जी।।13।।

ॐ ह्रीं चतुर्विधदेव-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं।

चौपाई

थावर तिरस जीव जब-जोई, चहुँगति करमनि-के वश होई।
तिन को देखि दया उर लाई, सो उत्तम खम धर्म जजाई।।

ॐ ह्रीं त्रसस्थावरजीव-परिरक्षण-रूपोत्तम-क्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं।

जयमाला

दोहा- धर्म क्षमा उत्तम बड़ो, सब जीवन सुखदाय।
जजें जीव सो पुन लहें, करे जु शिवपुर जाय।।1।।

बेसरी छन्द

सब जीवन में राग न दोषा, सो है क्षमा धरम निरदोषा।
दुर्जन कृत उपसर्ग लहावे, ताहू पै समभाव रहावे।।
मुनि को वचन कहे दुखकारी, मरम छेद वेदै अघ भारी।
मानखण्ड किरिया करवावे, तब मुनि क्षमाधर्म मन लावे।।
जो कोई दुष्ट, मुनिन को मारे, तीक्ष्ण शस्त्र तैं करि परिहारे।
बाँधे तनको खेद न पावे, तिन पर क्षमा धर्म मन लावे।।

अति दुखिया जियको ऋषि जाने, तब मुनि अनुकम्पा मन आने।
आपा परको हित उपजावे, तब मुनि क्षमाधर्म मन लावे।।
उत्तमक्षमा धरम सुखदाई, क्षमाधर्म सब जियका भाई।
जब मुनिहू पै कष्ट जु आवे, तब मुनि क्षमाधरम मन लावे।।
क्षमा धर्म सी ढाल न होई, क्रोध समान प्रहार न कोई।
क्षमा समान न बल अति पावे, तातें यती क्षमा वृष भावे।।
क्षमा धरम शिवराह बताई, क्षमा तात माता अरु भाई।
जातें सिद्ध सुखन को पावे, ऐसी क्षमा मुनी मन लावे।।

सोरठा- क्षमा सुभूषण सार, उर में जो पहिरे सही।
ते भवसागर पार, जजों धर्म उत्तमक्षमा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-धर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

उत्तममार्दवधर्म पूजा

पद्धड़ि छन्द

मार्दव वृषभाव विचार सोय, जहॅं मान भाव दीखे न कोय।
इस धारी मुनि शिव गामि जानि, मैं जजों थापि मार्दव सुभानि।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांग ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांग ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांग ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टकम् (मणुयणानन्द की चाल)

क्षीर सम नीर शुद्ध गाल कर लाइये,
पात्र सुवरणा विषें धारि गुण गाइये।
जगत फिरनो मिटे तासु फल तैं सही,
धर्म मार्दव जजों शुद्ध शिवदा मही।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दव-धर्मांगाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वच्छ नीर संग चन्दनादि को मिलाय जी,
शुद्ध गन्धयुक्त भक्ति भावतैं चढ़ाय जी।
जगत आताप-हर जानि ता फल सही,
धर्म मार्दव जजों शुद्ध शिवदा मही।।3।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दव-धर्मांगाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षतं समुज्ज्वलं खण्ड बिन जानिये,
सुभग मोती जिसे थाल भरि आनिये।
ध्रौव्य फलदाय मन लाय ध्याऊँ सही,
धर्म मार्दव जजों शुद्ध शिवदा मही।।4।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दव-धर्मांगाय अक्षतां निर्वपामीति स्वाहा।

फूल कल्पवृक्ष के गन्ध रंग धार जी,
माल गूंथि शुद्धो भाव भक्ति कर धार जी।
मदन मद हरन सुफल जानि यातें सही,
धर्म मार्दव जजों शुद्ध शिवदा मही।।5।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दव-धर्मांगाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सुभग रस शुद्ध नैवेद्य मन लाइये,
मोदकादि शुद्ध भक्ति भावतैं चढ़ाइये।
धारि स्वर्णपात्र शुद्ध मन वचन तन सही,
धर्म मार्दव जजों शुद्ध शिवदा मही।।6।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दव-धर्मांगाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नमय दीप जो नाश तम को करा,
कनक पातर विषैं भक्तिभाव तें धरा।
नाश अज्ञान है तासु फलतैं सही,
धर्म मार्दव जजों शुद्ध शिवदा मही।।7।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दव-धर्मांगाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दश गन्ध शुभ लेय मन मानिये,
अगर चन्दन सबै भेलि शुभ ठानिये।
अग्नि संग खेइये कर्म दाहन सही,
धर्म मार्दव जजों शुद्ध शिवदा मही।।8।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दव-धर्मांगाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री फलादि लोंग पुगी फलादि जानिये,
शुद्ध बादाम खारक भले आनिये।
सिद्ध थानक लहे तासु फलतें सही,
धर्म मार्दव जजों शुद्ध शिवदा मही।।9।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दव-धर्मांगाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर चन्दन अखत पुष्प चरु दीप जी,
धूप फल अर्घ्य कर भाव शुद्ध टीप जी।
लोक में फिरन तन धरन मिट है सही,
धर्म मार्दव जजों शुद्ध शिवदा मही।।10।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दव-धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथप्रत्येकार्घ्याणि

(चाल-मणुयणानन्दकी)

देव वीतराग सर्वज्ञ तारक सही,
दोष अष्टादशों तासु माही नहीं।
नमन तिन पद करन धर्म मार्दव कह्यो,
सो जजों चार गति माहिं भरमन दह्यो।।1।।

ॐ ह्रीं वीतरागदेवपद-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।

वीतराग देव कही वानि सो धर्म है,
ता सुने जीव निज हरे भाव भर्म है।
मन वचन काय श्रुत-पाद सिर नाय हैं,
सो जजों धर्म मार्दव सु शिवदाय है।।2।।

ॐ ह्रीं जिनधर्मपद-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।

धर्म को सेय तप लेय कर्म जार जी,
भये सिद्ध देव तन रहित सुखकार जी।
लेय इन नाम मन वचन शिर नाय हैं,
सो जजों धर्म मार्दव सु शिवदाय है।।3।।

ॐ ह्रीं सिद्धपद-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धारि छत्तीस गुण सूरि सुखदाय जी,
धर्म तप भाव सो गुप्त धरि भाय जी।
मान तजि नमन इन पद विषें लाइयो,
धर्म मार्दव सु तासु मोक्ष फल पाइयो।।4।।

ॐ ह्रीं आचार्यपद-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धारि गुण पाँच अरु बीस उवझाय जी,
और भी अनेकगुण पास तिन थाय जी।
मान तजि इन चरण काय को नाइयो,
धर्म मार्दव सु तासु मोक्ष फल पाइयो।।5।।

ॐ ह्रीं उपाध्याय-पद-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।

क्षेत्र अतिशय तहॉं धर्म को धाय हैं,
नमन बहु जिय करें देव गुण गाय हैं।
मान तजि क्षेत्र शुभ जानि सिर नाइयो,
धर्म मार्दव सु तासु मोक्ष फल पाइयो।।6।।

ॐ ह्रीं अतिशयक्षेत्रपद-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देव जिनकी सु प्रतिमा अकृत्रिम इसी,
रूप द्युति ध्यान मुद्रा कही जिन जिसी।
मान तजि शीश इन चरण को सु नाइयो,
धर्म मार्दव तु तासु मोक्ष फल पाइयो।।7।।

ॐ ह्रीं अकृत्रिमजिनचैत्य-पदनमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

सुरग थानक विषें देव जिनके सही,
रत्नमय जिनबिम्ब बिन किये हैं मही।
मान तजि शीश इन चरण को सु नाइयो,
धर्म मार्दव सु तास मोक्ष फल पाइयो।।8।।

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोकसम्बन्धि-जिनचैत्य-पदनमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं।

ज्योतिषी व्यन्तरा थान मध्यलोक जी,
बिन किये चैत्य जिन कहे अधोलोक जी।
मान तजि शीश इन चरण को सु नाइये,
धर्म मार्दव सु तासु मोक्ष फल पाइयो।।9।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसम्बन्धि-जिनचैत्य-पदनमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं।

भवन देवनि विषें बहुत जिनराय जी,
बिम्ब अकृत्रिम कहे सेय तसु पाय जी।
मान तजि शीश इन चरण को सु नाइयो,
धर्म मार्दव सु तासु मोक्ष फल पाइयो।।10।।

ॐ ह्रीं अधोलोकसम्बन्धि-जिनचैत्य-पदनमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं।

आदि इन पूज्य थानक बहुत हैं सही,
सिद्धक्षेत्र मोक्ष फलदाय तीरथ मही।
मान तजि शीश इन चरण को सु नाइयो,
धर्म मार्दव सु तासु मोक्ष फल पाइयो।।11।।

ॐ ह्रीं सिद्धक्षेत्र-पदनमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

बेसरी छन्द

मार्दवधर्म मान को खोवे, तो फल जगत पूज्य वह होवे।
मार्दव सकल दोष निरवारे, तो फल आप तरे अनि तारे।।

मार्दव धर्म इन्द्र सुर पूजें, मार्दव धर्म भजें अघ धूजें।
मार्दव मान हरे सुखकारे, तो फल आप तरे अनि तारे।।
मार्दव धर्म महा नर ध्यावे, मार्दव धर्म हानि नहिं पावे ।
यह मार्दव वृष शिव थल धारे, तो फल आप तरे अनि तारे।।
मार्दव सबको राखे माना, मार्दव सर्व-धर्म परधाना।
मार्दव धर्म जीव जे धारें, तो फल आप तरें अनि तारे।।
मार्दव धर्म स्वर्ग सुखकेरा, उपद्रव नाश हरे भवफेरा।
मार्दव उत्तम पुरुष सु धारे, तो फल आप तरे अनि तारे।।
मार्दव मोक्षमार्ग को दाता, मार्दव धर्म सकल जगत्राता।
मार्दव वृष गुणवान सु धारे, तो फल आप तरे अनि तारे।।
मार्दव धर्म कल्पतरु भाई, मार्दव मनवांछित फलदाई।
मार्दव धर्म मुकुट जो धारें, तो फल आप तरें अनि तारे।।
मार्दव धर्म कनक में मीना, मार्दव धारि सके न कमीना।
मान मार मार्दव वृष धारें, तो फल आप तरें अनि तारें।।
मार्दव वृष सब धर्म प्रधाना, मार्दव मोह मल्ल को हाना।
मार्दव माल पुरुष उर धारे, तो फल आप तरें अनि तारें।।

दोहा- मान मार मार्दव करे, हरे पापमल सोय।
जगत छुड़ाके शिवकरे, ते मो रक्षक होय।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं।

उत्तम आर्जवधर्म पूजा

बेसरी छन्द

जग परपञ्च रहित जो भावा, सरल चित्त सबतें निर दावा।
तिनको भाव सु आर्जव कहिये, सो ह्याँ थापि पूज फल लहिये।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमार्जवधर्मांग! अत्र)अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमार्जवधर्मांग! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमार्जवधर्मांग! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अथ अष्टकम् बेसरी छन्द

क्षीरसमुद्र का उज्ज्वल नीरा, कनक पियाले धर अतिधीरा।
जरारोग नाशन को भाई, आर्जवभाव नमों सिरनाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय जन्मजरामृत्युविनाशाय जलं नि.।

चन्दन बावन जल घसि लाया, कनक पात्र में धरि उमगाया।
शोकानल तप नाशन भाई, आर्जवधर्म जजों सिरनाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय संसारतापविनाशाय चन्दनं नि.।

अक्षत मुक्ताफल से जानो, उज्ज्वल खण्डविवर्जित आनो।
क्षय नहि होय इसो पद दाई, आर्जवभाव नमो सिरनाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तयेऽक्षतान् नि. स्वाहा।

फूल सुगन्ध कल्पद्रुम लाया, तथा सुवर्ण रजत मय भाया।
तिनकी माल गूँथि कर लाई, आर्जवभाव नमो सिरनाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

नानारस नैवेद्य करावे, मोदक आदि भक्ति तै लावे।
क्षुधाव्याधि नाशन को भाई, आर्जवभाव नमों सिरनाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं नि. स्वहा।

दीपक रतन थारि धरि लीजे, मनवचकाय शुद्धकर लीजे।
घात अज्ञान ज्ञान दरशाई, आर्जवधर्म जजो सिरनाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

धूप अरगजा चन्दन भीनी, गन्ध सहित निजकर मे लीनी।
कर्मदहन को अग्नि जलाई, आर्जवभाव नमो सिरनाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

ले नरियल बादाम सुपारी, खारक लौंग आदि हितकारी।
सिद्धलोक वांछा मन माहीं, आर्जवधर्म जजों सिरनाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

जल चन्दन अक्षत कामारी, चरु दीपक फल धूप विथारी।
अर्घ्य लेय मन वच तन भाई, आर्जवधर्म जजों सिरनाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अथप्रत्येकार्घ्याणि

बेसरी छन्द

गुण छयालीस जहाँ प्रभुतेरा, अष्टादश तहाँ दोष न हेरा।
तिनपद सरल भाव सिरनावे, सो आर्जव वृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद्गुणयुत-जिनपदनमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं नि।

मुक्तजीव अरिहंत थुति कीजे, मन वच कुटिलभाव तज दीजे।
तिन पद सरल भाव सिरनावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं मुक्तजीवारिहन्तपद-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

कर्म काटि शिव लोक सिधारे, सिद्ध सुदेव हरो अघ सारे।
तिन पद सरल भाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं सिद्धपद-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

सिद्धशिला पैतालिस लाखा, योजन विस्तृत जिनवचभाषा।
तत्र स्थित आतम सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं सिद्धशिलास्थितमुक्तात्मपद-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं नि.।

गुण छत्तीस सुधारक सूरा, आचारज सब गुण भरपूरा।
तिन पद सरलभाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं आचार्यपद-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

आचारज सब गुण भरपूरा, आचारादि गुणयुत सूरा।
तिन पद सरल भाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं आचार्यपदपरोक्ष-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

गुण पच्चीस उवझाय सुमाहीं, ग्यारह अंग चौदह पूर्वाहीं।
तिन पद सरल भाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं उपाध्यायपद-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

बहुगुणधर उवझाय सुजानो, दूरहितैं तिनको चित आनों।
तिन पद सरल भाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं उपाध्यायपदपरोक्ष-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

बीस आठ गुण साधन साधा, सो नहिं लहे जगत की बाधा।
तिन पद सरल भाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं साधुपद-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दूरहितैं मुनिगण जो चितारे, मनवच काया जिन वश धारे।
तिन पद सरल भाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं साधुपदपरोक्ष-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्णविहीन सु जिनवर वानी, तिसको सुनि सुखपावे प्रानी।
तिन पद सरल भाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं जिनध्वनि-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिशय क्षेत्र सु तीरथ ठामा, यात्रिगणों के पूरे कामा।
तिन पद सरल भाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं अतिशयक्षेत्रपद-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखरसमेद आदि सिधिथाना, तहँ मुनि लिय शिव कर्मनशाना।
तिन पद सरल भाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं सिद्धक्षेत्रपद-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विन कीये जिनबिम्ब अनूपा, लक्षण चिह्न जानि जिनरूपा।
तिन पद सरल भाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं अकृत्रिमजिनचैत्यपद-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

इत्यादिक बहुक्षेत्र सुभाना, पूजनीक तीरथ अघहाना।
तिन पद सरल भाव सिर नावे, सो आर्जववृष जजि शिव पावे।।

ॐ ह्रीं सकलपूज्यस्थानपद-नमनार्जवधर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाल

दोहा-सरलभाव सारै सरस, सुर नर पूज्य महान।
तातैं तजना कुटिलता, आर्जव भाव सुजान।।
सरलभाव समता उर आने, सरलभाव सब औगुन भाने।
आर्जवभाव धरें जे जीवा, जिनने जिनवानी रस पीवा।।
आर्जवभाव धरे जे प्रानी, तिनके होनहार शिवरानी।
दोषभाव तिनको नहिं छीवा, आर्जव भाव धरें जे जीवा।।
आर्जवभाव अमरपद धावे, आर्जव में औगुन नहिं पावे।
कुटिलभाव विष जिन नहिं पीवा, आर्जव भाव धरें जे जीवा।।
आर्तभाव आर्जव ही खोवे, आर्जव भाव पाप मल धोवे।
रोग शोक ताको नहिं छीवा, आर्जव भाव धरें जे जीवा।।
आर्जव शुद्धभाव जिन पाया, तिनने लहि पुन पाप गमाया।।
अनुभव आनंद तानें छीवा, आर्जव भाव धरें जे जीवा।।
आर्जवभाव दोष सब खोवे, आर्जव कर्मकालिमा धोवे।
शुद्धसुभाव सु ताने लीवा, आर्जव भाव धरें जे जीवा।।
आर्जवभाव सकल को प्यारा, आर्जव भाव भ्रमण तैं न्यारा।
ताको और रुचे न मती वा, आर्जव भाव धरें जे जीवा।।
आर्जव सुर शिव के सुख ठाने, आर्जव भाव पूर्व अघ हाने।
अद्‌भुत आपापर भिन कीवा, आर्जव भाव धरें जे जीवा।।

दोहा-अन्तरंग निर्दोष के, प्रगटे आर्जव भाव।
जाके फल मरनो मिटे, हटे कर्म को दाव।।

ॐ ह्रीं उत्तमार्जव-धर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम सत्यधर्म पूजा

अडिल्ल छन्द

सत्य सरीखो धर्म जगत मे है नहीं,
सत्यधर्मपरभाव लहे शिव की मही।
तानें भवदुख हरण सत्यवृष भाइये,
यहाँ थापि मैं जजों सत्य मन लाइये।

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांग ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्। ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांग ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांग ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण्म्।

अथअष्टकम्

त्रिभंगी छन्द

जो झूठ विनाशे, जग विश्वासे, पुण्य प्रकाशे हितदानी।
सब दोष निवारे, समता धारे, शिवपुर कारे, गुणथानी।।
जग आदरकारी, मोह निवारी, आनदधारी, जग मानो।
ऐसो सतधर्मा, काटत कर्मा, जल ले परमा, जजि जानो।।

ॐ ह्रीं उत्तम सत्यधर्मांगाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सत् सो वृष नाही, या जगमाही, पूज्य कहाही, शिव थानी।
सब औगुण धोवे, पाप विलोवे, धर्म मिलावे, दुखहानी।।
पावत शिवनारी, मुनिजन प्यारी, सुख करतारी, भवि मानो।
ऐसो सतधर्मा, काटत कर्मा, गन्ध ले परमा, जजि जानो।।

ॐ ह्रीं उत्तम सत्यधर्मांगाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

या सत्य समानो, रत्न न आनो, सम्यक् दानो, शिवकारी।
भवदधि को नावा, अशुभ गमावा, सरल स्वभावा, दुखहारी।।

सिद्धलोक नसैनी, शिवसुख दैनी, ध्यावत जैनी, अमलानो।
ऐसो सतधर्मा, काटत कर्मा, अक्षत परमा, जजि जानो।।

ॐ ह्रीं उत्तम सत्यधर्मांगाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सत सो नहिं मिंता, मेटन चिंता, अघ अरिहन्ता, जसदाई।
सत जगत पियारो, भव उद्धारो, दुख जल तारो, थुति गाई।।
याको मुनि ध्यावें, शिवसुख पावें, पाप गमावें, भव हानो।
ऐसा सतधर्मा, काटत कर्मा, पुष्पं परमा, जजि जानो।।

ॐ ह्रीं उत्तम सत्यधर्मांगाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सतधर्म सु पूजे, सब अघ धूजे, शिवमग सूजे, अधिकाई।
यातें वृष सारा, काज संवारा, अशुभ विडारा, सिधिदाई।।
सत सारा नीका सुखदा जीका, शिवमग टीका, शुभ आनो।
ऐसो सतधर्मा, काटत कर्मा, ले चरु परमा, जजि जानो।।

ॐ ह्रीं उत्तम सत्यधर्मांगाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत धर्म उजाला, जगका पाला, विभ्रम टाला, धर्मकरा।
यह ज्ञान उजाले, अशुभ सुटाले, संजम पाले, झूॅठ हरा।।
सत प्रीति उपावे, बैर गमावे, जो थुति लावे, उर ज्ञानी।
ऐसो सतधर्मा, काटत कर्मा, दीपक परमा, जजि जानो।।

ॐ ह्रीं उत्तम सत्यधर्मांगाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सतधर्म प्रभावे, मुनि शिव जावे, जग जस गावे, थुति लाई।
सतधर्म जु मूला, अघ-क्षय थूला, झूठ कुशूला, दह भाई।।
सतधर्म अनूपा, शुभ रस कूपा, पुण्य स्वरूपा, मग मानो।
ऐसो सतधर्मा, काटत कर्मा, धूप जु परमा, जजि मानो।।

ॐ उत्तम ह्रीं सत्यधर्मांगाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सतधर्म अभ्यासो, शिवथल वासो, पाप विनाशो, हितकारी।
गुण ज्ञान बढ़ावे, अन्दर ल्यावे, पुण्य उपावे, सत भारी।।

जगमें अति नीका, बन्धू जी का, शिवतिय पी का, गुण थानो।
ऐसो सतधर्मा, काटत कर्मा, ले फल परमा, जजि मानो।।

ॐ ह्रीं उत्तम सत्यधर्मांगाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन नीका, अक्षत हीका, फूल चुनीका, माल करो।
चरु दीप सु लाया, धूप बनाया, श्रीफल आया, अर्घ्य करो।।
उर भक्ति बढ़ाई, मुख थुति गाई, सत सब भाई, पहिचानो।
ऐसो सतधर्मा, काटत कर्मा, अर्घ्यं ले परमा, जजि मानो।।

ॐ ह्रीं उत्तम सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्याणि

चौपाई

क्रोध सहित जिय सत नहिं कहे, झूठ वचन तें अघ शिर लहे।
क्रोध रहित जिन वचन प्रमानि, सो सतधर्म चयो जिनवानी।।

ॐ ह्रीं क्रोधातिचार-रहित-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।

लोभ सहित जिय झूठ बखानि, सांच धरम ताको नहिं मानि।
लोभ रहित सतधर्म सुभाय, सो सतधर्म जजों थुति गाय।।2।।

ॐ ह्रीं लोभातिचार-रहित-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।

साँच न कहे भीति युत जीव, बोले असत सु वचन सदीव।
भयतैं रहित सत्य वच भाख, सो सतधर्म करो थुति लाख।।3।।

ॐ ह्रीं भयातिचार-रहित-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हास्य सत्यको नाशनहार, तातें सहे महादुख भार।
हास्य रहित सतधर्म कहाय, सो सतधर्म जजों थुति गाय।।4।।

ॐ ह्रीं हास्यातिचार-रहित-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।

जिन आज्ञा बिन भाखे बैन, पूर्वापर वच ठीक कहैन।
ऐसे दोष रहित सत भाय, सो सतधर्म जजों थुति गाय।।5।।

ॐ ह्रीं जिनाज्ञालङ्घनातिचार-रहित-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता छन्द

जा देश में जिस वस्तु को, तिस मानिये से सत सही।
जिमि भात को गुजरात, मालवदेश में चोखा कही।।
करनाट में कूलू कहें, द्राविड़ में चौरु बखानिये।
इमि जानि जनपद सत्य को, जजि हर्ष उर में आनिये।।6।।

ॐ ह्रीं जनपद सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल

बहु नर ताको कहें तिसो ही मानिये,
रंक नाम लक्ष्मीधर जाहिं बखानिये।
तो यह रूढ़ी नाम सत्य संवृत कही,
या नयते सत जानि जजों सतवृष सही।।7।।

ॐ ह्रीं संवृतसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काहू नर आकार तथा पशु के सही,
चित्र काष्ठ में थापि नाम पर पशु कही।
नाम सत्य सो जान वानि जिन इमि कही,
ताको सतवृष जानि जजों मन लाइयो।।8।।

ॐ ह्रीं स्थापना सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाको जग में नाम प्रसिद्ध बखानिये,
सोई ताको नाम सत्य सो मानिये।
नाम सत्य सो जान वानि जिन इमि कही,
ताको मन वच काय जजों शुभ सुख मही।।9।।

ॐ ह्रीं नामसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पीत श्याम अरु रक्त नील गोरा सही,
रूपवान इत्यादि अंग बहुतै कही।

रूप सत्य सो जानि कह्यो जिनवानि जी,
ऐसो सत्य जु जानि जजों सुखदान जी।।10।।

ॐ ह्रीं रूपसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कही वस्तु यह यातें छोटी है सही,
यातें है यह बड़ी अपेक्षा इमि कही।
याको नाम प्रतीति सत्य सो जानिये,
ताकों भी है जजों भक्ति उर आनिये।।11।।

ॐ ह्रीं अपेक्षा-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो नरपति को पुत्र ताहि राजा कहै,
सो नैगम नय जानि सत्य तातै यहै।
यही सत्य व्यौहार जिनेश्वर धुनि कही,
मैं जजिहों कर भक्ति नाय मस्तक सही।।12।।

ॐ ह्रीं व्यवहार-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शक्ति इन्द्र में यो कि लोक उल्टा करे,
सो तो लोक अनादि उलटि कैसे धरे।
पै यह शक्ति अपेक्षा वचन प्रमान है,
यह सम्भावन सत्य जजो थिति आन है।।13।।

ॐ ह्रीं सम्भावना-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीव अनन्त अनादि नजर आवें नहीं।
द्रव्य अमूर्ती पाँच नरक सुर की मही।
ये नहीं दीखें नयन सूत्र सों जानिये,
भावसत्य सो जानि जजों मन आनिये।।14।।

ॐ ह्रीं भाव-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

किसी वस्तु की उपमा जाको लाइये,
ज्यों दानी नर देख कल्पद्रुम गाइये।

याकों उपमा सत्य नाम जानो सही,
सो मैं पूजों भक्ति नाय मस्तक मही।।15।।

ॐ ह्रीं उपमा-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इत्यादिक बहुभेद सत्य के जानिये,
कहें देव जिनराय आपनी बानिये।
सो मैं मन वच काय शुद्ध थुति गाय जी,
पूजों सत्य सुधर्म अरघ कर लाय जी।।16।।

ॐ ह्रीं सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

बेसरी छन्द

सत्यधर्म जग पूज्य बताया, सत्य श्रेष्ठ व्रत जिनधुनि गाया।
सत्यधर्म भवदधि को नावा, सो सतधर्म जजों शुधभावा।।
सत्यधर्म वर अंग प्रवीना, सत्यधर्म ज्यों कंचन मीना।
सत्यधर्म का सबको चावा, सो सतधर्म जजों शुधभावा।।
सत्य धर्म का राखनहारा, सत्यधर्म मुनिजन को प्यारा।
सत्यशिरोमणि धर्म कहावा, सो सतधर्म जजों शुधभावा।।
सत्य समान और नहिं मिन्ता, सत्यधर्म मेटै भवचिन्ता।
सत्य करे अघतैं निरवारा, सो सतधर्म जजों शुधभावा।।
सत्यधर्म अपयश क्षयकारी, सत्य सुरक्षा करे हमारी।
सत ही को सुर नर जस गावा, सो सतधर्म जजों शुधभावा।।
सत्य सहित सब सार्थक धर्मा, तासों कटे चिरन्तन कर्मा।
सत्य समान और नहिं ठावा, सो सतधर्म जजों शुधभावा।।
सत्य जगत में पूजा पावे, सत्यधर्म शिव राह बतावे।
सत्य जजों सतधर्म लहावा, सो सतधर्म जजों शुधभावा।।
धर्म सरोवर में सत नीरा, सत्यधर्म खोवे सब पीरा।
सत्यधर्म सों कुगति न पावा, सो सतधर्म जजों शुधभावा।।

दोहा-सतसागर में जे रमें, ते वृषनायक जोय।
जजें धर्म सत को सही, मन वच काया सोय।।

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम शौचधर्म पूजा

बेसरी छन्द

शौचधर्म पर चाह निवारे, तनतैं हू ममता निरवारे।
जगवाछा तजि निर्मल भावा, शौचधर्म पूजों कर चावा।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांग ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांग ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांग ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अथाष्टकम् (पद्धड़ि छन्द)

जल क्षीर समुद्र को सुभग लाय, धरि कनक पात्र मे भक्ति भाय।
तन धरन मिटे बहुफल सुजान, मै शौचधर्म जजि हर्ष आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

घसि बावन चन्दन नीर आन, अलि गुञ्जत मानों करत गान।
धरि कनक पियाले भक्तिजान, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल अखण्ड शुभ गन्ध दाय, अक्षत अनूप लखि शशि लजाय।
कनपात्र विषें धरि भक्ति आन, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ले फूल कल्पद्रुम के मनोग, आसक्त भ्रमर थिर करत भोग।
तिन गूंथि माल उर भक्ति ठान, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ मोदक आदि अनेक भाय, रसना रञ्जन नैवेद्य लाय।
धरि पुरटथाल में भक्ति ठान, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणि दीपक वा घृतमय, मनु निबिड़ मोहतम नाश होय।
अरु ज्ञान प्रकाश करे महान, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ धूप अरगजा गन्ध लाय, कन धूपायन ताकों खिवाय।
मिस धूप मनों वसुविधि उड़ान, मैं शौचधर्म जज्जि हर्ष आन।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ले फल बदाम खारक अनूप, अरु पुंगीफल आदिक स्वरूप।
धरि भक्ति भाव मन माहिं सोय, मैं शौच जजों शुधभाव होय।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलगधाक्षत वर कुसुम होय, चरु दीप धूप फल सुभग जोय।
कर अरघ धरौं कनपात्र लाय, मै जजों शौचवर भक्ति भाय।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौच धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्याणि

चाल-मणुयणानन्दकी

देव के सकल सुख जानि चलता भयी,
आयु सागरों तनी तुरत हो छय गयी।
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।1।।

ॐ ह्रीं देवसुखवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।

चाह चक्री तने सुखन की उर नहीं,
सह छिनवै तिया और षट्खंड मही।
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।2।।

ॐ ह्रीं चक्रिपद-भोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

खण्ड तीन को जु राज नारि बहु जानिये,
चार विध सैन्य सुरनर खगादि मानिये।
जान सब अथिर उर भाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।3।।

ॐ ह्रीं नारायणपद-भोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

कामदेव को सुरूप देखि देव मन हरें,
भोग वांछित सकल देव सेवा करें।
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।4।।

ॐ ह्रीं कामदेवपद-भोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

आठ परकार सपरस विषय जानिये,
द्रव्य क्षेत्र काल अनुसार भाव मानिये।
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।5।।

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रियभोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

पॉच परकार रस जानि शुभसार जी,
भोग वाञ्छा सभी जगत दुखकार जी।
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करे।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।6।।

ॐ ह्रीं श्री रसनेन्द्रिय-भोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं।

घ्राण इन्द्रिय तने गन्ध दो हैं सही,
ताहि अनुकूल पाय जीव साता लही।
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करे,
पूजि शौच धर्म को जु शौच थानक धरे।।7।।

ॐ ह्रीं श्री घ्राणेन्द्रिय-भोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि।

चक्षु इन्द्रिय तने पाँच रूप भोग हैं,
ताहि चाहें अमर नाहिं तन रोग है।
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करे,
पूजि शौच धर्म को जु शौच थानक धरे।।8।।

ॐ ह्रीं श्री चक्षुरिन्द्रिय-भोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं।

राग संगीत धुन आदि स्वर साजिये,
सप्त स्वर भेद कर्ण भोग मन राजिये।
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।9।।

ॐ ह्रीं कर्णेन्द्रिय-भोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

भोग वाञ्छित घने चित्त आधार जी,
ताहि सेय-सेय जीव सुख लहें अपार जी।
जानि सब अथिर उरभाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।10।।

ॐ ह्रीं मनोवाञ्छित-भोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

तन अशुचि आपको सु चाम मय जानिये,
सप्तमल धातु पूरित सु घिन आनिये।
जानि सब अथिर उरभाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।11।।

ॐ ह्रीं तनसम्बन्धि भोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

रतन नवधादि भरपूर घर में सही,
कोटि नित दान देते सु क्षय हो नहीं।
जानि सब अथिर उरभाव निर्मल करे,
पूजि शौच धर्म को जु शौच थानक धरे।।12।।

ॐ ह्रीं धनवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

रूप में शची समान नारि घर में धनी,
शीश आज्ञा धरें प्रीति रस में सनी।

जानि सब अथिर उरभाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।13।।

ॐ ह्रीं वनिताभोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कामदेव के समान पुत्र रूप धार जी,
विनयवान सर्व बलवन्त तेज सार जी।
जानि सब अथिर उरभाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।14।।

ॐ ह्रीं पुत्रभोगवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भ्रात बहु विनय जुत आनि पालक सही,
संग नित भोग भोगि जीव साता लही।
जानि सब अथिर उरभाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।15।।

ॐ ह्रीं भ्रातृसुखवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मन्त्र दाता विपति माहि मित्र सार जी,
प्रेम अंतरंग धारि नित्य रहें लार जी।
जानि सब अथिर उरभाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।16।।

ॐ ह्रीं मित्रानुबन्धवाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मित्र तिय पुत्र सब घर तने दासिया,
आदि परिजन सकल और घर वासिया।
जानि सब अथिर उरभाव निर्मल करे,
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरे।।17।।

ॐ ह्रीं सकलपरिजनानुकारित्व-वाञ्छाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- शौच सकल उर सुख करे, हरे लोभ मद सोइ।
मोक्ष धरे मरनो टरे, ताहि जजें शिव होई।।1।।

बेसरी-

शौचभाव तैं पुण्य बढ़ोई, कटैं पाप जगमें जस होई।
शौचभाव सन्तन को प्यारा, जजों शौच यह धर्म हमारा।।
शौचभाव परचाह निवारे, शौचभाव दुख शोक विडारे।
शौच सरब को बड़ा सहारा, जजों शौच यह धर्म हमारा।।
शौच साँच के बड़ा सनेहा, शौच मुनिव्रत की इक देहा।
शौचभाव मंगल करतारा, जजों शौच यह धर्म हमारा।।
शौचभाव में नहीं कषाया, शौचभाव अति हित करगाया।
शौचधर्म बड़ा शरण सहारा, जजों शौच यह धर्म हमारा।।
शौचधर्म को मुनिगण सेवें, तो फल स्वय सिद्धथल लेवें।
शौचधर्म समता रस धारा, जजों शौच यह धर्म हमारा।।
शौच समान और नहिं मिन्ता, शौचभाव टारे सब चिन्ता।
शौच सदा सब जिय का प्यारा, शौच जजों यह धर्म हमारा।।

दोहा-शौच सार संसार में, करे पवित्र जु भाव।
तातें धारो शौच को, भलो मिलो यह दाव।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम संयमधर्म पूजा

अडिल्ल-संयमधर्म अनूप दोय विध जानिये,
इक रक्षा षट्काय दया उर आनिये।
मन इन्द्रिय वश करे दूसरो संयमा,
सो मैं पूजों थापि लहों उत्तम रमा।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांग ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानं।
ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांग ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांग ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अथअष्टकम् बेसरी छन्द

निर्मल नीर भाव कर भीजे, मन मनोज्ञ वासन धर लीजे।
जिय को जन्म मरण गद जावे, जो संयमवृष जजि सिर नावे।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन शीतल भावन भावा, तापर मन भँवरा जु लुभाया।
जग आताप तासु नशि जावे, जो सयमवृष जजि सिर नावे।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शालि अखण्ड अखत ले भाई, शुभ परिणति-भाजन भरवाई।
जो अखण्ड थानक ले धावे, जो सयमवृष जजि सिर नावे।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

फूल प्रफुल्लित भाव सु लीजे, भक्ति सार में माल करीजे।
मदन वाण हर सो बल पावे, जो संयमवृष जजि सिर नावे।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भाव अवाञ्छित कर नैवेद, नानारस मय ले निरखेद।
भूखनाशि चित साता पावे, जो संयमवृष जजि सिर नावे।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्ज्ञान दीप करि भाई, शुद्धभाव भाजन धरवाई।
ताके फल अज्ञान मिटावे, जो संयमवृष जजि सिर नावे।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म आठ मय धूप करीजे, धर्म सुध्यान अगनि खेवीजे।
ता फल दुष्टकर्म नशि जावें, जो सयमवृष जजि सिर नावे।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम परिणति को फल कीजे, शुद्धभाव कनथाल धरीजे।
ताफल दुष्ट कर्म नशि जावे, जो संयमवृष जजि सिर नावे।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों द्रव्य अमोलक जानी, प्रासुक भाव सहित हितदानी।
पद अनर्घ्य तासु फल पावे, जो संयमवृष जजि सिर नावे।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्याणि

चौपाई

ताल कूप खाई न खुदाय, भूमि काय तव दया पलाय।
पृथ्वी काय की रक्षा होय, संयमधर्म जजों मद खोय।।1।।

ॐ ह्रीं पृथ्वीकायिक-जीवरक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

अनगालो जल वरते नाहिं, नदी तालाब फुड़ावे नाहिं।
जलकायिक जिय रक्षा करे, संयमवृष जजि शिवतिय वरे।।2।।

ॐ ह्रीं जलकायिक-जीवरक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

अगनि जलावन काज न करे, नाहिं बुझावे करुणा धरे।
अगनिकाय जिय रक्षा होय, संयमधर्म जजों शुचि होय।।3।।

ॐ ह्रीं अग्निकायिक-जीवरक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

पवनकाय की रक्षा सार, पंखा आदि वस्तु नहिं धार।
पवनकाय जिय रक्षा होय, संयमधर्म जजों मद खोय।।4।।

ॐ ह्रीं वायुकायिक-जीवरक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

फूल पात तरु तोड़े नाहिं, वन बागादि लगावे नाहिं।
हरितकाय जिय रक्षा होय, संयमधर्म जजों मद खोय।।5।।

ॐ ह्रीं वनस्पतिकायिक-जीवरक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

इल्ली जोंक गिंडौला जान, वाला आदि जीव पहिचान।
वे इन्द्रिय जिय रक्षा होय, संयमधर्म जजों मद खोय।।6।।

ॐ ह्रीं द्विन्द्रियजीवरक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चींटी कुन्थुआ खटमल लीक, जुआं तिरूला जिय करि ठीक।
ते इन्द्रिय जिय रक्षा होय, संयमधर्म जजों मद खोय।।7।।

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियजीवरक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

माखी भँवरा टीडी जान, मच्छर आदि जीव पहिचान।
चउ इन्द्रिय जिय रक्षा होय, संयमधर्म जजों मद खोय।।8।।

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रियजीवरक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जीव असैनी बहुत प्रकार, जलचर सर्प आदि निरधार।
पंचेन्द्रिय जिय रक्षा होय, संयमधर्म जजों मद खोय।।9।।

ॐ ह्रीं असंज्ञिपञ्चेन्द्रियजीवरक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

नर सुर नारकि सब जिय सज्ञि, तिर्यग्गति मे सज्ञि असंज्ञि।
संज्ञी जिय की रक्षा होय, संयमधर्म जजों मद खोय।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसंज्ञिपञ्चेन्द्रियजीवरक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

सपरस इन्द्रिय विषय निवार, वीतरागता वरते सार।
शीत उष्ण उर चाह न होव, सयमधर्म जजों शुचि होय।।11।।

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रियविषयवर्जनरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

रसनेन्द्रिय पॉच भट जान, तिन वश भये सकलगुण हान।
रसनेन्द्रिय के वश नहिं होय, संयमधर्म जजों शुचि होय।।12।।

ॐ ह्रीं रसनेन्द्रियविषयवर्जनरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

घ्राणेन्द्रिय के भट दुइ जान, तिन प्रसाद जिय दुःख लहान।
घ्राणेन्द्रिय के वश नहि होय, सयमधर्म जजों शुचि होय।।13।।

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रियविषयवर्जनरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चक्षु विषय भट जानों पाँच, ते दुख देंय सकल जिय साँच।
चक्षु अक्ष के वश नहिं होय, संयमधर्म जजों शुचि होय।।14।।

ॐ ह्रीं चक्षुरिन्द्रियविषयवर्जनरूप-संयमधर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

कर्णेन्द्रिय शुभाशुभ वैन, ता वश होय सुरासुर ऐन।
शब्द शुभाशुभ वश नहिं होय, संयमधर्म जजों शुचि होय।।15।।

ॐ ह्रीं कर्णेन्द्रियविषयवर्जनरक्षणरूप-संयमधर्मांगायार्घ्यं नि.।

मन चञ्चल कपि की गति जिसो, ताके वश जग जिय दुखफसो।
मन के वश कबहूँ नहिं होय, संयमधर्म जजों शुचि होय।।16।।

ॐ ह्रीं मनोविषयवर्जन-संयमधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब जिय में धरि समता भाव, तप संयम करिवे को चाव।
आर्तरौद्र भाव नहिं होय, संयमधर्म जजों शुचि होय।।17।।

ॐ ह्रीं सामायिकरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो प्रमादवश संयम जाय, प्रायश्चित ले पुनि थिर थाय।
छेदोपस्थापन नामा सोय, संयमधर्म जजों शुचि होय।।18।।

ॐ ह्रीं छेदोस्थापनारूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोय कोश नित गमन कराय, तन निहार नहि बहुरिध पाय।
सो परिहार विशुद्धि जोय, संयमधर्म जजों शुचि होय।।19।।

ॐ ह्रीं परिहारविशुद्धि-रूपसंयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सकल कषाय नाश है जाय, नाम मात्र कछु लोभ रहाय।
सूक्ष्म साम्पराय है सोय, संयमधर्म जजों शुचि होय।।20।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्मसाम्परायरूप-संयमधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सकल मोह नाशे जिस काल, या उपशमें मोह जञ्जाल।
यथाख्यात में रहे न मोह, संयमधर्म जजों शुचि होय।।21।।

ॐ ह्रीं यथाख्यातरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल- इस प्रकार बहुविध को संयम जानिये,
शिवसुखदाय होय दया की खानि ये।
पूरण मुनि के होय धर्म हितदाय जी,
ताहि जौं मैं अर्घ्य थकी जस गाय जी।।22।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाल (बेसरी छन्द)

समय सार जगत में भाई, संयम तें जिय शिवसुख पाई।
संयम सबका राखन हारा, संयम है सिरताज हमारा।।

संयम सकल जीव सुखदाई, संयम जगत जीव बड़भाई।
संयम जगतगुरुनि को प्यारा, संयम है सिरताज हमारा।।
पूरण संयम मुनिजन पावें, संयम तैं ही शिवमग धावें।
संयम अघनाशन असिधारा, संयम है सिरताज हमारा।।
संयमधर्म मुकुटधर धारे, संयम तें विषधर डर जावे।
सयम जामन मरण निवारा, सयम है सिरताज हमारा।।
संयम के सब दास बताये, संयम बिना जगत भरमाये।
संयम मोह सुभट को मारा, संयम है सिरताज हमारा।।
संयम मन का जीतन हारा, संयम इन्द्रिय रोग निवारा।
पाप बेल को नाशनहारा, संयम है सिरताज हमारा।।
संयम भव विरक्त जिय भावे, संयम को मुनिजन जस गावे।
संयमधर्म बहू अघ जारा, सयम है सिरताज हमारा।।
संयम भवसागर नौकासी, सयम धर जिय शिवपुरजासी।
संयम कर्मकलंक निवारा, सयम है सिरताज हमारा।।

दोहा- संयम जग का बन्धु है, सयम मातरु तात।
संयम भवभव शरण है, नमों 'टेक' अघजात।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तमतपोधर्म पूजा

अडिल्ल-अन्तर बाहर भेद कहे तप सार जी,
दुविध भाव अघहार करन भव पार जी,
तप बारह परकार कर्मगज केहरी,
मैं पूजों इस थान जानि नित शुभ घरी।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांग ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांग ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांग ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अथअष्टकम् चौपाई छन्द

भव जल तरण नाव तप-भाव, कर अघनाश जु देव उछाव।
ऐसो तप निर्मल जल लाय, पूजों जामन मरण नशाय।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिभुवन में तप तिलक समान, याको मुनि धारें हित ठान।
तप हर चन्दन सुभग मँगाय, मैं पूजों भवतप नशि जाय।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

बेसरी छन्द

तप में निरत लखे बहुतेरे, तप को तपें जु साहब मेरे।
ऐसा तप अक्षत शुभ आनो, पूजों फल अक्षत उपजानो।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पद्धड़ि छन्द

यह तप त्रिभुवन में पूज्य सार, यह तप नाना मंगल सुधार।
ऐसा है तप बहु फूल लाय, मैं पूजों तसु फल मदन जाय।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तप सुर चाहें पै नाहिं पाय, तातें सुर पूजें तप सुभाय।
ऐसो तप चरु ले भक्ति लाय, मैं पूजों तसु फल क्षुधा जाय।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप कल्पवृक्ष वांछित सुदेय, तप दीप अनूपम तम हरेय।
ता तप को दीपक रतन लाय, मैं पूजों तसु फल ज्ञान पाय।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

तप ही तैं तीर्थंकर जु होय, तप ही तैं शिव लहि कर्म खोय।
ऐसे तप को शुभ धूप लाय, मैं पूजों विधि-ईंधन जराय।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तप पूजत जग करि पूज्य होय, तप औषधि दुख गद हरन जोय।
ता तप को बहुविध फल मंगाय, मैं पूजों तसु फल शिव लहाय।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

तपतैं उर करुणा भाव होय, तप तपें जगत में पूज्य सोय।
ता तप को उत्तम अरघ लाय, मै पूजों पदअनरघ लहाय।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्याणि

गीता-तप सार जग मे भेद बारह, भव उदधि को नाव है।
पाप दाहक तप-करन-हित, साधु मन उच्छाव है।।
तप देय सुख दुख दूर करि है, और कह लग गाइये।
इमि जानि पूजों अर्घ्य लेकर, तासु फल शिव पाइये।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बेसरी छन्द

जिनगुणसम्पति है तप मीता, त्रेसठ वास होय जिन गीता।
भिनभिन तिथियन में सुखदाई, यह तप अनशन जजि गुणगाई।।

ॐ ह्रीं जिनगुणसम्पत्ति-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मक्षपण तप के उपवासा, इकसौ अडतालिस जिनभाषा।
भिनभिन तिथियन में सुखदाई, यह तप अनशन जजि गुणगाई।।

ॐ ह्रीं कर्मक्षपण-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चाल-जोगीरासा

सिह निःक्रीडित तप के दिन सौ, अरुजान सतत्तरि भाई।
तिन में इकसौ जान पैंतालिस, वास कहे सुखदाई।।
याको बत्तिस जान पारणा, यह विधि जिन धुनि माहीं।
यह अनशन तप जानि जजो मै, अर्घ्य लेय हित ठाहीं।।

ॐ ह्रीं सिंहनिःक्रीड़ित-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वतोभद्र तपस्या के दिन, एक सैकड़ा जानो।
हैं उपवास पचत्तर अद्भुत, पारण पचविस मानों।।
इसकी विधि भिनभिन जिनभासी, सो तप अनशन गाया।
अर्घ्य लेय मैं पूजों मन वच, काय भक्ति-जुत भाया।।5।।

ॐ ह्रीं सर्वतोभद्र-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महासर्वतोभद्र बड़ो तप, दिन दोसै पैंतालीस।
इक सौ छिनवै वास कहे जिन, पारण गिन नव चालीस।।
ताकी विधि जिनशासन में लखि, विधि जुत करता भाई।
यह अनशन तप जान जजों मै, अर्घ्य लेय हितदाई।।6।।

ॐ ह्रीं महासर्वतोभद्र-तपोधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लघु निःक्रीड़ित के दिन जिनधुनि, बीसी चारि कहे हैं।
तिन में बीस जु कहे पारणा, साठ उपास लहे हैं।।
करने की विधि जिनधुनि में लखि, ताको करिये भाई।
यह तप अनशन जान जजों मैं, अर्घ्य आनि सुखदाई।।7।।

ॐ ह्रीं लघुनिःक्रीड़ित-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बेसरी छन्द

नव पारन उपवास पचीसा, दिन चौंतीस कहे जगदीशा।
मुक्तावलि तप विधि जिन गाई, यह अनशन तप जजि सुखदाई।।

ॐ ह्रीं मुक्तावलि-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मास मास के छह उपवासा, एक वरष दुई सत्तरि खासा।
यह कनकावलि विधि श्रुति गाई, यह अनशन तप जजि सुखदाई।।

ॐ ह्रीं कनकावलि-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सो अनशन पारन उनईसा, इकसौ उनइस दिन शुभदीसा।
जिन भाषित आचाम्ल भाई, यह अनशन तप जजि सुखदाई।।

ॐ ह्रीं आचाम्ल-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीस वास पारना होई, सब दिन अड़तालीस गिनोई।
तप जु सुदर्शन विधि श्रुत जानो, यह अनशन तप जजि सुखदानो।।
ॐ ह्रीं सुदर्शनतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
एक बरस तक वास करता, उत्तमतप जिनवाणी भणन्ता।
ताके भेद बहुत हैं भाई, यह अनशन तप जजि सुखदाई।।
ॐ ह्रीं अनशनतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
भूख प्रमाण थकी लघु खइये, सो अवमौदर तप वरनइये।
यह तप विधि भूधरकवि माना, सो मैं जजों अरघकर आना।।
ॐ ह्रीं अवमौदर्यतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
आज इसी विधि भोजन पइये, तो हम लेंय नतर थिर रहिये।
ऐसी विधि प्रतिज्ञा ठाने, सो तप जजों कर्म गिरि भाने।।
ॐ ह्रीं व्रतपरिसंख्यान-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
त्यागे इक दुइ त्रय रस भाई, चार पाँच षट् तजि कर खाई।
ऐसा रसपरित्याग सु ठाने, सो तप जजों कर्मगिरि भाने।।
ॐ ह्रीं रस परित्याग-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
आसन दृढ़ भू शोधि करावे, थिरता भजे सुतन न हिलावे।
शय्यासन तप या विधि ठाने, सो तप जजों कर्मगिरि भाने।।
ॐ ह्रीं विविक्तशय्यासन-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
काय कसें मन आनन्द पावे, सो तप कायक्लेश कहावे।
शोक हरे सुख करे महाने, सो तप जजों कर्मगिरि भाने।।
ॐ ह्रीं कायक्लेश-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अडिल्ल छन्द- मुनि को जो परमाद वशी दूषण लगे,
तत्क्षण गुरु पै जाय जु प्रायश्चित मंगे।
जो आचारज दण्ड देय सो लेय ही,
तप प्रायश्चित जजों अर्घ्य शुभ देय ही।।18।।
ॐ ह्रीं प्रायश्चित्त-तपोधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव धर्म गुरु और थान जो पूज हैं,
तीरथ अतिशय सिद्धक्षेत्र अघ धूज हैं।
तिनकी विनय अनूप करे तजि मान जी,
सो तप विनय विचार जजों शिवदान जी।।19।।

ॐ ह्रीं विनयतपोधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो मुनि को मग चलत तथा तप करत ही,
उपजे तन में खेद कर्म बलतैं सही।
तो मुनि को कर पाँव चम्पिये जो सुधी,
सो तप वैयावृत्य जजों नाशक कुधी।।20।।

ॐ ह्रीं वैयावृत्यत-पोधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन मुनि वाचें सुने हरष करि चिंतवै,
धरि जिनकी आम्नाय पाप मल को चवै।
सो तप है स्वाध्याय ज्ञान उर लावनो,
सो यह तप मै जजों स्वर्ग सुख पावनो।।21।।

ॐ ह्रीं स्वाध्याय-तपोधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काय ममत को त्याग यतीश्वर थिति करे,
काय त्याग तप धार कर्म अरिमद हरे।
तप व्युत्सर्ग महान जानि मन भावनो,
सो मैं पूजों अर्घ्य धारि कर पावनो।।22।।

ॐ ह्रीं व्युत्सर्ग-तपोधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन वच काया एक थान थिर लाइये,
आर्त रौद्र कुभाव सबै ही ढाइये।
या वपु तैं जिय भिन्न शुद्ध जाने सही,
सो तपध्यान अनूप पूजि लहों शिवमही।।23।।

ॐ ह्रीं ध्यानतपोधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इमि धारि तप के भेद बारह सकलकर्म विनासियो।
यह कर्म भूधर नाश कारण वज्र सम जिन भासियो।।
जे जीव चाहे तरन भवदधि, ते लहें तप सार जी।
हम शक्तिहीन न कर सकें, तातैं जजें उर धार जी।।24।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-तप तारे भव उदधि सों, टारे पाप असाधि।
धरे महासुख थल विषें, देहै ध्यान समाधि।।1।।

बेसरी छन्द

तप ही सार धरम है भाई, तप ही मैं मुनिवर शिवपाई।
सिद्धक्षेत्र जे सिद्ध भये हैं, ते सब पहिले तपहि भजे है।।
तप भव उदधि तरण नौकाया, तप को जस गणधरने गाया।
ये तप ही जग जिय सुखदाई, तात मात स्वामी तप भाई।।
तप को तो तीर्थंकर ध्यावे, तप बिन मोक्ष कभी नहि पावे।
तप शिव महल तनो मग जानों, तप ही तैं सब कर्म हरानो।।
तप सा तीर्थ और नहि कोई, तप ही तारक सब विध होई।
तप शिववाट दिखावन दीवा, तप ही तैं सुख होय अतीवा।।
तप तै इन्द्री मन भट हारे, तप निज बलतैं मोह निवारै।
तप को कायर जिय नहि पावे, तप को महापुरुष उमगावे।।
तप तै अविचल सुख बहु होई, तप तै लच्छि अखय पुनि जोई।
तप तै खानपान परमाना, तप ही तैं रस बिन सब खाना।।
दृढ़ आसन तन तप तैं जानों, काय कष्ट तैं जिय सुख जानों।
तप ही लगे पाप को धोवे, तप तै विनय भाव उर होवे।।
धरमी काय तनी सुश्रूषा, तप ही करवावे अघलूसा।
शास्त्र पठन है तप सुखकारा, यातें होवे वपु तैं न्यारा।।

तप ही मन इन्द्रिय वश आने, ध्यान धरत वसुकर्म हराने।
तातें तप लागत है प्यारा, शुद्धभाव तैं है अघ छारा।।

दोहा-तप मेटत भवताप को, शान्तभाव दिढ़ होय।
हरे भरम देवे धरम, सो तप पूजों लोय।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तमत्यागधर्म-पूजा

चौपाई- त्यागधर्म में ममत न कोई, त्यागधर्म सुरतरु अवलोई।
वाञ्छा त्यागधर्म में नाहीं, सो वृष थापि जजों इस ठाहीं

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांग ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांग ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांग ! अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अथाष्टकम् (चाल मणुयणानन्द की)

नीर शुभ क्षीरदधि सार सो लाय जी,
साधु चित तुल्य निर्मल सु मनभाय जी।
कनक झारी भरी भक्ति मन लाइयो,
त्यागधर्म को जजों स्वर्ग शिव दाइयो।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दनादि गन्ध सार नीर मेललाइयो,
भ्रमर सौरभि थकी भक्ति भरमाइयो।
कनक पातर विषें धार ढरवाइयो,
त्याग धर्म को जजों स्वर्ग शिव दाइयो।।3।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

तन्दुलं समुज्वलं जु अक्षतं सुहाय जी,
खण्ड बिन सोहने विलोकि हरषाय जी।

थाल कञ्चन भरों भावशुभ लाइयो,
त्यागधर्म को जजों स्वर्ग शिव दाइयो।।4।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प नाना प्रकार गन्धजुत सार जी,
कल्पवृक्षादि के हेम थाल धार जी।
माल करि सोहनी भक्ति उर लाइयो,
त्यागधर्म को जजों स्वर्ग शिव दाइयो।।5।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लाय नैवेद्य बिन खेद अति सोहना,
मोदकादि सरल सार धार मन मोहना।
स्वर्ण भाजन विषे भक्ति भर लाइयो,
त्यागधर्म को जजों स्वर्ग शिव दाइयो।।6।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नमय दीप कर ज्योति परकाशिया,
मोह अन्धकार तासु तेज ते विनाशिया।
हेमथाल धारि भक्तिभाव चित्त लाइयो,
त्यागधर्म को जजों स्वर्ग शिव दाइयो।।7।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दश गन्ध की सार सौरभ भरी,
चन्दनादि ले कनक धूप आयन धरी।
अग्निसग खेय मिस धूप विधि जारियो,
त्यागधर्म को जजों स्वर्ग शिव दाइयो।।8।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफलं सु लौंग पुङ्गीफलं जु सार जी,
खारका बदाम नारियल सु मनहार जी।।

धार स्वर्ण पात्र में सुभक्ति उर लाइयो,
त्यागधर्म को जजों स्वर्ग शिव दाइयो।।9।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गन्धाक्षतं पुष्प चरु सार जी,
दीप अरु धूप फल अर्घ्य मनहार जी।
भक्ति भाजन विषें धारि चढ़वाइयो,
त्यागधर्म को जजों स्वर्ग शिव दाइयो।।10।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येकाघ्यर्णि (चाल-मणुयणानन्दकी)

कामदेव के समान काय सुन्दर धनी,
सुभग आकार मनुदेव-तन सी बनी।
जान पौद्गलीक जिमि चपल चञ्चल सही।
मोह तजि तासु को सु पूजि त्याग शिव लही।।1।।

ॐ ह्रीं भ्रातृसुखवाञ्छाविहीन-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मात रज मेल मिलि कर्मवश थाय जी,
गर्भ में रह्यो सु मास नव दुःख पाय जी।
दूध माँगे बिना न देय निज मात ही,
मोह तजि तासु को सु पूजि त्याग शिव लही।।2।।

ॐ ह्रीं जननीममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जनक वीरज थकी आप मैलो भयो,
काल पाय है जुदा न संग ताको रहयो।।
कौन काको भयो सर्व स्वारथि सही,
मोह तजि तासु को सु पूजि त्याग शिव लही।।3।।

ॐ ह्रीं पितृममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुत्र रूपवन्त पूर्व पुण्य तें लहाइये,
पाप के विपाक तैं सुशीघ्र नशि जाइये।।
मोह वश होय जिय लहे दुःखधाम ही,
तासु को ममत्व त्याग धर्म पूजि शिव लही।।4।।

ॐ ह्रीं पुत्रममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाप साज राज काज भाग्य तें लहाइये,
तासु रक्षोपहार में स्व-तन जु गमाइये।
भोग परिजन करें आप श्वभ्रधाम ही,
मोह तजि तासु को सु पूजि त्याग शिव लही।।5।।

ॐ ह्रीं राज्यममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्न स्वर्ण रजत आदि सर्व धन पाइये,
वोटका विमान वाहनादि हू लहाइये।
जान चपला समान अथिर दुखधाम ही,
मोह तजि तासु को सुपूजि त्याग शिव लही।।6।।

ॐ ह्रीं धनवाहनादिममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहस छिनवै तिया जानि अपसर जिसी,
विनय भरपूर रूप रंग रम्भा जिसी।
जान सम्पत्ति सकल पाप-विपदा-मही,
मोह तजि तासु को सुपूजि त्याग शिव लही।।7।।

ॐ ह्रीं स्त्रीममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सग परिजन मनो हाट मेलो बनो,
धर्मशाला विषें तीर्थ यात्री मनो,
जानि गृह मोह की साकली है सही,
मोह तजि तासु को सुपूजि त्याग शिव लही।।8।।

ॐ ह्रीं गृहकुटुम्बममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मूल वसुकर्म को कषायभाव मानिये,
तासु के प्रसंग चार योनि में भ्रमानिये।
सकल संसार का भार यह ही सही,
मोह तजि तासु को सुपूजि त्याग शिव लही।।9।।

ॐ ह्रीं कषायभाव-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राग अरु द्वेष दोय मोह विधि तें बने,
तासु वश जीव जग में लहे दुख घने।
पाप पुण्य को प्रसार तासु तें ही सही,
रागद्वेष मोह को सुत्याग पूजि शिव लही।।10।।

ॐ ह्रीं रागद्वेष त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मात सुत नारि धनराज तन सार जी,
राग अरु द्वेष सर्व दु:खकर्तार जी।
पाप पुण्य धारि संसार दुःख धाम हो,
मोह तजि तासु को सुपूजि त्याग शिव लहो।।11।।

ॐ ह्रीं ममत्वत्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-त्याग तरनतारन सही, भवसागर में नाव।
त्याग बने नहि देव पै, मनुज लह्यो यह दाव।।

बेसरी-त्याग जोग सबही संसारा, पुद्गल द्रव्य त्याग निरवारा।
त्याग रत्न कञ्चन भण्डारा, जो त्यागे सो गुरु हमारा।।
हाथी घोटक रथ सब त्यागा, साधु आप आतमरस लागा।
मात तात तें नेह निवारा, जो त्यागे सो गुरु हमारा।।
त्याग राग बन्धन दुखदाई, नारि पुत्र तें नेह तुड़ाई।
अनुभव रस मारग विस्तारा, जो त्यागे सो गुरु हमारा।।

आरतभाव त्याग दुखदाई, त्याग योग्य सब मान बढ़ाई।
रौद्रध्यान त्यागे अधिकारा, जो त्यागे सो गुरु हमारा।।
क्रोध मान छल लोभ गमावे, सो उत्कृष्ट त्याग कहलावे।
हास्य शोक भय भाव निवारा, जो त्यागे सो गुरु हमारा।।
मद मत्सर को त्याग कराया, त्याग अरति रति गुरु बताया।
रागद्वेष को तजे प्रसारा, जो त्यागे सो गुरु हमारा।।
पर में ममत त्यागि कें भाई, निज परिणति में प्रीति लगाई।
त्याग पाप परिणति की धारा, जो त्यागे सो गुरु हमारा।।
जगतें विरति आप रस भीना, तिनने शिवमग नीके चीना।
त्याग जगत दुखतें सिर भारा, जो त्यागे सो गुरु हमारा।।

सोरठा- त्यागधर्म तप सार, भवभव शरणा मैं गहो।
जजो त्याग भवतार, जा प्रसादतै शिवलहो।।12।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम आकिञ्चन्यधर्म पूजा

आकिञ्चनवृष नग्न अवस्था है सही,
दुविध परिग्रह त्याग सु जिनवर धुनि कही।
धन धान्यादि बाह्य राग अन्तर गिनो,
इनते रहित सु नगन धरम जजि अघ हनो।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांग! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांग! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांग! अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्

त्रिभङ्गी छन्द

जल लाया नीका, सुरतरिणीका, उज्ज्वल ठीका, धार करी।
अतिगन्ध सुहाई, निर्मलभाई, हर्ष बढ़ाई, पाप हरी।।
ले कनकसुझारी, भक्ति उचारी, सब दुखहारी, हाथ लई।
आकिञ्चन धर्मा, जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा, थान सही।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांगाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ चन्दन आनी, घसि संगपानी, गन्ध सुहानी, हाथ धरी।
अलि ऊपर आवे, वास लुभावे, शुद्ध करावे, नेह भरी।।
ऐसी गँध लाओ, हर्ष बढ़ाओ, ज्ञान जगाओ, मोक्ष मही।
आकिञ्चन धर्मा, जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा, थान सही।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांगाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभअक्षत लाया,विमल सुहाया, खण्ड बिन भाया, सुखदाई।
मुक्ताफल जानो, अधिक सुहानो, गन्ध सुथानो, गह भाई।।
ऐसो ले अक्षत, जन मन हर्षित, भक्ति करन्ते, शिर नाई।
आकिञ्चन धर्मा, जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा, थान सही।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांगाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ले फूल सु प्यारा, गन्ध भरारा, वर्ण अपारा, शोभ घने।
नाना आकारा, अलिगण धारा, सुरद्रुम सारा, जेम ठने।।
ले कुसुम जु आया, माल बनाया, नेह लगाया, भक्ति मयी।
आकिञ्चन धर्मा, जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा, थान सही।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांगाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नानारस आने, अधिक सुहाने, षड्विध जाने, सुखदाई।
शुभमोदक कीने, हाथ सु लीने, मधुरस भीने, चरु लाई।।
धरि कञ्चनथाला, भक्ति विशाला, कह गुणमाला, ज्ञानमई।
आकिञ्चन धर्मा, जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा, थान सही।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांगाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिदीपक नाना, तेज महाना, मोह नशाना, ज्ञानकरा।
धरि कञ्चन थारी, भक्ति उचारी, अर्थ अपारी, पाप हरा।।
मिथ्यातम धोवे, गुणमणि पोवे, शिवमग जोवे, ज्योतिमई।
आकिञ्चन धर्मा, जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा, थान सही।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांगाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगन्ध मिलाई, धूप बनाई, अधिक सुहाई, सुखकारी।
मलयागिरि डारा, अगर सुधारा, अलिगुञ्जारा, मद धारी।।
ऐसी करि लीनी, धूप नवीनी, भक्तिसुभीनी, भावमई।
आकिञ्चन धर्मा, जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा, थान सही।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांगाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल लोंग सुपारी, श्रीफल भारी, भक्ति भरारी, गह आनो।
फिर लाय बदामा, खारक ठामा, वाञ्छित कामा, फल जानो।।
ऐसे फल लायो, अति हरषायो, मुख गुन गायो, पुण्य लही।
आकिञ्चन धर्मा, जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा, थान सही।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांगाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन लाया, अक्षत भाया, फूल मँगाया, चरु जु धरी।
ले दीपक थारा, धूप अपारा, श्रीफल धारा, अर्घ्यकरी।।
बहु द्रव्य जु लाये, भक्ति बढ़ाये, ज्ञान सुपाये, ध्यान लही।
आकिञ्चन धर्मा, जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा, थान सही।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथप्रत्येकार्घ्याणि

मनुयणानन्द-छन्द

सर्व जग है अथिर ध्रौव्य नहि मानिये,
तात माता तिया भ्रात सुत जानिये।

चक्रवर्ती तने भोग चय जाय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्ति भाय जी।।1।।

ॐ ह्रीं अनित्यरूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

आयु पूरन भये शर्न नहिं कोय जी,
औषधि सु मन्त्र बल तन्त्र बहु होय जी।।
देव खग शर्ण नहिं मर्ण दिन आय जी।
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।2।।

ॐ ह्रीं अशरणरूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

अन्यतें प्रीति संसार सो है सही,
या थकी राग अरु द्वेष उपजे मही।
राग रुख चार गति माहिं दुःखदाय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।3।।

ॐ ह्रीं संसाररूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

जीव एकहि फिरे चार गति आप ही,
एक भोगे सदा पुण्य या पाप ही।
कोउ नहि दूसरो आप दुःख पाय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।4।।

ॐ ह्रीं एकत्वरूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

सर्व द्रव्य भिन्न कोई मिले न जानिये,
नीर क्षीर के समान जीव देह मानिये।
जानि इमि साधु निर्ग्रन्थ सुख पाय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्ति भाय जी।।5।।

ॐ ह्रीं अन्यत्वरूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

देह में पवित्र वस्तु एक नहिं पाय है,
सप्तधातु भरी द्वार नौ बहाय है।

जीव निर्मल महाशुद्ध चेतनाय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।6।।

ॐ ह्रीं अशुचिरूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

जोग मिथ्यात्व अव्रत कषाय जानिये,
और परमाद भाग कर्म आठ आनिये।
त्यागि दुर्भाव साधु शुद्धरूप ध्याय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।7।।

ॐ ह्रीं आस्रवरूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

अन्यतें विरक्त है जु आप रूप ध्यावही,
रागद्वेष को विहाय शुद्ध तत्त्व पावही।
भाव सवर यही जानि सुखदाय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।8।।

ॐ ह्रीं संवररूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

पाप पुण्य भावते जु कर्मबन्ध है सही,
शुद्धता प्रभाव कर्म जाय निर्जरा सही।
जानि इस भाति बिन राग पद ध्याय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।9।।

ॐ ह्रीं निर्जरारूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

तीन लोक नित्य रूप जानि नराकार जी,
चार गति घूमि जीव दुःख ले अपार जी।
लोक को स्वरूप जानि आत्म तत्त्व ध्याय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।10।।

ॐ ह्रीं लोकरूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

वस्तु को स्वभाव धर्म जीव रक्षा कही,
दर्श बोध आचरण जु रत्न तीनों सही।

चार विध दान अरु धर्म दश ध्याय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।11।।

ॐ ह्रीं धर्मरूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यम्।

गैर वस्तु को जु है सुलभ अपनावना,
ज्ञाननिधि आपनी न सहज ही लहावना।
ताहि पाय साधु शुद्ध आत्मरूप ध्याय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।12।।

ॐ ह्रीं बोधिदुर्लभ-रूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

भ्रात सुत नारि गज घोटकादि भाइ हैं।
दास दासी पिता सुतादि परिजनाइ हैं।।
संग चेतन तजो जानि दुखदाय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।13।।

ॐ ह्रीं चेतनरूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

रत्न कञ्चन रजत ठाम बिस्तर सही,
महल वन बाग बहुग्राम जुत शुभ मही।
सग निर्जीव छांड़ि शुद्धरूप ध्याय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।14।।

ॐ ह्रीं अचेतन-रूपोत्तमाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

अन्तरंग राग आदि भाव अरु द्वेष है,
या थकी जीव लहे चार गति क्लेश है।
जानि यह अन्तरंग संग छुड़वाय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।15।।

ॐ ह्रीं अंतरंगपरिग्रह त्यागाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

नग्न रूप धारि के जु संग दुविधा तजे,
देह नेह को जु छोड़ि आप थिरता भजे।

ता प्रसाद भक्ति माहि ही रहें न आय जी,
धर्म आकिञ्चना पूजि भक्तिभाय जी।।16।।

ॐ ह्रीं द्विविधपरिग्रह-त्यागाकिञ्चन्य-धर्मांगायार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

दोहा-आकिञ्चन्य इस जीव को, मिल्यो न शिव मग दाय।
अब मैं पूजों नग्न पद, या फल मोह मिटाय।।1।।

बेसरी छन्द

आकिञ्चन वृष दुर्धर जानो, याको धारि सके न अयानो।
ज्ञानी तो या में रुक जावे, वीतराग है धरम निभावे।।
वाञ्छा रोग जासु उर नाहीं सो आकिंचन धर्म धराई।
विषय भिखारी जीव न पावे, वीतराग है धर्म निभावे।।
आकिञ्चन्य जगत जिय प्यारा, जो धारे सो गुरु हमारा।
परिग्रह धारी ताहि न पावे, वीतराग है धर्म निभावे।।
आकिञ्चन्य इन्द्र सुर सेवें, ता प्रसाद निज आतम बेवें।
लोभी जन यातें डरि जावे, वीतराग है धर्म निभावे।।
आकिञ्चन वृष मोक्ष निधाना, याही तें है केवलज्ञाना।
तन धन रञ्जक याहि न पावे, वीतराग है धर्म निभावे।।
आकिञ्चन हाथी का भारा, विषयी जीव सुसा किमधारा।
रागी नाम सुनत मुरझावे, वीतराग है धर्म निभावे।।
आकिञ्चन्य धर्म गढ़ नीका, ता बल ध्रौव्य राज है जी का।
हम या व्रत को शीश नवावें, साधूजन गहि शिवपुर जावें।।

दोहा-आकिञ्चन जो आदरे, शिव पहुँचावे सार।
और सकल कर्मनि लुटें, इमि लखि गहु वृष सार।।
आकिञ्चन को सेवते, नशे कर्म बटमार।
पूजों मैं आकिञ्चना, ज्यों पाऊँ भवपार।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांगाय पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म पूजा

अडिल्ल छन्द-- नारि देव नर पशु काष्ठ चित्राम की,
ब्रह्मचर्य व्रत धारिन के नहिं काम की।
मन वच काया मात सुता भगिनी गिने,
ऐसो व्रत ब्रह्मचर्य पूजि हम अघ हने।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांग ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांग ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांग ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

त्रिभङ्गी छन्द

ले निर्मल पानी, अति सुखदानी, उज्ज्वल आनी, गंग तनों।
धरि कनक सुझारी, मनहर कारी, निज कर धारी, हरष ठनों।।
करि भक्ति सुलाऊँ, अति गुणगाऊँ, पुण्य बढ़ाऊँ, सुखदाई।
जजि ब्रह्म सुचारी, वर शिव नारी, आनन्दकारी, थिर थाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ले बावन चन्दन, दाह निकन्दन, अगर घिसन्दन, नीर करी।
तिस गन्ध लुभाया, षट्पद आया, गुञ्ज कराया, हर्ष धरी।।
शुभगन्ध मँगायो, पात्र धरायो, बहु महकायो, सुखदाई।
जजि ब्रह्म सुचारी, वर शिव नारी, आनंदकारी, थिर थाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

ले अक्षत चोखे, लखि निरदोखे, उज्ज्वल धोके, हितधारी।
मुक्ताफल जैसे, गंधित तैसे, दीरघ जैसे, जो भारी।।
निर्मल जु अखण्डित, सौरभ मण्डित, शशि मद खण्डित, सुखदाई।
जजि ब्रह्म सुचारी, वर शिव नारी, आनंदकारी, थिर थाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बहु फूल जु लाया, गन्ध सुभाया, रंग सुहाया, सुखखानी।
तसु माल बनाई, सुभग सुहाई, अलिगण भाई, मनमानी।।
मैं निजकर लायो, हरष बढ़ायो, जिनगुण गायो, सुखदाई।
जजि ब्रह्म सुचारी, वर शिव नारी, आनंदकारी, थिर थाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य सु नीका, रसजुत ठीका, सुखदा जीका, गुण थानो।
करि मोदक लाया, मधुर सुहाया, थाल भराया, थुति गानो।।
जिन अग्र चढ़ाऊँ, मुख गुणगाऊँ, अति हरषाऊँ, सुखपाई।
जजि ब्रह्म सुचारी, वर शिव नारी, आनंदकारी, थिर थाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणि दीपक करिया, तिमिरसुहरिया, ज्योतिसुधरिया, तेज खरा।
धरि थाल सु लाया, हरष बढ़ाया, अतिगुण गाया, नेह धरा।।
मैं करों आरती, गाय भारती, धर्म सारथी, शिवदाई
जजि ब्रह्म सुचारी, वर शिव नारी, आनदकारी, थिर थाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

करि धूप पियारी, दशविध धारी, गन्ध अपारी, मनमानी।
शुभ चन्दन डारा, अगर अपारा, द्रव्य सु प्यारा, बहु आनी।।
अपने कर लाया, नेह लगाया, अग्नि जराया जस गाई।
जजि ब्रह्म सुचारी, वर शिव नारी, आनंदकारी, थिर थाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ले लोंग बदामा, श्रीफल कामा, खारख ठामा, हम लाये।
पुगीफल आदी, बहुफल स्वादी, भक्ति अराधी, सुख पाये।।
भरि थाल अपारा, शिवफल कारा, पापविडारा, सुखदाई।
जजि ब्रह्म सुचारी, वर शिव नारी, आनंदकारी, थिर थाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन लाया, अखत सुभाया, फूल मिलाया, गंधभारी।
चरु दीपक आनो, धूप दहानो, फल अधिकानो, शिवकारी।।
वसु द्रव्यमँगाई, अर्घ्य बनाई, भगति बढ़ाई, शिवदाई।
जजि ब्रह्म सुचारी, वर शिव नारी, आनंदकारी, थिर थाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्याणि

चौपाई

तियावास तहँ वास न कीजे, अपना शीलभाव रख लीजे।
सकल नारि जननी सम जोवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं स्त्रीसहवास-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नारी तन रति भाव न देखे, हाव भाव विभ्रम नहिं पेखे।
शीलधर्म तें निजसुख जोवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं स्त्रीमनोहराङ्ग-निरीक्षणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं।

राग वचन कबहूँ नहिं बोले, निज वच जिनवाणी सम तोले।
राग वचन सों प्रीति न होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं रागवचन-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पूरब भोग किये न चितारे, सो ही शीलभाव उर धारे।
रागभाव तजि निज रस जोवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं पूर्वभोगानुस्मरण-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

काम उदीपक अशन न खावे, षड्रसमाहिं न जिय ललचावे।
निशदिन शीलभावना होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं वृष्येष्टरसवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तन श्रृगार नहीं मन भावे, भूषित देख नहीं हरषावे।
शीलाभरण विभूषित होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं स्वशरीरसंस्कार-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

नारी की शय्या नहिं पोढ़े, कपड़ा नारि तनों नहिं ओढ़े।
शीलविरत ताके दृढ़ होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं स्त्रीशय्यासन-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कबहुं न काम कथा मन भाई, विकथा कानन तें न सुहाई।
ताके मदन चाह नहिं होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं कामकथा-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वहा।

पूरण उदर अशन नहिं खावे, ऊनोदर में चित्त रखावे।
शील पालना ताके होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं उदरपूर्णाशन-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नवधा शील धरे जो कोई, ताके ब्रह्मचर्य व्रत होई।
इस व्रत तें भव तरनों होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं नवधाशील-पालनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कामदेव वश तन तप होई, जिमि तरु होय तुषार दशोई।
यह शोषण शर काम न होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं शोषणकामबाण-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

कामबाण जाके मन माहीं, मन सन्ताप रहे अधिकाई।
कामबाण सताप न होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं सतापकामबाण-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

कामबाण उच्चाट करावे, रहे उदास कछू न सुहावे।
उच्चाटन शर काम न होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं उच्चाटनकामबाण-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

कामी जन को काम सतावे, तावश ताहि न कछु सुहावे।
वशीकरण शर बाण न होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं वशीकरणकामबाण-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि।

कामदेव तें गहल जु होई, सुधि बुधि ताहि रहे नहिं कोई।
जो मोहन शर सफल न होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं मोहनकामबाण-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

ये शर काम करे लोकीका, सबतैं बड़ा मोहरिपु जी का।
जहँ ये पाँचबाण नहिं होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं पञ्चप्रकारकामबाण-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि।

रूप तिया को लखि हरषावे, वृथा पाप शिरमाहिं चढ़ावे।
ये शर ताके माहें न होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं मुलकनकामबाण-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

बार-बार तिय देखन चाहे, जाके उर अवलोकन दाहे।
जाके उर यह शर ना होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं अवलोकनकामबाण-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि।

ये चाहे पर ताहि न भावे, हास्य वचन कहि ताहि रिझावे।
ये शर काम तहाँ नहिं होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं हास्यकामबाण-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रगट वचन कहन नहि पावे, सैन करे तिय जिय ललचावे।
जाके यह शर काम न होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं इंगितचेष्टा-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कामदेव जब अधिक सतावे, मिले तिया नहिं प्राण गंमावे।
ये शर काम जहाँ नहिं होवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं मारण कामबाण-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

दशविध कामबाण नशि जाई, शील बाड़ि पाले नवधाई।
सो किय शिव सुन्दरि को जोवे, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवे।।

ॐ ह्रीं शुद्धब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-शील शिरोमणि जगत में, सकल धरम शिरमौर।
शिवकर अघ हर पुण्य भर जजों शील गुण ठौर।।

बेसरी छन्द

शील सिद्ध थल का मग जानो, शील सुरग सरिता मन आनो।
शील भावतैं अघ नशि जाई, साँचा धर्म शील है भाई।।

शील मनुज भव में ही गाया, गहि निज जन्म सफल करि भाया।
शील समुद संसार तराई, साँचा शील धर्म है भाई।।
शील सहाय करे जग जाकी, सुर नर सेव करत है ताकी।
ताको नाम लेत दुख जाई, साँचा धर्म शील है भाई।।
शील सती सीता ने धारो, अग्निकुण्ड शीतल करि डारो।
शील सती द्रोपदि ने धारो, ता फल कीचक भोग विदारो।
भूप हरी पीछे फिर आई, साँचा धर्म शील है भाई।।
शील सती नीली मन आनो, सुर नर पूजा भइ जग लानो।
दोष सकल यातें नशि जाई, साँचा धर्म शील है भाई।।
शील गुणवती कन्या लीनो, ताकी देव सहाय जु कीनो।
शीलविरत तें सुरगति पाई, साँचा धर्म शील है भाई।।
शील सती सोमा ने धारा, ता फल सर्प भयो मणिहारा।
जग जस ले सुर लोक सिधाई, साँचा धर्म शील है भाई।।
सेठ सुदर्शन यह व्रत कीनो, पुण्य प्रताप सुयश जग लीनो।
शील सुरेन्द्र सिद्धपद दाई, साँचा धर्म शील है भाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिब्रह्मचर्यपर्यन्त दशलक्षणधर्मेभ्यः नमः।

(इस मन्त्र की 108 बार जाप देवें)

समुच्चय जयमाला

सोरठा- धर्म जगत में सार, उत्तमक्षमा जु आदि दे।
भवदधि तारनहार, नमों धर्म दशलक्षणी।।

चौपाई- क्षमा धर्म सब जग से आला, निज परिणति को है रखवाला।
क्षमाधर्म गुण रत्न भंडारो, मोको भवसागर तैं तारो।।
मार्दव धर्म सकल गुण वृन्दा, मान विहंडन शिवसुख कंदा।
मार्दवगुण तैं विनय प्रसारो, मोकों भवसागर तैं तारो।।
आर्जव रीति सकल सुखदानी, सरल स्वभाव कुटिलता हानी।
आर्जव शिवपुर पन्थ सहारो, मोकों भवसागर तैं तारो।।

सत्यधर्म सम सार न कोई, सत्य धर्म जिनभाषित होई।
सत्य सकल सन्तनि को प्यारो, मोकों भवसागर तैं तारो।।
शौचधर्म निर्मलता होई, शौचधर्म सब विध मल खोई।
शौचधर्म शिव मन्दिर द्वारो, मोकों भवसागर तैं तारो।।
संयम मन इन्द्रिय वश लाये, त्रस थावर के प्राण रखावे।
संयमभाव सदा उर धारो, मोकों भवसागर तैं तारो।।
तप सब आशा पाशी तोरे, कर्म अनादि बन्ध को छोरे।
तप जप तैं है अघमल न्यारो, मोकों भवसागर तैं तारो।।
त्याग पापमल धोवनहारा, त्यागधर्म उर करे उभारा।
त्यागभाव तैं कर्म निवारो, मोकों भवसागर तैं तारो।।
नगन मोक्ष का बड़ा निशाना, नगन बिना नाहीं शिवथाना।
आकिञ्चनवृष नगन विचारो, मोकों भवसागर तैं तारो।।
ब्रह्मचर्य शिवनारि मिलावे, ता बिन जीव जगत भरमावे।
ब्रह्मचर्य है थिर मन धारो, मोकों भवसागर तैं तारो।।
ऐसो दशविध धर्म पियारा, जन्मरोगहर औषधि सारा।
टेक धरम निजपर निरवारो, मोकों भवसागर तैं तारो।।

दोहा–आतम अवलोकन धरम, दशविध धरि मन लाय।
जल फलादि वसुद्रव्य तैं, धरम जजों हरषाय।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-ब्रह्मचर्यपर्यन्त-दशलक्षणधर्मेभ्यः पूर्णार्घ्यम्।

दश विध धर्म उपाय के, भवसागर तिरि जाय।
मन वाञ्छा मेरे यही, भव भव होय सहाय।।

इत्याशीर्वादः।

नवकार पैंतीसी विधान

हिन्दी अनुवादक 105 क्षुल्लक सिद्धसागर महाराज

नयप्रमाण के जो कर्ता हैं, घाति कर्म के जो हर्ता हैं।
केवलज्ञान दिवाकर जो हैं, लोकालोक प्रकाशक जो है।1।
अनन्त सौख्य के गृह को वन्दूं, देवाधिप जिनको अभिनदूँ।
उभय लक्ष्मी भोक्ता को वन्दूँ, विद्येश्वर पद को अभिवदूं।2।
सकल सौख्य युत सिद्ध को वंदूँ, जन्म-जरा-मृत्यु हर वदूँ।
अष्टम भू के ईश को वंदूँ, भव नाशक जिननाथ को वन्दूं,।3।
अक्षय शाश्वत प्राप्त को वन्दूँ, रोग शोक निर्वारक वदूँ।
सिद्ध आत्म-लब्धि के दाता, सर्व सिद्धि-ऋद्धि के प्रदाता।4।
गणाधीश आचार्य को वन्दूँ, विश्व ज्ञान पारगत वंदूँ।
परम चरित्र के जो सिन्धु हैं, शिष्य सिन्धु को जो इन्दु हैं।5।
परम रत्नत्रय के जो गृह है, धर्माधार मद-नाशक जो हैं।
हित उपदेशक को मै वदूँ, गणनायक को नितप्रति वदूँ।6।
उपाध्याय अति धीर को वन्दूँ, परमज्ञान उपदेशक वंदूँ।
अंग पूर्व की खानि को वंदूँ, शिष्य वर्ग सु पाठक वदूँ।7।
ज्ञानाभ्यास सदा जो करते, पञ्च महाव्रत को जो धरते।
यथाख्यात धारक जो शुद्ध हैं, समीचीन वह धर्म बुद्ध हैं।8।
स्वात्म ध्यान में सदा लीन जो, दयानिधि हैं मौन धार जो।
तीनलोकपति गणाधीश जो, निर्मल भाव लह लोक ईश जो।9।
समता भाव के जो आगार हैं, महामहल वर पंचाचार हैं।
विश्वबोध मय परम शांत जो, वदूँ साधु ज्ञानवान जो।10।
शुद्ध बीजाक्षर की यह पूजा, रचता शिव सुख पाने दूजा।
सर्वजीव त्रायक वर नौका, संसार सिन्धु से तारक लोका।11।

परम सुसुन्दर अन्तर शोभा, मूल धर्म मय हरती लोभा।
चैत्यालय या तीर्थक्षेत्र में, भूमि शुद्ध उत्तम गृह क्षेत्र में।12।
मंडल सुन्दर इसका मांडें, मंगल लोकोत्तम शरणा जावें।
सहस्रनाम दश अर्घ चढ़ावें, जिनवर आगे शीश झुकावें।13।
सकलीकरण करे मन लाके, ध्यान मौन सहित वर लाके।
श्रावकाचार में जो लवलीन हैं, सद्दृष्टि से जो प्रवीण हैं।14।
बीजाक्षर के जो ज्ञाता हैं, पण्डित श्रेष्ठ परम त्राता हैं।
सम्यक्त्व मूल कारण युत जो हैं, स्नान शुद्धि सम शुद्धी जो हैं।15।
करता है जो जिनकी पूजा, पाप हारी विधान न दूजा।
मैं भी श्रीमत् संघ के आगे, पुष्प क्षेपता चित्त लगाके।16।

ॐ ह्रीं प्रभावक संघ-सान्निध्ये-शतैक कमलोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

समुच्चय पूजा

दोहा- जिन शासन का सार है, मंत्रराज यह जान।
सर्व पूज्य यह स्थापना, मंगलादि युत मान।।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कारमंत्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कारमंत्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कारमंत्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा-सर्व पाप हर मंत्र को, सर्व सौख्य कर जान।
पूजूँ उत्तम वारि से, मंत्रराज वर मान।।1।।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कार-मंत्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व पाप हर मंत्र को, सर्व सौख्य कर जान।
पूजूँ चन्दन आदि से,"मंत्रराज वर मान।।2।।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कार-मंत्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व पाप हर मंत्र को, सर्व सौख्य कर जान।
पूजॅू अक्षत आदि से, मंत्र राज वर मान।।3।।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कार-मंत्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व पाप हर मत्र को, सर्व सौख्य कर जान।
पूजूँ मैं सुमनादि से, मंत्र राज वर मान।।4।।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कार-मंत्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व पाप हर मंत्र को, सर्व सौख्य कर जान।
पूजूँ उत्तम चरु से, मत्र राज वर मान।।5।।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कार-मंत्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व पाप हर मत्र को, सर्व सौख्य कर जान।
पूजॅू उत्तम दीप से, मंत्र राज वर मान।।6।।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कार-मंत्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व पाप हर मंत्र को, सर्व सौख्य कर जान।
पूजूँ उत्तम धूप से, मंत्र राज वर मान।।7।।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कार-मंत्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व पाप हर मंत्र को, सर्व सौख्य कर जान।
पूजूँ फल से मैं सदा, मंत्र राज वर मान।।8।।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कार-मंत्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व, पाप हर मंत्र को, सर्व सौख्य कर जान।
पूजूँ आठों द्रव्य से, मंत्र राज वर मान।।9।।

ॐ ह्रीं अनादि-निधन-पंचनमस्कार-मंत्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ

ॐ णमो अरहंताणं

ॐ प्रणव है धर्म दे, शान्ति ज्ञान दे जान।
वीतराग वर ध्यान से, योगी वंद्य हो मान।।

ॐ ह्रीं "ॐकार" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।1।।

ण-बीजाक्षर वारि से, पाप नाश हो पुण्य।
वीत शोक करता यही, तारक हरे अपुण्य।।

ॐ ह्रीं "ण" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

मो बीजाक्षर सिद्ध है, करे कर्म द्वय नाश।
जलादि से पूजूँ इसे, गुण कर पूरे आश।।

ॐ ह्रीं "मो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

अ-बीजाक्षर प्राण है, प्राण सुरक्षण ज्ञान।
गणधर ने जीवन कहा, केशव करते ध्यान।।

ॐ ह्रीं "अ" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

रि-बीजाक्षर रम्य है, उभय लोक में पूज्य।
जिन रवि का यह गात्र है, पूजूँ होने पूज्य।।

ॐ ह्रीं "रि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

हं-बीजाक्षर ध्यान से, कल्मष होते दूर।
परमानन्द सदा करे, सेवे हो गुणपूर।।

ॐ ह्रीं "हं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

ता-बीजाक्षर धर्म से, शुद्ध स्वर्ग गति प्राप्त।
पूजूँ परम सुकर्म गृह, जलादि से जिमि आप्त।।

ॐ ह्रीं "ता" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

णं-बीजाक्षर श्रेष्ठ है, ब्रह्म मूर्ति वर जान।
बोध राशि दातार है, पुजूं अर्घ प्रदान।।

ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

ॐ णमो सिद्धाणं

ॐकार जो लोक मे, योगीश्वर को ध्येय।
लोकालोक प्रकाश-मय, रवि को पूजूँ श्रेय।।

ॐ ह्रीं "ॐ कार" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

ण-बीजाक्षर को नमूं, सम्यग्दर्शन कार।
मन चाहे फल भी मिले, पूजूँ अर्घ उतार।।

ॐ ह्रीं "ण" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।

मो-बीजाक्षर लोक में, दशलक्षण दे धर्म।
योगी का ईश्वर यही, पूजत होता शर्म।।

ॐ ह्रीं "मो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।11।।

सि-बीजाक्षर सिद्ध है, केवल ज्ञान प्रकाश।
गणधर सा दे ज्ञान जो, पूजूँ सदा विकास।।

ॐ ह्रीं "सि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।12।।

द्धा-बीजाक्षर कहा, प्रमाद नाशक जान।
करे मोक्ष व्रत को वही, पूजूँ अर्घ प्रदान।।

ॐ ह्रीं "द्धा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।13।।

णं-बीजाक्षर श्री करे, स्वर्ग काम्य फलदाय।
है श्री जिन ज्यों सुखमयी, यह पूजूँ शिवदाय।।

ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।14।।

ॐ णमो आइरियाणं

ॐ बीजाक्षर शुद्ध है, परम सिद्ध-गति दाय।
केवलज्ञान स्वरूप है, पूजूँ अर्घ बनाय।।

ॐ ह्रीं "ॐकार" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।15।

ण-बीजाक्षर ज्ञान-प्रद, लोक सुनायक ज्ञान।
सर्वाक्षर का भूप है, पूजूँ अर्घ प्रदान।।

ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।16।।

मो-अक्षर इस लोक में, सर्वकाम्य प्रद जान।
कामप्रहारी मित्र है, पूजूँ अर्घ प्रदान।।

ॐ ह्रीं "मो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।17।।

आ-बीजाक्षर ध्यान से, बढ़े नहीं संसार।
पाप ताप हरता यही, पूजूँ अर्घ उतार।।

ॐ ह्रीं "आ" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।18।।

इ-बीजाक्षर रम्य है, जिनवर कथित सुजान।
चारों गति से तारता, पूजूँ अर्घ प्रदान।।

ॐ ह्रीं "इ" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।19।।

रि-बीजाक्षर शुद्ध है, पंच बाण हों नष्ट।
श्री जिन सम मैं पूजता, रहे न कोई कष्ट।।

ॐ ह्रीं "रि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।20।।

या-बीजाक्षर शान्त है, जीव राशि दे तार।
जिन गुण सम पूजूँ इसे, अर्घ चढ़ा हितकार।।

ॐ ह्रीं "या" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।21।

णं-बीजाक्षर अवश्य ही, भरे पुण्य भण्डार।
महायोगी कर ध्येय है, पूजूँ अर्घ उतार।।

ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।22।।

ॐ णमो उवज्झायाणं

प्रणव बीज ॐकार है, तीन लोक में दीप।
लोकालोक प्रकाशता, यह तो परम प्रदीप।।

ॐ ह्रीं "ॐकार" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।23।।

ण-बीजाक्षर शुद्ध है, संसार दुःख हर जान।
योगी ध्यान-गत नित्य है, पूजूँ अर्घ प्रदान।।

ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।24।।

दोहा- मो-बीजाक्षर पुण्य बढ़ाता, वीतराग दीपक कहलाता।
पूजूँ अर्घ चढ़ाकर ध्याऊँ, इसमें अपनी लगन लगाऊँ।।

ॐ ह्रीं "मो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।25।।

उ-बीजाक्षर धर्म मयी है, जिन मुख से निकला ये सही है।
ससार ताप का हारक जानो, सुना मंत्र यह अर्घ प्रदानो।।

ॐ ह्रीं "उ" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।26।।

व-बीजाक्षर सौख्य बढ़ावे, आत्मिक परमानंद दिलावे।
दुःख शोक को दूर भगावे, इसकी महिमा सुर नर गावें।।

ॐ ह्रीं "व" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।27।।

ज्झा-बीजाक्षर को मैं ध्याऊँ, ज्ञानानंद समूह बढ़ाऊँ।
इन्द्र पूज्य जिन तन सम ध्याऊँ, पूजूँ इसके गुणगण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं "ज्झा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।28।।

या-बीजाक्षर मति बढ़ावे, वीतराग मय सतत सुहावं।
नर सुर से वंदित को ध्यावे, पूजा इसकी दिव्य रचावे।।

ॐ ह्रीं "या" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।29।।

णं-बीजाक्षर कर्म नशावें, पाप कर्म को दूर भगावें।
प्रकृष्ट सिद्धि कर्तार सुहावें, पूजों अर्घ चढ़ाकर ध्यावें।।

ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।30।।

ॐ णमो लोए सव्वसाहूणं

ॐ-बीजाक्षर निर्मल ध्यावें, कर्म मूल को दूर हटावें।
संसार ताप नहिं उसे सतावें, पूजें ध्यावें भक्ति बढ़ावें।।

ॐ ह्रीं "ॐ" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।31।।

ण-बीजाक्षर मंत्र सु राजा, दुःख पलावे सुधरे काजा।
परमानन्द करे नित ध्याता, पूजूँ वंदूँ यह है त्राता।।

ॐ ह्रीं "ण" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।32।।

मो-बीजाक्षर प्राण ईश है, मुनिगण ध्याते नमा शीश है।
आत्म ब्रह्म के गुणगण पावें, इसको पूजे शिव पद पावें।।

ॐ ह्रीं "मो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।33।।

लो-बीजाक्षर मंगल-प्रद है, शिव पद दायक यह नायक है।
आदि देव के मुख से निकला, इससे होती आतम शुकला।।

ॐ ह्रीं "लो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।34।।

ए-बीजाक्षर ब्रह्म-युक्त है, पाप के क्षालन में तत्पर है।
सतदर्शन का बीज ज्ञान है, अष्ट द्रव्य पूज्यमान है।।

ॐ ह्रीं "ए" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।35।।

स-बीजाक्षर लोक ईश है, जैन लोक को मान्य रूप है।
पूजूँ अर्घ चढ़ाकर ध्याके, श्री जिन भाषित चित्त लगाके।।

ॐ ह्रीं "स" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।36।।

व्व-बीजाक्षर है जिन भाषित, सिद्धमंत्र शुभ शान्ति विकासित।
आत्म-गंग से सदा प्रवाहित, पावन करता यह अपना हित।।

ॐ ह्रीं "व्व" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।37।।

सा-बीजाक्षर पुण्य ईश है, स्वर्ग-मोक्ष-प्रद झुका शीश है।
आत्म धर्म की प्रभा-राशि है, पूजूँ मिटती आत्म काश है।।
ॐ ह्रीं "सा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।38।।

हू-बीजाक्षर धर्म ईश है, धर्म काम्य दे नमा शीश है।
स्वर्ग मोक्ष गति देता धीश है, पूजूँ हरता मन की रीश है।।
ॐ ह्रीं "हू" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।39।।

ण-बीजाक्षर जाप जपेंगे, द्वादशांगमय इसे रटेंगे।
भव्य जीव जीवन का दाता, सबको अमृत मय यह भाता।।
ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।40।।

चत्तारि-मंगलं

च-बीजाक्षर वर्ग का राजा, पंचमि व्रत दायक शिवकाजा।
योगीश्वर के मुख से निकला, पूजू अष्ट द्रव्य ले सकला।।
ॐ ह्रीं "च" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।41।।

त्ता-बीजाक्षर सुख संयुक्त, जिन भाषित यह पाप से मुक्तं।
व्रत शुद्धि कर है यह नित्य, पूजूँ अर्घ चढ़ाकर नित्य।।
ॐ ह्रीं "त्ता" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।42।।

रि-बीजाक्षर है कर्म शत्रुहर, दुःख बैरी को है पैना शर।
सुव्रत दाता को मैं बन्दू, गुणसागर को नित अभिनन्दूँ।।
ॐ ह्रीं "रि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।43।।

मं-बीजाक्षर सूत्र का ईश्वर, पूजूँ अर्घ लेय परमेश्वर।
दत्त भावना बोध का ईश्वर, सूत्र बोधकर कहा महेश्वर।।
ॐ ह्रीं "मं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।44।।

ग-बीजाक्षर पूज्य कहाता, पूज्यपाद कर श्रेष्ठ सुहाता।
श्री जिनधर्म प्रदायक त्राता, अष्ट द्रव्य से पूज रचाता।।
ॐ ह्रीं "ग" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।45।।

लं-बीजाक्षर श्रुत का अंश, केवल ज्ञान प्रदायक वंश।
मति प्रदायक बीज है जानो, पूजूँ अर्घ से उत्तम मानो।।

ॐ ह्रीं "लं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।46।।

अरहंता मंगलं

अ-बीजाक्षर विश्व विदित है, पंच प्रकार मुनि भाषित है।
काम्य प्रदायक लोक माहिं जो, पूजूँ उत्तम अक्षर हैं जो।।

ॐ ह्रीं "अ" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।47।।

र-बीजाक्षर परम देह है, वीत शोक जय-करण गेह है।
धर्म-ध्यान कर शर्म सुखा कर, पूजूँ नित्य सु परम सुधाकर।।

ॐ ह्रीं "र" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।48।।

ह-बीजाक्षर शांति बढ़ाता, क्रोध लोभ भयगिरि को ढाता।
अष्टमदों का कहा विजेता, पूजूँ अर्घ थालभर लेता।।

ॐ ह्रीं "हं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।49।।

ता-बीजाक्षर सूर्य समाना, मुनि ध्यान गत शुभ है माना।
पुण्य-जीव को भव जल तारे, अष्ट द्रव्य से पूजूँ सारे।।

ॐ ह्रीं "ता" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।50।।

म-बीजाक्षर शुद्धि प्रदाता, विश्व जीव को हित बतलाता।
साधू गुण समूह को पूजूँ, अर्घ उतारूँ भक्ति से कूजूँ।।

ॐ ह्रीं "मं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।51।।

ग-बीजाक्षर सूत्र का स्वामी, मंत्र साध्य का यह है नामी।
चित्त स्वच्छ कर्ता अति रम्य, पूजूँ महिमा योगी गम्य।।

ॐ ह्रीं "ग" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।52।।

लं-बीजाक्षर दान का गामी, दान स्वर्ग-गति देता नामी।
लब्धि तथा कल्याण प्रदाता, पूजूँ वंदूँ पाऊँ साता।।

ॐ ह्रीं "लं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।53।।

सिद्धा मंगलं

सि-बीजाक्षर पांडित्य दाता, भव नाशक भव्यों का त्राता।
आत्म-ब्रह्म श्री से जो होता, पूजूँ बन्दूँ आनन्द होता।।

ॐ ह्रीं "सि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।54।।

द्धा-बीजाक्षर दुख का हारी, मोक्ष धाम दाता सुखकारी।
सत्य वचन जिन मुख से निकला, आनन्द दाता है यह सकला।।

ॐ ह्रीं "द्धा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।55।।

म-बीजाक्षर को हम ध्यावें, इन्द्र पूज्य है गुण नित गावें।
जरा मरण के दुःख का हर्ता, अर्घ्य संयुक्त सौख्य सुकर्ता।।

ॐ ह्रीं "मं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।56।।

ग-बीजाक्षर शान्ति प्रदाता, ससार ताप को दूर हटाता।
परमानन्द परम पद दाता, पूजूँ होती दूर असाता।।

ॐ ह्रीं "ग" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।57।।

ल-बीजाक्षर जिनवर भाषित, दु:ख शोक सताप विनाशित।
पूजूँ भव हंता दे साता, इसको मानूँ उत्तम त्राता।।

ॐ ह्रीं "लं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।58।।

साहू मंगलं

सा-बीजाक्षर मंगलकर है, योग प्रदायक विद्याधर है।
सम्यग्दर्शन शुद्ध बनाता, पूजैं अर्घ चढ़ाकर ध्याता।।

ॐ ह्रीं "सा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।59।।

हू-बीजाक्षर पुण्य प्रदाता, धर्म बीज है रोग नशाता।
धर्म का ज्ञाता जगदानन्दी, पूजूँ इसको परमानन्दी।।

ॐ ह्रीं "हू" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।60।।

मं-बीजाक्षर को मै वन्दूँ, ज्वरातिसार सग्रहिणी हन्दूँ।
विशाल बोध दायक मैं वन्दूँ, पूजूँ नितप्रति मै अभिनन्दूँ।।

ॐ ह्रीं "मं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।61।।

ग-अक्षर बीज मंगलकर्ता है, मृत्यु शोक को यह हर्ता है।
घोरोपसर्ग विघातक जानो, पूजों वन्दों पावन मानो।।

ॐ ह्रीं "ग" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।62।।

लं-कार बीज अक्षर धर्माकर, धर्ममूर्ति है धर्म दिवाकर।
परम ज्ञान सूर्य मय जानो, तत्त्व विधायक उत्तम मानो।।

ॐ ह्रीं "लं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।63।।

केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं

दोहा-के-बीजाक्षर शुद्ध है, जप से भव भय दूर।
सुगति करे दुर्गति हरे, पूजूँ यह है सूर।।

ॐ ह्रीं "के" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।64।।

चौपाई- व-बीजाक्षर तारक माना, लोकांतिक वर जाप्य है जाना।
अधरम-दु:ख कारक का हंता, पूजूँ इसको मानूँ सरधा।।

ॐ ह्रीं "व" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।65।।

लि-कार बीज यह ब्रह्म जात है, उपेन्द्र सेव्य है विबुध ज्ञात है।
चन्द्रकांति सम शांति ध्येय है, पूजूँ इसको साधु ज्ञेय है।।

ॐ ह्रीं "लि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।66।।

प-कार बीजाक्षर भव्य सुहाता, भवसागर के दुःख नशाल।
विकार दूर करता वर बोध, पूजूँ इसे अर्घ वर शोध।।

ॐ ह्रीं "प" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।67।।

ण्ण-कार शुभ बीज मार्ग है, वाच्य रूप जो जगत कांत है।
जीव स्वरूप प्रकाशन कारी, पूजूँ मैं सब शोक जु हारी।।

ॐ ह्रीं "ण्ण" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।68।।

त्तो-बीजाक्षर बोध प्रदाता, मुनिगण जिसको नित ही ध्याता।
जरादि दोषादि विनाशकारी, पूजूँ इसे मैं सब सौख्य कारी।।

ॐ ह्रीं "त्तो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।69।।

ध-कार बीज जिन धर्म पात्र है, सुसिद्धिदायक गुण अष्टगात्र है।
आत्माधिराज सुजात पवित्र है, कर्म कांतार हत्री लवित्र है।।
ॐ ह्रीं "ध" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।70।।
म्मो-कार बीज भव का दुःखहर्ता, पाप प्रणाशी शिव सुखकर्ता।
आनन्ददाता भव दुख हर्ता, पूजूँ इसे मैं यह विश्व भर्ता।।
ॐ ह्रीं "म्मो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।71।।
म-कार बीजं भुवनेक बीजं, जिनेन्द्र भाषित यह श्रेष्ठ बीजं।
श्री रामचन्द्रादि यतीन्द्र वंद्य, पूजूँ इसे मै यह विश्व वद्य।।
ॐ ह्रीं "मं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।72।।
ग-कार बीजं जिननाथ बीज, अखण्ड है जो गणदेव बीज।
सदा सुधीनाथ विचार योग्यं, पूजूँ इसे मैं यह ध्यान योग्य।।
ॐ ह्रीं "ग" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।73।।
दोहा-लं-कार बीज शुभ बीज है, धर्मैक रूप श्रुत बीज।
विचार दक्ष वर ध्यान से, ध्याता मैं यह बीज।।
ॐ ह्रीं "लं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।74।।

चत्तारि लोगुत्तमा

च-कार बीज जय देता है शुचि, मुनीन्द्रगीत मे मम होता है रुचि।
पुराण रूप भुवनेक भूप है, पूजूँ इसे मैं अति सौम्य रूप है।।
ॐ ह्रीं "च" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।75।।
त्ता बीजाक्षर विश्व विधाता सब, जीवों को बोध प्रदाता।
दुखी-जनों को यह तारता है, पूजूँ इसे मै अघ नाशता है।।
ॐ ह्रीं "त्ता" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।76।।
रि-कार बीजाक्षर कर्म नशाता, जल के समान ही शुद्धतम बनाता।
सुकर्म ध्यानामृत पेय रूप है, पूजूँ इसे मैं यह सौख्य कूप है।।
ॐ ह्रीं "रि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।77।।

दोहा-लो-कार बीज सुर वर्ग से, मुनि से पूजित पूत।
मन चाहे फल भव्य को, देता है यह सूत।।
ॐ ह्रीं "लो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।78।।
गु-जिनागम बीज है, तारक भव्य समूह।
ज्ञानभारती साध्य है, पूजूँ इसकी रूह।।
ॐ ह्रीं "गु" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।79।।
त्त-बीज सु परमात्म को, बतलाता वर रूप।
जिनके वचन प्रभाव से, गणधर से चिद्रूप।।
ॐ ह्रीं "त्त" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।80।।
मा-बीज है भव-भय हारी, भवसागर से नौका वारी।
स्वर्ग-मोक्ष पद का यह दाता, इसको पूजत भव से भाता।।
ॐ ह्रीं "मा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।81।।

अरहंता लोगुत्तमा

गौतमादि भाषित अ बीज, वीतराग गति का सु बीज।
बीजों का ईश्वर है बीज, अरचूँ मैं उत्तम यह बीज।।
ॐ ह्रीं "अ" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।82।।
र-कार बीज अक्षर वर पुण्य, योगीन्द्र ध्याते हरे अपुण्य।
जैनागम में परम प्रधाना, पूजूँ इसको शांति खजाना।।
ॐ ह्रीं "र" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।83।।
ह-बीजाक्षर भव-भयहारी, भव्य जनों से पूजित भारी।
स्वर्ग मोक्ष में शीघ्र पठावे, सुख पावे जो ध्यान लगावे।।
ॐ ह्रीं "हं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।84।।
ता-बीजाक्षर लोकेश्वर पूज्य, श्री देता जप से तप पूज्य।
आदिनाथ ने इसे बताया, इन्द्रों ने इसका गुण गाया।।
ॐ ह्रीं "ता" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।85।।

लो-बीजाक्षर लोक में माना, भव्यों का तारक है माना।
जिनशासन उद्योतक मानो, पूजों वन्दों उत्तम मानो।।
ॐ ह्रीं "लो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।86।।
गु-सहित उ-बीज बुद्ध हैं, धर्मामृत यह परम शुद्ध है।
आचारसिद्धि कर काम विनाशी, पूजूँ मैं भी यह अविनाशी।।
ॐ ह्रीं "गु" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।87।।
त्त-जो बीज है विश्व भूप है, सर्वज्ञ बीज यह सौख्य रूप है।
शोक हरे यह काम बिदारी, पूजूँ इसको आत्म बिहारी।।
ॐ ह्रीं "त्त" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।88।।
मा-बीजाक्षर भव-जल नौका, भव्य मुनि के हर्ता शोका।
काम अग्नि को मेघ समाना, पूजूँ इसको यह अमलाना।।
ॐ ह्रीं "मा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।89।।

सिद्धा लोगुत्तमा

सि-बीजाक्षर नित सुखकारी, शुक्लमयी लेश्या अविकारी।
चारण इसका ध्यान लगाते, भवसागर से वे तिर जाते।।
ॐ ह्रीं "सि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।90।।
द्धा-बीजाक्षर विश्वमीत है, इन्द्रों से भी पूज्य गीत है।
चारण इसका ध्यान लगाते, भवसागर से वे तिर जाते।।
ॐ ह्रीं "द्धा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।91।।
लो-बीजाक्षर दोष मिटावे, शाति काति साम्राज्य बढ़ावे।
स्वर्ग मोक्ष दे नित्य खुशी से, इसको पूजूँ बड़ी खुशी से।।
ॐ ह्रीं "लो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।92।।
गु-अक्षर का नित प्रति जीप, लोकातिक में उपजे आप।
तत्त्वार्थ दान करूँ मैं नित्य, पूरे जाने भोग अनित्य।।
ॐ ह्रीं "गु" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।93।।

त्त-बीजाक्षर गणधर गावें, जाप करे शिवपुर को जावें।
सिंह आदि की भीत नशावें, पूजूँ इसको मन से ध्यावें।।
ॐ ह्रीं "त्त" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।94।।
मा-बीजाक्षर भव्य रूप है, भव तारन को नौका रूप है।
आग्रह अधकार का हारी, पूजूँ इसको यह अघहारी।।
ॐ ह्रीं "मा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।95।।

साहू लोगुत्तमा

दोहा-सा-बीजाक्षर धन्य है, पाप बीज हर मान।
दुर्व्याधि रागाग्नि को, शमन करे यह ज्ञान।।
ॐ ह्रीं "सा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।96।।
प्राणनाथ "हू" बीज है, रक्षा करे सुधर्म।
पूर्वधरो का ध्येय है, देता है यह शर्म।।
ॐ ह्रीं "हू" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।97।।
लो-बीजाक्षर को जपो, करे शुद्ध यह भाव।
यह नौका भवसिधु को, तरने को सद्भाव।।
ॐ ह्रीं "लो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।98।।
हृदय कमल का हार है, 'गु' तामस निरवार।
सर्प वृश्चिक आदि को, हरें बीज भव हार।।
ॐ ह्रीं "गु" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।99।।
नरपति के पद को करे, त्त बीजाक्षर सार।
मुनि हृदय में बस रहा, ध्यान करे अघहार।।
ॐ ह्रीं "त्त" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।100।।
विजयी करता बीज मा, सिद्धि करे अघहार।
केवल ज्ञान प्रकाश को, करता है निरधार।।
ॐ ह्रीं "मा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।101।।

केवलि पण्णत्तो धम्मोलोगुत्तमो

चौपाई–'के'-बीजाक्षर ज्योति जगावे, काम भाव संताप नशावे।
सुरपति इसके दास कहावें, इसको पूजें शिवपद पावें।।
ॐ ह्रीं "के" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।102।।
'व'-बीजाक्षर अमिय समाता, कुमति कुश्रुति को दूर हटाता।
जन्म मरण के रोग हरेगा, आत्मिक सुख अवश्य धरेगा।।
ॐ ह्रीं "व" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।103।।
'लि'-बीजाक्षर मत्र सुहाता, गगनाचारी मुनि मन भाता।
अघ का नाम निशान मिटाता, पूजूँ इसको दुःख घटाता।।
ॐ ह्रीं "लि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।104।।
'प'-बीजाक्षर रम्य कहाता, योगीजन के मन को भाता।
जन्म-मरण के रोग मिटाता, पूजूँ इसको पाप हटाता।।
ॐ ह्रीं "प" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।105।।
'ण्ण'-बीजाक्षर धन जन दाता, मरण समाधि सिद्धि सुखदाता।
चक्री का पद यह देता है, शिवपद में यह धर लेता है।।
ॐ ह्रीं "ण्ण" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।106।।
विविध परम सौख्य को पाता, 'त्तो' का जो ध्यान लगाता।
भव-भय उसके पास न आता, ज्ञायक परमानन्द सुहाता।।
ॐ ह्रीं "त्तो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।107।।
'ध'-बीजाक्षर सिद्धि प्रदाता, अघ हरता मुक्ति सुखदाता।
धर्म जिनेश्वर सुख करता है, उत्तम पद में यह धरता है।।
ॐ ह्रीं "ध" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।108।।
'म्मो'-को मन का हार बनाऊँ, धर्म कर्म में चित्त लगाऊँ।
अपने में ही मैं रम जाऊँ, ज्ञायक परमानन्द रहाऊँ।।
ॐ ह्रीं "म्मो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।109।।

जनम मरण का नाश करावै, 'लो' बीजाक्षर को जो ध्यावै।
मुनि जन मन को शांति प्रदाता, पूजूँ मेरा मन हुलसाता।।
ॐ ह्रीं "लो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।110।।
गु-बीजाक्षर नित व्रत देता, यम नियमों से दुखहर लेता।
भव जल तरने पोत समाना, ज्ञायक समता भाव अमाना।।
ॐ ह्रीं "गु" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।111।।
'त्त'-बीजाक्षर पाप नशावे, अपने को अपने में लावे।
मनोकामना पूरी करता, सुर नर किन्नर का मन हरता।।
ॐ ह्रीं "त्त" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।112।।
भव भय को 'मो' मार भगावे, जो भी इसका ध्यान लगावे।
गगनगामी मुनि चारण ध्यावे, इसके गुण का पार न पावें।।
ॐ ह्रीं "मो" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।113।।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि

'च'-अक्षर के गुण को गावें, मन धन रक्षा करने ध्यावें।
ज्ञान ध्यान में लीन बनाता, योगीजन के मन को भाता।।
ॐ ह्रीं "च" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।114।।
त्ता-बीजाक्षर पाप नशावे, काम हरे सुख शांति बनावे।
कर्मप्रहारी इसको पूजें, मोक्ष मार्ग हमको सब सूझे।।
ॐ ह्रीं "त्ता" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।115।।
'रि'-बीजाक्षर सुख का दाता, उत्तम भाव बोध का दाता।
केवलज्ञान को प्रकट कराता, पूजूँ होती दूर असाता।।
ॐ ह्रीं "रि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।116।।
'स'-बीजाक्षर रोग नशावे, पुत्र कलत्र लोक में पावे।
विश्व-ज्ञान ध्यान मन लावे, आतम ज्ञान नाम वह पावे।।
ॐ ह्रीं "स" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।117।।

'र'-बीजाक्षर गुण का धारी, शाकिनि डाकिनि हाकिनि हारी।
भूत प्रेत नहीं पास में आवें, यक्षादिक सब दूर पलावें।।
ॐ ह्रीं "र" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।118।।
'णं'-बीजाक्षर धर्म प्रदाता, डाकिनि शाकिनि दूर हटाता।
चोर आदि के क्लेश नशाता, चोरादिक नहिं पास में आता।।
ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।119।।
'प'-बीजाक्षर कार्य बनाता, वांछित फल का है यह दाता।
सिंह व्याघ्र आदिक से बचाता, सर्व प्रमेय प्रकाश कराता।।
ॐ ह्रीं "प" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।120।।
'व्व'-बीजाक्षर मृत्यु जयी है, ध्यान ज्ञान बहु अतिशयी है।
नाना विधि की भीति भगाता, आधि व्याधि भय दूर पलाता।।
ॐ ह्रीं "व्व" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।121।।
'ज्जा'-बीजाक्षर सुखदाता, शत्रु हरे वर बोध कराता।
आत्म तेज को प्रकट करावे, पूजन का यह भाव बढावे।।
ॐ ह्रीं "ज्जा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।122।।
राक्षस तस्कर दूर पलावे, "मि" अक्षर मन को जब भावे।
देव भूप विद्याधर ध्यावे, जो कोई इसका ध्यान लगावे।।
ॐ ह्रीं "मि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।123।।

अरहंते सरणं पव्वज्जामि

'अ'-बीजाक्षर पुत्र दिलावे, अंग पूर्व का ज्ञान करावे।
जीव स्वरूप बताने वाला, निराकार आकार निराला।।
ॐ ह्रीं "अ" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।124।।
'र'-बीजाक्षर परम भोग है, चतुः देवों स्तुति योग है।
सिंह सर्प का दर्प नशाता, आधि-व्याधि को पास न लाता।।
ॐ ह्रीं "र" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।125।।

'हं'-बीजाक्षर पाप पलावे, निर्विकार हो इसको ध्यावें।
मुनिजन मन को सदा सुहाता, आत्मबोध का है यह दाता।।

ॐ ह्रीं "हं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।126।।

'ते'-बीजाक्षर स्वर्ग धाम दे, भव जल तरने को दे।
राज्य सिद्धि जपने तपने से, होती है श्रद्धा धरने से।

ॐ ह्रीं "ते" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।127।।

'स'-बीजाक्षर सद्ध्यान धरावे, संसार दुःख को दूर हटावे।
गुणस्थान पर शीघ्र चढ़ावे, भव सागर में नहीं गिरावे।।

ॐ ह्रीं "स" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वण्मीति स्वाहा।।128।।

'र'-बीजाक्षर सिद्धि प्रदाता, अष्ट करम को नाश कराता।
इसकी जो भी पूजा करते, निज को उत्तम पद में धरते।।

ॐ ह्रीं "र" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।129।।

दोहा-भव्य जीव को प्रिय लगे, ण बीजाक्षर सार।
तीन लोक प्राणी जिसे, ध्याते है निरधार।।

ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।130।।

'प'-बीजाक्षर ज्ञान की, करता शुद्धि महान।
तीन लोक समता करे, पूजूँ इसे सुजान।।

ॐ ह्रीं "प" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।131।।

'व्व'-बीजाक्षर सिद्धि को, देता है यह जान।
काल चक्र का नाश हो, जप से इसके मान।।

ॐ ह्रीं "व्व" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।132।।

'ज्जा'-बीजाक्षर तारता, धर्म ध्यान कर जान।
सवा लक्ष इसको जपे, जल हो अमृत मान।।

ॐ ह्रीं "ज्जा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।133।।

'मि'-बीजाक्षर सौख्य दे, अमर बनाता जान।
है अभंग धार्मिक अमी, अनुपम होता ज्ञान।।
ॐ ह्रीं "मि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।134।।

सिद्धे सरणं पव्वज्जामि

दोहा-'सि'-बीजाक्षर सिद्ध का, वाचक है यह जान।
प्राणी पीड़ा दूर हो, इसका यदि हो ध्यान।।
ॐ ह्रीं "सि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।135।।

'द्धे'-बीजाक्षर ज्ञान बढ़ाता, विमल भाव जीवों में लाता।
विमल धर्म स्वपर मे करता, जीवों की यह बाधा हरता।।
ॐ ह्रीं "द्धे" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।136।।

'स'-अक्षर भूषण जीवों का, भव हरता है सब भव्यों का।
जिनवर मुख से भाषित है, स्वर व्यजन से यह प्राप्त है।।
ॐ ह्रीं "स" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।137।।

'र'-बीजाक्षर शक्ति बढ़ाता, गणेश भी गुण इसके गाता।
रत्नत्रय यह तारण हारा, उभय नयों से हमने धारा।।
ॐ ह्रीं "र" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।138।।

'ण'-बीजाक्षर शील निधाना, भव समुद्र तारण परधाना।
अधिक गुणों का यह बोधक है, कर्माश्रव का यह रोधक है।।
ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।139।।

'प'-बीजाक्षर है शंकर सा, धन करता हरता अरि शर-सा।
तीन जगत के ईश्वर जैसा, वर दाता गुण सागर ऐसा।।
ॐ ह्रीं "प" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।140।।

'व्व'-बीजाक्षर भव्य हितकर, सु जन भक्ति करते तीर्थंकर।
मुनि जन की जय, भव हर्ता है, भव्य जीव पूजन करता है।।
ॐ ह्रीं "व्व" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।141।।

'जा'-बीजाक्षर कह सुमान है, रक्षक है यह परम शान है।
शरण भव्य जीवों का तारक, पूजे इसको जो भव-हारक।।
ॐ ह्रीं "ज्जा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।142।।
'मि'-बीजाक्षर पावन करता, पुत्र मित्र कलत्र जु भरता।
मन वांछित फल को यह देता, स्वर्ग मोक्ष पद में धर देता।।
ॐ ह्रीं "मि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।143।।

साहू सरणं पव्वज्जामि

'सा'-बीजाक्षर जग जीवन है, गणधरादि सेवित यह धन है।
विमल वर्ण यह शुभ उपदेशक, इसको ध्याते मुनि उपदेशक।।
ॐ ह्रीं "सा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।144।।
'हू'-बीजाक्षर धर्म प्रदाता, मद हर्ता गुण मैत्री बढ़ाता।
दशलक्षण यह धर्म का सर्जक, पाप कार्य का है यह वर्जक।।
ॐ ह्रीं "हू" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।145।।
'स'-बीजाक्षर जिन मुख खिरता, यश करता जय देता फिरता।
भव हर भव्य सुखाकर सिधु, सिद्ध-सिन्धु माने शम-सिन्धु।।
ॐ ह्रीं "स" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।146।।
'र'-बीजाक्षर धर्म विदांवर, परम मोक्ष वश करे चिदंबर।
षोडशकारण भेद हि जानो, सब जन का हितकारक मानो।।
ॐ ह्रीं "र" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।147।।
णं-बीजाक्षर भव भय हारी, परम सुधाकर ज्ञान विहारी।
गगनगामि चारण भी ध्यावें, इसके गुण हम किस विधि गावें।।
ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।148।।
'प'-बीजाक्षर गुण व्रत रक्षक, सुख संपति कर पाप का भक्षक।
भव संताप मिटाने वाला, उत्तम पथ दर्शाने वाला।।
ॐ ह्रीं "प" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।149।।

विकट कर्म विपाक विदारे, 'व्व'-बीजाक्षर भव-जल तारे।
दुर्गति हर यह सुगति पठावे, इसका यश हम मिलकर गावें।।
ॐ ह्रीं "व्व" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।150।।
'ज्जा'-बीजाक्षर भव भय हरता, भवसिंधु से पार है करता।
मुनि जन मन शम धन का रक्षक, पाप दुःख का है यह भक्षक।।
ॐ ह्रीं "ज्जा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।151।।
'मि'-बीजाक्षर गणधर तारे, व्रत समूह जन के मन धारे।
सकल बोध हरे यह भ्रांति, देता है यह अनुपम शांति।।
ॐ ह्रीं "मि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।152।।

केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि

'के'-बीजाक्षर लोक में उत्तम, विपद जन्म हरे यह सत्तम।
इसके जप से शिवपद पावे, इसको पूजे हम नित ध्यावे।।
ॐ ह्रीं "के" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।153।।
'व'-बीजाक्षर मदन नशावे, सर्व इन्द्र यक्षादिक ध्यावे।
इसको पूजे शिव पद पावें, इससे सारे पाप पलावें।।
ॐ ह्रीं "व" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।154।।
'लि'-बीजाक्षर त्रिभुवन नायक, ज्ञान जन्य पारद यह लायक।
गणधर का यह पकज जानो, इसको पूजो उत्तम मानो।।
ॐ ह्रीं "लि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।155।।
'प'-बीजाक्षर परम गुरु सम, इसके जप से शुद्ध बने हम।
इसको ध्यावे भय मिट जावे, इसको पूजे शोक नशावे।।
ॐ ह्रीं "प" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।156।।
'ण्ण'-धन के भरे खजानें, बुद्धि बढ़ावे कुबेर सम मानें।
यह समाधि से सुधा पिलाता, इसके जप से मरण पलाता।।
ॐ ह्रीं "ण्ण" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।157।।

'तं'-बीज व्रत शील दिलाता, वाणी को गौतम दिखलाता।
जन समूह का यह लोचन है, भव के बंधन का मोचन है।।
ॐ ह्रीं "तं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।158।।
'ध'-बीजाक्षर संसृति हरता, यति मुनि ऋषि के मन में रहता।
त्रिभुवन वंदित पावन जानो, इसको उत्तम अनुपम मानो।।
ॐ ह्रीं "ध" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।159।।
'म'-बीजाक्षर त्रिभुवन मोहन, ऋषिनायक यह उत्तम है धन।
सकल बोध करे यति दान से, करते पूजन हैं हम मान से।।
ॐ ह्रीं "मं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।160।।
'स'-बीजाक्षर त्रिभुवन शरणा, मन शुद्धि से पूजन करना।
सच्चे सुख को धर्म समाना, हमने इसको उत्तम जाना।।
ॐ ह्रीं "स" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।161।।
'र'-बीजाक्षर रज हर जानो, सबका आश्रय है यह मानो।
घट-घट उत्तम ज्ञान बढ़ावे, त्यागी जन को दान दिलावे।।
ॐ ह्रीं "र" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।162।।
'ण'-बीजाक्षर जरा मिटावे, दुर्गति दुःख विलय सब जावे।
पर धर्म कर सौख्य बढ़ावे, भोग आदि की चाह घटावे।।
ॐ ह्रीं "णं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।163।।
'प'-बीजाक्षर स्वपर प्रकाशे, यह जजि है निज ज्ञायक भासे।
अज्ञान हरे यह अज्ञ जनों का, पाप हरे यह भव्य जनों का।।
ॐ ह्रीं "प" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।164।।
'व्व'-बीजाक्षर सन्मति दाता, सकल पाप हर गुण गण त्राता।
जिन शासन को दिव्य बनाता, स्याद्वाद को यह चमकाता।।
ॐ ह्रीं "व्व" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।165।।

'ज्जा'-बीज यह पुण्य प्रदाता, ताप हरे कुल सौख्य बढ़ाता।
तन को उत्तम रूप बनाता, इससे बल निज का जग जाता।।
ॐ ह्रीं "ज्जा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।166।।
'मि'-बीजाक्षर शिक्षा देता, विकट कर्म भंजन कर देता।
परम मुक्ति साम्राज्य दिलाता, भव भय भंजन यह कहलाता।।
ॐ ह्रीं "मि" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।167।।

ॐ ह्रीं शांति कुरु कुरु स्वाहा

प्रणव को पूजे सुख बढ़ जाता, दुःख पास में कभी न आता।।
ॐ ह्रीं "ॐकार" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।168।।
'ह्रीं'-बीजाक्षर को पूजें हम, शांति करे भरता है दम।।
ॐ ह्रीं "ह्रीं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।169।।
'शां'-बीज सुख देता सार, भव्य जीव को देता तार।।
ॐ ह्रीं "शां" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।170।।
'ति'-बीजाक्षर भव भय हारी, इससे बनते शम दम धारी।।
ॐ ह्रीं "तिं" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।171।।
'कु'-बीजाक्षर पूजें ध्यावें, अष्ट द्रव्य से गुण गण गावें।।
ॐ ह्रीं "कु" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।172।।
'रु'-बीजाक्षर को पूजेंगे, अर्घ चढ़ाकर हम ध्यायेंगे।
ॐ ह्रीं "रु" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।173।।
'कु'-बीजाक्षर भव का घाती, इसको पूजें होती ख्याती।।
ॐ ह्रीं "कु" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।174।।
'रु'-बीज अज्ञान नशावे, गुरु के चरणों में ले जावे।।
ॐ ह्रीं "रु" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।175।।
'स्वा'-बीजाक्षर भव दुख हर्ता, साम्य भाव मन में नित भरता।।
ॐ ह्रीं "स्वा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।176।।

'हा'-बीजाक्षर जन मन हारी, पाप पलायन करता भारी।।

ॐ ह्रीं "हा" बीजाक्षराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।177।।

न्यायादिक का संग करावे, मुनिजन का जो ध्यान करावे।
मंगल लोकोत्तम में मन लावे, पंच गुरु की शरण पठावे।।

ॐ ह्रीं अनादि-सिद्ध-मंत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।178।।

ॐ ह्रीं शतैक-सप्त-अष्टोत्तर, कमलोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

(णमोकार मंत्र की 108 बार जाप्य करें)

जयमाला

परम गुणों के परम खजाने, सप्त दुःख लोपक हम माने।
त्रिभुवन को जो पावन करते, मन चाहे उत्तम फल भरते।।
भव-हर जो हैं आप कहाते, केवल रवि के हित बतलाते।
नाना नय में दक्ष कहाते, पक्षपात को सदा मिटाते।।1।।
भरत तथा ऐरावत के दश, विदेह क्षेत्र के आठ तथा शत।
भूतकाल में हुए अनन्ता, आगे भी जिनराज अनन्ता।।2।।
णमो अरिहंताणं जनत्राता, समवशरण त्रिभुवन जग भ्राता।
अष्ट प्रातिहार्य शुभ लक्षण, कर्म प्रकृति रिपु हत सुविचक्षण।।3।।
गर्भ जन्म भय नाशन संता, राग जरा मरणादि प्रहंता।
अष्ट कर्म रिपु दहन सुकर्ता, अष्ट गुणादि सुमूल-विभर्ता।।4।।
णमो सिद्धाण मोक्ष सुकारण, जयकर भव हर जन वर तारण।
काम क्रोध कंदर्प विदारण, पंच प्रकार संसार निवारण।।5।।
णमो आयरियाणं मुनिनायक, आचार्य स्वामि यति जन गण त्रायक।
गुण छत्तीस भुवन विख्याता, पंचाचार शिष्य जन पाता।6।।
सूरि नाम भव्य जन तारण, संघ चतुर्विध वृद्धि कारण।
धर्म द्वय विस्तार सुपारण, दीक्षा-शिक्षा बोध प्रसारण।।7।।
अंग एक दश पठन पवित्र, चउदह पूर्वगत शुद्ध चरित्र।
शिष्य वृन्द पाठन भुवि सूरा, नव नय भेद कथन गुण पूरा।।8।।

सुगुण पंचविंशति भव तारण, धर्माधर्म संदेह विदारण।
पाठक नाम महा गुणवंता, चतुरथ परमेश्वर जयवंता।।9।।
उष्णकाल श्री साधु सुगिरि तल, त्रिभुवनरूप ध्यानगत कर तल।
वर्षा काल योग धृत तरु तरु, शीत काल सरिता मुनि तट थल।।10।।
अट्ठाबीस सुगुण धर मुनिवर, पंच परम ईश्वर वर शंकर।
निशिदिन मौन परमपद धाता, परमार्थक पदवी जन त्राता।।11।।

घत्ता

जय जय पंचाधिप, जित मदनाधिप, पंच परम गुरु लोकपति।
श्री अभयचन्द्र पद अभयनन्दि गुरु, सुमतिसागर जिन ध्यान पति।।

ॐ ह्रीं अर्हंत्-सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व-साधु-पंच-परमेष्ठिभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा-उदर रोग था मिट गया, सिर का गया जु रोग।
परमानन्द निज मे भया, सिद्धि सिधु गत भोग।।

।। इत्याशीर्वादः।।

इति श्री नवकार पैंतीसी पूजा (अनादि सिद्ध मंत्र पूजा) सम्पूर्ण।

श्रावक के दैनिक आवश्यक कार्यों में संयम की महत्वपूर्ण भूमिका है। प्रत्येक श्रावक अपने जीवन को उच्च शिखर पर ले जाने के लिये व्रतों को अवश्य स्वीकार करता है। प्राय यह देखा जाता है कि परस्पर में एक दूसरे को देख कर व्रतों को करने लगते हैं परन्तु कई भव्य जीवों को यही परिज्ञान नहीं रहता है कि अष्टमी चतुर्दशी आदि विशिष्ट तिथियों में व्रत क्यों किये जाते हैं? इन तिथियों में व्रत करने का प्रयोजन क्या है? उपवास प्रोषधोपवास आदि में अन्तर क्या है? ऐसे विषयों में भी तमाम भ्रान्ति समाज में हैं। जिन का निराकरण 'व्रत वैभव' ग्रन्थ में मिलता है।

डॉ शीतल चन्द जैन, जयपुर

पंचकल्याणक-विधान

दोहा-परमब्रह्म प्रणमों सदा, भए सिद्ध जगदीश ।
गुण अनन्त प्रभु ज्ञानमय, मंगल करो सो ईश ।।

श्री जिनचतुर्विंशति-स्तवन

छप्पय- श्री आदीश्वर आदि देव, देवाधिदेव वर।
गणधर मुनिवर सुर सुरादि, सेवत चरनन नर।।
आदि धरम दिढ़ करन, आदि गुरु हो शिवदानी।
नाभिराय कुल-मुकुट, त्रिजगपति हो तुम ज्ञानी।।
इहि विधि अनंत महिमाधनी, गुण-समुद्र तारन-तरन।
श्री वृषभ चिह्न उरध्यानधरि, (नित) भव्य जीव सेवत चरन।1।

गीता- श्री अजितनाथ अजीत होकर, अष्टकर्म सु हानिकैं।
वैकुंठपुर को राज पायो, आप रूप छिपानकैं।।
आलोक लोक विलोककैं जी, ज्ञानमूर्ति विशाल हो।
मैं नमत दुइ कर जोरकैं प्रभु, दीनके प्रतिपाल हो।2।

मोतीदाम- स्वामी सभव भव-दुख-हरता, सब जीवनको सुखके करता।
तुम नाम दयानिधि धारी, षट् कायन के उपकारी।।
हय लच्छन सहित सु ज्ञानी, रत्नत्रय निधि के हो दानी।
हम ऊपर महिर करीजे, भव-भव में सेवा दीजे।3।

चौपाई- श्री अभिनन्दन करमनिकन्दन, अधम-उधारन भविजन वदन।
जनम अयोध्या कपिको लच्छन, पाप विहंडन शरन सो पक्षन।

हिंडोला- तारो दीनदयाल श्रीसुमति जिनस्वामी ।टेक।
भव-समुद्र मे दुख बहु पाये, जानत हो सो हवाल ।
तुमबिन कौन नवार जग पति, तुम सबके रक्षपाल ।4।

सोरठा- गुन अनन्त सो विशाल, पद्म प्रभु जीतो मदन ।
नमन करो सो त्रिकाल, अचल बसे सुख शिव सदन ।6।

चन्द्रायन छन्द

भजन करो सो सुपार्श्व, आश मन पूर हैं ।
अष्ट कर्म रिपु जीत, महाभट सूर हैं ।।
जिन सम देव न और, सो कारज सारना ।
पुनि हाँजी, मेरे तो सरधान, यही मन धारना ।।
जिनराज, सही मन धारना ।7।

नाराच छन्द

महाराज चन्द्रनाथचन्द्र चिन्ह शुभ सु राजहीं ।
सु चन्द्रकान्त चरन नखन कान्तिसे सु लाजहीं ।।
रूप देख कोटि काम नाहिं लहे पार है ।
महा विशाल भाल शान्त छबी पाप टार है ।8।

अडिल्ल

सुविधिनाथ तुम चरन, नमो में दुइ कर जोरी ।
करो विनती भो दयाल, सुनियो यह मोरी ।।
महा दुष्ट ये करग, सदा दुख देत घनेरे ।
तुम बिन को समरत्थ, छुडवानकों प्रभु मेरे ।9।

चाल भरथरी

शीतल जिन शीतल करन, दुख तपन नसाय ।
जिनके वचन सुहावने, सबको सुखदाय ।।
शीतल जिन सेवो सदा ।।
शिवमारग की बाट जिन दई है बताय ।
जिन सम देव न जगत में, भक्तन की सुखदाय ।।
शीतल जिन सेवो सदा ।10।

चाल जोगीरासा

श्रेयकरन दुख हरन शरन तुम, राखो श्रेअंस सु दाता ।
तुम हो दीनदयाल जगतगुरु, सज्जन मातरु ताता ।।

डूबत हों मैं जगत-जलधि में, तुम बिन कौन उबारे ।
जनम मरन कर दुखिया सब जग, कोमम कारज सारे ।।
यातें अब मैं शरन तिहारे, कठिन कठिन कर आया ।
शुभको उदय भयो अब मेरे, श्रीपति दरशन पाया ।11।

पद्धरी छन्द

जय जय श्रीवासुपूज्य जिनस्वामी, तीन भुवनपति तारन नामि ।
जय जय तुम मोह निवार धीर, सब करमन जीतन परम वीर ।।

ढार पंचमंगल

विमल जिनेन्द्र विमल गुण, विमल सो तुम मती ।
इन्द्र धनेन्द्र मुनेन्द्र, नरेन्द्रन के पती ।
तिहुँ जग मध्य सो गावत, तुम गुण पावने ।
भव्यनको सुखदाय, सो गुण दरशावने ।।
दरशावने शिवमग सुहाई, अष्ट कर्म विनाशके ।
सब काज सारे पाप जारे, धरे दिढ़ उर जासके ।13।

मुनि आनंद चाल

गुननिके पुंज श्री अनंत जिननाथ जी ।
कर्म कर दूर निज ज्ञान कर साथ जी ।
त्याग पर काज निजराज शिवपुर कियो ।
तार निजराज मैं शरन तुमरो लियो ।14।

कारखा छन्द

धर्मधर धीर श्रीधर्म जिनराजजी, धर्म के थंभकरकर्म जीते ।
धर्मकी नावकरतरन-तारन भये, नाम तुम धार सब कार्ज कीते ।
जगत के जालमें भव्य उरझे लखे, धर्मको बाँहकर हेर लीने ।
इसीविधि दास की अरजसुनिकें प्रभु, धर्मकी राहकर शरण दीने ।

मरहठी छन्द

शांति करन श्रीशांति जिनेश्वर, अशरन शरन अधार ।
चरन कमल तुमरे नित सेवत, होत भवोदधि पार ।।
मन वच तन मैं करों बीनती, सुनियो दीनदयाल ।
मैं किंकर तुम शरणें आयो, कीजे प्रभु प्रतिपाल ।16।

मन भईरे चाल

षट्कायन रक्षपाल हो जिनस्वामीजी ।
कुंथुनाम तुम नाम सत्य सुन स्वामीजी ।।
तुम दीनन प्रतिपाल हो सुन स्वामीजी ।
हमरी ओर निहार अरजसुन स्वामीजी ।17।

चाल त्रिभुवन स्वामी

श्री अरहजिनेश्वर जी, त्रिभुवन परमेश्वर जी ।
मैं दीन मो ऊपर करुना धारियो जी ।
मैं शरन तिहारे जी, अघ हरहु हमारेजी ।
मै किकर तिहारो, दयानिधि तारियोजी ।18।

चाल प्रमादी मुनि

श्रीजिन मल्लिजिनेश, जिन सब कारज सारे ।
महा सुभट अरि आठ, तिनको जितनहारे ।
तुम सम देवन और, जाके शरन रहीजे ।
उरझ रहो जग-जाल, हे प्रभु ! बाँह गहीजे ।19।

चाल धमार

हितकर मुनिसुव्रत स्वामी, ध्याइये हो ।टेक।
दोष अठारह रहित विराजें, अनत चतुष्टय ठान ।
मोह-तिमिर के नाशक स्वामी; सोहत रवी समान ।।
परमशांतरस भीनी मूरत, निरख हरष सुख-खान ।
चरन-कमल की नख-दुत जिनकी, लज्जतरविशशि जान ।।
हितकर मुनिसुव्रतस्वामी, ध्याइये हो ।20।

छंद त्रिभंगी

सुन्दर छबिनीकी, नमि जिनजीकी, सब दुति फीकी तिन आगे ।
निर्मल जिनवानी, शिव अगवानी, सब सुखदानी मन लागे ।
इन्द्रादिक अरचैं, नर धन खरचैं, पावत परिचै सेय जिन्हें ।
मैं शरणें आयो, चरण लखायो, अति उमगायो नमत तिन्हें ।।21।

चाल भुजंगी

महाराज जिनराज श्रीनेमिनाथं ।
सो सुरराज नरराज नावत सो माथं ।।
प्रबल काम-बैरी महाजोर जोधा ।
हतो ताहि छिनमें सो ले खंड बोधा ।22।

चाल तत्त्वरायसे

जुगलनाथ जिन जरत उबारे, करुणा सिंधु कहाये
पार्श्वनाथप्रभु नाम तिहारो, अशरन सरन महाये ।
प्रभु मोहे तारियो मैं शरण तिहारो लीनो
अब मोहि तारियो....

चाल देशी

महावीर जिनजी, तुम देवाधि सु देव हो ।
शत इन्द्रनकर पूज हो, गणधर पार न पावहीं ।।
तुम गुन अगम अगाध हो, हो करुनाकर मोहि तारिये ।
यह विनती बारम्बार हो, मैं अति दीन सो दूबरो ।
प्रभु अब करो उपकार हो, करुना कर मोहि तारिये ।24।

इति श्रीजिनचतुर्विंशति-स्तवन ।

(यहाँ पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये।)

गर्भकल्याणक पूजा

स्थापना (छप्पय)

रतनवृष्टि सो करत, धनद सुरपति आज्ञा सिर ।
मास अगाऊ षट् सो, अर नव मास लगा झिर ।।
जनक-सदन लछमीनिधि सोहत, उपमा किन मति ।
जननि सुपन लख विमल गरभमें, आये श्रीपति ।।
इति विधि अनन्त महिमा धरन, सुख-समुद्र आनंद करन ।
दुख हरन स्थापन कर भविक, मन वचतन पूजत चरन ।।

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्त चतुर्विंशति जिनसमूह। अत्र अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्त चतुर्विंशति जिनसमूह। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्त चतुर्विंशति जिनसमूह। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक गीतिका छन्द

शुचि कनक कुंभ लीयो सो भरकरि, नीर उज्ज्वल छानकै ।
निवारने तिरषासु कारन, कुमति उर बिच भानकैं ।।
छप्पन सो देवी, करत सेवा, सरस उत्सव ठानिकैं ।
हरषायकर जिनचरन पूजत, सरब आरत हानिकैं ।

ॐ ह्रीं श्री गर्भकल्याणकप्राप्त-वृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।1।

शीतल सु चन्दन दुखनिकन्दन, मलयगिरि मनभावनो ।
केशर कपूर मिलाय, श्रीजिनराज पूजन लावनो ।छप्पन.।

ॐ ह्रीं श्री गर्भकल्याणप्राप्त-वृषभादिवीरान्तेभ्यो संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।2।

सुन्दर प्रकाश उजास अक्षत, चन्द्र ज्योति प्रकाशते ।

मोती समान अखंड धोकर, पुँज पावत भवते ।छप्पन.।

श्री ह्रीं श्री गर्भकल्याणकप्राप्त-वृषभादिवीररान्तेभ्योअक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।3।

उत्कृष्टसों उत्कृष्ट पुहुप, सुगंध सरस सुहावने ।

अरु काम को निर्मूल कारन, चढ़त श्रीजिनपावने ।छप्पन.।

ॐ ह्रीं श्री गर्भकल्याणक प्राप्तवृषभादिवीरान्तेभ्यो कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।4।

रस सरस सुहात नेत्रन, अमल शुद्ध पिछानकैं ।

जिनराज चरन चढ़ाय प्रीतम, क्षुधा भागत जानकैं । छप्पन ।

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्तवृषभादिवीरान्तेभ्यो क्षुधारोगरविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।6।

चन्दन सु अगर सुगध सुन्दर, मलय धूप दशांग सो ।

खेवहुँसु पावक माहिं जिन तट, जरत कर्म कुसंग सो ।छप्पन।

ॐ ह्रीं श्री गर्भकल्याणकप्राप्त-वृषभादिवीरान्तेभ्योअष्टकर्म- दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।7।

खारक बदाम सो लायची, लोंगादि पुंगीफल सुधे ।

जिनराज चरन चढ़ाय अनुक्रम, मुकति-फल पावत बुधे ।छप्पन।

ॐ ह्रीं श्री गर्भकल्याणकप्राप्त-वृषभादिवीरान्तेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।8।

जल गंध अक्षत पुष्प नेवज, दीप धूप सु फल भले ।

ये द्रव्य अरघ बनाय रुचिकर, चढ़त श्रीजिन अघटले।छप्पन.।

ॐ ह्रीं श्री गर्भकल्याणकप्राप्त-वृषभादिवीरान्तेभ्यो अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।9।

प्रत्येक पूजा

दोज अषाढ़ कृष्ण पखवारा, सरवारथसिधिसों अवतारा ।।
नाभिरायके घर सुखदाये, मरुदेवी के उरमें आये ।।

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णद्वितीयां गर्भमंगलमंडित-श्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।1।

जेठ अमावस वदि दिन सारा, विजय विमान त्याग अवतारा ।
जितशत्रू घर त्रिय सुखधामा, विजया कूख बसे अभिरामा ।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णामावस्यायां गर्भमंगलमंडित-श्रीअजितजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।2।

फाल्गुनसुदी आठें दिन खासा, ग्रैवेयक को तजकर वासा ।
नृप जितारि रमणी गुण सारे, नाम सु सेना गर्भ पधारे ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लाष्टम्यां गर्भमंगलमंडित-श्रीसम्भवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।3।

विजय विमान त्याग थिति भाना, सुदि वैसाख षष्ठमी ठाना ।
सवरराय त्रिया गुन खरे, सिद्धार्थाके उर अवतरे ।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठयां गर्भमंगलमंडित-श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।4।

सावन सुदि दोयज दरसाये, विजय विमान त्यागकर आये ।
नृपति मेघप्रभ तिय सुखकारा, नाममगला उर अवतारा ।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लद्वितीयां गर्भमंगलमंडित-श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।5।

माघवदी छठ दिन अभिरामा, ऊरध ग्रैवेयक तज धामा ।
धारनीश राजा सुख पाये, मात सुसीमा के उर आये ।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णषष्ठयां गर्भमंगलमंडित-श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।6।

भादव सुदि छठ मंगलकारी, सुप्रतिष्ठराजा गुणधारी ।
माता पृथिवी के उर आए, मध्यम ग्रैवेयकतैं चाए ।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लषष्ठयां गर्भमंगलमंडित-श्रीसुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।7।

चैत वदी पंचमि शुभ थानै, वैजयंत तजिकैं सो विमानैं ।
मातसु लक्ष्मणाके उर आये, महासेन राजा मन भाये ।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपंचम्यां गर्भमंगलमंडित-श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।8।

आरण से तजकर परजायो, रामादेवी के उर जायो ।
नृप सुग्रीव महा उतसायो, फागुनवदि नवमी दिन गायो ।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णनवम्यां गर्भमंगलमंडित-श्रीपुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।9।

चैत्र वदी आठें तिथि खासी, अच्युत स्वर्ग तजकें सुखरासी ।
दृढरथ भूप सुनंदा देवी, उपजे कूख सबन सुख लेवी ।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाष्टम्यां गर्भमंगलमंडित-श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।10।

वाहन विमल नृपति उपकारी, विमलादेवी गुणआचारी ।
पुष्पोत्तर तजि जनम सो लीनो, जेठ वदी छठ दिनशुभ क्रीनो ।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णषष्ठयां गर्भमंगलमंडित-श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।11।

तजत भए महाशुक्रसु नाका, दिन आषाढ़ वदि छठ हित ताका ।
राजा श्रीवसुपूज्य पियारे, देवी विजया कूख सिधारे ।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णषष्ठयां गर्भमंगलमंडित-श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।12।

जेठ वदी दशमी दिन भारी, स्वर्ग तजो बारम सहस्रारी ।
कृतवर्म्मा राजा त्रिय पाये, श्यामा नाम कूख पधराये ।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णदशम्यां गर्भमंगलमंडित-श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।13।

कार्तिकवदि परमादिन खासा, पुष्पोत्तर को तजकै बासा ।
सिंहसेन बडभागी ताता, कूख बसे जयश्यामा माता ।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णप्रतिपदायां गर्भमंगलमंडित-श्रीअनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।14।

राजा भानु भयो उत्साहा, सुवृतादेवी सती सु आहा ।
ता उर सर्वारथतैं आये, आठें सुदि वैशाख बताये ।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाष्टम्यां गर्भमंगलमंडित-श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।15।

भादव वदि सातें व्रत भारी, सर्वारथसिधि तज गुणधारी ।
विश्वसेन राजा अति प्यारी, ऐराउर आये सुखकारी ।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भमंगलमण्डित-श्रीशान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।16।

सावन वदि दशमी जग जाने, सरवारथसिधितें सु प्रयाने ।
सूरसेन राजा गुणरासा, रीमती मातुकूख सुख वासा ।।

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णदशम्यां गर्भमंगलमंडित-श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।17।

अपराजित विमान तज आए, माता मित्रा कूख बसाए ।
फागुन सुदी तीज सुखकारी, नपृति सुदर्शन महिमाभारी ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लतृतीयायां गर्भमंगलमंडित-श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।18।

राजा कुंभराय व्रतवानी, तासु प्रिया सुप्रभावतिरानी ।
अपराजित विमानतज डेरा, चैत्र सुदी परमा शुभ वेरा ।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लप्रतिपदायां गर्भमंगलमण्डित-श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।19।

प्रानत स्वर्ग त्याग जिनराजा, सावन वदी दोज सुखसाजा ।
तात सुमित्र सु विजया माई, जनम लयो त्रिभुवनके साई ।।

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमंडित-श्रीमुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।20।

विजयराय शोभत नृप ज्ञानी, आश्विनवदि शुभ दोज बखानी ।
अपराजित विमान तज आये, विप्रा देवी कूख बसाये ।

ॐ ह्रीं आश्विनकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमंडित-श्रीनमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।21।

कार्तिकसुदि छठ सब शुभ माने, आये तज सुजयंत विमाने ।
समुदविजय शिवदिव्या रानी, ता उर जनम लियो निजज्ञानी ।।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लषष्ठयां गर्भमंगलमंडित-श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।22।

प्रानत स्वर्ग त्यागकर आए, वदि वैशाख दोज गुणगाए ।
विश्वसेन घर वामा रानी, ता उर ज्ञान बसे सुखखानी ।।

ॐ ह्रीं वैसाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमंडित-श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।23।

तजकर पुष्पोत्तर बड़भागी, तिथि आषाढ़ सुदी छठ लागी।
सिद्धारथ राजा सुख पाए, प्रियकारिनि देवी उर आए ।।

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठयां गर्भमंगलमंडित-श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।24।

गीतिका छंद

मन वचन काय त्रिशुद्ध करके, चतुर्विंशति जिन जजों ।
श्रीगर्भकल्याणक सु महिमा, बार बारहि उर भजों ।
जिन जजत पाप समूह नाशें, सुखनिधान सु पावहीं ।
सब दुख निवारन सेव जिनकी, होत मंगल भावहीं ।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो गर्भमंगलमंडितेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।25।

जयमाला

शोधन गर्भ सु वस्तुकर, षट् कुमारिका आद ।
बहु देवी सेवा करत, निशि दिन धर आल्हाद ।।

पद्धरी छन्द

षट् मास अगाऊ करत सेव, छप्पन देवी उर भक्ति लेव ।
नित रत्नवृष्टि होवत विख्यात, मब जन आनद कर भात भात ।1।
तब धनपति नगर सिंगार सार, बहु रतन हेममय रच अपार ।
षट् मास गए तब मात रैन, सुपने सोलह शुभ लखे ऐन ।2।
पति पास गई फल पूछि सार, सुनि जाई घर आनद अपार ।
फिर इन्द्रादिक आये न वार, करि कल्याणक गर्भावतार ।3।
उत्सव कीनो अति ही महंत, पुनि निज थानक पहुँचे तुरंत ।
अब सुखसों निर्मल मह प्रभाव, सेवत सुरगना धर उछाव ।4।
शुचिगर्भ स्थिति मह दीप्तिवान, त्रय ज्ञान सु भूषत गुण निधान ।
तन वज्रवृषभनाराच धरन, सुन्दर सरूप दुति सरम करन ।5।
शत आठ सुलक्षन रचत तास, नौ से विंजन सोहवत विख्यात ।
निर्भय नहिं उपमा जास कोय, इन्द्रादिक सेवत हर्ष जोय ।6।
सबके प्रियतम भविजन सुमात, जिनकी महिमा जग है विख्यात ।
दरपन कोई इक लिये हाथ, कोई धर्म-कथा कहि नमन माथ ।
कोई झारी कोइक पहुपमाल, कोई गहत बीजना नमत भाल ।8।

बूझत केई मिलकर गूढ़ अर्थ, तिन जवाब कहत जननी समर्थ ।
परिजन पुरजनसुर हरष गात, जिन पुण्य महातम कहो न जात ।

सोरठा- इतिविधि गर्भकल्याणको, को कवि वरनन करि सके ।
जाको पढ़त सुजान, विघन-हरन मंगल करन ।10।

गीतिका- हरषाय गाय जिनेन्द्र पूजत, पंचकल्याणक भले।
बहु पुण्यकी बढ़वार जाके, विघन जात टले गले।।
जाके सुफल नर देह सुन्दर, रोग शेक न आवहीं।
धन धान्य पुत्र सुरेन्द्र सम्पत्ति, राजा निजसुख पावहीं।11।

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलि क्षिपेत्)

इति श्रीगर्भकल्याणक पूजा ।

2. जन्मकल्याणक पूजा

स्थापना (छप्पय)

जनम महोत्सव तीन भुवन, सबही सुख पाए ।
अकस्मात् निज चिह्न जान, इन्द्रादिक आए ।।
गज चढ़ाय गिरि जाय, शिला पाण्डुक सिंहासन ।
बहुत विनय कर परधाये, श्रीजिन पद्मासन ।
इति विधि अनेक महिमासहित, क्षीरोदधि जल लायकैं ।
जिन न्हवन कराय सु पूजियो, सुरअसुरादि हरषायकैं ।।

ॐ ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्त श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति जिनसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्त श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति जिनसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्त श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति जिनसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

कलशाभिषेक

जनमकल्याणक विधि कहि महापुरानसों ।
श्रीपति लेकर इन्द्र कनकगिरि ठायसों ।
पांडुकमनि सिंहासनपर पधरायकै ।
सुरकलश सो, क्षीर नारके ढार, जजैं जिन नायकैं ।।
हरषाय, जजैं जिन नायकैं ।।

दोहा

अब इहि भावन भायके, करों भक्ति हरषाय ।
चौकी सिंहासन धरो, तहँ थापौ जिनराय ।।

चन्द्रायन छन्द

कलश शुद्ध कर सुन्दर, जल भरकै सुधी ।
जथा शकति प्रभु ऊपर, धार सुदो बुधी ।।
जल सुगन्ध असनान अँगुछ तन पावनो ।
पुनि हाँजी, अष्ट द्रव्य शुचि साज, पूज गुण गावनो ।।
जिनराज, पूछ गुण गावनौ ।।

अष्टक

(चाल-तत्वरासाकी)

गंगादि जल उज्जवल सुनीको, अति ही सुगंधसो सीरो ।
भगति-भावसो धार सु दीनी, तृषा न आवत नीरो ।।
सो प्रभु तुम शरन लियो, मन वच तन पूजत पाय ।
मैं प्रभु तुम शरन लियो, इन्द्रादिक न्हवन कराय ।।
सो प्रभु तुम शरन लियो, मन वच तन पूजत पाय ।।मैं प्रभु।।

श्री ह्रीं श्रीजन्मकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन सरस सुगन्ध कृष्णाऽगरु, केशर माहिं घिसायो ।
तपन दोष निरवारन कारन, मन वच तन कर लायो ।सो ।
श्री ह्रीं श्रीजन्मकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्तेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।
परम सुगन्ध अखंडित तंदुल, धवल वरन दरसाए ।
हितसों बीन धोयकर उज्जवल, पुंज देत मन भाए ।सो.3।
श्री ह्रीं श्रीजन्मकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्तेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।
सुन्दर पहुप निरख सुखउपजत, अति खुशबूह सुहाई।
कारन काम विनाशन लायो, अरमिश मस्तक नाई ।सो.।4।
श्री ह्रीं श्रीजन्मकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्तेभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।
नेवत सरस सुगंध करी सद, पचामृत सुखकारी ।
भूख दोष निरवारन कारन. पूजत भर भर थारी ।सो.।5।
श्री ह्रीं श्रीजन्मकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्तेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।
निरमल जास प्रकाश झलकतो, अंधकार सब जाई ।
मोह विनाशन दीप चढाऊं, ज्ञानज्योति दरसाई ।सो।6।
श्री ह्रीं श्रीजन्मकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।
लेकर धूपदशांग बनाई, बहु सुगंध सरसाई ।
करम निवारन कारन जिन-तट, पावक माहिं चढ़ाई ।सो.।7।
श्री ह्रीं श्रीजन्मकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्तेभ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्रीफल अरु बादाम सुपारी, लौंग लायची नीकी ।
अंतराय दुख दूर करनको, पूजकरत जिनजीकी ।सो.।8।

श्री ह्रीं श्रीजन्मकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्तेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

आठ दरव उज्जवलसों उज्जवल, अरघ कियो भर थारी ।
आठ करम निरवारन कारन, पूजत पुण्य अपारी ।सो.।9

श्री ह्रीं श्रीजन्मकल्याणकप्राप्त वृषभादिवीरान्तेभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रत्येक पूजा

सोरठा- कनक वरन तनु ठान, चैत्र वदी नवमी जनम ।
वश इक्ष्वाकु महान, क्षीर न्हवन गिरि इन्द्र जज ।1।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीवृषभनाथाय अर्घ्यं

जनम इक्ष्वाकु सु वश, माघ सुदी दशमी सुखद ।
तन सुवरन गुण हंस, सुर सुरादि गिरिन्हवन जज ।2।

ॐ ह्रीं माघशुक्लदशम्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीअजितजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कातिक सुदी पूनेंद्र, वश इक्ष्वाकु सु जन्मवर ।
हाटक वरन गिरेद्र इन्द्र क्षीर जल न्हवन कर ।3।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्ल पूर्णिमायां जन्ममंगलमंडित-श्रीसम्भव-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हाटक वरन सरूप, माघ सुदी बारस विमल ।
वश इक्ष्वाकु अनूप, मेरू इन्द्र जज न्हवन कर ।4।

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनक वरन तन धार, उपजे वंश इक्ष्वाकु में ।
मेरू जजैं सुर सार, चैत्र सुदी एकादशी ।5।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लेकादश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लाल वरन गुण वृन्द, वंश इक्ष्वाकु जनम लहु ।
मेरु न्हवन कर इन्द्र, कातिक वदि तेरस जजत ।6।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णत्रयोदश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जनम इक्ष्वाकु सु वश, जेठ सुदी बारस विमल ।
हरित वरन नहिं सश, न्हवन इन्द्रका पूज्यवर ।7।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीसुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष वदी दश-एक, वश इक्ष्वाकु महान जग ।
सेत वरन गुणंऽनेक, क्षीरोदधि गिरि न्हवन जज ।8।

ॐ ह्रीं पौष कृष्णेकादश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीचन्दप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मारग सुदि शुभ एक, चन्द्र वरन लीनो जनम ।
वश इक्ष्वाकु विवेक, इन्द्र मेरु जल न्हवन जज ।9।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदायां जन्ममंगलमंडित-श्रीपुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जनम इक्ष्वाकु सु वंश, माघ वदी बारस विमल ।
सुवरन वरन प्रशंस, मेरुशिखर पूजे सुरन ।10।

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वाश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हाटक वरन सरुप फागुन वदि ग्यारस जनम ।
वंश इक्ष्वाकु अनूप, क्षीर न्हवन गिरि इन्द्र जज ।11।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णेकादश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीश्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लाल वरन तनु जासु, फागुन वदी सु चतुर्दशी ।
वंश इक्ष्वाकु उजास, इन्द्र न्हवन गिरि-शिखिर जज ।12।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुवरन वरन शरीर, माघ सुदी शुभ चौथ दिन ।
वश इक्ष्वाकु गभीर, क्षीर न्हवन गिरि इन्द्र जज ।13।

ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हाटक सम तन कांति, जेठ वदी बारस सरस ।
वश इक्ष्वाकु सो शान्त, इन्द्र न्हवन गिरि शिखर जज ।14।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कचन वरन शरीर, माघ सुदी सु त्रयोदशी ।
कुरुवशी मन धीर, क्षीर न्हवन गिरि इन्द्र जज ।15।

ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जेठ वदी-दश चार, सुवरन वरन शरीर रंग ।
मुकुट सो कुरुवंशीन, मेरु इन्द्र जज न्हवन करें ।16।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्ण-चतुर्दश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीशांतिनाथ-जिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेम वरन तनु भास, परमा सुदि वैसाख की ।
कुरुवंशी गुणराशि, क्षीर न्हवन गिरि इन्द्र जज ।17।
ॐ ह्रीं वैसाखशुक्लप्रतिपदायां जन्ममंगलमंडित-श्रीकुंथुनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
पति वरन गुणखानि, मारग सुदी चौदश विमल ।
कुरुवंशी हित ठान, मेरु इन्द्र जज न्हवन कर ।18।
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लचतुर्दश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीअरनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
मार्ग सुदी दश एक, वंश इच्छवाकु सुहावने।
हेमवर्ण सुगुणऽनेक, इन्द्र न्हवन गिरि शिखर जज।।
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लएकादश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
दशमी वदि वैशाख, श्याम बरन मन भावनो ।
हरिवशी जन साख, क्षीर न्हवन गिरि इन्द्र जज ।20।
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सुवरन वरन सरूप, वदि अषाढ दशमी विमल।
वंश इक्ष्वाकु अनूप मेरु न्हवन गिरि इन्द्र जज ।21।
ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णदशम्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सावन सुदि छठ मान, हरिवशी-शिर-मुकुट-मणि ।
श्याम वरन तन जान, न्हवन इन्द्रकर पूज्यवर ।22।
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठयां जन्ममंगलमंडित-श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
नीर वरन तन कांति, पोष वदी एकादशी ।
वंश इक्ष्वाकु महान क्षीर, न्हवन गिरि इन्द्र जज ।23।
ॐ ह्रीं पौषकृष्णेकादशम्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेम वरन छवि धार, चैत्र सुदी तेरस विमल ।
नाथवंश सुखकार, मेरु न्हवन कर इन्द्र जज ।24।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलमंडित-श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीतिका- मन वचन काय त्रि शुद्ध करकें, चतुर्विंशति जिन जजौं।
श्रीजन्मकल्याणक सु महिमा, बार बारहिं उर भजौं ।
जिन जजै पाप समूह नाशैं, सुखनिधान सो पावहीं ।
सब दुख निवारन सेव जिनकी, होत मंगल भावहीं ।25।

ॐ ह्रीं जन्ममंगलमंडिताय श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-सुरग-लोंकतें अवतरे, सुख-निधान गुण-खान ।
तीन भुवन अतिशय करन, जनम सहित त्रय ज्ञान ।।

पद्धरी छन्द ।

शुभ करण तिथी नक्षत्र वार, शुभ पहर घरी शुभ पल विचार ।
निज मात पूर्व दिशि उदय भान, सब जन भवि कमल प्रकाशमान ।1।
सब सुरऽसुरादि निज चिह्न जान, आए सब वर्ग समेत ठान ।
गज ऐरावत अति ही सिगार, ताकी शोभा वरनी अपार ।2।
जिनपति के तात सो मात गेह, इन्द्रादिक उच्छव धरत नेह ।
गृह भीतर इन्द्रानी सुजाय, प्रभु देखत हर्ष न अग माय ।3।
माताको सुख निद्रा लगाय, मायामय बालक थाप आय ।
जिनवरकों गोंद लिए सु लाय, शचिपति लीने गजपर सुजाय।4।
श्रीपति को लखिकर इन्द्रराज, इक सहस नेत्र कर सुख समाज ।
बहु आनद तृप्त न अंग माय, सुर माहे सब दिशि रहे लुभाय ।5।
अति हरषगाय जय जय कराय, गिरि मेरुशिखर पांडुक शिलाय ।
तापर सिंहासन अतिविचित्र, तहँ पधराये श्रीपति पवित्र ।6।

कंचनके कलश अनूप सार, इक सहस आठ छबि सरस धार ।
सुरहरषत क्षीरोदधि सो जाय, जल भर भर लावत अति उछाह ।7।
जय जय कर इन्द्र लिए सु हाथ, इक बार धार दीनो सो माथ ।
गुणगाय गाय अरजी पठाय, प्रभु ऊपर बूँद समानथाय ।8।
सुन्दर सुगधजल कर सनान, फिर अंग अंगोछसो गुण निधान ।
प्रभुकी बिनति करि इन्द्रराय, पूजनविधि आरंभी सो गाय ।9।
सुन्दर आभूषण कर विशाल, सोहत तन अति रमनीक भाल ।
नाना विधि बाजे वहु बजाय, भेरी बीनादिक ढोल भाय ।10।
शुचिदरब अष्ट धर इन्द्र आद, पूजे श्रीपति के कमल पाद ।
देवी वसु मगल लिये सार, नाना विधि सामग्री अपार ।11।
इति विधि अनेक उत्सव कराय, फिर ले चाले गजपर चढ़ाय ।
जिन मात तात सौंपे सुजाय, अब प्रगट भए सबसुर सुराय ।12।
तांडव सो नृत कीनो है इन्द्र, शोभा कहि सकत न कवीवृंद ।
पुनि सुर सुरादि कर गनमस्कार, निजथानक जात भए अपार ।13।
यह वाल चन्द्र अति सुखनिधान, अंगूठे अमृत करत पान ।
बहु देव'बाल संग रमत साथ, जिनकी महिमाकों नमत माथ ।14।

सोरठा- इहि विधि जनमकल्यान, को बुध वरनन कर सकै ।
हरीकिशन सुख खान, मन वच तन पूजो भविक ।15।

गीतिका- हरषाय गाय जिनेन्द्रपूजत, पंच कल्यानक भले ।
बहु पुण्यकी बढ़वार जाके, विघनजात टले गये ।।
जाके सुफल करि देह सुन्दर, रोग शोक न आवहीं ।
धन धान्य पुत्रसुरेन्द्र सम्पत्ति, राज जिनपद पावहीं ।16।

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलि क्षिपेत्)

इति श्रीजन्मकल्याणक पूजा ।

3. तपकल्याणक पूजा

स्थापना (छप्पय)

मुकति-रमनि उर धार, जगतसों भए उदासी ।
देवनिके ऋषि लौकान्तिक, बहु भगति प्रकासी ।।
सुर नर खग निज कॉंध धार, शिविका सुखकारी ।
श्रीजिनराज सु कानन में, पहुँचे उपकारी ।।
इहि विधि अनेक प्रभुता सहित, केशलुच निज ध्यान धरि ।
सुर चरचनीक हो भावधरि, स्थाप चरन पूजन सो करि ।।

ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डित श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति जिनसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डित श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति जिनसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डित श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति जिनसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक (ढार नारदी में)

बाधा मोह तृषा अति पीड़त, यासै तुम तट आयो।
उज्ज्वल नीर कलश भर पूरन, धार देत हरषायो।।
अब मैं पूजन आयो, प्रभुकों पूजन आयो।
तप कल्यानक, हाँ प्रानी, तपकल्यानसुर नर मिल कीन्हो।।
दिक्षा समय बनायो, अब मैं पूजन आयो ।1।

ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डितवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

काल अनादि फिरो भव-वनमें, दुखकर बहुत दहायो।
यासैं चन्दन केशर घिसकर, श्रीपति चढ़त सुहायो।अब.।2

ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डितवृषभादिवीरान्तेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

दारिद घेरै ता वश मैं शुभ, कारज कछु न करायो।
चन्द्रकान्तसम उज्ज्वल अक्षत, जिनकौं पुंजचढ़ायो।अब.।3।
ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डित वृषभादिवीरान्तेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

काम बली सब सुध हर लीनी, निशिदिन बहु दुख पायो।
यह निरवारन मन-वच-तनकर, उत्तम पहुप चढ़ायो।अब.।4।
ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डित वृषभादिवीरान्तेभ्य कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

भूख अथिरता कारन खोटी, रैन दिना दुख पायो ।
अमृतसम नेवज सद नीको, चरचत अति सुख पायो ।अब.।5।
ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डित वृषभादिवीरान्तेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तम अज्ञान प्रसो दुख भारी, आपा पर न लखायो ।
तिहि निरवारन करों आरती, दीपक अति दरसायो ।।अब.।।6।
ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डित वृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

भव-वन भूल रहो करमन वश, शिवपुर मार्ग न पायो ।
या दुख निरवारन पावकमें, धूप दशांग खिपायो ।अब.।7।
ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डित वृषभादिवीरान्तेभ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

आतमअंतराय दुख भारी, इष्ट वस्तु नहि पायो ।
यह निरवारन भाँति-भाँति फल,.सोध चढ़ाय सुरायो ।अब.।8।
ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डित वृषभादिवीरान्तेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल चंदनाक्षत पुष्प नेवज, दीप धूप फल लायो ।
अर्घ्य बनाय चढ़ाय भगति कर, "हरिकिशन'' हरषायो ।अब।9।
ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डित वृषभादिवीरान्तेभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रत्येक पूजा

चौपाई- चेत वदी नवमी जिन दीक्षा, धनुष पाँचसै काय सो रक्षा।
चार हजार राय सँग कीनो, वृष सुवटतर ध्यान जु लीनो।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

एक हजार राय सँग भारी, माघ सुदी नवमी सुखकारी ।
धनुष चारसै और पचासा, सप्तच्छद दरखत गुणरासा ।

ॐ ह्रीं माघशुक्लनवम्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीअजितजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मारग सुदि पूनों दिन जानो, धनुष चारसै ऊँच प्रमानो ।
एक हजार राय गुण गूजै, सालर वृक्ष तरै जिन पूजै ।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लपूर्णिमास्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीसंभव-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

एक हजार राय संग ज्ञानी, माघ सुदी बारस शुभ मानी ।
धनुष तीन सै और पचासा, असन वृक्ष तल जज गुणरासा ।

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तुंग धनुष शत तीन सुहाए, सुदि वैशाख नमै गुन गाए ।
एक हजार राय संग परचै, वृष प्रियंगु तरै जिन चरचै ।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लनवम्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीसुमतिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

एक हजार राय संग जपकौं, कातिक वदि तेरस दिन तपकौं।
धनुष अढ़ाई सै शुभ सजियो, सालर वृष तरें सुर जजियो।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णत्रयोदश्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

बारस जेठ सुदी तप जपको, धनुष दोय सै तन श्रीपतिको ।
राजा एक हजार सु दूजा, वृक्ष सिखंड तरैं जिन पूजा ।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष वदी ग्यारस दिन तपको, धनुष डेढ़ सै तनु मुनि नृपको।
राजा एक हजार सुहाए, नाग तरुतल श्रीपति ध्याए।।

ॐ ह्रीं पौष कृष्णैकादश्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

एक हजार राय सग ज्ञानी, मारग सुदि एकें तिथि मानी ।
शलका वृक्ष तले तप हूजे, धनुष शतक इक, सुर मिल पूजे ।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदायां दीक्षामंगलमंडित-श्रीपुष्पदंत-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

माघवदी बारस तप धारो, नब्बे धनुष उच्च तनु प्यारो ।
राजा एक हजार सुहाए, वृक्ष पलास तरें जिन ध्याए ।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीशीतलनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक हजार महीपत लारै, फागुन वदि ग्यारस तप धारै ।
तैंदू वृक्ष तरें सुर चरचें, ऊँचे धनुष जो अस्सी परचें ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां निःक्रमणकल्याणक प्राप्ताय श्रीश्रेयान्स-नाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

शतक तीन सै और छिअन्तर, राजा संग ठए पाडल तर ।
सत्तर धनुष काय शुभ सजियो, फागुन वदि चौदस सुरजजियो।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

साठ धनुष प्रभु देह बखानी, एक हजार राय संग ज्ञानी ।
चौथ माघ सुदि तप दिन गाए, जंबू वृक्ष तरैं जिन ध्याए ।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जेठ वदी बारस जिनदिक्षा, राजा एक हजार सुशिक्षा ।
धनुष पचास ऊँच तन हूजे, पीपल वृक्ष तरै प्रभु पूजे ।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

एक हजार राय सग ज्ञानी, पैंतालीस धनुष तनु आनी ।
माघ सुदी तेरस गुण गाए, तरु दधिवर्ण तरैं प्रभु ध्याए ।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जेठ वदी तेरस दिक्षा दिन, तनु चालीस धनुष है श्रीजिन ।
एक हजार राय संग हूजे, नदी तरू तल मिल सब पूजे ।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णत्रयोदश्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीशान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

एक हजार राय सग ध्यानी, परमा सुदि वैशाख बखानी ।
तीसरु पांच धनुष सोहें तन, वृष तिलक नीचे नव पूजन ।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्ल प्रतिपदायां दीक्षामंगलमंडित-श्रीकुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तीस धनुष तनु जान प्रवीना, मारग सुदी दशमी दिन चीना ।
एक हजार राय संग हूजे, आम्र वृक्ष नीचे सुर पूजे ।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लदशम्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तीन शतक भूपति सग जपकों, मारग सुदि ग्यारस दिन तपकों।
वीस रु पाँच धनुष शोभे तन, वृष अशोक तरें पूजे जिन ।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

नवमो वदी वैशाख सुनीकी, बीस धनुष काया श्रीजीकी ।
एक हजार राय गुन गूंजें, चंपा वृक्ष तलें जिन पूजें ।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णनवम्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

एक हजार राय तप मंग, वदि अषाढ़ दशमी दिन रग ।
पंद्रह धनुष काय अति नीकी, वलवृष तकुल थुति जिनजीकी।।

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णदशम्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मावन सुदि छठ तिथि शुभ गाई, तप सग एक हजार सुराई।
काय धनुष दस ऊँच सुहाई, वश भिडे नीचे थुति गाई ।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठयां दीक्षामंगलमंडित-श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तीन शतक तपको संग राजा, काय तुंग नव हस्त विराजा ।
पौष वदी ग्यारस तिथि नीकी, धव तरु तल पूजन जिनजीकी।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सात हाथ तनु सौम्य सुहायो, राजा एक संग तप गायो ।
मगसर वदी दशमी शुभ हूजे, सालर वृक्ष तलै जिन पूजे ।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां दीक्षामंगलमंडित-श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

गीतिका- मन वचन काय त्रिशुद्ध करकें, चतुर्विंशति जिन जजौं ।
श्रीपति सु तप-कल्यान महिमा, बार-बारहि उर भजौं ।।
जिन जजत पाप समूह नाशें, सुखनिधान सो पावही।
सब दुख निवारन सेव जिनकी, होत मंगल भावहीं ।।

ॐ ह्रीं तपोमंगलमण्डित श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं।

जयमाला

चन्द्रायन छन्द

त्याग चले परिजन पुरजन चतुरग दल।
और धन्य धान्यादिक छाड़ धार बैराग बल।।
शिविका चढ सुर नर खग जुत सु विशालजी।
पुनि हाँजी, पहुँचे कानन माहिं कहों जयमालजी।।
जिनराजतनी गण-मालजी।

पद्धरी छन्द ।

सुन्दर पवित्र थानक विराज, तहँ डारे भूषण वस्त्र साज ।
अन्तर बाहिर परिगह बिडार, निज वीतराग उर भाव धार ।।
धर पद्मासन तप काज सार, सिद्धन प्रति कीनो नमस्कार।
सिर केश उखारे पचमुष्ठ, कीनो सु ध्यान पुनि ज्ञानपुष्ट ।।
श्रीपतिके केश सो इन्द्र लीन, क्षीरोदधि पधराये प्रवीन ।
प्रभु शान्तरूप सोहत विशाल, इन्द्रादिक सेवत नमत भाल ।
शोभित चरित्रकर दिढ़ अभग, लग रही सुरति शिवनारि संग ।
धर पच महाव्रत गुण-निधान, पुनि तीन गुपतत्रय जगतमान ।।
सोहत शुद्धातम पाप टार, वर पंच समिति गह निजविचार ।
साधत परमातमपद सवेग, गहि शील ढाल संतोष तेग ।।
तप कीनो नाना विधि अपार, महिमा समुद्र करुना भंडार ।
व्रत कर सोहत अति दिपतवान, बहु विधि प्रकार ऋद्धे महान।।

उपमा नहिं कोई जिन समान, भव तारन तरन कहे बखान ।
रत्नत्रय निधि दानी सुसंत, निज पर हित उपकारी महंत।
वसु करमनजीतन भटसु जान, त्रिभुवनपति सहित सुचारज्ञान ।
गुण श्रेणीमंडित सुमति भौन, जिनगुन वरननबुध धरत कौन ।

सोरठा- इति विधि तप कल्यान, पूजन करउ धाइयो ।
सु हित बात यह जान, भवि उत्साह बढ़ाइयो ।।

गीतिका- हरषाय गाय जिनेन्द्र पूजत, पंचकल्यानक भले ।
बहु पुण्यकी बढ़वार जाके विघन जात टले गले।
जाके सुफलकर देह सुन्दर, रोग शोक न आवहीं ।
धन धान्य पुत्र सुरेन्द्र सम्पत्ति, राज निजपद पावहीं ।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

इति श्रीतपकल्याणक पूजा

4. केवलज्ञानकल्याणक पूजा

स्थापना

छप्पय- केवलज्ञान सो जोत जगी, श्रीपतिके जबही ।
समवसरन रचना सोहत, पूजत सुर तबही ।।
खाइ कोट वन वेदी द्वादश सभामंडप गिन ।
गधकुटी सिंहासन कमल सो अंतरीक्ष जिन ।।
चौंसठ चमर सुर कर ढुरत, तीन छत्र शिर सोहने ।
यह स्थापन करके भविक, पूजत प्रभु मनमोहने ।

ॐ ह्रीं श्री केवलज्ञानप्राप्त श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति-जिनसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री केवलज्ञानप्राप्त श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति-जिनसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री केवलज्ञानप्राप्त श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति-जिनसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

ढाल-मरहठी

छन्द अष्टपदीकी

जल सरस सुगंध हरषकर, शुचि भाजन भरहु निरखकर ।।
प्रभु आगे धार सो दीनी, तिरषा सब नाश जो कीनी ।।
श्रीपति जयदेव जयदेवा, सुखकर जयदेव जयदेवा ।टेक।
श्री समवसरन कर सोहत, रचना देखत मनमोहत।
प्रभु ज्ञानकल्यानक धारी इन्द्रादि जजैं सुखकारी ।श्रीपति.

ॐ ह्रीं केवलज्ञान मण्डित-श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

केशर नइ दिपत सुहाई, घिसि चन्दन माहिं मिलाई ।।
शीतल सुगंधि हरषाई, प्रभु पूजत दाह मिटाई ।श्रीपति.

ॐ ह्रीं केवलज्ञान मण्डित-श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

सुन्दर तंदुल लै धोकर, भाजनमें नैन निरख धर ।
जिन आगे पुज सो धारे, अघ दारिद भाजत सारे । श्री.

ॐ ह्रीं केवलज्ञान मण्डित-श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

सद पुहुप सो वरन वरनके, प्रभु अचरत काम हरनके ।
मैं मन वच तन कर पूजौं, जिनदेव न तुम सम दूजौ ।श्री.।

ॐ ह्रीं केवलज्ञान मण्डित-श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

विजन अति सरस सरनके, सद् पुष्ट सो पूर्व जतनके ।
कचन थारी भर लीनी, प्रभु आगे पूजन कीनी ।श्री.।

ॐ ह्रीं केवलज्ञान मण्डित-श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दीपक द्युति ज्योति जगायो, दीसत परकाश सुहायो ।

जिन आगे आरति करतो, अज्ञान-तिमिर को हरतो ।श्री.।

ॐ ह्रीं केवलज्ञान मण्डित-श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

लखि धूप दशांग बनाई, पुनि पावक माहिं जलाई ।

तसु उठत धुआं खुशबोही, मनो जरत करम-वन द्रोही।श्री.।

ॐ ह्रीं केवलज्ञान मण्डित-श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

फल फासु शोध सो लाये, देखत सब नैन सुहाये ।

धोकर जिनराज चढाये, फल पावत अमर कहाये ।श्री0।

ॐ ह्रीं केवलज्ञान मण्डित-श्रीवृषभात्विीरान्तेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

शुचिदरब सो वसु विधिलीनो, इकठो भाजनमें कीनो ।

बहु हरष बढ़ाय सो गायो, मै शीश नवाय चढ़ायो ।श्री ।

ॐ ह्रीं केवलज्ञान मण्डित-श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रत्येक पूजा (दोहा)

वदि फागुन ग्यारस भली, पुर्वाहक सो काल ।

वृषभ चिह्न लख ज्ञानमय, इन्द्र जजत नमि भाल ।1।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णेकादश्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीवृषभनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

गजलच्छन अति दिपत तनु, अपराहिनि शुभ काल ।

पौष सुदी एकादशी, पूजत इन्द्र विशाल ।2।

ॐ ह्रीं पौषशुक्लेकादश्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

कार्तिक वदि शुभ चौथ दिन, लक्षन घोटक जास ।
अपराह्हिनि वेला जगो, ज्ञान-जजत सुखरास।3।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णचतुर्थ्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

पौष सुदी सुचतुर्दशी, लक्षन कपिका ठान ।
अपराह्हिनि वेला जगी, ज्ञान-ज्योति जगमान ।4।

ॐ ह्रीं पौषशुक्लचतुर्दश्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

चकवा लक्षण चैत सुदि, तिथि दशमी अपरान ।
केवलज्ञान जगो प्रभु, पूजत सुर हरषान ।5।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लदशम्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

पदम चिह्न अपरान्ह में ज्ञान-भानु उद्योत ।
चैत सुदी पुनों विमल, पूजत शिव-सुख होत ।6।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपूर्णिमायां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

वदि फागुन छठ विमल दिन, अपरान्हक शुभ काल ।
लक्षण जिनके सांथियो, पूजत इन्द्र विशाल ।7।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णषष्ठ्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीसुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

अपराह्हिनि वेला सुभग, लक्षन चन्द्र अनूप ।
फागुन वदि सातें सुदिन, पूजत सुर नर भूप ।8।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

कार्तिक सुदि दोयज विमल, अपराहिनि शुभ काल ।

लक्षण मगर सो तन लसे, जजत इन्द्र नमिभाल ।9।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वितीयायां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीपुष्पदन्त-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

चौदस वदि शुभ पोषकी, पूर्वाह्नक जिहि काल ।

पद लक्षण श्रीवृक्षको, नावत सुर नर भाल ।10।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीशीतलनाथ- जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

माघ वदी मावस भली, अपराहिनि वर ज्ञान ।

गैडा लक्षन पूजते, सुर नर हरषत वान ।11।

ॐ ह्रीं माघकृष्णअमावश्यायां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीश्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

माघ शुक्ल दोयज सुफल, महिषा लक्षन सूज ।

अपराहि नमे ज्ञान लहि, सुर नर हरषत पूज ।12।

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वितीयायां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

अपराहिनि बेला सुफल, सूकर लक्षन अंग ।

माघ सुदी छठ ज्ञानमय, पूजत है चहु सग ।13।

ॐ ह्रीं माघशुक्लषष्ठयां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

चैत्र वदी मावस भली, अपराहिनि सु विशाल ।

सेही लक्षन जान जग, पूजत हैं गुणमाल ।14।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यायां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीअनन्तनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

अपराहिनि वेला जगों, ज्ञान वज्रतैं चीन ।
पोष सुदी पूनो सरस, पूजा इन्द्रन कीन ।15।

ॐ ह्रीं पोषशुक्लपूर्णिमायां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

मृग लक्षन अपरान्हमें, पौष सुदी दश मान ।
केवल महिमा जानके, नर सुरादि जज ठान ।16।

ॐ ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

अपराहिनि वेला सुलखि, लक्षण छाग बखान ।
चैत्र सुदी तृतीया भली, पूजत करन सुजान ।17।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लतृतीयायां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

कातिक सुदि बारस सुदिन, लक्षन सोहत मीन ।
अपराहिनि बेला समय, पूजा इन्द्रन कीन ।18।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वादश्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

पौष वदी दोयज सुफल, लक्षन कलश महान ।
अपराहिनि बेला जगो, ज्ञान पूज सुर मान ।19।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णद्वितीयायां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

अपराहिनि वेला भली, लक्षन कूर्म सरूप ।
नवमी वदि वैशाखकी, पूजत सुर नर भूप ।20।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णनवम्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

नील कमल लक्षन विमल, अपराहिनि शुभकाल ।
मारग सुदि एकादशी, सुर जज नावत भाल ।21।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीनमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

शंख लक्षन अपरान्हमें, आश्विन सुदि शुभ एक ।
पूर्वान्हक जिहि कालमें, पूजत भविक अनेक ।।22।।

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लप्रतिपदायां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीनेमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

चैत्र असित शुभ चौथको, पूर्वान्हक है काल ।
लक्षन सर्प सुहावनो, पूजत ज्ञान विशाल ।23।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

अपराहिनि बेला सरस, दशमी सुदी वैशाख ।
लक्षन सिंह सु बोधि जग, पूजत स्तुति भाख ।24।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानमंगलमंडित-श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

गीतिका छन्द

मन वचन काय त्रि शुद्ध करकें, चतुर्विंशति जिन जजौ ।
श्रीज्ञानकल्यानकसु महिमा, बार बारहिं उर भजौं ।।
जिन जजत पाप-समूह नाशैं, सुख-निधान सो पावहीं ।
सब दुख निवारन सेव जिनकी, होत मंगल भावहीं ।25।

ॐ ह्रीं ज्ञानमंगलमंडित-श्रीवृषभादिचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जयमाला चन्द्रायन छंद

जीत लए वसु करम, मोह आदिक महा।
दोष अठारह रहित भए तिन सम कहा।।

केवल रिधि लहि भए, त्रिभुवन मान है।
पुनिहाँजी, लोक अलोक सरूप समय बिच जान है ।।
जिनराज अनंतो ज्ञान है ।।

ढार-लालमंगलकी ।

इमि लखि हरि धनद बुलायो जी, कहि समवसरन रचवायो जी ।
पृथ्वीतें ऊँच सुहाए जी, तिहिं चढ़न सिवान बनाए जी ।1।
तहँ नीलरतनमई शिला, शुभ समवसरनकी भूमका ।
चारों दिशा प्रति गैल चारों, चढ़त भविजन झूमका ।।
तहँ चार कोट बने सु भारी, पाच वेदी सोहने ।
वेदी सु सरल समान सूधी, कोट कँगूरे मोहने ।2।
सब वेदी कोट नो जुर हैं जी, चहुँ दिशि छत्तिस गोपुर है जी ।
द्वारन प्रति तोरनमाल हैं जी, मगल द्रव्यद्वार सु पाल हैं जी ।3।
नव नव निधें गोपुर संबधी, धूप घट पुनि सोहने ।
तहँ गली प्रति प्रति नाट्यशाला, देख हित मनमोहने ।।
तहँ करत नृत्य सुरगना, मिलि हाव भाव विलासिनी ।
गावत श्रीजिनराजके गुण, सुन्दर सुर मृदु भासनी ।4।
अब भूमि गली आरंभ है, मध्य भागमें मानस्तंभ है ।
सु चारों दिशि में चार हैं, बापी पुनि कोट सु धार हैं ।5।
तहँ प्रथमभूमि जिनेन्द्र मन्दिर, द्वितीय भूमिसो खातिका
पुनि तृतीय भूमि सो फूलवाड़ी, चौथी उपवन जातका ।।
अब भूमि पंचम धुजा सोहत, कल्पद्रुम छठमी लसे ।
पुनि सातमीमें तूप मन्दिर, देखते भव अघ नशे ।6।
अब अष्टमभूमिसो गाई जी, तहँ द्वादश सभा सुहाई जी ।
महिमा सुनसुखपाई जी, तिन नाम कहों हरषाई जी ।7।

मुनिवर प्रथम पुनि कल्पदेवी, नारि पुनि ज्योतांगना ।
व्यन्तरी भवन सो वासिनी, ये भजत जिन-गुण रंजना ।।
सुर भवनवासी और व्यन्तर, ज्योतिषी पुनि कल्प है ।
नर और तिरयंच नमत प्रभुकों, जिन्हें भव-दधि अल्प है ।8।
तहँ थंभ अनेक रतनमय जी, ता ऊपर श्री मंडप है जी ।
बहु झालर मोतिन की सोहे, रचना नाना विधि मन मोहे ।9।
सब मध्य भाग विषैं मनोहर, तीन पीठ सुहावने ।
वैडूर्य मय पुनि हेममय, पुनि जड़ित मन दरसावने ।।
तहँ प्रथम पीठ सु यक्ष माथे, धर्म-चक्र सु धारहीं ।
तहँ अष्ट मंगल द्रव्य सोहत, धूप घट अघ जारहीं ।10।
भविजन तहाँ तक सब जावेंजी, पूजन बहु भगत करावें जी ।
फिर आनि सभामें बैठें जी, वाणी सुनि पुण्य समेटें जी ।11।
दूजी पीठ विषैं ध्वजा घट, मंगल द्रव्य शोभावने ।
तीजी सु पीठके ऊपरै, श्रीगंधकुटी सुहावने ।।
झालर सो मोती रतन गूंजत, फूलमाल सो छबिछके ।
सुन्दर ध्वजा घट धूप गध सु, कौन बरनन कर सके ।12।
ताकी शिखर बनी दुति भारी जी, ता महि सिंहासन सारी जी ।
ता ऊपर कमल सो छाजे जी, तहँ अंतरीक्षजिनराजे जी ।13।
चौसठ चमर ढोरत सो सुर मिल, तीन छत्र सुहावने ।
मनो तीन लोक विभूति जीतन, लगत छबि दरसावने ।।
तहँ पहुपवृष्टि अनेक पंचाश्चर्य होत सु सोहनो ।
चौंतीस अतिशय पोत लखि प्रभु, भविकजन मन मोहनो ।14।
तन भामंडल द्युति भारीजी, मघ वृक्ष अशोक सुसारी जी ।
वसु प्रातिहार्य अति सोहे जी, रचना वरनन कबको है जी ।।
जहँ एक मुख दीखत चतुर्मुख, दोश अठ-दस रहित हैं ।
अनंत चतुष्टय ध्यान मूरति, इमि बिहार सो सहित हैं ।15।

इमि सुमि सु श्रीजिनराज, महिमा, "हरीकिशन" गुण गाइयो ।
अति हरष भाव बढ़ाय भविजन, आरती चित ल्याइयो ।16।

सोरठा- यह केवल कल्यान, महिमा बरनन कौन बुधि।
पूजत हों धर ध्यान, मन वच तन आनंद सहित।।17।।

ॐ ह्रीं ज्ञानमंगलमंडित-श्रीवृषभादिचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

गीतिका- हरषाय गाय जिनेन्द्र पूजत, पचकल्यानक भले।
बहु पुण्य की बढ़वार जाके, बिघन जात टले गले।।
जाके सुफल कर देह सुन्दर, रोग शोक न आवहीं।
धनधान्य पुत्र सुरेन्द्र सम्पति, राज निज पद पावहिं।।18।।

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

इति केवलज्ञान कल्याणक पूजा।

5. निर्वाण कल्याणक पूजा

स्थापना

छप्पय- सकल करम तजि लोक-शिखरपर जाय विराजे।
अष्ट गुणनिकर सहित, अचल प्रभु निजपुर छाजे।।
अविनाशी अविकार, अनते सुखमय थानी।
निर्मल ज्ञान अलोक, लोक की युगपत जानी।।
इहि विधि अनंत महिमा धनी, गुण समुद्र आकुल रहित।
इहि स्थापन करके भविक, पूजत हों भावों सहित।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति जिन समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति जिन समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति जिन समूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक धार वेशी की

प्रानी! गंगादिक जल सीयरो प्रासुक कर सो विशाल हो।
सुन्दर भाजन धारकें अर्चत जिनगुणमाल हो।।
श्रीनिर्वान-कल्यान को, पूजत सब सुर राय हो।
हरष हरष गुण गाय के, हमहु भावना भाय हो।

ॐ ह्रीं श्री निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-वृषमादिवीरांतेभ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रानी! केशर घिस कर पीयरी, चंदन अतिहि सुगंध हो।
श्री जिनराज चढ़ाइये, मिटत ताप दुख बंध हो।।श्री निर्वान०

ॐ ह्रीं श्री निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-वृषमादिवीरांतेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रानी! मोती शशिसम ऊजरे, तंदुल पुंज पवित्र हो।
श्री जिनचरन चढ़ाइये, पढ़ पढ़ ढार पवित्र हो।।श्रीनिर्वाण०

ॐ ह्रीं श्री निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-वृषमादिवीरांतेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रानी! जीत रहो जग जनन को, काम बली प्रतिकूल हो।
सो दुख नाशन कारने, ले जज सुन्दर फूल हो।।श्रीनिर्वाण०

ॐ ह्रीं श्री निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-वृषमादिवीरांतेभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रानी! अमृत सम नैवेद्य ले, निरख निरख धर थार हो।
भगति भाव उर धारकें, अरचत श्रीजिनसार हो।।श्रीनिर्वाण०

ॐ ह्रीं श्री निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-वृषमादिवीरांतेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रानी! दीपक ज्योति प्रकाशती, अंधकार की हानि हो।
श्रीजिनचरन चढ़ाइये, कर कर आरति गान हो।।श्रीनिर्वाण०

ॐ ह्रीं श्री निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-वृषमादिवीरांतेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रानी! कृष्णगरु आदिक लिए, धूप दशांग अनूप हो।
पावक मांहि सो खेवही, पूजो निरजन रूप हो।।श्रीनिर्वाण०

ॐ ह्रीं श्री निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-वृषभादिवीरांतेभ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रानी सुन्दर फल मनभावने, निरख धोय धर थार हो।
चरन कमल जिनराज के, अरचत हों उर धार हो।।श्रीनिर्वाण०

ॐ ह्रीं श्री निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-वृषभादिवीरांतेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रानी! आठ दरब दरसावने, उज्ज्वल अरघ बनाय हो।
गावत भाव बढ़ायके, पूजत हो उमगाय हो।।श्रीनिर्वाण०

ॐ ह्रीं श्री निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-वृषभादिवीरांतेभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रत्येक पूजा (चौपाई)

पद्मासन कैलाश प्रधान, माघ श्याम सु चतुर्दशिजान
योग निरोध दिवस दस चार, लहि बैकुण्ठ त्याग संसार।।1।।

ॐ ह्रीं श्री माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीवृषभनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

शुकल चैत्र पाँचें शुभ मान, योग निरोध मास इक ठान।
सम्मेद शिखर तीरथ सरदार, कायुत्सर्ग धारि भए पार।।2।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल पंचम्यां निर्वाणकल्याणक- प्राप्त-श्रीअजितनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

दोहा- आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग किये इकमास।
चैत सुदी छठ मुकति लहि, पूजत हो सुखरास।।3।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लषष्ठयां निर्वाणकल्याणक-प्राप्त-श्रीसंभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

आसन ऊर्द्ध समेदसों, मास एक को योग।

छठ वैशाख सुदी मुकति, पूजत देव मनोग।।4।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठयां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीअभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग कियो इकमास।

चैत्र सुदी दसमी जजौं, मुकति-रमनि गुन रास।।5।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लदशम्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीसुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

आसन ऊर्द्ध समेदसो, योग कियो इकमास।

फागुन वदी चोथे जजौ, लही मुकति गुन-रास।।6।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां दिने मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीपद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग कियो इकमास।

फागुन वदि सातें मुकति, पहुँचे पूजों तास।।7।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां दिने मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आसन ऊर्द्ध समेदसो, योग कियो इकमास।

फागुन वदि सातें जजौं शिवरमनी पति भास।।8।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग कियो इकमास।

भादों सुदि आठें मुकति, पहुँचे जजौं हुलास।।9।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लअष्टम्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीपुष्पदन्त-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग मास इक जान।

अश्विन सुदि आठें लही, मुकति-रमनिसुख खान।।10।।

ॐ ह्रीं अश्विनशुक्लाष्टम्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीशीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग कियो इकमास।

साहुन सुदि पूनों जजों, लही मुकति-गुन-रास।।11।।

ॐ ह्रीं श्रवणशुक्लपूर्णिमायां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीश्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्मासन चम्पापुरी, योग कियो इकमास।

भादो सुदि चौदस विमल, जजों मुकति के वास।।12।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीवासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आसन ऊर्द्ध समेदसो, योग कियो इकमास।

वदि अषाढ़ आठें जजो, अविनाशी सुखरास।।13।।

ॐ ह्रीं अषाढ़कृष्णाष्टम्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीविमलनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग मास इक ठान।

चैत्र वदि मावस मुकति, पहुँचे पूज महान।।14।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यायां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीअनंतनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग करो इकमास।

चौथ जेठ सुदि मुकति लहि, पूजों आनंद रास।।15।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लचतुर्थ्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीधर्मनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग मास इक जान।
चौदस जेठ वदी जजौं पहुँचे पद निरवान।।16।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीशांतिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग कियो इकमास।
एकम सुदि वैशाख की, पूजों मुकति विलास।।17।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीकुंथुनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग कियो इकमास।
चैत्र वदि मावस मुकति, पहुँचे आनंद रास।।18।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यायां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीअरनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग मास इक जान।
फागुन सुदि पाँचैं दिना, जजौं मुकति-पति जान।।19।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लपञ्चम्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

चौपाई

कायुत्सर्ग धरो प्रभु सार, दो पख योग निरोध विचार।
फागुन वदि बारस निरवान, शिखरसमेद जजैं सुर गान।।20।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णद्वादश्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीमुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

दोहा- आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग मास इक जान।
वदि वैशाख चतुर्दशी, जजौं मुकति-पति जान।।21।।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीनमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

पद्मासन गिरनार सों, योग कियो इक मास।
सुदि अषाढ़ सातैं मुकति, पहुँचे अविचलवास ।।22।।

ॐ ह्रीं अषाढ़शुक्लसप्तम्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीनेमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

आसन ऊर्द्ध समेदसों, योग मास इक ठान।
साहुन सुदि सातें जजों, मुकति-रमन गुनखान।।23।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

काय ऊर्द्ध पावापुरी, योग सु षट् दिन ठान।
कार्तिक वदि चौदस जजौ, पहुँचे अविचल थान।।24।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

गीतिका छन्द

मन वचन काय त्रि शुद्ध करकें, चतुर्विंशति जिन जजौं।
निर्वानकल्याणक सु महिमा, बार बारहि उर भजौ ।।
जिन जजत पाप-समूह नाशें, सुखनिधान सु पावहीं।
सव दुख निवारन सेव जिनकी, होत मगल भावही।।25।।

ॐ ह्रीं मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीवृषभादि चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा

जयमाल

चन्द्रायन छंद

श्री जिनराज पहुँचे अविचल गढ़ सुखदाई।
सब इन्द्रादिक कल्यानक कीन्हों हरषाई।।
सब विधि कर गुण गाय नए निज भालकों।
पुनि हाँजी, जिन चौबीसीतनी सौ कहों जयमालकों।।

पद्धरी छंद

श्री आदीश्वर जिन आदि देव, सब नर सुरादि मिल करत सेव।
जिन अजितनाथ वंदौ सुसार, प्रभु पर उपगारी गुन-भंडार।।1।।
बंदौ संभव भव हर सु पीर, सब जन आनंद करता गंभीर।
श्री अभिनन्दन वंदौं त्रिकाल, भविजन तारन ऐसे दयाल।।2।।
मन वच तन वंदौ सुमतिदेव, जिन सम जगमें नहिं और देव
श्री पद्मप्रभ गुनकरि गरिष्ट, जिन नमत सुरा सुर सकल शिष्ट।।3।।
उर धर बंदौं श्री सुपार्सदेव, भए मुकति-रमन जजें करों सेव
श्री चन्द्रप्रभ हो गुन विशाल, मैं मन वच तन बंदौ त्रिकाल।।4।।
जगचूड़ामणि श्री पुष्पदंत, वरने को कवि गुण हैं अनंत।
श्री शीतल छवि निरखत सुसार, भवताप-हरन शाशि सुखभंडार।।5।।
वंदों श्रेयांस जिन तरन तार, भव दुःख हरन सुख करन सार।
श्री वासुपूज्य जिनसमन कोय, वसु करम हरन निश्चिंत होय।।6।।
श्रीविमलनाथ वंदौ सु संत, निर्मल गुण ज्ञायक जग महंत
नित ध्यान धरौं सो अनत नाथ, जिनको इन्द्रादिक नमत माथ।।7।।
कर जोर नमों श्री धर्मनाथ, दिढ़ धर्म करन तारन अनाथ।
श्री शांतिदेव तिन करहु सेव, जिन शांति छवि लख पुण्य लेव।।8।।
वंदौं श्री कुन्थु महान ज्ञान, षट् कायन के रक्षक सुजान।
जिन अर जिनेश्वर हरहु पीर, प्रभु परम सुगुरु सुख करन धीर।।9।।
अरु सल्ल रही नहीं कोई भांत, ऐसे जिन मल्लि नमों विख्यात।
श्री मुनिसुव्रत गुन कर गंभीर, कामादिक शत्रुजीत वीर।।10।।
वंदौ श्रीनमिप्रभु धर्म अंग, जिन पायो अविचल सुख अभंग।
जय भीर हरन श्रीनेमिनाथ, भय बाल ब्रह्मचारी सनाथ।।11।।
श्री सुखकर श्रीपार्श्व सेव, युग नाग कियो उपगार देव।
श्रीमहावीर ज्ञानी विलास, सब लोक अलोक लखो प्रकास।।12।।

ये चौबीसों जिन सुख भंडार, अविनाशी अविचल गुण अपार।
सब दोष रहित भए गुण अनंत, निर्मल सु निराकुल भय महंत।।13।।
केवल दरसन जिन बल अगाध, तिहुँलोक शिखरपर निराबाध।
अब करुनाकर तारो सुजान, जन "हरीकिशन"तुम शर्न आन।।14।।

सोरठा- यह निर्वानकल्यान, पूजत पुण्य-भंडार भर।
महिमा कौन बखान, मन वच तन पूजत चरन।।15।।

ॐ ह्रीं मोक्षकल्याणक-प्राप्त-श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा

गीतिका- हरषाय गाय जिनेन्द्र पूजत, पंचकल्यानक भले।
बहु पुण्यकी बढ़वार जाके, विघन जात टले गले।।
जाके सुफल कर देह सुन्दर, रोग शोक न आवहिं।
धनधान्य पुत्र सुरेन्द्र सम्पति राज निजपद पावहीं।।16।।

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

इति निर्वाणकल्याणक पूजा

समुच्चय अर्घ्यं

गीतिका छन्द

श्रीजिन सु गर्भकल्यान पूजों, जनम तप मनभावनो।
भव जजत ही केवलकल्यानक, बढ़त धर्म सुहावनो।।
निरवान कल्यानक हो ज्ञानी, त्रिविधि कर जिन ध्यावहीं।
मंगल सो कारन तरन तारन, सबै सुख जन पावहीं।।

ॐ ह्रीं श्री पंचकल्याणक-प्राप्त-वृषभादिवीरान्तेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

कवि नाम ग्रामादि परिचय

सोरठा- जिन पहुँचे शिवधाम, नित्य निरंजन नाथ जी।
सहित मित्र"तुलाराम","हरीकिशन"शिर नाइयो।।1।।

बसत बहादुरगढ़ सो कोट असफेर सुहाई।
सजल ताल चहुँओर, तिही मिलि रही सुखाई।।
गोपुह बाग सो कूप, बावरी बने बजारा।
बहु जैनी घर मध्य, जैन मन्दिर छवि धारा।।
तिहिमधि विधान-भाषा कियो, हरिकृष्णसु जीवनदास-सुत।
टीकेतसेठ तिनि गोत्र है, कठनेंरे बानिक सुनत।।2।।

दोहा- मैं मति करि अति हीन हौं, पढौं नहीं बुध बाल।
अक्षर अथ जो भूल हो, शुद्ध करो गुनमाल।।3।।
संवत् दस पुनि वसु शतक, ऊपर अस्सी जान।
सुदि आषाढ़ पूनो सो बुध, पूरन भयो विधान।।4।।

इति पंचकल्याणक विधान भाषा सम्पूर्ण।

यदि व्रत प्रारभ में ही छूट जाता है तो उसे पुन प्रारभ करना चाहिए और मध्य अथवा अंत में एकाध व्रत छूटने पर उसका प्रायश्चित्त ग्रहण कर व्रत की पूर्णता करना चाहिए। व्रतों में अतिचार तो निवारित किए जा सकते हैं किंतु अनाचार नहीं अर्थात् परिस्थिति वश छूटे व्रत पूर्ण कर सकते हैं लेकिन प्रमादवश छूटे व्रत पूर्ण नहीं माने जाते हैं।

सूतक-पातक एव अशुद्धि काल में पड़ने वाले दिनों में श्रावक को व्रत के दिन दिनचर्या व्रतानुसार ही करना चाहिए किंतु व्रतों की गणना में इस काल के व्रतों की गणना नहीं की जावेगी इसलिए व्रतों के काल में उतने व्रत अतिरिक्त किये जावें।

मुनि सुधासागर

श्री पंचपरमेष्ठी विधान

दोहा- मनरंजन भजन करम, पंच परम गुरु सार।
पूजत है सुर नर खगा, पावत है भवपार।।

सोरठा- प्रथमदेव अरिहन्त, गर्भ आदि षट्मास के।
मणिमय नगर करन्त, पीछे जिन अवतार ले।।

चौपाई छन्द

पर परजाय छाडि जिनराय, गरभ विषें अवतार धराय।
तब षोडश सुपना माँ लेय, तिनकी कथा सुनो पुनि जेय।।

अडिल्ल छन्द- ऐरावत गज वृषभ, सफेद सुजानिये।
सिह पहुप की माल, लक्ष्मी हित जानिये।।
पूरण शशि रवि कुम्भ, दोय शुभ देखिया।
मच्छ जुगल जल थान, केलिजुत पेखिया।।

पद्धरि छन्द

सरवर कमलन करि पूर्ण जोय, जलराशि समुद्र फिर लख्योसोय।
सिंहासन सुरग विमान जान, धरणेन्द्र भवन देख्यो सुजान।।

गीता छन्द

रतनराशि निहार अगनी, धूम बिन जोई सही।
ये स्वप्न लखि माँ हरष पायो, फेरि जिन जन्मे सही।।
पुन ठानि तप भवतरण अघहरि, ज्ञान केवल पाय है।
तब होय अतिशय नाम सुनि अब जन्मते दश थाय हैं।।

छन्द बेसरी

तब होय दश जिन लेह सु ज्ञानो, चौदह अतिशय सुरकृत मानो।
आठ प्रातीहारज शुभ होवें, अनन्त चतुष्टय सब मल धोवें।।

चाल छन्द

ये छ्यालीसों गुण जुत देवा, विचरें संग द्वादश भेवा।
छवि देखि समवशरण केरी, हरि सुर पूजे करि फेरी।।

चाल जोगीरासा की

फेरि सिद्धगुण आठ जु पाये, आठ करम के जारे।
होय निरंजन चेतन मूरति, लोकशिखर थिति धारे।।
आचारज गुण धार छतीसों, सुनि तिन कथा सुहाई।
दशधा धर्म तप द्वादश गाये, पंच आचार सुभाई।।

जिनजय की चाल

गुप्ति तीन षट् आवसी, सब मिलि होंय छतीसा जी।
बहुश्रुत गुणपच्चीस है, अँगपूरव सब पूराजी, बहुश्रुत पूजों भाव सों, बीस आठ गुन साधु के, तहँ पंच महाव्रत सारो जी, पंच समिति पंच अक्षिदमे, षट आवशि भेंट सुधारो जी।। तेगुरुअतिसुखकार है।।

कड़खा छन्द

भूमि सोवें,सदा मंजन ते ना करें, त्याग वस्त्र तनों शीश लुचे।
खांय इकबार थिति, सुभग ठाने सदा, दंतधोवन तजें साधु मानें।।

चाल (सुन भाई रे)

ये ही पचगुरु पूजिये, सुनि भाई रे।
जो चाहे भव पार, चेत मन भाई रे।
ये ही भवदधि नाव है, सुनि भाई रे।
को पुण्य तें यह पाय, चेत मन भाई रे।

कड़खा छन्द

ये ही परमेष्ठी पाँच जग पूज्य हैं, मोह सो सुभट इन हेरि मार्यो।
शेष कर्म सात तब, परे किस गिनति में, मारि के पलक के काज सार्यो।।
आप भव तिर गये, और तारत भये, धारि करुणा, जगत जीव केरी।
दीन को तार, संसार हर देव है, मेटि है भगत की जगत फेरी।।

।। इति भक्ति स्तुतिः समाप्ता।।

समुच्चय पूजा

पंच परम गुरु सब सुखदाई, पूजों भविजन हर्ष बढाई।
तिनके पद सुर हरि नित सेवें, पूरब अघ वन को धो देवें।।
देवें जो अग्नी सकल वन को, और कहो कहा गाइये।
ताके सुफल भव छाडि भवि जन, मुकति रमणी पाइये।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्

अष्टक

चाल जोगीरासा

झारी कनक सुघाट मनोहर, निर्मल नीर भराई।
जिन सिद्ध आचारज अरु बहुश्रुत धर, साधु जजों हरषाई।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि.।

चन्दन बावन निर्मल पानी, घसि कर लेकर आई। जिन .

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि.।

अक्षत नखसिख शुद्ध सुगन्धित, नैनन को सुखदाई। जिन

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

सुर द्रुम पहुप सुगन्ध मनोहर, मोहित अलि चित भाई। जिन

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

षट्रस जुत नैवेद्य पवित्तर, क्षुधा विनाशन लाई। जिन...

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

रतन दीप धरि थाल आरती, हर्षित चित्त ले भाई।
जिन सिद्ध आचारज अरु बहुश्रुत धर, साधु जजों हरषाई।।
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।
दशधा धूप मिलाय अग्नि मधि, खेऊँ अति उमगाई। जिन..
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।
श्रीफल लोंग सुपारी खारक, सुर शिव फलदा भाई। जिन...
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।
जल चन्दन अक्षत पुष्प चरु ले, दीप धूप फलदाई। जिन. .
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः अनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।
अडिल्ल छन्द-अरिहन्त सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधु जी।
ये ही पन भवतार भव्य अघघाति जी।
पूजत सुर नर खगा मुकत फल कारने।
ताते मै भी जजो पाप शठ टारने।।
ॐ ह्रीं श्री अर्हदादिपंचपरमेष्ठिभ्यः महार्घ्यम्।

अरिहंत परमेष्ठी पूजा प्रारम्भ

प्रत्येक गुण के पृथक पृथक अर्घ्य

जन्म के दश अतिशय, चौपाई

जनमत दश अतिशय जिन लेय, पूजत सुर नर हर्ष धरेय।
नाहि पसेव होय तन माहि, सो जिन पूजो अर्घ्य चढ़ाहि।।
ॐ ह्रीं स्वेदरहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
मल नहि होय तास तन माहि, निर्मल देह होय सुखदाहि।
यह अतिशय जिन तन मे पाहि, सो जिन पूजो अर्घ्य चढ़ाहि।।
ॐ ह्रीं मलरहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सस्थान समचतुरत्र जु होय, अद्भुत महिमा धारे सोय।
यह अतिशय जो जन्मत पाहि, सो जिन पूजों अर्घ्यं चढ़ाहिं।।
ॐ ह्रीं समचतुरस्रसंस्थानसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्रजवृषभ संहनन जु होय, अद्भुत महिमा धारे सोय।
यह अतिशय जिन जन्मत पाहिं, सो जिन पूजों अर्घ्य चढ़ाहिं।।
ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराचसंहननसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
होय शरीर सुगन्ध अपार, नासा विषें हर्ष करतार।
ऐसी शोभा अन्य न पाहिं, सो जिन पूजों अर्घ्यं चढ़ाहिं।।
ॐ ह्रीं सुगन्धितशरीरसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
ऐसा रूप जिनेश्वर लहें, कामदेव कोटिक छवि जहें।
यह अतिशय जन्मत जो पाहि, सो जिन पूजों अर्घ्यं चढ़ाहिं।।
ॐ ह्रीं महारूपातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
भले भले लक्षण सो जान, गुण अनेक तनों है खान।
यह शुभ छवि सो जन्मत पाहि, सो जिन पूजो अर्घ्यं चढ़ाहिं।।
ॐ ह्रीं शुभलक्षणातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
जन्मत ही तिनके तन होय, शोणित स्वेत वरन अवलोय।
यह अतिशय धारें तन माहि, सो जिन पूजों अर्घ्यं चढ़ाहि।।
ॐ ह्रीं श्वेतवर्णशोणितातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
ऐसो वचन कहें मुख सोय, जिनकों सुनि जन मोहित होय।
मधुर मिष्ट वच अतिसुख दाय, सो जिन पूजों अर्घ्यं चढ़ाय।।
ॐ ह्रीं मधुरवचनातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
ताके बल सम और न धाम, बल अतुल्य जिनेश्वर ठाम।
जन्मत ही बल अतिशय पाय, सो जिन पूजों अर्घ्यं चढ़ाय।।
ॐ ह्रीं अतुल्यबलातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञान के दस अतिशय

अडिल्ल छन्द– समवशरण जुत जहाँ, जिनेश्वर थिति करें,
तँहतें योजन इक शत, दुरभिख ना परें।
ऐसो अतिशय केवल, उपजे होय है,
ताके पद सुर नरा, जजें मद खोय है।।
ॐ ह्रीं शतयोजनदुर्भिक्षनिवारकजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब जिन केवल लहैं, गमन नभ में करें।
देव असंख्ये गैल, भक्ति मुख उच्चरें।। ऐसो.।।

ॐ ह्रीं आकाशगमनातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर जहँ तिथि करें, सदा हितदाय जी।
तिस थानक नहिं कोय, मारने पाय जी।।ऐसो।।

ॐ ह्रीं दयाभावातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव नरा पशु खगा, और कोउ दुठ तनी।
इन उपसर्ग सु नाहिं वानि जिन यों भनी।।ऐसो.।।

ॐ ह्रीं उपसर्गरहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा अधिक दुख करे, जगत इस वश पर्‌यो।
सो जिन कवलाहार, खान सब परिहर्‌यो।।ऐसो ।।

ॐ ह्रीं कवलाहाररहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण तहँ देव, जिनेश्वर थिति करें।
तब मुख दीखें चार, भविजन को सुख करें।।ऐसो.।।

ॐ ह्रीं चतुर्मुखशोभितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राकृत सस्कृत देश, सकल भाषा सही।
सब विद्या अधिपत्य, सकल जानत सही।।ऐसो.।।

ॐ ह्रीं सकलविद्यापत्ययुतजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुद्‌गल तन आकार, मूरती बन रहयो।
ताकी छाया नहीं, महा अचरज भयो।।ऐसो.।।

ॐ ह्रीं छायारहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नख कच तन जो होय, बंधन तिनको रहो।
है जैसे ही रहे, एक गुण यह लहो।।ऐसो.।।

ॐ ह्रीं नखकेशवृद्धिरहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेत्रों का टिमकार, नाहिं भौं कच हलें।
नासा पर दिठ सदा, काल जिन ध्रुव तुले।।ऐसो.।।

ॐ ह्रीं नेत्रभों-चपलता-रहित जिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

ये दश अतिशय सार, केवल उपजे जिन लहें।
सो जिन भवतार, सेवो भवि वसु द्रव्यतें।

ॐ ह्रीं केवलज्ञानस्य-दशातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अर्धमागधी वान, सब जीवन सुखदाय है।
अतिशय जिनको मान, देव निमित्तिक धुनि कहें।।

ॐ ह्रीं अर्धमागधीभाषासहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जॅह जिनकी थिति होय, सकल जीव मैत्री सभा।
अतिशय जिनके जोय, देव निमित्तिक वरनयो।।

ॐ ह्रीं सर्वजीवमैत्रीभावजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् रितु के फल फूल, फलें जहाँ जिन तिथि करे।
जिन अतिशय सुख मूल, निमित्त मात्र सुर हो सही।।

ॐ ह्रीं षड्ऋतुफलपुष्पसहोपलब्धिसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दर्पण सी सब भूमि, होय जहॉ जिन विचरि है।
जिन अतिशय अघ होमि, देवनिमित्त मातर कहे।।

ॐ ह्रीं दर्पणभूम्यातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन्द सुगन्धी पौन, होय जीय को हितकरी।
जिन अतिशय शुभ सौनि, मोक्ष गमन को है सही।।

ॐ ह्रीं सुगन्धितपवनातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सर्व जीव आनन्द, होय जहाँ जिन विचरि है।
कटत पाप के फन्द, देव निमित्त मातर सही।।

ॐ ह्रीं सर्वानन्दकारकजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गतकटक भू होय, अतिशय सो जिनदेव को।
देव निमित्तिक सोय, पूजों शिवसुख अवतरें।।

ॐ ह्रीं कण्टकरहितधरातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

गन्धोदक शुभवृष्टि, देव करें अतिशुभ लहे।
सुख पावत लखि सृष्टि, महिमा जिनवर देव की।।

ॐ ह्रीं गन्धोदकवृष्टयातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जिनपद पूजें देव, कमल रचें हित कारने।
अद्‌भुत महिमा लेव, भाषित जिन सब भवि करो।।

ॐ ह्रीं पदतलकमलरचनासहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल होय आकाश, सब जीवन सुखकार जी।
अतिशय जिन सुखराश, देव करें उर भक्ति तें।।

ॐ ह्रीं निर्मलगगनातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब दिश निर्मल होय, धूम मेह वर्जित सुभग।
अतिशय जिनको जोय, देव करें वश भक्ति के।।

ॐ ह्रीं सर्वदिशानिर्मलतातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देव करे जयकार, ता करि नभ बहरो कियो।
अतिशय जिनको सार, देव भक्तिवश उच्चरे।।

ॐ ह्रीं जयजयशब्दातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मचक्र सुर लेय, अगवानी नित सचरे।
अतिशय जिनको जेय, देव करें वश भक्ति के।।

ॐ ह्रीं धर्मचक्रातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मगल द्रव वसु जान देव लेय आगे चलें।
अतिशय जिनको मान, देव सहायक भक्ति के।।

ॐ ह्रीं वसुमंगलद्रव्यसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञान हुये हों भाई,ये चौदह श्रुतज्ञान बताई।
इनमें देव निमित्ति बखानो, यातें ये देवोंकृत मानो।।

ॐ ह्रीं देवकृतचतुर्दशातिशयसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टप्रातिहार्य वर्णन (भुजंगीछन्द)

कहो प्रातिहार्य वसु हर्षदाई, तहाँ बिरछ अशोक नहीं शोकदाई।
लखे तास को शोक हेरो न पावें, ये महागुण जिन बिना नाहिं आवें।।
ॐ ह्रीं अशोकवृक्षप्रातिहार्यसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
देव सुरद्रुम के फूल ल्यावें, महा भक्ति वश मेघ ज्यों ते चलावें।
मानो ज्योतिषी ध्यान नभ से सुध्यावें। ये महागुण जिन बिना०
ॐ ह्रीं पुष्पवृष्टिप्रातिहार्यसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
दिव्यधुनी सकल जीय को सुहाई, सुनें पापछय हो भला पुण्यदाई।
नमें देव खग और सवै पाप जावे। ये महागुण जिन बिना०
ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिप्रातिहार्यसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
चमर गध धारा जिसे शोभदाई, चले देवकरि ओपमा भूरि थाई।
घने जीव मुखतें प्रभू भक्ति गावें। ये महागुण जिन बिना०
ॐ ह्रीं चतुःषष्टिचामरवीज्यमानसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
जगपूज्य सिह पीठ भगवान केरो, नमें ता सको नाशिहै जगत फेरो।
लगे कनक जुत रतन बहुशोभ द्यावे। ये महागुण जिन बिना०
ॐ ह्रीं सिंहासनप्रातिहार्यसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
महा जोति जिन तनतनी चक्र थायो, प्रभा पूज्ज तिस ने भलो नाम पायो।
तखे तास को सात भौ दरसि आवे। ये महागुण जिन बिना०
ॐ ह्रीं प्रभामण्डलप्रातिहार्यसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
घनी जाति के देव बाजे बजावें, तिको दुंदुभि शब्द शुभ नाम पावे।
भने देव मुख वीनती हर्ष ल्यावें। ये महागुण जिन बिना०
ॐ ह्रीं देवदुन्दुभिप्रातिहार्यसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
जडे कनक नग छत्र मणि दड धारें, लगी माल मोतिन की लिपटि सारे।
मानो तीन जग जीव को छांय आवें। ये महागुण जिन बिना०
ॐ ह्रीं छत्रत्रयप्रातिहार्यविभूषितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल छन्द- वृक्ष अशोक सिंहासन भामण्डल चमर,
पुहुपवृष्टि दिव्यधुनि, दुन्दुभि छत्र वर।
ये वसु प्रातिहार्य, जिनो के होय हैं,
इन बिन ये नहिं, और देव के होय हैं।।

ॐ ह्रीं वसुप्रातिहार्यविभूषितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनन्तचतुष्टयों का वर्णन

बेसरी छन्द

दर्शन अनन्त अनन्तहि जावे, जो जो भई होय वा होवे।
यातें पद सर्वज्ञ सु होई, ये गुण जिन बिन लहे न कोई।।

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान अनन्तानन्त जनावे, तीन लोक त्रयकाल लखावे।
पद सर्वज्ञ तासे तें होई, ये गुण जिन बिन लहे न कोई।।

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुख अनन्त मनोहर होवे, बाधा अनन्तकाल नहिं जोवे।
सुख अनन्त बिन देव न होई, ये गुण जिन बिन लहे न कोई।।

ॐ ह्रीं अनन्तसुखसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तराय भट जिन जय लीनो, तिनभव दुख हर कारज कीना।
अनन्तवीर्य परकाशन होई, ये गुण जिन बिन लहे न कोई।।

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश जन्मत दश केवल उपजे होय है,
चौदह सुरकृत अनन्त चतुष्टय पोय है।
प्रातिहार्य वसु सब मिलि गुण छियालीस जी,
इन अतिशय जुत होय सोय जगदीश जी।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद्गुणसहितजिनेभ्यः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

बेसरी छन्द

जिन अतिशय छ्यालीस सुपावे,ताकी कथा सकल मन भावे।
सो भवि चित दे सुनो बखानो, तातें होय पापमल हानों।।
जन्मत दश ये स्वेद न होई, सस्थानक समचतुर सुजोई।
सहनन वज्रवृषभ नाराचै, मल नहि तन सुगन्ध शुभ माचै।।
महापुरुष शुभ लक्षण हो है, स्वेत रुधिर वच मधुर सुसोहै।
बल अनन्त जिन तन में पावें, जन्मत तो ये दशगुण थावें।।
केवलज्ञान भये दश जानो, शतयोजन दुर्भिक्ष न मानो।
नभ के गमन दया सब ल्यावे, ना उपसर्ग देव के थावे।।
कवलाहार नहीं जिन केरो, चौमुख दीखे छाह न हेरो।
सब विद्या के ईश्वर होई, नख अरु केश बढे नहि कोई।।
आखिन की भों टिमकें नाहिं, ये दश केवल उपजे थाहि।
अब सुनि देव चतुर्दश ठाने, अर्द्धमागधी भाषा माने।।
सकल जीव के मैत्री भावो, सब रितु के फल फूल फलावो।
दर्पणतुल्य भूमि तहॉ होई, मन्द सुगन्ध पवन शुभ जोई।।
सब जीवन को आनन्द होवे, भूमि कंटिकारहित सु होवे।
गन्धोदक की वरषा जानो, पदतल कमल रचत हितथानो।।
निर्मल गगन देव जय ठानी, दशो दिशा निर्मल अधिकानी।
धर्मचक्र वसु मगल ठानो, ये चौदह देवोंकृत मानो।
अब सुनि प्रातिहार्य वसुभाई, तरु अशोक सुमवर्षा थाई।।
दिव्यधुनी सिहासन जानो, भामण्डल दुन्दुभि सुखदानो।
छत्र चमर वसु जानो भाई, फिर ये चार चतुष्टय थाई।।
दर्शन ज्ञान वीर्य सुख वेवा, ये छ्यालीस सुगुणयुत देवा।
ये गुण जामे देव कहावें, इन विन देवपना ना पावें।।

यातें देव परख करि सेवा, सुरंग मुकति सुख को भवि वेवा।।

घत्ता- जँह ये गुण होई, देव सु सोई, मंगलकारी भव्यन को।
सो मोकों तारो, पार उतारो, शिवसम्पति दे सब जनको।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशदगुणसहितजिनेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धपरमेष्ठी पूजा

अडिल्ल- आठों कर्म निवारि, धारि गुण आठ जू,
भये निरंजन छिन में, सुख के ठाठ जू।
वातवलै तनु ठये, लोकत्रयपति भये,
ते सिध नमीं सुभाय, ज्ञानमूरति ठये।।

पद्धरि छन्द

ये ज्ञानावरणी पच वीर, जिन घात्यो जियगुण ज्ञान धीर।
सब घाति अज्ञता लयों सुज्ञान, ते सिद्ध जजों त्रय जग प्रधान।।

ॐ ह्रीं पंचप्रकारज्ञानावरणकर्मविनाशकसिद्धेभ्यः अर्घ्यं नि.।

नवदर्शन वरनी दरश छाय, इन घाते तें भगवान थाय।
सो धरे अनन्त दर्शन सुथान, ते सिद्ध जजों त्रय जग प्रधान।।

ॐ ह्रीं नवप्रकारदर्शनावरणकर्मविनाशकसिद्धेभ्यः अर्घ्यं नि.।

कर्म दोय वेदनी भेव, जिनकों सुख दुख देवे स्वमेव।
हो वेदनि विजय अबाध थान, ते सिद्ध जजों त्रय जग प्रधान।।

ॐ ह्रीं द्विप्रकारवेदनीयकर्मविनाशकसिद्धेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मोह दो प्रकार वश जगत जोर, तिनजिय सम्यक गुण जयोसोर।
ता मोह विजय सम्यक्त्ववान, ते सिद्ध जजों त्रय जग प्रधान।।

ॐ ह्रीं द्विविधमोह-कर्मविनाशकसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आयु चार वश जगत जेर, पोड़े पग ज्यों परवश पड़ेर।
तिन आयुघात्ति अवगाह ठान, ते सिद्ध जजों त्रय जग प्रधान।।

ॐ ह्रीं चतुःप्रकारायुः कर्मविनाशकसिद्धेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कर्म नाम चतेरा ज्यों बखान, इन घाति अमूरति भये सुजान।
गति स्वांग धरन त्यागो महान, ते सिद्ध जजों त्रय जग प्रधान।।
ॐ ह्रीं त्रिनवतिप्रकारनामकर्मविनाशकसिद्धेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
ये गोत्रकर्म दो विध सरूप, ता वंशि कबहूँ फिर रक भूप।
ये नाशि अगुरुलघु गुण समान, ते सिद्ध जजों त्रय जग प्रधान।।
ॐ ह्रीं गोत्रकर्मविनाशकसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
विधि अन्तरायकर्म पाँच भेव, जिन जियको गुन घात्यो स्वमेव।
ताको हति के बल अनन्त ठान, ते सिद्ध जजों त्रय जग प्रधान।।
ॐ ह्रीं पंचप्रकारान्तरायकर्मविनाशकसिद्धेभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

गीतिका- ज्ञान दरशनावरण वेदनी, मोह जुत चारों हनी।
आयु नाम रू गोत्रकर्म अन्त राय हर कीनी मनी।।
ये आठ कर्म हरि दाहि आतम, आपको पद शुध किया।
ये भये तीनों लोक नायक, नमों ध्रुव चाहो जिया।।

ॐ ह्रीं अष्टकर्मविनाशकसिद्धेभ्यः अर्घ्यं।

जयमाला

चाल पंचमंगल की

तीन लोक त्रय शत तेताल्ी, घनाकार ताके मधि नाली।
चौदह राजू त्रस तहाँ होई, चारों गति रचना मधि सोई।।
अधोभाग नर्क सात बताये, नर तिर्यंच मध्य में गाये।
ज्योतिषी भी इस ही में गाये, ऊपर वैमानिक बतलाये।।
गाये ऊपर सिधदेव थानक, ऊर्ध्वकों फिर सिधशिला।
ता ऊपरे सिधदेव राजे, पवन इकथल में मिला।।
ते कर्म कोटि सुवाट जावें, ते सकल इस थल में रहें।
रहि हैं अनन्ते काल सुस्थिर, फेरि भवतन ना लहें।।
एक एक शिवथानक माहिं, सिद्ध रहें है अनन्ता ठाहिं।
भिनभिन रहें मिलें नहिं कोई, गुण पर्याय द्रव्य निज सोई।।

लोक शिखर पर जाय विराजे, भवसागर तिष्ठत कर्म कुजारे।
जारे जु आठों कर्म भवदा, आठ गुण परकाशये।
तिन ज्ञान में त्रयलोक घटपट, आनि के सब भासये।।
ते नमों सब सिद्धचक्र उर धरि, तास फल शिवथल लहों।
और थुति फल नाहिं बांछा, नाहिं अन मुखतें कहों।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं।

आचार्य परमेष्ठी पूजा

दोहा-गुण छतीस तिन ढिंग रतन, भवबन संकट टार।
'नमों चरण तिनके सही, तिन गुण जाँचन सार।।

चाल छन्द-जे सब तें करुना आनें, सो उचित क्षमा को जानें।
ते आचारज सुखदाई, सों पूजों अर्घ्यं चढ़ाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो मान रंच नहिं लावें, सो मार्दव गुनको पावें।
ते आचारज सुखदाई, सों पूजों अर्घ्यं चढ़ाई।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जाके उर माया नाही, सो आर्जव भाव कहाई।। ते आ.

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तन जावे तो भी भाई, ते झूठ न कहहिं कदाई।। ते आ.

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जाके उर वांछा नाहीं, सो निर्मल शौच कहाही।।
ते आचारज सुखदाई, सों पूजों अर्घ्यं चढ़ाई।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वश प्राण सुइन्दी राखे, सो संजम दो विधि भाखें।। ते आ.

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो द्वादशविधि तप ल्यावे, परनत नहिं खेद लगावे।। ते आ.

ॐ ह्रीं उत्त्मतपःसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

परद्रव्य नहीं अपनावें, सो त्यागधर्म चित्त भावें।।

ते आचारज सुखदाई, सों पूजों अर्घ्य चढ़ाई।।

ॐ ह्रीं उत्त्मत्यागधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो अन्तर बाहिर नागा, सो आकिंचन भय भागा।। ते आ

ॐ ह्रीं उत्त्माकिंचन्यधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

निजपरतिय को शुभ त्यागी, सो ब्रह्मचर्य अनुरागी।। ते आ

ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कड़खा छन्द

एक दोय चार षट्, अष्ट दिन पक्ष लगौ, खानपानी तनो त्याग ल्यावे।
माह दो एक षट्, चारवासी भलो, धीर तजि अशन, उर सासो ध्यावे।।
इनहि आदिकतिको, वास दुर्द्धर करे, नाहि परणति विषें खेद आने।
जीव के घोर व्रत धार आचार्य है, नमो तिन चरन फल पाप भानें।।

ॐ ह्रीं अनशनतपः सहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भूखते अर्ध खावें, तथा भागत्रय, भाग चौथो भखै व्रतधारी।
एक दो ग्रास ले, भाव समता धरे, तास ते जाय अघ सूर हारी ।।
नाम ऊनोदरी वृति याकों, कह्यो, तास के धार गुरु जगत जाने। जीव

ॐ ह्रीं ऊनोदरतपः सहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

धरे जो व्रत तामें महादृढ़ रहे, रोज को तास परमान ल्यावे।
तास कूँ याद रखि, सकल कारज करे, नेम परमानता विधि निभावे।।
खान अरु पान गमनादि परिणाम ले, वृत्ति परिसंख्यान सूर आने।जीव

ॐ ह्रीं वृतिपरिसंख्यानतपोधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

रोज षट्रस विषें, रसन को त्यागी है, नाहि सब रसा एक बार खावे।
मोह बल विषें बिनराग चित्तरागि है, नाहि रसनावशी आप आवे।।
भोग छ·रसनतजि आप भोगी भयो, रैन दिन ध्यानधी माहिं आने। जीव

ॐ ह्रीं रसपरित्यागतपोधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जाहि आसन थकी, धीर तहँ थिति करे, तास विधि लों नहीं ठाम क्षोरे।
काल जेते तनो, नेम धारें बुधा, वार तेतो वपू प्रीति तारे।
देव खगनर पशुकृत जो दुख मिलें, तो हुते धीर दुःख नाहिं हिमाने। जीव

ॐ ह्रीं विविक्तशय्यासनतपः सहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

तन विषें खेद को, निमित जा विध मिले, सोहि विध ठानि सम भावे लावे।
त्याग तन को लिये, व्रत ऐसो बने, मोहवश जीव इह नाहि पावे
वीतरागी बिना व्रत को सिर धरे, रागजुत जीवतो हारि माने। जीव.

ॐ ह्रीं कायक्लेशतपः सहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

बोले परमादवश, दोष परणतिविषें तथा चलहलन को, पाप लागे।
तास को छेद कारन लहे दंड मुनि, धीरता देखि अघ, नाहि जागे।।
आप ही आप को, दंड लेते मुनि, धीरता देखि अघ, नाहि जागे।जीव

ॐ ह्रीं प्रायश्चित्ततपः सहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आपते गुनी तिन, को विनय जे करे, ते महाव्रत को, आपल्यावे।
बिगर नमनी किये, हानि सबगुणन की तासते देखिबुधि मानबढावें।
सकल सजमतनी, बाढ़िदिढ़ है यही जतन तें, गुनी याहि आने। जीव.

ॐ ह्रीं विनयतपः सहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आपतें महत गुणधार हैं जे जती, तथाश्रुतदेव महासौख्यदाई।
तिनहिं वदगीरूप, परणती जानिए, सोइ वैयावृत्त्ववा निगाई।
वृत्त ऐसो बने, मोक्षमारग लहे, होय मन्द मोह यह रीति ठाने।जीव.

ॐ ह्रीं वैयावृत्यतपः सहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

रैनदिन वानि जिन, पाठ मुखतें करे, तथा उपदेश दे हरष लाई,
उर विषे वानि जिन सदा चिन्तवन करे, रहे जिन आनि में भक्ति भाई
करें गुरुपाद परसन विनै ठानिके, या विधी पाँच स्वाध्याय आने। जीव.

ॐ ह्रीं स्वाध्यायतपः सहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

त्याग तन को करें, वृत ऐसो धरें, सुर उपसर्ग तें, नाहिं भागें,
लिखे कर्म के ठाठ, दुख सुखसहे जगत में, छांड़ि पर मोहनिज माहिंजागे।
राग तन माहिं सो दिढत पा नाहिं व्युत सर्ग तप धारि तन प्रीति हाने।
जीव के घोर व्रत धार आचार्य है, नमों तिन चरन फल पाप भानें।।
ॐ ह्रीं व्युत्सर्गतपः सहितताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
मन वचन काय त्रय, जोग इक ठाम करि, आप शुध ध्याय पर भाव त्यागे,
तथा देव अरिहन्त, परमेष्ठि सिध के गुण, तनी मान शुभ भाव लागे।
रोक चित्त मृग शुभ ध्यान जाली विषें एकथल राखि शिव ठाहिं आने।जीव
ॐ ह्रीं ध्यानतपः सहितताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
कहे तप अन्तर बाहिर करो द्वादश, धीर तन त्याग बिन राग ध्यावें,
जीव रागी विषय, चाह ताकी रहे, सो नवों इन दसी भाव त्यागे।
यह जानि रागी, बिना राग की परीक्षा ठानि, तप धारिते धीर आने। जीव
ॐ ह्रीं द्वादशतपः सहितताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

षट् आवश्यकों का वर्णन

पद्धरि छन्द

जे षट् आवशि धारें सदीव, ते शुद्ध सरूपी होंय जीव।
गुणधारि जारि कर्माष्ट वीर, निज तिरें और तारक सुधीर।।
ॐ ह्रीं षटावश्यकसहितताचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
सब जीव तिरस थावर सुजान, समभाव सकल पै चित्त ठान।।
तजि आरत रौद्र सुभाव सोय, समता सामायिक सुखद होय।।
ॐ ह्रीं सामायिकावश्यकसहितताचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
अरिहंत सिद्ध आदिक महंत, तिनकी थुति नित मुनि वर करंत।
उर निर्मल करि शुध भाव ठान ता, फल पावे शिव लोक थान।।
ॐ ह्रीं स्तवनावश्यकसहितताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
ते शुद्ध भाव कारण महान, वंदन विधि करि है देव थान।
तातें अघरज धोवें सुवीर, ता फल पावें भव समुद्र तीर।।
ॐ ह्रीं वन्दनावश्यकसहितताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मुनि के मन वच तन दोष लाय, सो दूरि करे प्रतिक्रमण भाय।
उर आलोचन करि शुद्ध होय, ते सूरि नमों मद टारि जोय।।
ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणाश्यकसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
मनवच तन अघ विधि त्याग होय, लखि आवशि प्रत्याख्यान सोय।
ये करें रोज आचार्य जान, ता फल चिन्ते अघ होय हान।।
ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावश्यक सहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।
तन त्याग होय थिर थान सोय, कायोत्सर्गावशि कर्म होय।
ये करें रोज आचार्य मान, ताफल चिन्ते अघ होय हान।।
ॐ ह्रीं कायोत्सर्गावश्यकसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचाचार का वर्णन

सोरठा - सकल पदारथ सोय, देखे शुध करि सरदहें।
तातें शिव सुख होय, सो दर्शन आचार है।।
ॐ ह्रीं दर्शनाचारसहिताचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
शुद्ध पदारथ भाव, जाने गुण पर्याय सब।
ताकरि हो शिव वास, ज्ञानाचार सो जानिये।।
ॐ ह्रीं ज्ञानाचारसहिताचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
छोड़ै सकल कषाय, गुप्ति समिति व्रत आदरै।
बरतै नगन सुभाय, सो चरित्राचार है।।
ॐ ह्रीं चारित्राचारसहिताचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
कर्म हरन के काज, बल परकासै आपनो।
तप संजम बहु साज, सो वीरज आचार है।।
ॐ ह्रीं वीर्याचारसहिताचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।
द्वादश विध तप ठानि, समता भाव सु परिणये।
सो करहि की कर्म हानि, तपाचार सो जानिये।।
ॐ ह्रीं तपाचारसहिताचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

गुप्तियों का वर्णन

गीता-मन चपल है करि काय जैसो, कपि तने पद को लहें।
ताकी विकलता लहर दधि ज्यों, जगत जिय वशि ना रहे।।
ते धन्य गुरु वश किया याको, आप या वसि ना रहे।
मनगुप्ति याको जान भविजन, या फलै शिव सुर ठहे।।

ॐ ह्रीं मनोगुप्तिसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वचन निजवश राखि भाषत, जिन तनी वानी कहे।
परमाद वच कबहूँ न भाषे, ता थकी जिय अघ लहे।।
यह वचन गुप्ति सदीव आचारज, जिको पावें सही।
मन वचन तन वसुद्रव्य ले करि, पद जजो इनके सही।।

ॐ ह्रीं वचनगुप्तिसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो काय अपने हाथ राखे, चपलता मेटे सही।
परमाद टारि सुधारि थिरता, जारि अघ, ले शुभ मही।।
लखि कायगुप्ति सुनाम याको, सदा आचारज करे।
ते धीर या फल कर्म हरके, मुक्ति सी रमणी वरे।।

ॐ ह्रीं कायगुप्तिसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

धर्म दशविध वरत बारह, गुप्ति तीन बखानिए।
आचार पाँचो महा सुन्दर, षट् आवशि शुभ मानिये।।
ये गुण छत्तीसों, धरें सोही सूर आचारज कहे।।
तिन चरण कमल सुद्रव्य वसु ले, जजों मन वच तन ठहे।।

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशदगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

दोहा-आचारज गुण आरती, कहूँ हिये थुति आन।
ताकों नमि पुनि फल लहे, होय पाप की हान।।

पद्धरि छन्द

उत्तमक्षमा क्रोध भट मार्‌यो, मार्दव मान जिसो अरि टार्‌यो।
आर्जव माया कुटनी टारी, सत्पथ को सब झूठ निवारी।।
शौच सकल उर को शुचि कीनो, संयम तें अव्रत जय लीनो।
तप तपि सकल पाप निरवारे, त्यागभाव पर तें परवारे।।
आकिंचन परिग्रह परिहारे, त्यागभाव पर तें परवारे।
ये ही धर्म दशो सुखदाई, अब सुनि द्वादश तप मन लाई।।
अनशन वास तनी विधि सोही, अवमौदर्य खान लघु हो ही।
व्रत परिसंख्या नित व्रत ठाने, रस परित्यागी रस नहिं जाने।।
विविक्त शय्या थल दिढ़ होहे, कायक्लेश कष्टविध जोहे।
ये तो बाह्य तने षट् जानो, अब षट् अंतरतप सुनि कानो।।
प्रायश्चित गुरु को सुख ठाने, सो स्वाध्याय वानि मुख आने।
व्युत्सर्ग काय त्याग विधि होई, ध्यान धर्म मन चिन्ते सोई।।
अब सुनि षट् आवशि की बातें, तातें होय महा शुभदातें।
सामायिक सब तें समभावा, स्तवन जिन सिध की थुति चावा।।
वदन सो जिनको सिर नावे, प्रतिक्रमण जो पाप मिटावे।
प्रत्याख्यान त्याग सो जानो, कायोत्सर्ग तन त्याग बखानो।।
अब सुनि पंचाचार सुभाई, तिन बल बहु जीवन शिव पाई।
ज्ञानाचार ज्ञानविध ठाने, दर्शन सो दर्शन विधि आने।।
चारित चारु चरित विधि लावे, तपाचार तप रीति करावे।
वीर्याचार पुरुषारथ जानों, अब सुनि तीनों गुप्ति बखानो।।
मन वच तन वश राखे सोई, गुप्ति नाम जाने भवि होई।
दोहा-इन छत्तिस गुण सहित जो, नमों सूरि मन लाय।
ताके गुन पावन निमित, भव भव होहु सहाय।।

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशद्‌गुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

उपाध्याय परमेष्ठी पूजा

दोहा-अंग पूर्व धारक मुनी, नमों तास पद जान।
ता फल अघ मिट शुभ बने, लहे शुद्ध शिव थान।।

मरहठा छन्द

आचारंग में यों बतलायो, सुनो भविक चित्त आन।
काज सकल ही करो जतनतें, महाशुद्ध उर आन।।
या अंग रहस सकल ही पावें, उपाध्याय है सोय।
जिनके पद वसुद्रव्य थकी भवि, पूजो मन शुद्ध होय।।

ॐ ह्रीं आचारांगज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सूत्रकृताग दूसरो अंग है, तामें यों व्याख्यान।
धर्म तनी किरिया सब यामें, भाषी है भगवान।। या.

ॐ ह्रीं सूत्रकृतांगज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जानों तीजो अंग सथाना,या मधि जीव सुथान बताय।
एक दोय आदिक उन्नीसों, चौसठ षट् जिय ठाम सुपाय।। या.

ॐ ह्रीं स्थानांगज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है समवाय अंग चौथो यह, या मधि सकल वस्तु सम गाय।
धर्म अधर्म द्रव्य सम भाषे, जगत जीव सम सम सिध भाय।।

ॐ ह्रीं समवायांगज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

व्याख्याप्रज्ञप्ति अग पाँचमों, तिन में ऐसो कथन चलाय।
अस्ति जीव नास्ति जानों, एक अनेक सुवस्तु सुभाय।। या.

ॐ ह्रीं व्याख्याप्रज्ञप्त्यंगसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

छठवाँ ज्ञातृकथा अंग जानो, तामें सकल कहो व्याख्यान।
चक्री कामदेव तीर्थंकर, इन आदिक पहुँचे शुभ थान।। या.

ॐ ह्रीं ज्ञातृधर्मकथांगज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

जान उपासकाध्ययन सातमों, तामधि श्रावक कथन कहाय।
एकादश प्रतिमा आदिक बहु, इन आदिक पहुँचे शुभ थान।।या.

ॐ ह्रीं उपासकाध्यनांगज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि।

अन्तकृतांग दशांग महाअंग, अष्टम यामधि यों लखि पाय।
इक-इक जिनबारे अन्तःकृत, दश-दश केवलि कथन चलाय।।या.

ॐ ह्रीं अंतःकृद्दशांगज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

अनुत्तरो उत्पादक दशांग अंग, तामे इक-इक जिनकी बार।
दश-दश मुनि अति सहो उपद्रव, गये अनुत्तरसों लखसार।।या.

ॐ ह्रीं अनुत्तरोत्पादकदशांगज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं।

प्रश्न व्याकरण अंग विषें या, गई वस्तु इत्यादि बताय।
जीवन मरण सौख्य दुख की विधि, सब प्रश्नों के भेद दिखाय।।या.

ॐ ह्रीं प्रश्नव्याकरणांगज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि।

सूत्र विपाक अंग एकादश, तामें कर्म विपाक बखान।
तीव्र मन्द भावते बाँधे, सो रस दे इत्यादि सुजान।। या.

ॐ ह्रीं विपाकसूत्रांगज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

अडिल्ल - अब चौदह पूरब की कथा सुहावनी,
तिन यह पाई ऋद्धि जिने अचरज हनी।
इनके धारी उपाध्याय जगगुरु कहे,
तिनके पद वसुद्रव्य थकी जजि अघ दहे।।

ॐ ह्रीं चतुर्दशपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

गीता छन्द-पूर्व है उत्पाद पहला, कथन तामें यों सही।
वस्तु के उत्पाद व्यय ध्रुव, आदि महिमा अति लही।।
इस पूर्व को जो अर्थ जाने, उपाध्याय सो जानिये।
वसुद्रव्यतैं पद जजों मन वच, भक्ति उर अति आनिये।।

ॐ ह्रीं उत्पादपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पूर्व अग्रायण सु दूजो, कथन नय दुर्नय करे।
तत्व द्रव्य पदार्थ के पर माण जाने उर धरे।।
इस पूर्व को जो अर्थ जाने, उपाध्याय सो जानिये।
वसुद्रव्यतैं पद जजों मन वच, भक्ति उर अति आनिये।।

ॐ ह्रीं अग्रायणीपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

पूर्व वीर्य प्रवाद तीजों, कथन वीरज को चले।
आत्मवीर्य सु काल क्षेतर, ज्ञान चारित्त पर मिले।। इस.

ॐ ह्रीं वीर्यानुवादपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

अस्ति नास्ति सुपूर्व चौथो, सप्त भग बखानिये।
द्रव्य तत्व पदार्थ के सब, अस्ति नास्ति सुजानिये।। इस

ॐ ह्रीं अस्तिनास्तिपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

पूर्व ज्ञान प्रवाद पचम, ज्ञान वसु लक्षण कहे।
सब ज्ञानफल परमान इनको, आदि सबविधि तें लहे।। इस.

ॐ ह्रीं ज्ञानप्रवादपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

पूर्व सत्य प्रवाद षष्ठम, गुप्ति भेद बखानिये।
सत्य असत्य अनेक वैन, सुभेद तातें जानिये।। इस.

ॐ ह्रीं सत्यप्रवादपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

आत्मप्रवाद सुपूर्व सप्तम, जीव लक्षण तहँ कह्यो।
जीव आयो वा गयो इन, आदि इस पूरब ठह्यो।। इस

ॐ ह्रीं आत्मप्रवादपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

पूर्व कर्म प्रवाद जु तामधि, कर्म की सब विधि कही।
सत्व बन्ध उदय प्रकृतियाँ, आदि सब भाषी सही।। इस

ॐ ह्रीं कर्मप्रवादपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

पूर्व प्रत्याख्यान नवमो, वस्तु इत्यादिक कही।
अरु द्रव्य क्षेत्र सुकाल सवर, वास मत्यादिक सही।। इस.

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

पूर्व है विद्यानुवाद सु, अष्ट निमित्त बखानिये।
विद्या सुसाधन रूप फल बल, आदि रीति सु मानिये।। इस.

ॐ ह्रीं विद्यानुवादपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

पूर्व है कल्याणवाद सु, वहाँ इस विधि वरणयों।
कल्याण पाँचों जिन तने, ज्योतिष गमनको फल चयो।। इस.

ॐ ह्रीं कल्याणवादपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

पूर्व प्राणावाद माहीं, मन्त्र तन्त्र सुविधि कही।
फिर वैद्य ज्योतिष भूतनाशन, की सकल विधि है सही।। इस.

ॐ ह्रीं प्राणानुवादपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

पूर्व क्रिया विशाल के मधि, गीत छन्द सुविधि कही।
शास्त्र नय लंकार चौसठ, कला तियकी तहँ सही।। इस.

ॐ ह्रीं क्रियाविशालपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि।

पूर्व चरम त्रिलोक बिन्दु सुकथन तहँ यों वरनयों।
लोकत्रय के सुखदुखों का, मुकुरसम वर्णन कियो।। इस.

ॐ ह्रीं लोकबिन्दुपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

पद्धरि छन्द

अगएकदश अद्‌भुत सुज्ञान, फिर पूर्व चौदह और जान।
इनके गुण वेत्ता ते महन्त, जिन उपाध्याय पूजों सुसन्त।।

ॐ ह्रीं एकादशांगचतुर्दशपूर्वज्ञानसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं।

जयमाला

दोहा-बीस पाँच गुण धार गुरु, उपाध्याय हितदाय।
तिन वन्दे थुति के किये, महापुण्य उपजाय।।

बेसरी छन्द

आचारग भने सुखदाई,सूत्रकृताग रहस सब पाई।
थाना अग सथान बताये, समवायांग के गुण थाये।।
व्याख्याप्रज्ञप्ति अंग को जाने, ज्ञातृकथा को भेद बखाने।
अंग उपासकाध्ययन सुधायो, अन्तकृतांगदशांग सुझायो।।
अनुत्तरपाददशांग सुजानो, अंग प्रश्न व्याकरण बखानो।
सूत्र विपाक अंग हितकारी, ताको रहस लियो गुरुसारी।।
ये एकादश अंग तिन पाये, उपाध्याय सो सब मन भाये।
अब पूरक चौदह सुन भाई, प्रथम पूर्व उत्पाद कहाई।।

अग्रायणि पूरब को धारें, वीर्यप्रवाद पूर्व अघ जारे।
अस्ति नास्ति परवाद सु जानो, ज्ञानप्रवाद पंचमो मानो।।
सत्यवाद पूर्व को पावे, आत्मप्रवाद पूर्व समझावे।।
कर्मप्रवाद पूर्व सुखकारी, प्रत्याख्यान पूर्व को धारी।
पूर्व विद्यानुवाद को जाने, पूर्व कल्याणवाद अघ हाने।।
प्राणवाद पूरब हरि पायो, पूर्व क्रियाविशाल उर जायो।
अन्तिम लोक बिन्दु है भाई ये चौदह पूरब सुखदाई।।
इनके धार उपाध्याय होवें, तिनके जजें सुरग शिव जोवे।

सोरठा- जो पूरब अग धार, तिन जग पूजत पद लायो।
सो करि है अघछार, तिन पूजे जिनपद जयो।।

ॐ ह्रीं पंचविंशतिगुणसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं।

साधु परमेष्ठी पूजा

दोहा-बीस आठ गुण साधु के, नमो तास कर जोर।
ताके वन्दे पाप सब, जाय सकल ढिग छोर।।
अष्टाविशति गुणजुत होय, साधु हुये जग के गुरु जोय।
आतम रग राचे मुनिनाथ, पाऊँ इन पद भव भव साथ।।

ॐ ह्रीं अष्टाविंशतिमूलगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि.।

गीतिका-तिरस थावर जीव सबही, आप सम जाने सही।
मन वचन तन जियको न दुखदा, सकल पै समता लही।।
जो दुष्ट कोई आय पीडे, तो न कबहूँ दुख करे।
ते साधु पूजों अर्घ्य कर ले, तास फल सुख सचरे।।

ॐ ह्रीं अहिंसामहाव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तन जाये तो नहि असत भाषत, कहे सतवच सारजू।
चवै सम्यक् वैन सोहू, सूत्र के अनुसार जु।।
तिस वचन को सुनि सकल प्रानी, पापमति अपनी हरे।। ते

ॐ ह्रीं सत्यमहाव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

बिन दिये पर को माल कबहूँ, मन वचन छूवें नही।
तन आपने हूँ तें सुविरकत, दिये तें भोजन लही।।
काय नग्न चालें सुचर्या, याचनाबुधि ना करे।।
ते साधु पूजों अर्घ्य कर ले, तास फल सुख संचरे।।

ॐ ह्रीं अचौर्यमहाव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नारि देव मनुष्य पशु की, मन वचन तन करि तजें।
सो शीलधर हो बालसम, निर्दोष अपनी पद सजें।।
ते जगत तिय तजि मुकति नारी, वरन को उद्यम करें।। ते.

ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यमहाव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जे तजे दो विध ही परिग्रह, बाह्य अन्तर जानिये।
तिलमात्र पुद्गल बन्ध सेती, ममत की विधि भानिये।।
जे रहे विमुख सुभाव तन ते, सोहि ममता उर धरें।। ते

ॐ ह्रीं परिग्रहत्यागमहाव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चार कर भू शोध कें पद, धरें शुभ चित्त लायके।
जो बने कारन जोर इत उत, तो लखें नहिं भायके।।
त्रसजीव थावर सकल सेती, भाव समता उर धरें।। ते

ॐ ह्रीं ईर्यासमितिसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो बोलि है वच सकल हितदा, खेद को जिय ना लहे।
जिन बैन भाषित समा भाषत, फेरि समता जुत रहे।।
तिन वचन को सुनि भव्य प्राणी, आपने अघ को हरे।। ते सा.

ॐ ह्रीं भाषासमितिसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जे लहे अनजल शोधि शुभचित्त, एकटक ठाँड़े भखें।
नहिं सैन अँगुरी नैन मुखते, बोल हू नाँही अखें।।
फिर दोष षट्चालीस टालें, और दूषण बहु टरें।। ते. सा

ॐ ह्रीं एषणासमितिसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जे धरें वस्तु सँभाल पृथ्वी, लेंय भू तें जोयकें।
परमाद तें लें धरें नाहीं, महाशुभ चित्त होयके।।
तिन माहि नाहिं प्रमाद राखें, लगे अगले अघ हरें।।
ते साधु पूजों अर्घ्य कर ले, तास फल सुख संचरे।।

ॐ ह्रीं आदाननिपेक्षणसहित साधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मल मूत्र छोड़े थान लखि के, तिरस थावर पालिया।
निजभाव मीतो करम रीतो, और के अघ टालिया।।
तिस बने राजे आप जोगी, बैर जिय सब परिहरे।। ते सा

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गसमितिसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जे लघु भारी उष्ण शीतल, नरम कर्कश जानिये।
रूखो रु चिकनों आठ लक्षण, फरस इन्द्री मानिये।।
या फरस इन्द्री जगत जीत्यो, तासु को जे वश करे।। ते सा

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रियजयनिरतसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मिष्ट खाटो कटु कसायल चिरपरो पाँचों सही।
ते रसन इन्द्री विषय जिय को जकड़ि कर बांधो मही।
रसन अक्षि ने जगत जीत्यो तास कूँ जे वसि करे। ते साधु

ॐ ह्रीं रसनेन्द्रियजयनिरतसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शुभगन्ध अरु दुर्गन्ध दो विध, गन्ध इन्द्रिय जानिये।
इस विषयवश जिय होय रागी, द्वेष उर महिं आनिये।।
इन जीय जग के सकल जीते, तास को जे वश करें।। ते. सा

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रियजयनिरतसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पीत श्याम सुफेद सब्ज सु, लाल यह पाँचों कहे।
इनके वशी जिय देखि पुद्‌गल, राग द्वेष सुचित लहें।।
जो नेत्र इन्द्री विषय वश करि, आज निरअंकुश फिरें।।ते. सा.

ॐ ह्रीं चक्षुरिन्द्रियजयनिरतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सचित अचित सु मिश्र तीनों, विषय श्रवण तने कहे।
शुभ सुने रागी अशुभ सुनिके, दोष जुत उरमें थहे।।
जिनविषे कर्ण जु आप वश करि, भाव विच समता धरे।।
ते साधु पूजों अर्घ्यं कर ले, तास फल सुख संचरे।।

ॐ ह्रीं कर्णेन्द्रियजयनिरतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चाल (जोगीरासा)

समताभाव सकल जीवन तें, आप सदृश सब जाने।
संयम तप शुभ रहे भावना, राग द्वेष नहि आने।।
आरत रौद्र न भोग भूमही, निर आकुल रस रीझे।
तिन साधुन के नित प्रति जुगपद पूजे तें अघ सीझे।।

ॐ ह्रीं सामायिकावश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अरहत सिधकी जो थुति कीजे, भक्तिभाव उर आनी।
ताही रस आतमरग ल्यावे, सो अस्तुति विधि जानी।।
सो साधु भी निश दिन ठाने, मन वच काय लगाई।
तिनके पद वसु द्रव्य थकी मैं, पूजों इकचित लाई।।

ॐ ह्रीं स्तवनावश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मनवच तन अरिहन्त सिद्ध को, कर धर शीश नवावें।
सो वंदन विधि मुनि नित ठाने, अगले पाप खिपावें।।
ऐसे साधुन के पद पंकज, भक्ति भाव उर आनी।
पूजन करहुँ दरब आठों से, अर्घ्यं तनी विधि ठानी।।

ॐ ह्रीं वन्दनावश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोष लगे मन वच तन कोई, ताके क्षयविधि काजे।
सो ही रीति करे उर आनी, अपनी शुधता साजे।।
प्रतिक्रमण तें भाव शुद्ध करि, आलोचन मन आने।
ये ते साधु नमों सुख काजे, ता फल मो अघ भाने।।

ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

त्याग करे पर वस्तु सकत सम, प्रत्याख्यान सुजानो।
जो विधि अशन रसादिक कोई, इन आदिक को मानो।।
नितप्रति या विधि करे सु सबही, समता जुत चितठाने।
ते गुरु मै पूजो वसु द्रव लै, शत्रु मित्र सम आने।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जहँ थिति धार जपें जग पीहर, ऐसो साहस धारें।
बहु शर ठाम छुड़ायो चाहत, कष्ट बहुत विधि पारें।।
तो हु धीर तजे नहि आसन, आतम रस लिपटाये।
मै ते साधु नमो जुत कर शिर, मन वच शीश नवाये।।

ॐ ह्रीं कायोत्सर्गावश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पद्धरि छन्द

जो ऊँच नीच भू लखे न कोय, तृण पाहनखण्ड गिने ना कोय।
शुध भूमि जीव बिन शयन लाय, ते साधु जजों उर हरष लाय।।

ॐ ह्रीं भूमिशयनगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जे करे न तन आभरन सार, तन गन्धलेप त्यागत सुधार।
इत्यादि कायरचना जु नाहि, ते मुनिवर वन्दो हरष लाहि।।

ॐ ह्रीं मलत्यागमूलगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जे रहे नगन तन मातजात, तिन पै नहि तृणतुष वसन पात।
नभ ओढे भूतल तल बिछाय, ते साधु नमो वसु द्रव्य लाय।।

ॐ ह्रीं वस्त्रत्यागमूलगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

निजकर ते कच लोंच लेय, चितकरुणा करि उर धीर जेय।
तन शोभा तजि मन शुद्धभाय, ते साधु नमो वसुद्रव्य लाय।।

ॐ ह्रीं कचलुंचनगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चौपाई

एक बार लघु भोजन खाय, रस बिन तथा सतहि रस पाय।
भरना उदर ममत कछु नाय, ते साधु जजों उमगाय।।

ॐ ह्रीं एकभुक्तिगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

एक ठाम थिति भोजन करे, तन थिर काज राग बिन भरे।
मोक्ष पन्थ साधन के काज, ते मै साधु जजों शिवकाज।।

ॐ ह्रीं स्थितिमुक्तिगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सूक्ष्म जीवदया के काज, दातुन भी त्यागें मुनिराज।
सकल जन्तु बन्धु सम जान, ते मै साधु नमों अघहान।।

ॐ ह्रीं दन्तधावनरहितगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चाल जोगीरासा की

पंच महाव्रत समिति पाँच लखि, इन्द्री सब वश आने।
आवशि षट् भू शयन नहुन तजि, वसन त्याग शुभ ठाने।।
कचलोचन इक बार लघ अश, एक ठाम थिति काजे।
दन्त न धोबन बीस आठ इह, साधु सुभग गुण साजे।।

ॐ ह्रीं अष्टाविंशतिमूलगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

दोहा-ये अठ्ठाइस गुण सकल, धरें मोक्षगण जान।
तिनको सुनि व्याख्यान भवि, धारत उपजे ज्ञान।।

चाल भरथरी की

ते गुरु पूजों भाव सों, जे करुणा प्रतिपाल।
सो मुनि दीन दयाल, ते गुरु पूजों भाव सों।। टेक।।
पंच महाव्रत आदरें, पाँचो समिति समेत।
इन्द्री पाँचों वश करे, षट् आवश्यक हेत।।
भूमि शयन मजनतजन, पटके त्यागी जान।
कचलुंचन लघु अशन है, अस्थिति है शुभ आन।।
दांतुन कबहुँ ना करे, है मुनि दीनदयाल।
सब जिय रक्षक हित धनी, सब ही जग प्रतिपाल।।
सत्य महाव्रत जे धरें, भाषें असन न वैन।
त्याग अदत्तादान को, ब्रह्मचर्य सुख चैन।।

नग्न वपु परिग्रह तजें, चालें भूमि निहार।
खांय देखि धरं लेय सो, जो हूं ठाम विचार।।
मल मूत्रादिक वश करें, विरकत चित्त उदार।
इन्द्री पाँचों वश करें, विरकत चित्त उदार।।
सपरस इन्द्री वश करें, आठों विषय निवार।
रसना के पॉचों विषय, त्यागें ममत प्रहार।।
गन्ध तने दोऊ विषय, जीते दुखदा जान।
पांच विषय नेत्रों तने, जीते शुभचित आन।।
करण विषय तीनों हरे, मिश्र अचित्त सचित्त।
कठिन भूमि सोवन बने, रक्षण जीव निमित्त।।
मजन विधि नहिं तन विषें, झलके नसा सु जाल।
वसनरहित तन सोहनो, पूजत सुर सु विशाल।।
शिर मुख दाड़ी कच लुचे, बाधा लहे न कोय।
एक बार भोजन लघु, आनकाज ना जान।
दन्त न धोवे दयानिधि, निजसम सबको मान।।
ऐसे बीस अरु आठ यह, गुणधारी मुनि कोय।
तिनके पद वसु द्रव्य तें, पूजों मनशुध होय।।

सोरठा

तन विरकत शिव मिन्त, सकल जन्तु रखपाल है।
निजसुख धारत सन्त, पूजें तें बहु सुख बढ़े।।

ॐ ह्रीं अष्टाविंशतिगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

समुच्चय जयमाल

(कवित्त छन्द)

जन्मत दश दश केवल उपजें,चौदह देव करें थुति लाय।
अनंत चतुष्टय प्रातिहार्य वसु, सब मिलि गुण छयालीस सुथाय।।

इनको धरे देव सो मोकों, भव भव शरण होहु सुखदाय।
सुन नर हरि पूजत भगवत पद, अपनो आतम सफल कराय।।
समकित दरश ज्ञान वीरज गुण, सूक्षमत्व अवगाहन जान।
अगुरुलघु सप्तम गुन जानो, अष्टम अव्याबाध बखान।।
ये गुण आठ धरें बिन मूरति, चेतन अंक सदा सुखदान।
ऐसे सिद्ध लोक शिर राजें, तिन पद 'टेक' नमों उर आन।।
दशलक्षण शुभधर्म तने है, द्वादश भेद कहे तपसार।
षट् आवशि शुभ गुप्ति तीन लखि, पाँच भेद जानों आचार।।
ये शुभ छत्तीसों गुण धारें, आचारज सब जिय हितकार।
तिनके पद मनवचन काय शुध, पूजों भव भव 'टेक' निवार।।
एकादश अग ज्ञान धरे उर, तिनको रहस सकल पहिचान।
चौदह पूरब लही रिद्धि तिन, करुणाकरि उपदेश बखान।।
आप पढ़े शिष्यन पढवावे, समताभाव रागपद भान।
ऐसे गुण को धरे उपाध्याय, तिनपद 'टेक' भजे शिव जान।।
पच महाव्रत समिति पॉच गिन, इन्द्री पाँच करे वश धीर।
षट् आवश्यक करे नित्य ही, ताकरि पाप हरे वर वीर।।
भूमि शयन आदिक गुण सात जु और मिलावो इनके तीर।
अष्टाविंशति होय सकल मिल, इन धर साधु करें शिवसीर।।
ये ही पच गुरुपरमेष्ठी, ये ही सकल हितु सुखकार।
ये ही मंगलदायक जग में, ये ही करें भवोदधि पार।।
ये ही पांचों पचमगतिमय, ये ही पंच मुकति करतार।
इनके पद को भव भव सरनों माँगों उर की 'टेक' निवार।।

दोहा-अरिहंत सिद्ध आचार्य के, पाँय उपाध्याय पाय।
साधु सहित पाँचों चरन, पूजों "टेक" लगाय।।

ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति पंचपरमेष्ठी विधान संपूर्णम्

कविवर टेकचन्द्र जी कृत

पंचमेरु पूजन विधान

अथ व्रतमाहात्म्यवर्णन

सर्वदीर्घ वेसरी छंद

वानी पूजों देवा केरी, तातै टूटे मोहा जेरी।
साधा ध्याऊ साचा भाऊँ, या भौ माही माही आऊँ।।1।।

सर्वदीर्घ जोगीरासा की चाल।

देवा सेवो सो या भौ मे आवा जावो हारै।
आपा तारयौ औरे तारै ज्या नावा औतारै।।
जाका ध्याना जोगी आना पापा हाना काजै।
ऐसो नाथो द्यो मो साथो भौ भौ साता साजै।।2।।
साधा साधा जो या भौ मे जाके रागा नाहीं।
आपा साधै प्रानी नावा ध्यान ध्येना माही।।
तापा आपैं जापा जापैं मोको राखै सोही।
मेरो सीसा याके पावे नाखो दीना होही।।3।।
ऐसे देवा याकी वानी साधा तीनो सोही
मो को ज्ञानो ऐसो दीजै मौ पै राजी होही।।
तातै नादी दीपा पाँचों मेरा पूजा सारी।
पूरी हो जावै जो कीजौ ऐसी वाछा म्हारी।।4।।

बेसरी- या पूजा श्रीपाले कीनी, काया रोगा की खय लीनी।
या पूजा सो लोका देवैं, जो जीवा नीका है सेवै।।5।।

दोहा- वरत यह सुख कर लख, समचित कर सिव सहल।
पहल करम सब नस भजय, कर यह बरत जु टहल।।6।।

चौपाई- यो व्रत मयणा सुन्दर करौ, सुभट सातसै को दुख हरौ।
ताकर जग में महिमा पाय, इम लख भव पूजौ मनलाय।।7।।

अडिल्ल-बरस एक में बार तीन यह व्रत करें।
कार्तिक फागुन सुदी अषाढ़ विषैं धरैं।।
करैं वर्ष लग आठ तथा वृष तीन जी।
शक्ति बड़ी का धार करै परवीन जी।।8।।

सोरठा- शक्ति बड़ी धर सोय, करै बहुत दिन भी सही।
उद्यापन फिर होय, नाहीं व्रत दूनों करैं।।9।।

गीता- पीछै जु शक्ति प्रमाण अपनी द्रव्य तैं पूजा करैं।
उपकरण सुन्दर छत्र चामर लायके मंदिर धरै।।
पुस्तक लिखावै दान करुणा देय दीन बुलाय जी।
इस रीति धर्म उद्योत ठानै जीव सो शिव पाय जी।।10।।

पद्धरी

या विध अनेक महिमा निधान, यह वरत कहो धुनि में प्रमाण।
कवि कवलौं गुणभाषैं अपार, बहु कहिये कहाँ जग माहिं सार।।11।।

(इति व्रत महिमा समाप्त)

समुच्चय पूजा

चाल जोगीरासा

पाँचों मेरु महान कनक के, तिन पै जिनके थानों।
गिनत असी तिन माहिं बिंब हैं, रतन मई पुन खानों।।
देव खगा तौ जाय जजैं वहाँ हम यहाँ भावना भावैं।
तातैं मेरन के जिन बिंब सु थापन थाप जजावैं।।12।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंब समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंब समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंब समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अथाष्टक (चाल जागीरासा)

निर्मल मन सो ही जल उज्ज्वल, भाजन भाव करायो।
आर्ज्य भाव रस सोही जीवा, ता बिन पय धर लायो।।
बीसी चार सबै जिन मंदिर, पाँच मेरु के जानौं।
सो मैं मन वच काय जजत हों, करन पाप को हानौं।।1।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल भाव कियो शुभ चंदन, भक्त गंध को धारी।
मंद मोह झारी करता मैं, भर लायौ सुखकारी।। बीसी०

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

भाव अखण्डित उज्ज्वल सोही, अक्षत सुभग बनाये।
नाना भक्त उपाय उक्त तै, पुन्य बध को आये।। बीसी०

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

भाव प्रफुल्लित फूल बनाये, बहुविध भक्ति सुरगा।
विनयवान तामें गंध नीकी, पुष्पन लायौ चंगा।। बीसी०

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो कामवाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

परणति परम मनोज्ञ तने मैं शुभ नैवेद्य बनायौ।
नाना रस नय द्वार घनी यह भक्त भाव कर आयौ।। बीसी०

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्ज्ञान प्रकाश सकल, तत्वन को दीप बनाई।
हरष सो पातर कीनो ता घर, नीकी अरति म्हाई।। बीसी०

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट करम शुभ चंदन पीस्यो, ताकी धूप बनाई।
धर्म ध्यान बहु तेज अगनि में, जारी प्रीति बढ़ाई।।
बीसी चार सबै जिन मंदिर, पाँच मेरु के जानौं।
सो मैं मन वच काय जजत हों, करन पाप को हानौं।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पाप रहित परणाम किए फल, समता थाल भराये।
आनद होत सुलेय हाथ में बहुविध जिनगुण गाये।। बीसी०

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ऐसे आठों द्रव्य मनोहर, ताको अरघ बनाई।
निर्मल भाव बनाय रकेवी, ता धर शीश नवाई।। बीसी०

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

पाँचों मेरु असी जिन धाम, है बिन किये ध्रुव तिस ठाम।
तिन मध बिंव देव जिनराय, सो मैं पूजों अर्घ चढ़ाय।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ प्रथम सुदर्शन मेरु की पूजा

अडिल्ल- मेरु सुदर्शन जान बड़े विस्तार जी।
मानूँ स्वर्ग थंभन कूँ थंभा सार जी।।
जापै षोडश धाम जिनेसुर के सही।
सो हम थापन थाप जजैं इस ही मही।।1।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनचैत्यालय समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनचैत्यालय समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनचैत्यालय समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक (चौपाई)

निरमल नीर गंग को लाय, झारी मणि मय माहि धराय।
मेरु सुदर्शन जिनके धाम, षोडश पूजों तीरथ ठाम।।1।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनालयेभ्यो जन्मजरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

बावन चदन नीर घसाय, लाओ प्रभु पातर में जाय।
मेरु सुदर्शन जिनके धाम, षोडश पूजों तीरथ ठाम।।2।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनालयेभ्यो चंदनं नि. स्वाहा।

अक्षत मुक्ताफल से लाय, उज्ज्वल खंड बिना सुख दाय।
मेरु सुदर्शन जिनके धाम, षोडश पूजों तीरथ ठाम।।3।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनालयेभ्यो अक्षतं नि. स्वाहा।

फूलकलपद्रुम के सुख रूप, लायो माला गूँथ अनूप।
मेरु सुदर्शन जिनके धाम, षोडश पूजों तीरथ ठाम।।4।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनालयेभ्यो पुष्पं नि. स्वाहा।

नाना रस नैवेद बनाय, मोदक आदि भले सुखदाय।
मेरु सुदर्शन जिनके धाम, षोडश पूजों तीरथ ठाम।।5।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनालयेभ्यो नैवेद्यं नि. स्वाहा।

दीपक रतनमई तम हार, लायौ धर पातर मैं सार।
मेरु सुदर्शन जिनके धाम, षोडश पूजों तीरथ ठाम।।6।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनालयेभ्यो दीपं नि. स्वाहा।

सार धूप दश गंध बनाय, खेऊं जिन चरनन सुखदाय।
मेरु सुदर्शन जिनके धाम, षोडश पूजों तीरथ ठाम।।7।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनालयेभ्यो धूपं नि. स्वाहा।

श्रीफल खारक बहु फल और, लायो भक्त हिये धर जोर।
मेरु सुदर्शन जिनके धाम, षोडश पूजों तीरथ ठाम।।8।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनालयेभ्यो फलं नि. स्वाहा।

जल चंदन अक्षत पुह लेय, चरु दीपक फल धूप सु खेय।
मेरु सुदर्शन जिनके धाम, षोडश पूजों तीरथ ठाम।।9।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिषोडशजिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ

पद्धरी छन्द

वन भद्रसाल जिन थान चार, विन कीने शाश्वत पुण्यकार।
ते पूजों वसु द्रव अर्घ लाय, संबध सुदर्शन मेरु पाय।।1।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु भद्रशालवनस्थचतुर्जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि.।

नंदन वन चव जिन थान जान, सो तीर्थ पाप हारी सुमान।
ते पूजों वसु द्रव अर्घ लाय, संबंध सुदर्शन मेरु पाय।।2।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु नंदनवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि.।

चव जिन थल सौमनस थान, सब रतन खण्ड उपमा निधान।
ते पूजों वसु द्रव अर्घ लाय, संबंध सुदर्शन मेरु पाय।।3।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु सौमनसवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि.।

जिन थल चव पांडुक वन मँझार,सुर खग पूजें तहाँ भक्ति धार।
ते पूजों वसु द्रव अर्घ लाय, संबंध सुदर्शन मेरु पाय।।4।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु पांडुकवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि.।

चव गज दंतोचव जिन सुगेह, महा सुन्दर देखें होय नेह।
ते पूजों वसु द्रव अर्घ लाय, संबंध सुदर्शन मेरु पाय।।5।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरोश्चतुर्गजदंतोपरि-चतुर्जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि।

जंबु वृक्षे जिननाथ सोय, रचना मणिमय तहाँ बिंबजोय।
ते पूजों वसु द्रव अर्घ लाय, संबंध सुदर्शन मेरु पाय।।6।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु जंबूवृक्षस्थ-जिनालयाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जिन थान शालमलि वृक्ष ठांहि, मुख महिमा कहते पार नाहिं।
ते पूजों वसु द्रव अर्घ लाय, संबंध सुदर्शन मेरु पाय।।7।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु शाल्मलिवृक्षस्थजिनालयाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सुदर्शन मेरु दक्षिण दिशाय, जिनथान कुलाचल पै जो पाय।
तिनमें जिन बिंब मनोज्ञ सोय, जिनके पद पूजों दीन होय।।8।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु सम्बन्धिदक्षिणदिशात्रयकुलाचलस्थजिनालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश याही मेर जानि, जिन भवन कुलाचल पै सुथान।
तिनमें जिन बिंब मनोज्ञ सोय, जिनके पद पूजों दीन होय।।9।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु सम्बन्ध्युत्तरदिशात्रयकुलाचलस्थजिनालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदर्शन मेरु पूरब दिशाय, जिन थान वक्षारन सीस पाय।
तिनमें जिन बिंब मनोज्ञ सोय, जिनके पद पूजों दीन होय।।10।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु पूर्वदिशासंबंध्यष्ट वक्षारगिरिस्थजिनालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश येही मेरु सार, वक्षारन पै जिन भवन धार।
तिनमें जिन बिंब मनोज्ञ सोय, जिनके पद पूजों दीन होय।।11।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु पच्छिमदिशासम्बन्ध्यष्ट वक्षारगिरिस्थ-जिनालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस मेरु सुदर्शन पूर्व जाय, विजयारध पै जिनभवन पाय।
तिनमें जिन बिंब मनोज्ञ सोय, जिनके पद पूजों दीन होय।।12।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु सम्बन्धिपूर्वदिशायाः षोडशविजयार्धपर्वत-स्थषोडश जिनालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम सुदरशन पूर्व ठांहि, वेताडन पै जिन भवन पाहि।
तिनमें जिन बिंब मनोज्ञ सोय, जिनके पद पूजों दीन होय।।13।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिपश्चिमदिशायाः षोडश विजयार्धपर्वतस्थ-षोडश जिनालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस मेरु सुदरशन दछिन जानि, रूपाचल पै इक जिन सुथानि।
तिनमें जिन बिंब मनोज्ञ सोय, जिनके पद पूजों दीन होय।।14।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिदक्षिणदिशि-एकरूपाचलस्थेकजिनालयाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश इसही मेर जान, विजयारध पै जिनभवन मान।
तिनमें जिन बिंब मनोज्ञ सोय, जिनके पद पूजों दीन होय।।15।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु संबंधिउत्तरदिशि-एकरूपाचलस्थेकजिनालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आडिल्ल- तीस चार वैताढ सोल वक्षार जी,
दोय विरछ षट कुलाचला लख सार जी।।
षोडश वनके थान चार गजदत हैं।
ह्यां इक इक जिन भवन जजौं तें संत हैं।।16।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु-सम्बन्ध्यष्टसप्ततिजिनालयेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- मेरु सुभग थानक भलौ, तीरथ पातक नास।
जजौं थान इस संग के, मन वच तन है दास।।1।।

चाल-तेगुरु

मेरु सुदरशन सोहनौ, तीरथ पद सुखदाय। टेक।।
ऊँचो जोजन लाख है, सब कनक स्वरूप।
नीचै को मणि तेज है, बहु घेर अनूप।। मेरु सु0।।2।।

भद्रसाल वन मेरु की, जड़ भौम मझार।
ता ऊपर फिर जाइये, वन नंदन सार।। मेरु सु०।।3।।
ता ऊपर वन सौम है, तीजौ वन सोय।
ऊपर पांडुक वन कहौ, चौथो अवलोय।। मेरु सु०।।4।।
इक वन वन, चव जानिये, श्री जिनवर ठाम।
कनकरतन जड़िये सही, सब करौं प्रणाम।। मेरु सु०।।5।।
ठाम ठाम सर बावड़ी, शुभ महल अनूप।
देव तहाँ क्रीड़ा करैं, वापक गुन रूप।। मेरु सु०।।6।।
कै चारन मुनि जाय हैं, जिन वदन काज।
ध्यान धरैं शुभ थान में, पावैं शिवराज।। मेरु सु०।।7।।
पाडुक वन में जानिये, मध चूलक ठाम।
वैडूरक मणिमय सही, रंग हरत सुधाम।। मेरु सु०।।8।।
जोजन तुंग चालीस है, तिस ऊपर जोय।
केश अतरै स्वर्ग है, सौधर्म जुग सोय।। मेरु सु०।।9।।
इत्यादिक महिमा घनी, कब लों वरनाय।
सहत जीमतें कीजिये, तोहु पार न पाय।। मेरु सु०।।10।।
सब गिरि में परधान हैं, यह मेरु महान।
याके अन परवार हैं, तहाँ जिनके थान।। मेरु सु०।।11।।
तीस चार वैताढ है, षोडश वक्षार।
और कुलाचल षट सही, गजदत वृक्षसार।। मेरु सु०।।12।।
एक एक जिन थान हैं, मैं पूजों सार।
मेरु सुदरशन है सही, कंचन वरन अपार।। मेरु सु०।।13।।

दोहा- मेरु माहि मन राखिये, तहाँ अकृत्रिम थान।
जिनके मुनिचारण तहाँ, तातैं नमि पुनि आनि।।14।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु संबंधिसर्वजिनालयेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति सुदर्शनमेरु पूजा सम्पूर्ण)

द्वितीय विजयमेरु पूजा

गीता- खंड धातकी पूर्व दिशकौ विजय मेरु सुथान है।
तिस ऊपरै जिनधाम षोडश अकीर्तम पुन धाम है।।
इन आदि और कुलाचलादिक मेरु संबंधी सही।
जिन थान कूँ यहाँ थापि पूजूँ भक्ति तै पुनकी मही।।1।।

ॐ ह्रीं विजयमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं विजयमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं विजयमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अथाष्टक

नीर निरमलो गंग धारको लाइये।
सुन्दर झारी घालि हरष बहु पाइये।।
जनम-मरन दुःख हरन महा थुति गायजी।
पूज्य जिनालय विजय मेरु जुत पायजी।।

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिषोडश-जिनालयेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन बावन अगर गंध ले सारजी।
निरमल नीर घसाय आप कर धार जी।।
भौ तपरोग मिटावन कौ गुन गाय जी। पूज्यजिनालय०

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिषोडश-जिनालयेभ्यो चंदनं नि. स्वाहा।

अक्षय उज्ज्वल खंड विनाही लाइयौ।
प्रासुक जलतें धोय शुद्ध करवाइयौ।।
थान अखय का लोभ धारमैं आयजी। पूज्यजिनालय०

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिषोडश-जिनालयेभ्यो अक्षतं नि. स्वाहा।

फूल कनक चाँदी के प्रासुक लेयजी।
तिनको हार बनाय शोभजुत जेयजी।।
कामदहन के काल भक्त धर आयजी।
पूज्य जिनालय विजय मेरु जुत पायजी।।

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिषोडश-जिनालयेभ्यो पुष्पं नि. स्वाहा।

नाना रस नैवेद आदि मोदक सही।
कीनैं शुभ आचार सहित अब इस मही।।
भूखरोग खय काज आज हम आय जी। पूज्य जिनालय०

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिषोडश-जिनालयेभ्यो नैवेद्यं नि. स्वाहा।

मणिमय दीपक लेय जोत परकाशजी।
कंचन पातर धार होय प्रभु दासजी।।
मेटन मिथ्या ध्वांत पूजने आयजी। पूज्य जिनालय०

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिषोडश-जिनालयेभ्यो दीपं नि. स्वाहा।

धूप मनोज्ञ बनाय गंध दश डारजी।
खेवन आयौ अगनि माहि थुति धारजी।।
कर्म दाह फल चाह और नहीं आपजी। पूज्य जिनालय०

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिषोडश-जिनालयेभ्यो धूपं नि. स्वाहा।

श्रीफल लौंग बादाम सुपारी सारजी।
खारिक आदि अनेक और फल धारजी।
कारण शिव फल लोभ आप पै आयजी। पूज्य जिनालय०

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिषोडश-जिनालयेभ्यो फलं नि. स्वाहा।

नीर गंध तंदुल पुह चरु ले दीपजी।
धूप फला विध आठ अरघ सुभ टीपजी।।
नाना सुखके काज पाप खयदाय जी। पूज्य जिनालय०

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिषोडश-जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ

चाल जिनजंपि

विजय मेरु की भौम में वन भद्रसाल सुखदाई जी।
च्यार जिनालय मणिमई ते पूजों अर्घ बनाई जी।।
मन वच भक्त लगाय कें।।1।।

ॐ ह्रीं विजयमेरु-भद्रसालवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदन वन या ऊपरै तिस महिमा अधिक विचारोजी।
विजय मेरु शुभ स्थान है यह तीरथ निरमल जानोजी।। मन वच०

ॐ ह्रीं विजयमेरु नंदनवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस ऊपर वन सोम है तहाँ देव विद्याधर जावें जी।
चारि जिनालय हैं तहाँ तें पूजौ मैं अघ ढावें जी।।
विजय मेरु तीरथ सही तहाँ जिन थल मुनि शिव पावैं जी।मन वच०

ॐ ह्रीं विजयमेरु सौमनसवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पांडुक वन सब ऊपरे जहाँ रतन मई जिन गेहा जी।
चारि जिनालय जिन कहे तें पूजों अरघ समेहा जी।।
विजय मेरु तीरथ सही तहाँ जिन थल मुनि शिव पावैं जी।
मन वच भक्त लगाय कें।।4।।

ॐ ह्रीं विजयमेरु पांडुकवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजय मेरु दक्षिण दिशा जंबू वृक्ष बहु विस्तारो जी।
तापैं इक जिन गेह है सो पूजों अरघ संवारौ जी।।
विजय मेरु तीरथ सही पूजैं सुर खग नित सारो जी। मन वच०

ॐ ह्रीं विजयमेरु दक्षिणदिशस्थ-जंबूवृक्षस्थेक जिनालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश इस मेर की शालमली वृक्ष जानौ जी।
तापे जिन मंदिर सही ते पूजौं अरघ चढ़ानौ जी।।
विजय मेरु तीरथ सही पूजैं सुर खग यह थानौं जी। मन वच०

ॐ ह्रीं विजयमेरु उत्तरदिशस्थ-शाल्मलिवृक्षस्येक जिनालयायाघ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजय मेरु गजदंत पै जिन थानक है पुन्य दाई जी।
सो चारों थल वंदिये ले अरघ महा हरषाई जी।।
विजय मेरु तीरथ सही पूजैं सुर खग यह थानौं जी। मन वच०

ॐ ह्रीं विजयमेरोश्-चतुर्गजदन्तोपरिचतुर्जिनालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

विजय मेरु दक्षिण दिशा गिरि तीन कुलाचल सारो जी।
तिन पै जिन थानक सही ते पूजों हरष अपारो जी।।
विजय मेरु तीरथ सही पूजैं सुर खग यह थानौं जी। मन वच०

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिदक्षिण-दिशायाः त्रिकुलाचलेषु त्रिजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिस इस मेर की गिर कहे कुलाचल तीनों जी।
तिन पै जिन मंदिर सही ते पूजों भक्ति नवीनो जी।।
विजय मेरु तीरथ सही पूजैं सुर खग यह थानौ जी। मन वच०

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंध्युत्तर-दिशायारित्र-कुलाचलेषुत्रिजिन-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण दिस बेताढ है गिर विजय मेर ते जानों जी।
तिन पै जिन थल विन किये ते पूजौं हरष बढानो जी।।
विजय मेरु तीरथ सही पूजैं सुर खग यह थानों जी। मन वच०

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिदक्षिण-दिश्येकविजयार्धोपर्येक-जिनालयायाघ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजय महा गिर मेर की विजयारध पश्चिम सोला जी।
तिन पै इक जिन भवन ते पूजै अर्घ होय खोला जी।।
विजय मेरु तीरथ सही पूजैं सुर खग यह थानौं जी।
मन वच भक्त लगाय कैं।।

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिपश्चिम-दिशायां-षोडश-विजयार्धपर्वतेषु षोडश जिनचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजय मेरु की उत्तरैं विजयारध एक सुथानों जी।
तापै इस जिन थान है सो पूजों कर सन्मानों जी।।
विजय मेरु तीरथ सही पूजैं सुर खग यह थानौं जी। मन वच०

ॐ ह्रीं विजयमेरूत्तर-दिश्येक-विजयार्धोपर्येक जिन-चैत्यालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरब दिश इस मेरु की विजयारध महा गिरिंदा जी।
तिन पै षोडश जिन भवन पूजैं मिट है अघ फंदा जी।।
विजय मेरु तीरथ सही पूजैं सुर खग यह थानौं जी। मन वच०

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिपूर्वदिशि-षोडशविजयार्धेषु-षोडशजिन-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरब दिस इस मेर की वसु परवत सार वक्ष्यारो जी।
तिन पै जिन थल आठ हैं ते पूजों मन वचधारो जी।।
विजय मेरु तीरथ सही पूजैं सुर खग यह थानौं जी।
मन वच भक्त लगाय कैं।।14।।

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिपूर्वदिष्यष्टवक्षारेष्वष्टजिनचैत्याल-येभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पच्छिम विजय सुमेर की आठ विक्ष्यार सुजानौ जी।
आठ तिनौं पै जिन भवन ते पूजों अरघ सुआनौ जी।।
विजय मेरु तीरथ सही पूजैं सुर खग यह थानौं जी।
मन वच भक्त लगाय कैं।।15।।

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिपश्चिमविष्यष्टवक्षार-गिरिष्वष्टजिन-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल- विजय मेरु संग इस प्रकार वन चार जी।
गजदंता वृक्षदोय कुलाचल सार जी।।
विजयारध चौंतीस वक्ष्यार सुजानिये।
इनपै जे जिन थान जजौं अर्घ आनिये।।

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिसर्व-जिनालयेभ्यो महार्घं नि. स्वाहा।

जयमाला

दोहा- विजय मेरु दूजो सही, जान अकीरतम थान।
या संबंधि ये जिन भवन, पूजैं सुर खग आन।।1।।

मुनयानन्द की चाल

मेरु विजया विषैं थान जिनके सही।
बिंब तिनमें जिसे देव जिन छवि कही।।1।।
दिष्टि नासा दिये ध्यान पदमासना।
देखते नाश होय पापकी वासना।।2।।
शांति मुद्रा बिना राग सुखदाय जी।
मानु अब दिव्य धुनि खिरैगी आय जी।।
इंद्र से दीन होय करै अरदासना।
देखते नाश होय पापकी वासना।।3।।
ध्यानमें मुनी जिन बिंब जे ध्याय हैं।
आपनौं रूप ऐसो कियौ चाय हैं।।
जोय जिन ध्यान नहीं होय जग आसना।
देखते नाश होय पाप की वासना।।4।।
भक्त मन मोहनी देह जिनराय की।
देखते बढ़े उर राग सुखदाय जी।।
मोक्ष तीय नित चहै रूप तिन भासना।
देखते नाश होय पाप की वासना।।5।।

देखते मूर्ति जिन रय सुध आय है।
सोम अति सोहनी काय जिनराय है।।
लखै शुभ ध्यान दुर ध्यान की वासना।
देखते नाश होय पाप की वासना।।6।।
आदि इनको घनी ऊपमा दाय जी।
अकिरतम देव जिन बिंब में पाय जी।।
तीर्थ मंगल करा और समता सना।
देखते नाश होय पाप की वासना।।7।।
बिंब सब रतन मय तजे बहु धार जी।
जोति तिनकी कनै दबै शशिसार जी।।
कनक मय गेह जिन धरें परकासना।
देखते नाश होय पाप की वासना।।8।।
बड़े विस्तार जिनथानको जानियै।
कोटि त्रय वेष्टि रचना घनी मानियै।।
बाग वन महल वापी सुदुख नाशना।
देखते नाश होय पाप की वासना।।9।।
दूसरे मेरु विजय तनी विधि कही।
वरतनै सोभ पुन्य रास भव्यनि लही।।
तीर्थ सिद्ध क्षेत्र मुनि करै कर्म नाशना।
देखते नाश होय पाप की वासना।।10।।
विजय यह मेर बहु घेर में जानिये।
देव खग गमन तहँ सदा जिस थानिये।।
जजैं ते जाय हम करैं यहँ उपासना।
देखते नाश होय पाप की वासना।।11।।

दोहा- विजय मेरु गुनमाल को, जपै जोय भवि कोय।
ताको तीरथ लाभ है, दिये भाव फल होय।।12।।

ॐ ह्रीं विजयमेरु-संबंधिसर्वजिनालयेभ्यो-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति विजयमेरु पूजा संपूर्णम्)

तृतीय अचलमेरु पूजा

बेसरी- मेर अचल सम्बंधि जिनाला, सो पूजैं सुर खग गुनमाला।
हम तौ सकत हीन हैं भाई, तातैं यहाँ थपि भावन भाई।।1।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं अचलमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं अचलमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अडिल्ल- नीर निरमलो कनक पात्र धर लायजी।
उज्जवल सार सुगध मनोहर आय जी।।
अचल मेरु सम्बधि जिते जिन थान जी।
पूजौं भक्ति बढ़ाय फलै भव हानि जी।।1।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिजिनचैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चदन चारु सुगध अगर मिलवाय जी।
प्रासुक पानी लाय घस्यो थुति गाय जी।।
अचल मेरु सम्बंधि जिते जिन थान जी।
पूजौं ताफल भव आताप मिटाव जी।।2।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिजिनचैत्यालयेभ्यो चंदनं नि. स्वाहा।

अक्षत अखंड अनूप गंध धारी सही।
धवल रंग मुकता फलसे पुनकी मही।।
अचल मेरु सम्बंधि जिते जिन थान जी।
पूजौं ताफल भव अक्षय पदकों पाय जी।।3।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिजिनचैत्यालयेभ्यो अक्षतं नि. स्वाहा।

फूल कलप वृक्ष सार गंध दायक सही।
कचन चाँदी फूल आपनैं कर मही।।
अचल मेरु सम्बंधि जिते जिन थान जी।
सो पूजो पद मदन तनौं खय जान जी।।4।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिजिनचैत्यालयेभ्यो पुष्पं नि. स्वाहा।

नाना रस सुभ लाय कियौ नैवेद जी।
मोदक आदि बनाय लिए निरवेद जी।।
अचल मेरु सम्बंधि जिते जिन थान जी।
सो पूजौं फल भूख तनी होय हानि जी।।4।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिजिनचैत्यालयेभ्यो नैवेद्यं नि. स्वाहा।

दीपक मणिमयसार जोति तम नासना।
कनक पात्र धर लाय करौ थुति भासना।।
अचल मेरु सम्बंधि जिते जिन थान जी।
सो पूजों फल होय मिथ्यातम नास जी।।5।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिजिनचैत्यालयेभ्यो दीपं नि. स्वाहा।

अगर चंदन आदि जो दशधा धूप जी।
अगनि मध्य खेऊँ निज हौन अरूप जी।।
अचलमेरु सम्बंधि जिते जिन थान जी।
सो पूजौं फल कर्म दहै शिव जाय जी।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिजिनचैत्यालयेभ्यो धूपं नि. स्वाहा।

श्री फल लौंग बादाम सुपारी सार जी।
आदि इने आनि आनि फला सुखकार जी।।
अचलमेरु सम्बंधि जिते जिन थान जी।
सो पूजौं फल मोक्ष हौन कौ जानि जी।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिजिनचैत्यालयेभ्यो फलं नि. स्वाहा।

जल चंदन अक्षत पुष्प चरु दीपक सही।
धूप और फल आठ लेय अरघे टही।।
अचलमेरु सम्बंधि जिते जिन थान जी।
सो पूजौं फल अमल हौन हित आनि जी।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ

चौपाई

अचल मेरु की भौम मझार, भद्रसाल जानौं वनसार।
ताके मध चव जिनवर थान, ते हौं पूजौं शक्ति प्रमान।।1।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-भद्रसालवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदन नाम महावन सोय, अचल मेरु के ऊपर जोय।
ताके माहि चार जिनथान, तेऊ पूजौं शक्ति प्रमान।।2।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-नंदनवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु के ऊपर सोय, सौमनस नाम वन अद्भुत जोय।
तामें चार जिनालय जान, ते हों पूजों शक्ति प्रमान।।3।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-सौमनसवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पांडुक वन सब ऊपर जोय, अचलमेरु सम्बंधी सोय।
ता विच चार जिनालय जानि, ते हू पूजो शक्ति प्रमान।।4।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-पांडुकवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं नि.स्वाहा।

अचल मेर की दक्खिन दिशा, जंबू वृछ ऊपरे लसा।
एक जिनेसुरजी का थान, सो ही पूजों शक्ति प्रमान।।5।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-दक्षिणदिशस्थ-जंबूवृक्षस्येक जिनालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु की उत्तर सोय, सालमली वृक्ष मणिमय जोय।
तापैं एक जिनेसुर थान, सोहू पूजौं शक्ति प्रमान।।6।।

ॐ ह्रीं अचल मेरूत्तर दिशस्थ-शाल्मलिवृक्षस्येक जिन-चैत्यालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु के चार बखान, गजदंता परवत हित दान।
तिन पै चार जिनालय जानः, तेहू पूजौं शक्ति प्रमान।।7।।

ॐ ह्रीं अचलमेरोश्च-चतुर्गजदन्तोपरिचतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु की दक्षिण सोय, तीन कुलाचल गिर सुभ जोय।
तिन पै तीन जिनालय जान, ते हू पूजों शक्ति प्रमान।।8।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिदक्षिण-दिशायाः त्रिकुलाचलेषु त्रिजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु की उत्तर दिस जाय, तीन कुलाचल परवत पाय।
तिन पै तीन जिनालय जान, ते हू पूजों शक्ति प्रमान।।9।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंध्युत्तर-दिशायास्त्रि-कुलाचलेषुत्रिजिन-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु की पूरब जाय, आठ वक्ष्यार महा गिर पाय।
तिन इक पै है जिन थान, ते हौं पूजौं शक्ति प्रमान।।10।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिपूर्वदिष्यष्टवक्षारेष्वष्टजिनचैत्याल-येभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पच्छिम अचल मेरु को जोय, आठ वक्ष्यार बड़े गिर सोय।
तिन पै आठों ही जिन थान, तेहू पूजों शक्ति प्रमान।।11।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिपश्चिमदिष्यष्टवक्षारेष्वष्टजिनचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु की पूरब जोय, हैं विजयारध षोडश सेय।
तिन पै षोडश ही जिनथान, सो हौं पूजों शक्ति प्रमान।।12।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिपूर्वदिशायां-षोडश-विजयार्धपर्वतेषु षोडश जिनचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु की दक्षिण भौम, विजयारध गिर है इक सोम।
ता ऊपर इक जिनको थान, सो हू पूजों शक्ति प्रमान।।13।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिदक्षिण-दिश्येक-विजयार्धोपर्येक जिनचैत्यालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु की पश्चिम जेइ, षोडश विजयारध गिर लेई।
तिन सब पै इक जिनथान, सो हू पूजौं शक्ति प्रमान।।14।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिपश्चिमदिशायां-षोडश-विजयार्धपर्वतेषु षोडश जिनचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु की उत्तर धरा, एक खगाचल पर्वत परा।
तापै एक जिनालय जान, सो हू पूजौ शक्ति प्रमान।।15।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु-संबंधिउत्तर-दिश्येक-विजयार्धोपर्येक जिनचैत्यालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खड धातकी दक्षिण जाय, इष्वाकार एक गिर पाय।
ता पै एक जिनालय मान, सो हू पूजौ शक्ति प्रमान।।16।।

ॐ ह्रीं धातकीखंडस्थदक्षिणदिशियष्वाकारपर्वतोपर्येकजिनालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश खंड धातकि माहिं, इष्वाकार मध्य में पाहिं।

ता पै एक जिनालय मान, सो मैं पूजों शक्ति प्रमान।।17।।

ॐ ह्रीं धातकी खंडस्योत्तरदिशियष्वाकारपर्वतोपर्यैकजिनालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऐसे अचल मेरु विध जोय, सो सो धरा जिनालय सोय।
ते हौं अरघ लाय हरषाय, पूजौं सब जिन थल थुति गाय।।18।।

ॐ ह्रीं अचलमेरु संबंधिजिनालयेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- अचल मेरु पै जिनन्हवन, होय मुनी शिव जाय।
तातैं तीरथ निरमलौ, मैं पूजौं गुन गाय।।1।।

बेसरी

अचल मेरु संबंधी जानौं, हैं जिन थाना सु कहौ बखानौं।
अरु पर्वत गिर याकी लारा, सुन तै जीव लहैं पुन सारा।।2।।
जहाँ जहाँ जिन मन्दिर होई, सो सो थान कहौं सुन सोई।
चउ वन षोडश जिन थल धारा, सुन तैं जीव लहै पुन सारा।।3।।
चार कहे गजदंता भाई, इन पै चउ जिन गेह बताई।
सो भी रतन मयी शुभकारा, सुन तैं जीव लहै पुन सारा।।4।।
जम्बू शालमली वृक्ष जानौ, इन जुग पै जुग जिन थल मानौं
तहँ भी सुर खग का पैसारा, सुन तैं जीव लहै पुन सारा।।5।।
षोडश गिर वक्षार हैं भाई, तिन पै षोडश जिन गृह पाई।
तहाँ जाय पूजों शुभ धारा, सुनतैं जीव लहै पुन सारा।।6।।
विजयारध चौंतीसा, जानौ, ते सब चाँदीमय तन थानौ।
तिन पै चौंतिस जिनथल भारा, सुनतैं जीवलहै पुनि सारा।।7।।

इक्ष्वाकार दोय गिर जानौ, इन पै दोय जिनालय मानौ।
तहाँ सुर खग पूजैं हितकारा, सुन तैं जीवलहै पुनि सारा।।8।।
इत्यादिक जिन मंदिर भाई, सबै थानजिय को सुखदाई।
ये सब तीरथ थान अपारा, सुन तैं जीव लहै पुन सारा।।9।।
जो पूजै परतछ तहँ जाई, ताके उदय पुन्य होय भाई।
हम परोक्ष गुन गावें प्यारा, सुन तैं जीव लहै पुन सारा।।10।।
हम यहाँ पूज्य भावना भावैं, ताही कर भव सफल करावैं।
गावैं राग धार गुन भारा, सुन तैं जीवलहै पुन सारा।।11।।

दोहा- खंड धातकी पछम दिस, अचल मेरु शुभ धाम।
ता सम्बन्ध तीरथ सबै, जजौं जिनेश्वर ठाम।।12।।

ॐ ह्रीं धातकीखंडस्थाचलमेरु-संबंधि-समस्तजिन-चैत्यालयेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इति अचल मेरु पूजा समपूर्ण

चतुर्थ मंदरमेरु संबंधी जिनालय पूजा

चाल मुनियाणन्द

अर्ध यह कर धरा पूर्व दिशा जानिये।
मेरु चौथा भला मंदर सुख मानिये।।
तासम्बंधी जिते जिन थानका हैं सही।
सो सकल थापि इहां जजौं पुन्य की मही।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं मंदरमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं मंदरमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अथाष्टक (भुजंग प्रयात छन्द)

लिया नीर प्रासुक भले पात्र माहीं।
धरी भक्ति उर में लिये हाथ ठाहीं।
करूँ वीनती गुनन की गाय माला।
जजौं मेरु मंदर सम्बंधी जिनाला।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसम्बंधिजिनालयेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भला अगर चंदन घसा नीर माहीं।
धरे गंध बहु भंवर गुंजार लाहीं।।
लिया पत्र माहीं कही भक्त माला। जजौं मेरु०

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसम्बंधिजिनालयेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

भले खंडबिन तंदुला सोध लाया।
घने उज्जवल सोभवाई सुहाया।।
धरें पात्र माहीं पढ़ी भक्त माला। जजौं मेरु०

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसम्बंधिजिनालयेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

लिए फूल शुभ वृक्ष के गंधदाई।
करी माल नीकी भली जुक्त लाई।।
धरी आपने हाथ कह भक्त माला। जजौं मेरु०

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसम्बंधिजिनालयेभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद नाना भरे स्वाद लाया।
घने मेलि रस मोदकादिक बनाया।।
धरे पात्र करले पढ़ी भक्त माला। जजौं मेरु०

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसम्बंधिजिनालयेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लिए दीप मणिमय महा जोति धारी।
गया अंध तिनतें जगे छोड़ि सारी।।
लिए आरती गाय मुख भक्त माला।
जजौं मेरु मंदर सम्बंधी जिनाला।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसम्बंधिजिनालयेभ्यो महामोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

करी धूप दशधा लगी गंध आनी।
घसी निरतें जोर बारीक ठानी।।
धरी अगनि पै हरष कह भक्त माला। जजौं मेरु०

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसम्बंधिजिनालयेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लिए श्रीफला लौंग बादाम भारी।
भले खारका और जानौं सुपारी।।
चले पात्र में धार पढ़ भक्त माला। जजौं मेरु०

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसम्बंधिजिनालयेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

धरैं नीर चंदन अक्षत पहुत भारी।
नैवेद दीपक भला धूप थारी।।
धरी अर्घ करले भली भक्त माला। जजौं मेरु०

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसम्बंधिजिनालयेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ

चाल मुनियाणंद

मेरु मंदर तनी भौम मैं जानिये,
महा वन भद्रशाला सुखद मानिये।
तास मध्य चार जिन थान, पुन्य की मही,
सो जजौं अर्घतें वीनती मुख कही।।1।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरु-भद्रसालवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊपरै मेरु मंदर तनों जानिये,
नंदन वन शोभिए महा सुख मानिये।
ता विषैं चार जिनराज मन्दिर सही।।
सो जजौं अर्घतें वीनती मुख कही।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरु-नंदनवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मेरु मंदर तने ऊपरै सार जी,
सौमनस वन है सही सकल सुखकार जी।
ता विषैं चार जिन देव मंदर सही।। सो जजौं०

ॐ ह्रीं मंदरमेरु-सौमनसवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊपरैं मेरु मंदर तने जानिये,
पांडुवन सोहनो तीर्थ सो मानिये
चार जिन थान बिन किए तहाँ है सही।। सो जजौं०

ॐ ह्रीं मंदरमेरु-पांडुकवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु मंदर दक्षिण दिशा जोय जी,
वृक्ष जम्बू कहौ रतनमय सोय जी।
तास ऊपर कहौ थान जिनको सही।। सो जजौं०

ॐ ह्रीं मंदरमेरु-दक्षिणदिशस्थ-जंबूवृक्षस्येक जिनालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु मंदर तनी दिसा उत्तर गिनौ,
सालमल वृक्ष सो मणिमई धुनि भनौं।
एक जिन गेह बिन कियो तहाँ है सही।। सौ जजौं०

ॐ ह्रीं मंदरमेरु-उत्तरदिशस्थ-शाल्मलिवृक्षस्येक जिनालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु मंदर तनें चार गजदंत जी,
तिन विषैं चार जिनथान अघ तंत जी।
देव खग जाय जिन सेव करहैं सही।
सो जजौं अर्घतें वीनती मुख कही।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरोश्-चतुर्गजदन्तोपरिचतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मेरु मंदर तनें दक्षिन दिश भौम जी,
तीन गिर कुलाचल, जान अति सोम जी।
तिन विषैं तीन जिन शुभ की मही।। सो जजौं०

ॐ ह्रीं मंदरमेरु-संबंधिदक्षिण-दिशायाः त्रिकुलाचलेषु त्रिजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिशमेरु मन्दर तनी जानिये,
तीन परवत भले कुलाचल मानिये।
तिन विषैं तीनही थान जिनके सही।। सो जजौं०

ॐ ह्रीं मंदरमेरु-संबंध्युत्तर-दिशायास्त्रि-कुलाचलेषुत्रिजिन-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु पूरब दिशा मंदर की जानिये,
आठ वक्षार गिरि बड़े शुभ मानिये।
तिन विषैं आठ ही जिन भवन हैं सही।। सो जजौं०

ॐ ह्रीं मंदरमेरु-संबंधिपूर्वविष्वष्ट वक्षारेष्वष्टजिनचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिस मेरु मन्दर तनी जोइये,
आठ वक्षार गिर कनक मय सोइये।
तिन विषैं आठ जिन थान शुभ की मही।। सो जजौं०

ॐ ह्रीं मंदरमेरु-संबंधिपश्चिमदिष्यष्टवक्षारेष्वष्टजिनचैत्याल-येभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरब दिश मेरु मंदर तनी सार जी,
जान विजयारधा षोडशा भार जी।
ऊपरै जिन भवन सबन के हैं सही।
सो जजौं अर्घतें वीनती मुख कही।।

ॐ ह्रीं मन्दरमेरु-संबंधिपूर्वदिशि-षोडशविजयार्धेषु-षोडशजिन-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दच्छन दिश मेरु मन्दर तनी जाय जी,
एक रुपाचला खगन को थाय जी।
ता विषैं एक जिनराज मन्दर सही।। सो जजौं०

ॐ ह्रीं मंदरमेरुत्तर-दिश्येक-तिजयार्धोपर्यक जिन-चैत्यालयायाघ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु मन्दर तनी पछिम दिश भाय है,
षोडशा खगाचल रूप मय पाय है।
तिन धरै देव जिन भवन षोडश सही।। सो जजौं०

ॐ ह्रीं मन्दरमेरु-संबंधिपश्चिमदिशि-षोडशविजयार्धेषु-षोडशजिन-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन्दर शुभ मेरु की उत्तर दिश जाय जी,
खगाचल एक गिर रूपमय थाय जी।
ता विषैं एक जिनराज थल है सही।। सो जजौं०

ॐ ह्रीं मंदरमेरुत्तर-दिश्येक-विजयार्धोपर्यक जिन-चैत्यालयायाघ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आदि इनमेर मन्दर लार जी,
थान बहु सुभग सब अकिरतम सार जी।
तिन विषैं अकिरतम ठाम जिन जे सही।। सो जजौं०

ॐ ह्रीं मन्दरमेरु-संबंधिसमस्त-जिनालयेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

दोहा- मन्दर मेरु सु सोहनौ, चवथो अचल अनादि।
ता सम्बन्धि जिन थान को, नमौं करों अघ वादि।।1।।

परमादी की चाल

पुष्कर अर्घ मझार पूरब मेरु कहाजी।
मन्दर ताका नाम जिन धुनि माहि चयाजी।।2।।
जाके शीश मझार पांडुक है वन नीका।
रचना धरैं अपार सुखदायक सबजीका।।3।।
ता वन चार अनूप पांडुक शिला कहीजी।
अर्धचन्द्र आकार बहु विस्तार लही जी।।4।।
मोटी जोजन आठ लंबी सौ लक्ष भाई।
चौड़ी है जो पचास जोजन अति सुखदाई।।5।।
ता ऊपर सिहंपीठ तीन कहे अति भारी।
ता मध कलश हजार आठ रहे शुभकारी।।6।।
मंगल द्रव वसु जान धूप घटादिक सारे।
रचना और अनेक जानि अनादि अपारे।।7।।
ऐसी सिला अनूप ता ऊपर जिन आवैं।
बैठि सिंहासन ठाम प्रभु असनान करावैं।।8।।
इस खंड जे जिन होंय तिनकों इन्द्र सुलावैं।
ह्यां धर सुर अब आय क्षीरोदधि जल भावैं।।9।।
कलश सहस वसु आनि सागर से विस्तारा।
वसु जोजन त्वंग जानि एते मध्य विचारा।।10।।
इक जोजन मुख सार ऐसे कलश सुलावैं।
हाथों हाथ सुदेव हरि के हाथ धरावैं।।11।।

इन्द्र तबै कर लेय जय जय शब्द करावैं।
जिन शिर एके साथ धारा कलश ढरावैं।।12।।
कर हरि नृत्य थुति गान जिनकों घर पहुँचावैं।
तातैं ए गिरराज जगमें तीरथ गावैं।।13।।
तहँ मुनि चारण जाय ध्यान धरैं सुध लाई।
कर्म काटि शिव लेय तातैं तीरथ थाई।।14।।
इम बहु उपमा धार मंदिर जानों मेरा।
कनक मई सब पीठ त्वंग बड़ा बहु फेरा।।15।।

दोहा- चौथा मन्दिर मेरु जो, सुर खग को आधार।
हम यहाँ तैं पूजन तनी, भावन भवैं सार।।16।।

ॐ ह्रीं मन्दरमेरु संबंधि समस्त जिनचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इति मन्दर मेरु पूजा संपूर्णम्

पंचम विद्युन्मालीमेरु पूजा

गीता

विद्युन्माली मेरु पञ्चम पच्छिम पुष्कर द्वीप जी।
गजदंत वृक्ष कुलाचला वैताढि पै शुभ टीप जी।।
इन आदि सकल वक्ष्यार थानक ऊपरैं जिन थान जी।
ते जजों थापन थापि मै यहा भावना शुभ आन जी।।1।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबंधिषोडशजिनालयसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अथाष्टक (त्रिभंगी छन्द)

जल प्रासुक लाया अति हरषाया निरमल पाया सुखकारी।
धर कंचन झारी भक्त उचारी नय शिव धारी गुन भारी।।
यह विद्युन्माली मेरु विशाली सब अघ टाली थान सही।
इनके संबंधी जिन थल संधी मैं सब बन्दों पुन्य मही।।1।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबन्धिजिनालयेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम चंदन आनी गंध जु थानी घसि शुचि पानी त्यार किया।
धर रतनन झारी निज कर धारी भक्त उचारी हर्ष लिया।।
यह विद्युन्माली0।।2।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबन्धिजिनालयेभ्यो चंदनं नि. स्वाहा।

शुभ अक्षत जानौं खंड न मानौ धवल अघानौ वास धरा।
तिनकों शुभ धोये पुंज संजोये भाव मिलोये पुन्य करा।।
यह विद्युन्माली0।।3।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबन्धिजिनालयेभ्यो अक्षतं नि. स्वाहा।

अब फूल सुलाये गंध धराये सब मन भाये शोभ दई।
कलवृक्षनि के हैं हाथ लिये हैं गूँथ दय हैं माल ठई।।
यह विद्युन्माली0।।4।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबन्धिजिनालयेभ्यो पुष्पं नि. स्वाहा।

नैवेद्य सुप्पारा बहु रस धारा स्वाद अपारा तुरत किये।
धर कंचन थाली भक्ति विशाली कह गुन माली हरष हिये।।
यह विद्युन्माली0।।5।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबन्धिजिनालयेभ्यो नैवेद्यं नि. स्वाहा।

मणि दीपक आन्या सब तम भान्या ज्ञान उगान्या हम लाये।
धर पातर माही उर हरषाही भक्त बड़ाई गुन गाये।।
यह विद्युन्माली0।।6।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबन्धिजिनालयेभ्यो दीपं नि. स्वाहा।

हम धूप बनाए शुभ गंध लाए दश विध भाए मेलि दई।
अव भक्त बड़ाई मुख थुति गाई अगनि धराई खेय दई।।
यह विद्युन्माली मेरु विशाली सब अघ टाली थान सही।
इनके संबंधी जिन थल संधी मैं सब बन्दों पुन्य मही।।7।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबन्धिजिनालयेभ्यो धूपं नि. स्वाहा।

फल लौंग सुपारी श्रीफल भारी खारिक सारी हम लाए।
फिर जान बदामा और सुकामा लेकर ठामा शुभ दाए।।
यह विद्युन्माली0।।8।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबन्धिजिनालयेभ्यो फलं नि. स्वाहा।

जल चंदन आन्या अक्षत मिलाना पहुप सुजाना गंध धरा।
चरु दीप सुधूपा फलजु अनूप अर्घ सरुपा हाथ करा।।
यह विद्युन्माली0।।9।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु संबन्धिजिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ

चौपाई

पुष्कर अर्ध पछिम दिस मेरु, विद्युन्माली नाम अति घेर।
ताके भद्रसाल जिन थान, सो हू जजौं अरघ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु भद्रसाल-वनस्थचतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

याहि विद्युन्माली मेर, ता ऊपरि नन्दन वन हेर।
ता वन में चउ जिनके थान, सो हू जजौं अरघ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु नंदनवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस ही मेरु सौमवन सोय, ताकी महिमा अद्भुत होय।
ता बन विषैं चार जिन थान, सो हू जजौं अरघ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु सौमनसवनस्थ-चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु सुविद्युन्माली देख, तिस पै पांडुक वन है एक।

ताके मध चउ जिनके थान, सो हू जजौं अर्घ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु पांडुकवनस्थ-तुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली मेर सुभाय, ताके चऊ गजदंते पाय।

तिन इक इक पै है जिनथान, सो हू जजौं अरघ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरोश-चतुर्गजदन्तोपरिचतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

याही मेर दक्षिण दिस जोय, जंबू वृक्ष इक होय।

ताके मध्य एक जिन थान, सो हू जजौं अरघ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु दक्षिणदिशस्थ-जंबूवृक्षस्येक जिनालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस ही मेर उत्तर दिस जोय, सालमली वृक्ष जानो सोय।

ता ऊपर जिनको इकथान, सो हू जजों अरघ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु उत्तरदिशस्थ-शाल्मलिवृक्षस्येक जिनालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

याही मेर दक्षिण दिस जाय, तीन कुलाचल गिर सुभपाय।

तिन पै तीन थान जिनराय, सो हू जजौं अरघ थुति गाय।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु-संबंधिदक्षिण-दिशायाः त्रिकुलाचलेषु त्रिजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिस इस मेरु सुजेय, तीन कुलाचल पर्वत तेय।

तिन पै तीन देव जिनथान, सो हू जजौ अरघ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली-संबंध्युत्तर-दिशायास्त्रि-कुलाचलेषुत्रिजिन-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

याही मेरु पूरब दिश सोय, आठ वछार नाम गिर होय।
तिन सबपै इक इक जिनथान, सो हू जजौं अरघ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु-संबंधिपूर्वदिष्यष्टवक्षारेष्वष्टजिनचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

याही मेरु की पच्छिम सोय, आठ वछार नाम गिर होय।
तिन पे आठ जिनेश्वर थान, सो हू जजौं अरघ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु-संबंधिपश्चिमदिष्यष्टवक्षारेष्वष्टजिनचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरब इस ही मेरु बताय, षोडश रूपाचल मन लाय।
तिन इक इक पै है जिनथान, सो हू जजौं अरघ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु-संबंधिपूर्व-दिशायां-षोडश-विजयार्धपर्वतेषु षोडश जिनचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस ही मेरु दच्छिन दिस जोय, विजयारध इस पर्वत सोय।
ता ऊपर है इक जिन थान, सो हू जजौं अर्घ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुदक्षिण-दिश्येक-विजयार्धोपर्येक जिन-चैत्यालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

याही मेरु पच्छिम दिस धरा, षोडश गिर वैताढ़ सु परा।
तिन सब पै जिनजी के थान, सो हू जजौं अर्घ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु-संबंधिपश्चिमदिशि-षोडशविजयार्धेषु-षोडशजिन-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर इस ही मेरु सुजाय, एक रूप गिर परवत पाय।
जाके शीश एक जिन थान, सो हू जजौं अर्घ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरोत्तर-दिश्येक-विजयार्धोपर्येक जिन-चैत्यालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्ध द्वीप पुष्कर के माहिं, दच्छिन इक्ष्वाकार कहाहिं।
ता ऊपर इस जिनवर थान, सो हू जजौं अर्घ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु पुष्करार्द्धदक्षिण दिश्येकेष्वाकारोपर्येक-जिनचैत्यालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

याही द्वीप उत्तर दिश जाय, इक्ष्वाकार महा गिर पाय।
तापै इक है जिनको थान, सो हू जजौं अर्घ थुति आन।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपोत्तरदिश्येकेष्वाकार पर्वतसंबंधि जिन-चैत्यालयायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली मेरु सुलार, एते थान जान सुखकार।
जो तीरथ हैं जिनके थान, सो हू जजौं अर्घ थुति आन।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु-संबंधिसमस्त-जिनालेयेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- पच्छिम पुष्कर द्वीप में विद्युन्माली मेर।
कनक मई अति सोहनौ तीरथ निरमल घेर।।1।।

बेसरी छन्द

विद्युन्माली मेर सुथाना, तहॉ जिन गेह पापा मलहाना।
तिनकी उपमा को मुखगावै, सहस जीभते पार न पावै।।2।।
रतन बिंब कंचन जिन गेहा, देखत जन मन उपजे नेहा।
उदै पुन्य ताके तहाँ जावै, तुछ पुन धारी दरशन पावै।।3।।
जाय देव खग इन्द्र धनिदा, तिनने पूरव भव जिन वंदा।
हमसे हीन शक्ति नहीं जावैं, तातैं हम यहाँ भावन भावैं।।4।।
शची सहित हरि देव मिलाई, जाय में पूजै जिन पाई।
गावैं गान भक्त मुख सेती, नटै नाच नाना गति जेती।।5।।

शची नचै हरताल बजावैं, कभूँ नचै हरि शची नचावै।
हाव भाव सब लीला ठानै, चंचल पग कर तन दृग तानैं।।6।।
नचै आकाश भुमक भू जाई, कभूँ दीखे कभूं अदृश थाई।
दीरघ तन कवहूँ लघु होई, बजै ताल बैना धुन सोई।।7।।
बजै तार तंदूरे भाई, बजै मृदंग नफीरी आई।
सारंगी सहतार अपारा, बाजे बजे इत्यादिक सारा।।8।।
सबका सुर इकताल बजावैं, मीठे सुर बहु देवा गावैं।
हाथन की अँगुरी पै आवैं, अपसर बहुती निरत करावैं।।9।।
ऐसे देव हरी तब जावैं, ऐसे भक्ति करै पुन्य लावैं।
जैजे शब्द करैं मुख सोई, ताकरि पाए मैल जिन धोई।।10।।
ऐसे तौर हर सुर तहाँ जावैं, वा खगराज भक्तिवश आवै।
सोभी बहु विध सेवा ठानैं, भाव समान महा पुन्य आनै।।11।।
या विध सुर खग कर नितसेवा, ऐसा मेर थान शुभ देवा।
विद्युन्माली मेर सुथाना, कबलों करों गुननका गाना।।12।।
तातैं जो भव पुन्य को चाहै, तौ या मन्दर को शिर नाहै।
यह तीरथ शिव साधन ठामा, पुन्य बंधन को है भव दामा।।13।।

दोहा- विद्युन्माली सेवतें, पाप नसे भव खाय।
जे भव पूजे भाव सों, ते निहचैं शिवजाय।।14।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरुसम्बंधि जिनालयेभ्यो महार्घं नि. स्वाहा।

इति विद्युन्मालि मेरु पूजा संपूर्णम्

जाप्य मंत्र

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंध्यशीतिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो नमः

(इस मंत्र का जाप्य 108 बार करें)

समुच्चय जयमाला

दोहा- मेरु सुदरशन जानिये, विजय अचल शुभ ठाम।
मन्दर विद्युन्मालिया, पाचों यह शुभ धाप।।1।।

द्वीप जंबू विषैं मेर सुदरशना।
लाख जोजन कहा त्वंग नभ फरसना।।
दूसरा धातकी खंड पूरव दिशा।
मेरु विजय महाशोभ जुत अतिलसा।।2।।
धातकी खंड पश्चिम दिसा जानिये।
तीसरा मेरु शुभ अचल सुख मानिये।।
अर्ध पुष्कर विषैं पूर्व दिस सारजी।
मेरु मन्दर कहा चतुरथा धारजी।।3।।
दिश पच्छिम तनी अर्ध पुष्कर सही।
पाँचम मेर विद्युन्माली कही।।
चार यह मेरु तुग सहस चौरासिया।
कनक के सकल यह तीर्थ अघनासिया।।4।।
एक इक मेरु पै चार वन हैं सही।
एक वन माहिं जिन थान चउ धुन कही।।
चार वन तनैं मिलि भए षोडश थला।
पाँच मेरुन तने चार बीसी फला।।5।।
मेरु इक शैल गजदंत चउ जानजी।
पञ्च मेरुन तनै बीस सुख थानजी।।
पच ही मेरु के वृक्ष दश थाय हैं।
सालिमल जंबू वृक्ष नाम शुभ दाय हैं।।6।।
मेरु इक एक षट् कुलाचल सारजी।
पच के तीस बहु धरें विस्तारजी।।
जान वैताढ़ चौंतीस इस मेरके।
एक सत सतर पंच मेरु शुभ घेर कैं।।7।।

जानि वक्ष्यार इक मेरु के षोडशा।
पच मेरन तने असी गिन मोड़सा।।
इक्ष्वाकार दोइ धातकी खंडजी।
दोइ गिन अर्ध पुष्कर धरा मंडजी।।8।।
सकल यह अकीरतम थान जानौं सही।
इन विषें सबन पै थान जिन शुभ मही।।
पच मेरन के समबंध सब गाइये।
तीन सत और चोरानवे पाइये।।9।।
जानको तौ सकत हीन हम है सही।
भक्ति वस भावना करत हैं इस मही।।
आठही द्रव्यसुध देय थुत गायजी।
जजत हो सकल जिन गेह हरषाय जी।।10।।
प्रोष पूजा करी राग हिरदें धरी।
तासते पुन्य की पोट उरमें भरी।
तास फल भाव अति निरमले हो गए।
करो तव पाठ यह सुफल मानों भए।।11।।
और सब जगत भ्रमजाल कवि जानियो।
एक जिन चरनको सरन सतमानियो।।
और नहीं आस यह चाहि जानो सही।
हाथतें जजै यह थान फिर शिवमही।।12।।

दोहा- पच मेरु की आरती और अकिरतम थान।
तिन पद टेक नमो सदा सो चाहो सुध ज्ञान।।13।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंधिसर्वजिनालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इति पंचमेरु विधान संपूर्णम्

मानुषोत्तर पर्वत के चार जिनालयों की पूजा

आडिल्ल- पुष्कर दीप सुमध्य भाग भूमें सही।
मानुषोत्तर गिर बलयकार कंचन मही।।
तापै चउ दिस चार अकीरतम जिन थला।
सो पूजों इस थाप उर निरमला।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि चत्वारि जिनालय अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि चत्वारि जिनालय अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि चत्वारि जिनालय अत्र मम सन्निहितो भव भव सन्निधिकरणम्।

अथाष्टक (चौपाई)

जीव रहित निरमल जल जाय, कनकपियाले धर गुन गाय।
पूजौ मनुषोत्तर जिनगेह, जनम मरन मेंटे फल एह।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि जिनालयेभ्यो जन्मजरामृत्यू विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चदन अगर घस्यो जल डार, आछे पातर करलै धार।
पूजों मनुषोत्तर जिनगेह, भौ दुख ताप मिटे फल एह।।3।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि जिनालयेभ्यो चंदनं नि. स्वाहा।

तंदुल उज्ज्ल अखंड अनूप, कीनै शुद्ध धोय अनुरूप।
पूजों मनुषोत्तर जिन गेह, ता फल सिद्धलोक फल लेय।।4।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि जिनालयेभ्यो अक्षतं नि. स्वाहा।

चांदी कनक कलपद्रुमजान, तिनके फूल गूंथ हम आन।
पूजों मनुषोत्तर जिन गेह, मदन रोग नाशै फल एह।।5।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि जिनालयेभ्यो पुष्पं नि. स्वाहा।

नाना रस नैवेद बनाय, मोदक आदि किये कर लाय।
पूजों मनुषोत्तर जिन गेह, वांछा रोग मिटी फल एह।।6।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि जिनालयेभ्यो नैवेद्यं नि. स्वाहा।

दीपक रतन मई मन लाय, पातर धर अति भावन भाय।
पूजों मनुषोत्तर जिन गेह, मिथ्या मोह मिटै फल एह।।7।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि जिनालयेभ्यो दीपं नि. स्वाहा।

चंदन अगर धूप का सार, खेऊँ अगनि माहीं थुति धार।
पूजों मनुषोत्तर जिन गेह, कर्म जरौ ताकौ फल एक।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि जिनालयेभ्यो धूपं नि. स्वाहा।

श्रीफल और बदाम धुवाय, निरमल पातर धर गुन गाय।
पूजों मनुषोत्तर जिन गेह, मरन मिटै शिव ले फल एह।।9।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि जिनालयेभ्यो फलं नि. स्वाहा।

नीर गध अक्षत पुष्प चरु सार, दीप धूप फल कर इक ठार।
पूजो मनुषोत्तर जिन गेह, चउ गति भवन मिटै फल एह।।10।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ

सोरठा- मनुषोत्तर गिर जान, ताकी पूरब दिश सही।
है जिनथान सुमानि, सो पूजों वसु द्रव्य तें।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वत पूर्व दिशा सम्बन्धि जिनालयाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण धरा मझार, याही गिर ऊपर सही।
तीरथ जिन थल सार, ते पूजों वसु द्रव्य तें।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वत दक्षिण दिशा सम्बन्धि जिनालयाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मानुषोत्तर के शीश, पच्छिम दिश जानौं सही।
जिनथल सब जग ईश, सो पूजों वसु द्रव्य तैं।।3।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वत पश्चिम दिशा सम्बन्धि जिनालयाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनुषोत्तर पै सोय, उत्तर दिश को जो कह्यो।
जिनवर थान सुजोय, सो हौं पूजौं भावतैं।।4।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतोत्तर दिशा सम्बन्धि जिनालयाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्कर अर्ध सुदीप मनुषोत्तर के पार कौं।
तहाँ उतपति क्षय कीय, सो सिध पूजो भावते।।5।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्ध द्वीप मानुषोत्तर पर्वतादग्रे उत्पत्ति क्षयकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- याही पुष्कर द्वीप का सागर है सुखदाय।
ताकी उतपति छेद सो मैं पूजौं थुति गाय।।6।।

ॐ ह्रीं पुष्करद्वीप वेष्ठित समुद्रस्योत्पत्तिछेदकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीप वारुनी नीरनिध वामे रचना जोर।
सो या भू उतपात तजी ते पूजो मद तोर।।7।।

ॐ ह्रीं वारुणीवरद्वीपगतिछेदकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस वारित भू वेढ के जो सागर जलरास।
जाकी उतपति तिन तजों ते पूजों थुत भास।।8।।

ॐ ह्रीं वारुणीवरद्वीप वेष्ठितसमुद्रस्योत्पत्तिछेदकाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दीप क्षीर वर है भोग भौम शुभ थान।
ताकी उतपति तिन तजी सो पूजों धर ध्यान।।9।।

ॐ ह्रीं क्षीरवर द्वीपगतिछेदकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीर महासागर सही गुन को जान निधान।
तामें उतपति तिन तजी सो पुजों शिव थान।।10।।

ॐ ह्रीं क्षीरवर समुद्रस्योत्पत्ति छेदकाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

द्वीप घिरतवर शुभ धरा बहु जीवन को वास।
तामें उतपति तिन तजी ते पूजों होय दास।।11।।

ॐ ह्रीं घृतवर द्वीपगतिछेदकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वेढि घिरतवर द्वीप कों जो सागर शुभ नाम।
तामें उतपति तिन तजी ते हू जजों शुभ थान।।12।।

ॐ ह्रीं घृतवर समुद्रस्योत्पत्ति छेदकाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

ईक्षूवर है द्वीप सो त्रस थावर को ठाम।
ताकी गति छेदी तिने सो हू जजों शुभ धाम।।13।।

ॐ ह्रीं इक्षुवर द्वीपगतिछेदकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वेढि परो इस द्वीप को इक्षूवर दधि सोय।
मरन जनम यामे तजें अर्घ सु पूजो जोय।।14।।

ॐ ह्रीं इक्षुवर समुद्रस्योत्पत्ति छेदकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम द्वीप नदीश्वरा ताको बहु विस्तार।
ताकी उत्पति तिन तजी सो पूजो भव पार।।15।।

ॐ ह्रीं नंदीश्वर द्वीपगति छेदकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस पुष्कर द्वीपादि दधि सकल जीवके धाम।
तिनमें उत्पति तजि गए सो पूजों शिव ठाम।।16।।

ॐ ह्रीं पुष्करद्वीपादारम्य-नंदीश्वरद्वीपपर्यन्तमुत्पत्तिछेदकायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- पुष्कर आधे द्वीप मध, मनुषोत्तर गिर सोय।
कंचन वरनौ सैल पै, जिन थल वंदौ जोय।।1।।

बेसरी छन्द

तीजे दीप विषैं मध भागा, मनुषोत्तर परभत शुभ जागा।
वलयाकार तुंग अति जानौ, मनुष लोक की हद्द प्रमानौ।।2।।

याके पार मनुष नहीं जावैं, देव जाय नाना सुख पावैं।
इस तैं परे कर्मभू होई, या गिर पार भोगभूमि जोई।।3।।
यह गिर मनुषोत्तर गिरराजा, कनक मई सबही सुख काजा।
तिस पै चार दिसा में जानों, कूट कहे सुन्दर अधिकानौं।।4।।
तिन कूटन में सुर के वासा, महल बाग वन अति सुखरासा।
तिन में एक एक सिधकूटा, चौ दिस चार जानि अघ छूटा।।5।।
चौ दिश सिद्धकूट पै जानौ, एक एक जिनवर का थानौ।
सो थानक है अनादि अनंता, बिना किये जानो सब संता।।6।।
कनक मई सब गेह जिनंदा, रतन बिंब तिनमें सुख कंदा।
पूजें देव खगा थुति गाई, भूमगोचरी पहुँच न पाई।।7।।
वन्दे तें पातक खय जावैं, पुन्य हीन नहि दरशन पावैं।
सो हम अलप पुन्य के धारी, तातैं हमको दरशन भारी।।8।।
ऐसी जान पुन्य के काजैं, तिन जिन मंदिर पूजा साजैं।
पहुँचन की तौ शकती नाहीं, करै भावना अति हरषाही।।9।।

दोहा- मनुषोत्तर पै जिन भवन, चउ दिस चार बखान।
तिनकौ हम यहॉ जजत हैं, अरघ आठ द्रव्य आन।।10।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतसम्बन्धि-जिनचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मानुषोत्तर सम्बन्धि जिन चैत्यालय पूजा संपूर्णम्)

सम्पूर्ण जैन वागमय आचार-विचार एव पुण्य-पाप की प्रधानता से युक्त है। विचार पक्ष की निर्मलता आचार पक्ष से ही होती है, बिना व्रताचरण के स्वीकार किये स्वरूपाचरण सभव नहीं है। आत्म तत्त्व की सिद्धि वे ही भव्य मुमुक्षु कर सके हैं जिन्होंने सयमाचरण पूर्वक स्वात्मानुभूति का अनुभव किया है।

मुनि विशुद्धसागर

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1 कृति अक्षय निधि कथा पूजा
प्रकाशक आर्यिका धर्ममति राजमति पुस्तकालय, दि. जैन मंदिर, प लूणकरण सिंह रास्ता, ठाकुर पचेवर, जयपुर-3

2 कृति आचार्य धर्मसागर अभिनंदन ग्रन्थ
प्रकाशक · श्री दि जैन नवयुवक मडल, कलकत्ता, सन् 1982 ई

3 कृति . आरोग्य आपका

4 कृति आष्टाह्निक व्रतोद्यापन
लेखक श्री कल्याण कुमार जैन 'शशि'
प्रकाशक सरल जैन ग्रन्थ भण्डार, जबलपुर, वी स 2508

5 कृति कर्मदहन विधान
प्रकाशक सेठी बधु श्री वीर पुस्तक मदिर, महावीर जी (राज)

6 कृति कर्म निर्झर व्रत पूजा
लेखक गुलाबचन्द्र जैन 'दर्शनाचार्य'
प्रकाशक वीर पुस्तक भण्डार, जयपुर म 2039

7 कृति क्रिया कोश
लेखक श्री कवि किशन सिह
प्रकाशक श्री परमयुत प्रभावक मडल, अगास, वि सं 2041

8 कृति कुदरती उपचार

9 कृति काजिका द्वादशी व्रतोद्यापन
प्रकाशक वीर पुस्तक भण्डार, मनिहारों का रास्ता, जयपुर-3

10 कृति गणधर वलय विधान
लेखक . आर्यिकारत्न ज्ञानमति
प्रकाशक दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध सस्थान, हस्तिनापुर (मेरठ) उ प्र , वी नि स 2525

11 कृति चतुर्विंशति विधान
लेखक कवि रामचन्द्र जी
प्रकाशक नेमिचन्द्र बाकलीवाल, किशनगढ (राज)

12 कृति चारित्र शुद्धि विधान
प्रकाशक . आचार्य धर्मश्रुत ग्रन्थमाला जैन मदिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड, गाजियाबाद (उ प्र)

13. कृति . चारित्र सार
लेखक . प लालाराम जी
प्रकाशक नेमचन्द्र सर्राफ, बडौत (मेरठ)

14 कृति चौसठ ऋद्धि विधान
प्रकाशक दिगम्बर जैन पुस्तकालय, गाधी चौक, सूरत (गुज)

15 कृति जैन पूजा पाठ सग्रह
प्रकाशक जैन पुस्तक भवन, कलकत्ता

16 कृति जैन पूजा पाठ सग्रह
प्रकाशक दि जैन मदिर, गोपालवाडी, जयपुर (राज)

17 कृति जैनेन्द्र कथा कोश
लेखक प वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री

18 कृति जैन व्रत कथा सग्रह
सपादक स्व प वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री
प्रकाशक मदन मजरी वर्धमान शास्त्री, सोलापुर-3, सन् 1983 ई

19 कृति जैन व्रत विधान सग्रह
सकलन प बारेलाल जैन 'राजवैद्य', टीकमगढ
प्रकाशक सिघई भगवानदास कुदनलाल जैन अटारी वाले, वी नि स 2478

20 कृति जैन व्रत विधान सग्रह
प्रकाशक शैलेष भाई डाह्या भाई कापडिया, विजय जैन प्रिटिग प्रेस, गाधी चौक, सूरत, सवत् 2047

21. कृति . जैन व्रत विधि
प्रकाशक श्रीमती निर्मला जैन, प्ला नं 9335, गोविन्द पथ, किसान मार्ग, वरकत नगर, जयपुर, सन् 1993 ई

22	कृति	·	जैनेन्द्र सिद्धात कोश
	लेखक	:	क्षु जिनेन्द्र वर्णी
	प्रकाशक		भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली, सन् 1988 ई
23	कृति	.	दशलक्षण मडल विधान
	प्रकाशक	:	वीर पुस्तक भण्डार जयपुर, मनिहारों का रास्ता, जयपुर-3 भाद्रपद स 2038
24	कृति		The Hygenic System
25	कृति		नदीश्वर द्वीप पूजन विधान
	लेखक		स्व श्री रविलाल
	प्रकाशक		शाति सेवा सघ, श्री 1008 दि जैन सिद्ध क्षेत्र बडागाव (धसान), टीकमगढ (म प्र) वि स 2048 वी नि स 2517
26	कृति		णमोकार पैतीसी विधान
	प्रकाशक		जैन साहित्य सदन, लाल मदिर, दिल्ली, वीर नि स 2508
27	कृति		णमोकार मत्र का माहात्म्य तथा जिनगुण सपत्ति मत्र
	प्रकाशक		श्री सेठ मगलचन्द्र पाड्या, हैदराबाद।
28	कृति		पचकल्याणक विधान
	प्रकाशक		जैन पुस्तक भवन, कलकत्ता
29	कृति		पचपरमेष्ठी विधान
	प्रकाशक		जैन पुस्तक भवन, कलकत्ता
30	कृति		पातजलि योगदर्शन
	लेखक		श्री पातजलि
31	कृति		पुरुषार्थसिद्ध्युपाय
	लेखक		आचार्य अमृतचन्द्र स्वामी
	प्रकाशक	.	भारतीय अनेकात विद्वत् परिषद् सन् 1995 ई
32	कृति		Fasting can save your life
33	कृति		भगवान महावीर और उनका तत्त्वदर्शन
	प्रकाशक		श्री पारस दास श्रीपाल जैन, मोटर वाले, श्यामा प्रसाद मुखर्जी मार्ग, दिल्ली-6, सितम्बर 1973 ई

34. कृति . महावीर कीर्तन
संपादक : पं भैरव लाल सेठी न्यायतीर्थ
प्रकाशक : **गजेन्द्र ग्रन्थमाला**, 2578, धर्मपुरा, दिल्ली-110006

35 कृति : रत्नकरण्डक श्रावकाचार
लेखक : आचार्य समंतभद्र, हिन्दी- प सुखदास जैन
प्रकाशक : जैन पुस्तक भवन, कलकत्ता

36 कृति : रत्नत्रय विधान
प्रकाशक : वीर पुस्तक भण्डार, मनिहारों का रास्ता, जयपुर-3

37 कृति रविवार व्रत विधान
प्रकाशक · दिगम्बर जैन पुस्तकालय, गाधी चौक, सूरत (अहमदावाद)

38. कृति . लब्धि विधान
लेखक · कवि श्रीचन्द्र
प्रकाशक · वीर पुस्तक भण्डार, मनिहारों का रास्ता, जयपुर-3

39 कृति . वर्धमान पुराण
लेखक कविवर श्री नवलशाह

40 कृति . व्रत कथा कोष
अनु. सग्रह · गणधराचार्य कुथुसागर
प्रकाशक श्री दि जैन कुथु विजय ग्रथमाला समिति, जयपुर(राज.)

41 कृति व्रत तिथि निर्णय
लेखक डॉ नेमिचन्द्र शास्त्री 'ज्योतिषाचार्य'
प्रकाशक . भारतीय ज्ञानपीठ, बनारस सन् 1956 ई

42 कृति · व्रत विधि एव पूजा
लेखक . आर्यिका ज्ञानमति
प्रकाशक . दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध सस्थान हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र., वी.नि स 2516

43 कृति . वसुनन्दि श्रावकाचार
लेखक : आचार्य वसुनन्दि
प्रकाशक : अनेकांत विद्वत् परिषद् सन् 1989-90 ई.

44. कृति : वृन्दावन चौबीसी पाठ
प्रकाशक जैन पुस्तक भवन, महात्मागांधी रोड, कलकत्ता
45 कृति : श्रावकाचार संग्रह
सं व अनु. : प हीरालाल जी
प्रकाशक . जैन सस्कृति सरक्षक सघ, सोलापुर (महा.) सन् 1976 ई.
46 कृति : शिखर सम्मेद विधान
प्रकाशक सेठी बधु श्री वीर पुस्तक मदिर, महावीर जी (राज.)
47 कृति सन्मार्ग दैनिक, 4 अगस्त 1989
व्रत पर्व त्योहार विशेषाक
प्रकाशक सन्मार्ग दैनिक, कार्यालय, वाराणसी
48 कृति समवशरण विधान
प्रकाशक मोहन लाल जी शास्त्री, जवाहरगज, जबलपुर
49 कृति · सर्वार्थ सिद्धि
लेखक आचार्य पूज्यपाद स्वामी, सपा -पं फूलचन्द्र जी
प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, सन् 1983 ई
50 कृति सर्वोदयी जैन तत्र
लेखक डॉ नदलाल जैन
प्रकाशक . पोतदार ट्रस्ट, टीकमगढ (म.प्र)
51 कृति सागार धर्मामृत
लेखक · प आशाधर जी, अनु - आर्यिका सुपार्श्वमति
प्रकाशक : भारतीय अनेकात विद्वत् परिषद् सोनागिर सन् 1990
ई
52 कृति . सस्कृत वागमय शब्द कोश परिच्छेद खण्ड पूर्वार्द्ध
53 कृति सुगंध दशमी व्रत कथा
प्रकाशक · जैन साहित्य सदन, श्री दि० जैन लाल मदिर, दिल्ली
54 कृति सुदृष्टि तरंगणी
संकलन · पं टेकचन्द्र जी
प्रकाशक श्रीमती संतोष वाला जैन, 1 सी/ 47 न्यू रोहतक रोड,

नई दिल्ली-5, सन् 1998 ई

55 कृति		हरिवंश पुराण
लेखक	.	आचार्य जिनसेन, संपा व अनु - डॉ. पन्नालाल जैन
प्रकाशक		जैन साहित्य सदन, चादनी चौक, दिल्ली सन् 1994 ई
56 कृति		त्रिलोक तीज व्रत पूजा, तीन चौबीसी
प्रकाशक	.	वीर पुस्तक भण्डार, मनिहारों का रास्ता, जयपुर-3

संक्षिप्तिका

आ ध अ ग्र		आचार्य धर्मसागर अभिनदन ग्रन्थ
क्रि को	.	क्रियाकोश
व्र वि स		व्रत विधान सग्रह
जै व्र वि स		जैन व्रत विधान सग्रह
व्र क को		व्रत कथा कोश
जै व्र ति नि	.	जैन व्रत तिथि निर्णय
स वा श को परि ख पू खण्ड पूर्वार्द्ध		सस्कृत वागमय शब्द कोश परिच्छेद
ह.पु		हरिवश पुराण
सु त		सुदृष्टि तरगणी
जै व्र वि		जैन व्रत विधि